जहं जहं चरन परे गौतम के

बुद्ध के चरण-चिह्नों पर तीर्थ-यात्रा

तिक न्यात हन्ह

लेखक का वक्तव्य

इस पुस्तक के लिए सामग्री-सकलन और इसके लेखन मे मैने 'हीनयान' के ग्रथो को आधार वनाया है और 'महायान' सम्प्रदाय के धर्म-ग्रथो का जान-वूझकर न्यूनतम प्रयोग किया है, जिससे यह प्रकट हो सके कि महायान सम्प्रदाय के समस्त विचार और सिद्धात पूर्ववर्ती पालि 'निकायों' और चीनी 'आगमों' मे सुलभ हैं। इन सूत्रो का उदारमना होकर अध्ययन किया जाए, तो स्पष्टतया समझा जा सकता है कि सभी सूत्र तो वौद्ध धर्म के हैं, फिर चाहे वे उत्तरी परम्परा के हो या दक्षिणी परपरा के।

वुद्ध की मूल देशना के ज्ञान और गहन अध्ययन की दृष्टि से महायान सूत्रो मे अधिक उदार एव व्यापक दृष्टि अपनायी गयी है, जिससे मूल देशना की उन पुनर्व्याख्याओ को रोका जा सके, जो देशना के अध्ययन और साधना-अभ्यास के सकीर्ण एव कठोर दृष्टिकोण अपनाने से सभव होती हैं। महायान के सूत्रो से निकायो या आगमो के पाठ की गहनता समझने मे सहायता मिलती है। ये सूत्र दूरवीक्षण यत्र के दृष्ट पदार्थों को दीप्त करने वाले प्रकाश के समान है, जो भ्रामक रूप से सरक्षित किये जाने के कारण धुधला गये हैं। वस्तुत 'निकाय' और 'आगम' वुद्ध की देशना के मूल स्वरूप के अधिक निकट है, किन्तु कालातर मे ज्ञान और साधना को पीढ़ी-दर-पीढी प्रसारित किये जाने की प्रक्रिया मे परिवर्तित हो गये। आधुनिक विद्वानो को दक्षिणी और उत्तरी दोनो परम्पराओ के सूत्रो के पाठ सुलभ पाकर वौद्ध धर्म के मूल स्वरूप को पुनः सजोना सभव हो सकेगा। हमे दोनो परम्पराओ के सूत्रो के पाठो से अवगत होना आवश्यक है।

वुद्ध के जीवन को लोकोत्तरता प्रदान करने वाले ऐसे सूत्रो को इस पुस्तक मे सम्मिलित नहीं किया गया है, जिनमे वुद्ध के चमत्कारो का वर्णन है। वुद्ध ने स्वय अपने शिष्यो को समझाया था कि वे लोकोत्तर शक्तिया प्राप्त करने या उनका प्रदर्शन करने मे समय और शक्ति का अपव्यय न करे। इस पुस्तक में उन विषम स्थितियो का समावेश अवश्य किया गया-है, जो तात्कालिक सामाजिक स्थितियो अथवा उनके अपने शिष्यो के कारण उनके समक्ष उपस्थित हुई थीं। इस पुस्तक मे वुद्ध हमारे और आपके सरीखे साधारण मानव प्रतीत होते है, तो इसका श्रेय इस तथ्य को है कि उन्होने उन स्थितियो का किस प्रकार सामना किया।

स्थानो एव व्यक्तियो के नाम और वौद्ध धर्म की तकनीकी शब्दावली के लिए पालि भाषा का ही प्रयोग किया गया है, किन्तु उन नामो और शब्दावली के सस्कृत रूप प्रयोग किये गये हैं, जो सभी के लिए सुपरिचित है, जैसे सिद्धार्थ, गौतम, धर्म, सूत्र, निर्वाण, कर्म, आत्मन्, वोधिसत्व आदि।

प्रकाशकीय

श्रेष्ठ, सुन्दर और सुरुचिपूर्ण पुस्तकों को आम पाठकों तक पहुंचाने के लिए सन् 1958 में 'हिन्द पॉकेट बुक्स' की स्थापना की गई थी। तब इस प्रकाशन संस्थान ने साहित्य और साहित्येतर विषयों की उच्चकोटि की दस पुस्तकों का पहला सेट देश-भर के कुछ स्थानों पर पहुंचाया। भारत के प्रकाशन जगत में यह एक क्रान्तिकारी पहलकदमी थी। तब से अब तक साढ़े चार हजार से अधिक पुस्तकें प्रकाशित की जा चुकी हैं। अपने प्रकाशन अभियान में हमने अनेक कीर्तिमान स्थापित किए तथा कई पुस्तक-मालाओं ने अपार लोकप्रियता पाई।

इस प्रकाशन संस्थान के संचालकों के बीच प्रायः प्रश्न उठता रहा कि कुछ ऐसा नया काम किया जाए, कि जिससे मानव का समग्र कल्याण हो। वह स्थूल जगत में रहते हुए सूक्ष्म जगत का साक्षात्कार कर सके। यद्यपि धर्म, दर्शन, अध्यात्म और संस्कृति की पुस्तकें समय-समय पर प्रकाशित की जाती रही हैं, परन्तु इसे और भी समृद्ध बनाया जाए और इस पर अधिक ध्यान केंद्रित हो, अतः 'फुल सर्किल' नाम से अलग ही प्रकाशन संस्थान बने, जिसमें हिन्दी और अंग्रेज़ी में पुस्तकें प्रकाशित करने का सिलसिला शुरू हो गया। पहले 'The Joy of Reiki' का प्रकाशन हुआ, फिर ओशो की चिंतनपरक पांच पुस्तकों का सेट संकलित किया गया। आज यह क्रम निरंतर जारी है। हम सब इसमें अन्तर्मन से साथ जुड़े हैं।

अब 'हिन्द पॉकेट बुक्स' का अगला महत्त्वपूर्ण कदम है विश्व के प्रख्यात विद्वान बौद्ध भिक्षु थिक न्हात हान के अंग्रेज़ी और हिन्दी में पांच ग्रन्थ। ये ग्रंथ 'Old Path White Clouds', 'The Stone Boy', 'Cultivating the Mind of Love', 'Our Appointment with Life' और 'जहां जहां चरण पड़े गौतम के' हैं। हम अपने पाठकों को यह विश्वास दिलाते हैं कि आगे भी हम प्रकाशन की इस सार्थक योजना की निरंतरता को बनाए रखेंगे।

विषय-सूची

भाग-II

भाग एक

अध्याय एक

विचरते-विचरते यात्रा

हरित वास वृक्ष के नीचे युवा भिक्खु स्वास्ति पालथी मारे बैठा था और अपनी श्वसन-क्रिया पर ध्यान केन्द्रित कर रहा था। वह वेणुवन विहार मे एक घटे से अधिक समयसे ध्यान-साधना कर रहा था जबकि अन्य सैकड़ो भिक्खु वास के वृक्षो के नीचे अपनी फूस की कुटियाओ मे वैठे साधना कर रहे थे।

महान गुरु गौतम जिन्हे लोग प्रेम एवं श्रद्धावश 'बुद्ध' कहते है, इस विहार मे चार सौ भिक्खु शिष्यो के साथ निवास करते थे। यद्यपि यहां निवासियो की सख्या अधिक थी किन्तु वातावरण वहुत शान्त था। विहार का क्षेत्रफल चालीस एकड़ था और यहां बास की नाना जाति-प्रजातियो के वृक्ष लगे थे जो मगध राज्य मे जगह-जगह से लाकर यहा लगाए गए थे। यह विहार मगध की राजधानी राजगृह से इतनी सी दूर था कि यहा तीस मिनट मे पहुचा जा सकता था। सात वर्ष पहले राजा बिम्बिसार ने यह विहार बुद्ध एव सघ को दान मे दिया था।

स्वास्ति ने अपनी आंखे मलीं और मुस्कराया। उसकी टागे अब भी मुड़ी थीं जिन्हे उसने धीरे-धीरे खोला। इस इक्कीस वर्षीय युवा को मान्य सारिपुत्त ने जो बुद्ध के वरिष्ठ शिष्य थे, तीन दिन पहले ही प्रवृज्या दी थी। प्रवृज्या-समारोह के समय स्वास्ति के सघन सुनहरे बाल उस्तरे से मूड़ दिए गए थे।

बुद्ध के भिक्खु समुदाय (सघ) का अग बनकर स्वास्ति अत्यधिक प्रसन्न था। बहुत से भिक्खु उच्च घरानो मे जन्मे हुए व्यक्ति थे यथा बुद्ध के भाई नद, देवदत्त, अनिरुद्ध और आनद। यद्यपि अभी स्वास्ति का इनके साथ परिचय

नहीं कराया गया था, स्वास्ति ने इन्हे दूर से ही देखा भर था। अधिक प्रयोग मे वदरग हुए चीवर धारण किए हुए होने पर भी इनका आभिजात्य निश्चित रूप मे झलकता था।

ऐमे ऊचे घरानो के लोगो का मित्र वनने मे तो मुझे अभी पर्याप्त समय लगेगा, ऐसा स्वास्ति ने सोचा। लेकिन राजा के पुत्र होने के वावजूद उसे म्वय वुद्ध और अपने वीच कभी दूरी का अनुभव नहीं हुआ था। स्वास्ति 'अस्पृश्य' था जो उस समय भारत की जनता मे प्रचलित वर्ण-व्यवस्था के अनुमार सवसे नीचे वर्ण के लोगो से भी नीच जाति समझी जाती थी। पिछले दस सालो मे वह भैसो का चरवाहा था और भैसो की देख-भाल करता था, किन्तु अव दो मप्ताह से वह सभी वर्णों के भिक्खुओ के साथ रह रहा था और ध्यान-माधना कर रहा था। हर कोई उसके प्रति कृपा-भाव प्रदर्शित करता, उमको नमन करता किन्तु वह स्वय अभी तक सहज नहीं हो पा रहा था। उमे आशका थी कि उसे पूर्णतया सहज होने मे अभी वर्षों लग जाएगे।

जैसे ही उसके मन मे राहुल का विचार आया, आतरिक उल्लास से परिपूर्ण मुस्कान उमके चेहरे पर फैल गई। वुद्ध के पुत्र राहुल की आयु अभी अठारह वर्ष की ही थी और वह दस वर्ष की आयु मे ही श्रामणेर के रूप मे सघ मे रह रहा था। दो मप्ताहो मे ही राहुल और स्वास्ति मे गहरी मित्रता हो गई थी। राहुल ने ही स्वास्ति को सिखाया था कि ध्यान के समय प्राणायाम कैसे करना है। राहुल यद्यपि अभी प्रवृज्जित भिक्खु नहीं वना था किन्तु उसे वुद्ध की शिक्षाओ का पर्याप्त ज्ञान हो चुका था। प्रवृज्या प्राप्त करने के लिए अभी उमे तव तक प्रतीक्षा करनी थी, जव तक उसकी आयु वीस वर्ष की नहीं हो जाती।

स्वास्ति को दो सप्ताह पूर्व के दिनों का स्मरण हो आया जव गया के समीप स्थित उसके वेलाग्राम में वुद्ध पहुचे थे और उसे भिक्खु वनने के लिए वुलाया था। जव वुद्ध उसके घर पर पहुचे तो स्वास्ति अपने छोटे भाई रूपक के साथ भैसो को चराने के लिए गया हुआ था। उसकी दो वहने चौदह वर्षीया वाला और वारह वर्षीया भीमा घर मे थीं। वुद्ध को देखते ही वाला उन्हें तुरन्त पहचान गई। वह स्वास्ति को ढूढने के लिए वाहर की ओर झपटी ही थी कि वुद्ध ने उससे कहा कि इसकी आवश्यकता नहीं है। उन्होंने कहा कि मै और मेरे साथ चल रहे भिक्खु, जिनमे राहुल

भी था, नदी तट तक चले जाएगे और उसके भाई को खोज लेगे। तीसरे पहर वे लोग नैरंजना नदी के तट पर आए जहा स्वास्ति और रूपक भैंसो को रगड़-रगड़ कर नहला रहा था। बुद्ध को देखते ही दोनो युवक पानी मे से निकलकर दौड़ते हुए नदी-तट तक आए और करबद्ध प्रणाम करके उनके समक्ष प्रणत हुए।

स्वास्ति और उसके भाई को देखकर बुद्ध ने सस्नेह मुस्कान के साथ कहा, "अरे, तुम इतने बड़े हो गए।" स्वास्ति अवाक् था। बुद्ध का शान्त मुख-मडल, उनकी स्नेहपूर्ण उदार मुस्कान और उनकी मर्मभेदिनी तेजोमय दृष्टि देखकर स्वास्ति की आखे छलछला आईं। बुद्ध गैरिक चीवर धारण किए हुए थे, जिस पर धान के खेत की डिजाइन बनाते हुए कपड़े सिले हुए थे। वह अब भी नंगे पैर ही थे जैसे कि आज से दस बरस पहले जब वह उसे इसी स्थान के आस-पास मिले थे। दस वर्ष पहले इसी नैरजना नदी और बोधिवृक्ष के नीचे उसने घटो बुद्ध के साथ बिताए थे। बोधिवृक्ष (पीपल) वहा से बस इतनी ही दूर था कि नदी तट से वहा तक दस मिनट मे पहुचा जा सकता था।

बुद्ध के पीछे खड़े बीस भिक्खु भी नगे पैर थे और धान के खेतो की डिजाइन वाले गैरिक चीवर पहने हुए थे। अधिक ध्यान से देखने पर स्वास्ति ने पाया कि बुद्ध का चीवर अन्य भिक्खुओ के चीवरो से एक हाथ अधिक लम्बा था। बुद्ध के साथ ही स्वास्ति की ही आयु का एक श्रामणेर खड़ा था जो सीधे उसी की ओर देखता हुआ मुस्करा रहा था। बुद्ध ने अपने स्नेहपूर्ण हाथ स्वास्ति और रूपक के सिर पर रखे और बताया कि वह राजगृह जाते हुए यहा जान-बूझ कर रुके हैं। उन्होने कहा कि तुम भैसो को नहला लो। इसके बाद हम सब स्वास्ति की झोपड़ी तक साथ-साथ ही चलेगे।

वापस आते समय बुद्ध ने स्वास्ति और रूपक का परिचय अपने पुत्र राहुल से कराया जो अभी तक स्वास्ति की ओर मोहक मुस्कान के साथ देख रहा था। राहुल स्वास्ति से आयु मे तीन वर्ष छोटा था किन्तु दोनों का कद एक बराबर था। श्रामणेर होते हुए भी राहुल के वस्त्र भिक्खुओ के जैसे ही थे। राहुल ने अपना भिक्षा-पात्र रूपक को पकड़ा दिया था और स्वास्ति एव रूपक के बीच मे, दोनो नए मित्रो के कंधों पर प्रेमपूर्वक हाथ रखे हुए चल रहा था। उसने अपने पिता के श्रीमुख से स्वास्ति और उसके परिवार जनो के विषय मे इतना कुछ सुन रखा था कि उसे प्रतीत हो रहा

था कि वह उनसे पूर्ण परिचित है। दोनो भाई राहुल के इस प्रेमपूर्ण व्यवहार से स्नेहसिक्त हो उठे।

स्वास्ति के घर पहुचने पर बुद्ध ने स्वास्ति को भिक्खु समुदाय मे सम्मिलित होने और अपने साथ धर्म-साधना करने के लिए आमत्रित किया। दस वर्ष पूर्व जब वह बुद्ध से पहली बार मिला था तो उसने बुद्ध के श्री-चरणो मे बैठकर धर्म-साधना करने का अनुरोध किया था और बुद्ध उसे शिष्य रूप मे स्वीकार करने पर सहमत हो गए थे। अब स्वास्ति इक्कीस बरस का हो गया था और बुद्ध उसे लेने आ पहुचे थे। बुद्ध उसे दिया हुआ अपना वचन भूले नहीं थे।

रूपक भैसो को उनके मालिक रामभूल के घर छोड़ने गया था। बुद्ध स्वास्ति की झोपड़ी के बाहर एक छोटी-सी पीढ़ी पर बैठ गए और अन्य भिक्खु उनके पीछे खडे हो गए। मिट्टी की दीवारो और फूस की छत से बनी स्वास्ति की झोपड़ी इतनी छोटी थी कि उसके भीतर सभी लोग बैठ नहीं सकते थे। बाला ने स्वास्ति से कहा, "भैया, तुम बुद्ध के साथ जाओ। आज रूपक आप से भी अधिक तगड़ा है, जब आपने भैंसो की देख-रेख करनी आरभ की थी। और मैं भी अब घर-गृहस्थी का काम बखूबी सभाल सकती हू। आपने हमारा दस वर्षों मे लालन-पालन किया है और अब हम अपने पैरो पर खडे होने की अवस्था मे आ गए हैं।"

वर्षा का पानी जमा करने के लिए रखी पत्थर की कोठारी के पास बैठी भीमा अपनी बड़ी बहन की ओर बिना कुछ बोले देख रही थी। स्वास्ति ने भीमा की ओर देखा। वह प्यारी-सी छोटी लड़की थी। जब स्वास्ति बुद्ध से पहली बार मिला था तो बाला की आयु छः वर्ष की, रूपक तीन वर्ष का था और भीमा तो बस बच्ची ही थी। बाला भाई-बहन का खाना बना लेती थी और रूपक मिट्टी मे खेला करता था।

उनके पिता की मृत्यु के छ. महीने बाद ही उनकी माता की भी मृत्यु हो गई थी। ग्यारह वर्ष की आयु मे ही स्वास्ति परिवार का मुखिया बन गया था। स्वास्ति को भैसो की देख-भाल करने और चराने का काम मिल गया था। स्वास्ति बहुत परिश्रमी था, इसलिए इतना कमा लेता था, जिससे परिवार का पालन कर सके। वह छोटी बहन भीमा के लिए भैंस का दूध भी ले आया करता था।

उसकी ओर देखकर शायद स्वास्ति उसकी भावनाओ को जानना चाह रहा है, यह समझते ही भीमा मुस्करा दी। वह एक क्षण के लिए तो हिचकिचाई
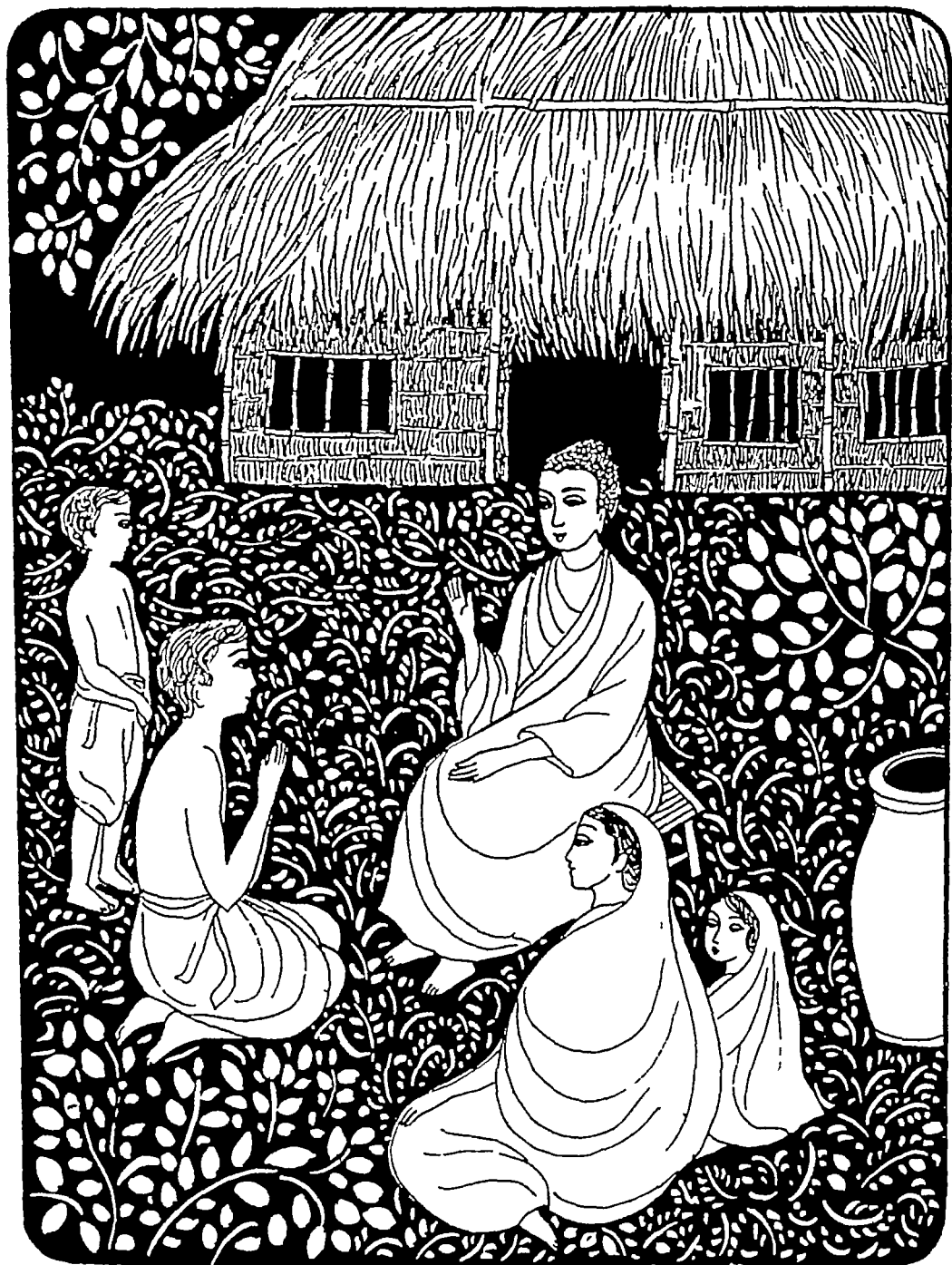
स्वास्ति के घर आगे पीढ़े पर बैठे बुद्ध

किन्तु फिर धीरे से वोली, "भैया, आप वुद्ध के साथ जाओ।" यह कहकर उसने अपना मुंह मोड़ लिया जिससे वह अपने आंसू छिपा सके। भीमा ने स्वास्ति को यह कहते हुए अनेक वार सुना था कि वह वुद्ध के श्री- चरणो मे वैठकर साधना करना चाहता है और उसकी हार्दिक इच्छा थी कि वह अपनी इच्छा-पूर्ति के लिए जाए। किन्तु जव वह क्षण वास्तव मे आ उपस्थित हुआ तो वह अपने दुःख को छिपा नहीं पाई।

उसी समय रूपक गाव से लौट आया और उसने भीमा को यह कहते सुना, "वुद्ध के साथ चले जाओ।" वह समझ गया कि विदाई का क्षण आ गया है। उसने स्वास्ति की ओर देखकर कहा, "हा, भैया, आप वुद्ध के साथ चले जाइए।" सारा परिवार एकदम मौन हो गया। रूपक ने वुद्ध की ओर देखकर कहा, "परम आदरणीय, मुझे आशा है कि आप अपने श्री-चरणो मे अध्ययन करने की अनुमति मेरे भाई को प्रदान करेगे। मै भी अव इतना वडा तो हो गया हू कि परिवार का पालन कर सकू।" स्वास्ति की ओर मुड़कर उसने आसू रोककर कहा, "किन्तु भैया, कृपा करके वुद्ध से पूछिए कि क्या आप घर आ सकेगे और समय-समय पर हमसे मिलते रहेगे।"

वुद्ध उठ खडे हुए और स्नेहपूर्वक भीमा के सिर के वाल सहलाए, "वच्चो, अव खाना खाओ। कल मैं आकर स्वास्ति को साथ ले जाऊगा ताकि सभी साथ-साथ राजगृह जा सके। मै और सभी भिक्खुगण वोधि-वृक्ष के नीचे आज रात विश्राम करेगे।"

वुद्ध ने द्वार पर पहुचकर मुड़कर स्वास्ति की ओर देखा और कहा, "कल सवेरे तुम्हे कुछ भी साथ लाने की आवश्यकता नहीं है। जो कपड़े तुमने पहन रखे है, वे ही पर्याप्त हें।"

उस रात सभी वच्चे वड़ी देर तक जागते रहे। विदा लेते हुए पिता की भांति स्वास्ति ने उनको अन्तिम परामर्श देते हुए कहा कि तुम लोग एक-दूसरे की और घर की देख-भाल मिल-जुलकर करना। वह हर एक को वड़ी देर तक अपनी छाती से चिपकाए रहा। आसू रोकने मे असमर्थ रहने पर भीमा जव अपने वड़े भाई की गोद में थी तो सीने से सिर लगाकर सुवक उठी। किन्तु उसके वाद उसने अपना सिर उठाया, दीर्घ निश्वास लिया और भाई की ओर देखकर मुस्करा दी। वह नहीं चाहती थी कि स्वास्ति उसके आसुओ मे दुखी हो। तेल के दीये का धुधला प्रकाश झोपडी मे हो रहा था किन्तु इतना प्रकाश तो था कि स्वास्ति उसे मुस्कराता देख सके। स्वास्ति को उसका मुस्कराना अच्छा लगा।

अगले दिन सबेरे स्वास्ति की मित्र सुजाता उसे विदा करने आई। पिछली शाम को जब वह नदी तट की ओर जा रही थी, तो उसने बुद्ध को देखा था और बुद्ध ने कहा था कि स्वास्ति अब भिक्खु संघ मे सम्मिलित होगा। ग्राम-प्रधान की पुत्री सुजाता स्वास्ति से आयु मे दो वर्ष बड़ी थी और वह भी गौतम से सबोधि-प्राप्ति से पहले मिल चुकी थी। सुजाता ने स्वास्ति को जड़ी-बूटियो की औषधि बनाकर साथ ले जाने के लिए दी। उनकी सक्षिप्त बातचीत ही हो पाई थी, तभी उनके शिष्य आ गए।

स्वास्ति का भाई और उसकी बहने पहले ही जाग चुके थे और अपने भाई को विदा देने के लिए तैयार थे। राहुल ने प्रेमपूर्वक प्रत्येक भाई-बहन से बातचीत की और उन्हे मनोबल पक्का रखने और एक-दूसरे की देखभाल करते रहने की प्रेरणा दी। उसने वचन दिया कि हम जब भी उरुवेला के आस-पास तक भी आएगे तो तुम लोगो से मिलने अवश्य आएगे। स्वास्ति के परिवारजन और सुजाता बुद्ध और भिक्खुओ के साथ नदी के तट तक गए और उन्होने बुद्ध, भिक्खुओ, राहुल तथा स्वास्ति को हाथ जोड़कर विदा किया।

स्वास्ति के मन मे हर्ष और भय की भावनाए भरी हुई थीं। यह पहला अवसर था, जब वह उरुवेला गाव छोडकर जा रहा था। बुद्ध ने कहा कि राजगृह पहुचने मे दस दिन लगेगे। अधिकाश व्यक्ति तेजी से चलते है किन्तु बुद्ध और उनके भिक्खु धीरे-धीरे और परम सहजता से चलते थे। जब स्वास्ति ने अपने कदम धीमे किए तो उसका हृदय शान्त हो गया। उसने स्वय को बुद्ध, धर्म और सघ के प्रति पूर्ण हार्दिकता के साथ समर्पित कर दिया। अब उसका यही मार्ग था। उसने उस भूमि और उन लोगो को, जो उसके लिए पूर्णतः परिचित थे, अतिम बार मुड़कर देखा और पाया कि सुजाता और उसके परिवारजन वन के वृक्षो की छाया मे मिले हुए छोटे-छोटे काष्ठ-खड मात्र दिख रहे है।

स्वास्ति को प्रतीत हुआ कि बुद्ध विचरण का आनद लेने के लिए ही चलते हैं और इस बात की चिन्ता ही नहीं करते कि वह कहा तक पहुचेगे। यही स्थिति सभी भिक्खुओ की थी। कोई भी अपने गन्तव्य स्थान तक पहुचने के लिए न तो चिन्तित था और न अधीर। सभी के पग मद, सतुलित और शातिमय थे। ऐसा लगता था मानो सभी सामूहिक रूप से टहल रहे हो। कोई भी क्लाति का अनुभव नहीं करता। फिर भी, वे प्रतिदिन खासा लम्बा मार्ग तय कर लेते थे।

प्रतिदिन वे समीपस्थ गाव मे रुकते और भिक्षाटन करते। वे मार्गों पर बुद्ध के पीछे एक पंक्ति बनाकर चलते। उनकी चाल गरिमामय होती और श्वसन-क्रिया तथा पग-सञ्चलन पर ध्यान केन्द्रित रखते। यदि ग्रामवासी उनके भिक्षा-पात्र मे कुछ भोजन डालते तो वे रुक जाते। कुछ ग्रामीण तो मार्ग के दूसरे ओर खडे होकर ही उनका सम्मानपूर्वक नमन करते। भोजन मिलने पर भिक्खु सभी लोगो के कल्याणार्थ प्रार्थना करते।

भिक्षाटन समाप्त कर लेने पर वे धीरे-धीरे गाव छोड़कर कुछ वृक्षो या घास वाले स्थान को खोजते। वे घेरा बनाकर बैठ जाते और भिक्षाटन मे मिले खाद्य पदार्थों को समान रूप से बाट लेते और ध्यान रखते कि यदि किसी भिक्खु का भिक्षा-पात्र खाली है तो उसे भी भोजन दे दिया जाए। राहुल पास के झरने से एक घडा पानी भर लाता और सम्मानपूर्वक बुद्ध के सामने रख देता। बुद्ध जब अपने हाथो की अजुलि फैलाते तो राहुल उनके हाथो पर जल डालकर साफ करता। ऐसा ही प्रत्येक भिक्खु के लिए करता हुआ वह अत मे स्वास्ति के पास आया। स्वास्ति के पास तब तक कोई भिक्षा-पात्र नहीं था तो राहुल ने अपने भिक्षा-पात्र का आधा भोजन केले के ताजे पत्ते पर रखकर अपने नए मित्र स्वास्ति को दे दिया। भोजन आरभ करने मे पूर्व भिक्खुओ ने हाथ जोडे और सामूहिक रूप से मन्त्रोच्चार किया। उसके बाद उन्होने मौन रहकर सचेत भाव मे प्रत्येक कौर को ग्रहण किया।

भोजन के उपरान्त, कुछ भिक्खुओ ने चलित ध्यान किया तो कुछ ने बैठकर ध्यान-साधना की और कुछ ने थोडी-सी झपकी ली। जब दिन का सर्वाधिक गर्म भाग बीत गया तो वे फिर मार्ग पर चल पडे और तब तक चलते रहे, जब तक कि अंधेरा नहीं हो गया। रात्रि विश्राम के लिए सर्वोत्तम स्थान शात उल्लासमय वन ही होता है। प्रत्येक भिक्खु का अपना आसन होता था और बहुत से भिक्खु उसपर पद्मासन लगाकर बैठ कर आधी रात तक साधना करते रहते। फिर अपना चीवर बिछाकर सो जाते। प्रत्येक भिक्खु के पास दो चीवर होते थे। एक वह शरीर पर धारण किए होता और दूसरा वर्षा या शीत मे रक्षा के लिए रखते। अन्य लोगो की भांति स्वास्ति भी ध्यान-साधना करता रहा और वृक्ष की जड को तकिया बनाकर धरती पर ही सो गया।

अगले दिन प्रात जब स्वास्ति जागा तो उसने देखा कि बुद्ध और अन्य भिक्खु ध्यान भाव मे साधना कर रहे हैं और उनके मुख मडल से अत्यन्त शांति और तेज विकीर्ण हो रहा है। जैसे ही सूर्य क्षितिज पर उभरा, प्रत्येक

भिक्खु ने अपना अतिरिक्त चीवर तह किया, भिक्षा-पात्र हाथ मे लिया और दिन की यात्रा आरभ कर दी।

दिन मे चलते और रात मे विश्राम करते हुए वे लोग दस दिनो मे मगध की राजधानी राजगृह पहुचे। स्वास्ति ने पहली बार नगर देखा था। सड़को के किनारे पर घरो मे निवासी बडी सख्या मे रहते थे और सड़को पर अश्वचालित वाहन चल रहे थे। हर ओर ऊची-ऊची आवाजे और ठहाको के स्वर गूज रहे थे। किन्तु भिक्खुओ का मौन जुलूस उसी प्रकार चल रहा था जैसे वे मौन भाव से वन-प्रान्तर अथवा धान के खेतो से विचरण करते चल रहे हो। कुछ नागरिक उन्हे देखने के लिए तनिक-सा रुकते तो कुछ बुद्ध को पहचान कर उसके सम्मान मे श्रद्धापूर्वक नमन करते। भिक्खु वर्ग उसी प्रकार शात भाव से तब तक चलता रहा जब तक वे नगर के उस पार वेणुवन विहार नहीं पहुच गए।

समस्त विहार मे त्वरित गति से यह समाचार फैल गया कि बुद्ध लौट आए है और कुछ क्षणो मे ही चार सौ भिक्खु बुद्ध का स्वागत करने के लिए एकत्र हो गए। बुद्ध ने अधिक कुछ नहीं कहा, केवल सभी की कुशल-क्षेम और साधना-अभ्यास के विषय मे जानकारी प्राप्त की। उन्होने स्वास्ति को सारिपुत्त को सौंप दिया जो राहुल के भी आध्यात्मिक गुरु थे। सारिपुत्त वेणुवन विहार के श्रामणेरो के गुरु थे और वह लगभग पचास युवक श्रामणेरो के साधना-अभ्यास का मार्ग-निर्देशन करते थे। ये श्रामणेर विहार मे तीन सालो से कम समय से आए हुए थे। विहार के प्रबधाचार्य कौन्डन्न नामक एक भिक्खु थे।

राहुल से कहा गया कि वह विहार-जीवन के आचरणो की जानकारी स्वास्ति को दे यथा—कैसे चलना है, किस प्रकार बैठना है, किस प्रकार खड़े होना है और कैसे अन्य लोगो को नमन करना है, किस प्रकार चलित ध्यान करना है, कैसे बैठकर धारणा-ध्यान करना है और कैसे श्वसन-क्रिया (प्राणायाम) पर ध्यान देना है। उसने स्वास्ति को यह भी बताया कि भिक्खु को चीवर कैसे धारण करना है, कैसे भिक्षा-पात्र पकड़ना है, कैसे प्रार्थना करनी है और कैसे अपना भिक्षा-पात्र साफ करना है। तीन दिनो तक स्वास्ति लगातार राहुल के साथ ही साथ रहा जिससे वह इन सब बातो को भली प्रकार सीख सके। राहुल ने स्वास्ति को पूरे मनोयोग से सभी आचरण-निर्देश बताए-समझाए किन्तु स्वास्ति समझता था कि ये सब कार्य सहज-स्वाभाविक रूप से करने लगने के लिए उसे अभी वर्षों अभ्यास करना होगा। इन आधारभूत

मार्ग-निर्देशो के बाद सारिपुत्त ने स्वास्ति को अपनी कुटिया मे बुलाया और भिक्खु द्वारा अपनाए जाने वाले शीलो की शिक्षा दी।

भिक्खु वह होता है जो गृह त्याग कर बुद्ध को गुरु, धर्म को आत्म-जागृति का मार्ग और सघ को ऐसे समुदाय के रूप मे स्वीकार करता है जो सद्धर्म मार्ग पर चलने मे एक-दूसरे को सहायता देता है। भिक्खु का जीवन सादगी और विनम्रता से परिपूर्ण होता है। भोजन के लिए भिक्षाटन करने से अहकारशून्यता आती है। भिक्षाटन अन्य लोगो के साथ सपर्क साधने का एक माध्यम भी होता है जिससे उन्हे यह समझने मे सहायता की जा सके कि प्रेम और सौहार्द्र (प्रज्ञा) का मार्ग क्या है, जिसकी शिक्षा बुद्धदेव सबको देते है।

दस वर्ष पूर्व स्वास्ति और उसके मित्रो ने बोधिवृक्ष के नीचे बुद्ध को यह देशना करते सुना था कि आत्म-जागृति का मार्ग ही प्रेम और प्रज्ञा का मार्ग है। इसलिए सारिपुत्त ने स्वास्ति को जो कुछ कहा, उसे वह अच्छी तरह हृदयगम कर सका। यद्यपि सारिपुत्त का मुखमडल गभीर था किन्तु उनकी आखो और मुस्कान मे अपार प्रेम और करुणा का तेज भी था। उन्होने स्वास्ति से कहा कि शीघ्र ही एक दीक्षा समारोह होगा जिसमे उसे भिक्खु सघ मे सम्मिलित करने के लिए प्रवृज्या दी जाएगी। उन्होने यह भी बताया कि उस अवसर पर क्या-क्या शब्द उच्चारण करने है।

सारिपुत्त ने स्वय ही दीक्षा-समारोह की अध्यक्षता की जिसमे बीस भिक्खुओ ने भाग लिया। उस अवसर पर बुद्ध और राहुल भी उपस्थित थे जिससे स्वास्ति को विशेष प्रसन्नता हुई। सारिपुत्त ने मौन भाव से एक गाथा मन ही मन पढ़ी और स्वास्ति के सिर के बालो के कुछ गुच्छे काटे। फिर उन्होने वह उस्तरा राहुल को दे दिया जिसने स्वास्ति के सिर का पूर्णतः मुडन किया। सारिपुत्त ने स्वास्ति को तीन चीवर, एक भिक्षा-पात्र और एक घडा दिया। राहुल ने उसे सिखा ही दिया था कि चीवर कैसे धारण करना है, इसलिए स्वास्ति ने बिना कठिनाई के चीवर धारण कर लिया। वह बुद्ध तथा उपस्थित अन्य भिक्खुओ के समक्ष अपना आभार व्यक्त करने के लिए प्रणत हुआ।

बाद मे उस दिन प्रात. उसने पहली बार प्रवृज्जित भिक्खु के रूप मे भिक्षाटन किया। वेणुवन विहार के भिक्खु कई दलो मे विभक्त होकर राजगृह मे भिक्षाटन करते थे। स्वास्ति जिस दल मे था, उसके नेता सारिपुत्त थे। विहार से भिक्षाटन के लिए निकलते समय कुछ पग चलकर स्वास्ति ने स्वय को स्मरण दिलाया कि भिक्षाटन सद्धर्म के मार्ग की साधना का एक अग

अध्याय दो

भैंसों की देख-भाल

उस दिन वातावरण ठडा था। सजगता सहित दोपहर का भोजन कर लेने के बाद प्रत्येक भिक्खु ने अपना पात्र धोकर साफ किया और अपना-अपना आसन ज़मीन पर बिछाकर बुद्ध की ओर मुख करके बैठ गए। वेणुवन की गौरैया चिडिया निडर होकर भिक्खुओ के बीच आ जातीं और कुछ बासो की सबसे ऊची टहनी पर जा बैठी थीं। स्वास्ति ने देखा कि राहुल बुद्ध के ठीक सामने बैठा है। वह पजो के बल चलता हुआ वहा तक गया और राहुल के बराबर ही आसन डालकर बैठ गया। सभी पद्मासन पर बैठे हुए थे। शान्त और गरिमापूर्ण वातावरण मे सभी मौन थे। स्वास्ति जानता था कि सभी सजगता से श्वसन-क्रिया पर ध्यान केन्द्रित कर रहे थे और बुद्ध की देशना आरभ होने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

बासो मे बना मच बस इतना ही ऊचा था कि हर कोई बुद्ध को भलीभाति देख सके। बुद्ध एकदम सहज थे किन्तु समूचा वातावरण गरिमापूर्ण था। जब उन्होंने एकत्र भिक्खुओ को देखा तो उनकी आंखो से प्रेममय करुणा की वर्षा हो रही थी। उनकी आखे जब स्वास्ति और राहुल पर टिकीं तो वह मन्द-मन्द मुस्काए और अपनी देशना आरभ की :

'आज मै आपसे भैंसो की देख-भाल की चर्चा करूगा। अच्छे चरवाहे को क्या-क्या आना चाहिए और उसे क्या कुछ करना चाहिए। जो भैंसो की ठीक से देख-भाल करता है, वह अपने भैंसो को आसानी से पहचानता भी है। वह हर एक भैंसे की प्रकृति और प्रवृत्तियो को जानता है। वह जानता है कि कैसे रगडकर उन्हें नहलाना है, उनके घावो को कैसे ठीक करना है, धुएं के माध्यम से मच्छरों को कैसे भगाना है, उनके चलने के लिए सुरक्षित रास्ता खोजना है, कैसे उनसे प्रेम करना है, नदी पार करने के लिए

"जैसे चरवाहा अपनी भैंसों के लिए ताजा घास तलाश कर के रखता है, उसी प्रकार भिक्खु जानता है कि सचेतनता के चार चरणो से मुक्ति प्राप्त होती है।"

सुरक्षित एव उथला स्थान देखना है, उनके लिए ताजी घास और पानी ढूढना है, चरागाहो को सुरक्षित कैसे रखना है और कैसे अधिक उम्र के भैंसो को छोटे भैंसो के लिए आदर्श बनाना है।

'सुनो भिक्खुओ। जैसे चरवाहा अपने हर भैसे को पहचानता है, उसी प्रकार भिक्खु को अपने शरीर के प्रत्येक अनिवार्य तत्त्व को जानना चाहिए। जैसे चरवाहा हर भैंसे की प्रकृति और प्रवृत्तियो को जानता है, उसी प्रकार भिक्खु को जानना चाहिए कि शरीर, वाणी और चित्त के कौन-कौन से कार्य अच्छे है और कौन-से बुरे। जैसे चरवाहा अपनी भैंसो को रगड़-रगडकर नहलाता है, भिक्खु को अपने मन और शरीर को इच्छाओ, राग, क्रोध और वितृष्णा के मैल से कैसे शुद्ध रखना चाहिए।'

जब बुद्ध देशना दे रहे थे तो उन्होने स्वास्ति पर से दृष्टि नहीं हटाई। स्वास्ति ने अनुभव किया कि बुद्ध की देशना का स्रोत वह ही है। उसे याद आया कि वर्षों पहले वह जब बुद्ध के पास बैठता था तो बुद्ध पूछते थे कि तुम भैसो की देख-भाल कैसे करते हो, सभी कामो को विस्तार से बताओ। अगर वह ये सब बाते उन्हे नहीं बताता तो राजमहलो मे पला-बढा राजकुमार भला भैसो की देख-भाल की इतनी बाते कैसे जान सकता था।

यद्यपि बुद्ध सामान्य स्वर मे ही देशना कर रहे थे, किन्तु उनका स्वर और हर शब्द एकदम स्पष्ट था। उनका एक-एक शब्द हर कोई समझ रहा था 'जिस प्रकार चरवाहा भैसो के घावो की देख-भाल करता है, भिक्खु को अपनी छहो इंद्रियो—आख, कान, नाक, जिह्वा, शरीर और चित्त—पर नजर रखनी चाहिए जिससे वे आसक्तियो मे भ्रमित न हो जाए। जैसे चरवाहा आग जलाकर धुएं के द्वारा भैसो की मच्छरो से रक्षा करता है, उसी प्रकार भिक्खु को भी उपदेशो का प्रयोग करके जाग्रत् रहना चाहिए जिससे वह अपने आस-पास के लोगो को दिखा सके कि शरीर एव चित्त को अभीप्साओ का शिकार होने से कैसे बचाया जा सकता है। जैसे चरवाहा भैसो के आवागमन के लिए सुरक्षित रास्ते तलाश करके रखता है, भिक्खु को उन मार्गो से बचना चाहिए जो [illegible], धन एव इंद्रिय-सुख की कामना जगाते हैं जैसे होटल या थियेटर मे जाना। जिस प्रकार चरवाहा अपनी भैसो से प्रेम करता है, भिक्खु को ध्यान के आनद और शांति की चाह रखनी चाहिए। जैसे चरवाहा भैंसो के नदी पार ले जाने के लिए सुरक्षित और उथले पानी वाली जगह की खोज करता है, उसी प्रकार भिक्खु को अपना जीवन व्यतीत करने के [illegible] [illegible] अर्थ [illegible] पर निर्भर रहना चाहिए। जिस प्रकार चरवाहा भैसो

के लिए ताजी घास और पानी की खोज करता रहता है, भिक्खुओ को 'सम्यक् जागरूकता (प्राणायाम) के चार चरणों' को जानना चाहिए जो निर्वाण की दिशा मे वढ़ने के सवल होते है। जिस प्रकार चरवाहा खेतो को भैसो द्वारा जरूरत से ज़्यादा चरने से वचाता है, उसी प्रकार भिक्खु को अपने निकट के उस समाज से सपर्क वनाए रखना चाहिए जिससे वह भिक्षा प्राप्त करता है। जिस प्रकार चरवाहा वड़े भैसो को छोटी आयु की भैसो के लिए आदर्श के रूप मे प्रयोग करता है, भिक्खु को, वैसे ही, वयोवृद्धो के ज्ञान और अनुभव पर निर्भर करना चाहिए। ओ भिक्खुओ, जो भी इन ग्यारह बातो पर आचरण करता है, वह छः वर्पो के अभ्यास द्वारा 'अर्हत्' वन सकता है।"

स्वास्ति आश्चर्यपूर्वक सव कुछ सुनता रहा। वुद्ध को वह हर वात याद थी, जो दस वर्प पहले उसने उनसे कही थीं और उसकी हर वात को वुद्ध ने भिक्खुओ द्वारा तपस्या के मार्ग पर चलने का साधन बनाने के लिए प्रयोग किया था। यद्यपि स्वास्ति जानता था कि वुद्ध समस्त भिक्खु-समुदाय को सवोधित कर रहे थे, उसके मन पर इस वात की स्पष्ट छाप थी कि मानो वुद्ध सीधे उसे ही संवोधित कर रहे हो। उसकी आखे एक पल के लिए भी वुद्ध के चेहरे पर से नहीं हटी थीं।

उनके वचन ऐसे थे जो सीधे हृदय को छूने वाले थे, हालाकि 'छः इद्रिया', 'चार आर्य सत्यो' और 'सम्यक जागरूकता के चार चरण' सरीखी गूढ़ शब्दावली को स्वास्ति समझ नहीं सका था। वह राहुल से पूछकर इनके अर्थ को वाद मे भली प्रकार जान लेगा किन्तु वुद्ध की देशना का मूल भाव वह समझ गया था।

वुद्ध की देशना चल रही थी। वह उपस्थित भिक्खुओ को भैसो के चलने के लिए सुरक्षित मार्ग चुनने के विषय मे बता रहे थे। अगर उस मार्ग मे वहुत से काटे होगे तो वे भैसो को चुभ जाएगे जिनसे उन्हे घाव लगेगे। घाव पक सकते है और यदि चरवाहे को पता नहीं हो कि घावो को कैसे ठीक करना है तो भैसे को बुखार हो सकता है और वह मर भी सकता है। सम्यक् धर्म-मार्ग का आचरण करना भी वैसा ही है। यदि भिक्खु सम्यक् धर्म-मार्ग नहीं जान लेता तो उसका मन तथा शरीर घायल हो सकते हैं। लोभ और क्रोध उसके घावो को और भी विषाक्त बना सकते हैं और स्थिति इस सीमा तक पहुच सकती है कि निर्वाण का मार्ग ही अवरुद्ध हो जाए।

वुद्ध बोलते-बोलते थोड़ा रुके। उन्होने स्वास्ति को सकेत से अपने पास आने को कहा। स्वास्ति हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। बुद्ध मुस्करा रहे थे।

सुरक्षित एव उथला स्थान देखना है, उनके लिए ताजी घास और पानी ढूढना है, चरागाहो को सुरक्षित कैसे रखना है और कैसे अधिक उम्र के भैंसो को छोटे भैंसो के लिए आदर्श वनाना है।

'सुनो भिक्खुओ । जैसे चरवाहा अपने हर भैसे को पहचानता है, उसी प्रकार भिक्खु को अपने शरीर के प्रत्येक अनिवार्य तत्त्व को जानना चाहिए। जैसे चरवाहा हर भैंसे की प्रकृति और प्रवृत्तियो को जानता है, उसी प्रकार भिक्खु को जानना चाहिए कि शरीर, वाणी और चित्त के कौन-कौन से कार्य अच्छे हैं और कौन-से वुरे। जैसे चरवाहा अपनी भैंसो को रगड़-रगड़कर नहलाता है, भिक्खु को अपने मन और शरीर को इच्छाओ, राग, क्रोध और वितृष्णा के मैल से कैसे शुद्ध रखना चाहिए।'

जव वुद्ध देशना दे रहे थे तो उन्होने स्वास्ति पर से दृष्टि नहीं हटाई। स्वास्ति ने अनुभव किया कि बुद्ध की देशना का स्रोत वह ही है। उसे याद आया कि वर्षों पहले वह जव वुद्ध के पास वैठता था तो बुद्ध पूछते थे कि तुम भैंसो की देख-भाल कैसे करते हो, सभी कामो को विस्तार से वताओ। अगर वह ये सव वाते उन्हे नहीं वताता तो राजमहलो मे पला-बढ़ा राजकुमार भला भैंसो की देख-भाल की इतनी वाते कैसे जान सकता था।

यद्यपि वुद्ध सामान्य स्वर मे ही देशना कर रहे थे, किन्तु उनका स्वर और हर शब्द एकदम स्पष्ट था। उनका एक-एक शब्द हर कोई समझ रहा था, 'जिस प्रकार चरवाहा भैसो के घावो की देख-भाल करता है, भिक्खु को अपनी छहो इद्रियो—आख, कान, नाक, जिह्वा, शरीर और चित्त—पर नजर रखनी चाहिए जिससे वे आसक्तियो मे भ्रमित न हो जाए। जैसे चरवाहा आग जलाकर धुएं के द्वारा भैसो की मच्छरो से रक्षा करता है, उसी प्रकार भिक्खु को भी उपदेशो का प्रयोग करके जाग्रत् रहना चाहिए जिससे वह अपने आस-पास के लोगो को दिखा सके कि शरीर एव चित्त को अभीप्साओ का शिकार होने से कैसे वचाया जा सकता है। जैसे चरवाहा भैसो के आवागमन के लिए सुरक्षित रास्ते तलाश करके रखता है, भिक्खु को उन मार्गों से वचना चाहिए जो ख्याति, धन एव इद्रिय-सुख की कामना जगाते हैं जैसे होटल या थियेटर मे जाना। जिस प्रकार चरवाहा अपनी भैसो से प्रेम करता है, भिक्खु को ध्यान के आनद और शांति की चाह रखनी चाहिए। जैसे चरवाहा भैसो को नदी पार ले जाने के लिए सुरक्षित और उथले पानी वाली जगह की खोज करता है, उसी प्रकार भिक्खु को अपना जीवन व्यतीत करने के लिए चार आर्य सत्यो पर निर्भर रहना चाहिए। जिस प्रकार चरवाहा भैसो

के लिए ताजी घास और पानी की खोज करता रहता है, भिक्खुओ को 'सम्यक् जागरूकता (प्राणायाम) के चार चरणों' को जानना चाहिए जो निर्वाण की दिशा मे बढ़ने के सबल होते हैं। जिस प्रकार चरवाहा खेतो को भैसो द्वारा जरूरत से ज़्यादा चरने से बचाता है, उसी प्रकार भिक्खु को अपने निकट के उस समाज से सपर्क बनाए रखना चाहिए जिससे वह भिक्षा प्राप्त करता है। जिस प्रकार चरवाहा बड़े भैसो को छोटी आयु की भैसो के लिए आदर्श के रूप मे प्रयोग करता है, भिक्खु को, वैसे ही, वयोवृद्धो के ज्ञान और अनुभव पर निर्भर करना चाहिए। ओ भिक्खुओ, जो भी इन ग्यारह बातो पर आचरण करता है, वह छः वर्षो के अभ्यास द्वारा 'अर्हत्' बन सकता है।"

स्वास्ति आश्चर्यपूर्वक सब कुछ सुनता रहा। बुद्ध की वह हर बात याद थी, जो दस वर्ष पहले उसने उनसे कही थीं और उसकी हर बात को बुद्ध ने भिक्खुओ द्वारा तपस्या के मार्ग पर चलने का साधन बनाने के लिए प्रयोग किया था। यद्यपि स्वास्ति जानता था कि बुद्ध समस्त भिक्खु-समुदाय को सबोधित कर रहे थे, उसके मन पर इस बात की स्पष्ट छाप थी कि मानो बुद्ध सीधे उसे ही सबोधित कर रहे हो। उसकी आखे एक पल के लिए भी बुद्ध के चेहरे पर से नहीं हटी थीं।

उनके वचन ऐसे थे जो सीधे हृदय को छूने वाले थे, हालाकि 'छः इद्रिया', 'चार आर्य सत्यों' और 'सम्यक जागरूकता के चार चरण' सरीखी गूढ़ शब्दावली को स्वास्ति समझ नहीं सका था। वह राहुल से पूछकर इनके अर्थ को बाद मे भली प्रकार जान लेगा किन्तु बुद्ध की देशना का मूल भाव वह समझ गया था।

बुद्ध की देशना चल रही थी। वह उपस्थित भिक्खुओ को भैसो के चलने के लिए सुरक्षित मार्ग चुनने के विषय मे बता रहे थे। अगर उस मार्ग मे बहुत से काटे होगे तो वे भैसो को चुभ जाएगे जिनसे उन्हे घाव लगेगे। घाव पक सकते है और यदि चरवाहे को पता नहीं हो कि घावो को कैसे ठीक करना है तो भैसे को बुखार हो सकता है और वह मर भी सकता है। सम्यक् धर्म-मार्ग का आचरण करना भी वैसा ही है। यदि भिक्खु सम्यक् धर्म-मार्ग नहीं जान लेता तो उसका मन तथा शरीर घायल हो सकते हैं। लोभ और क्रोध उसके घावो को और भी विषाक्त बना सकते है और स्थिति इस सीमा तक पहुच सकती है कि निर्वाण का मार्ग ही अवरुद्ध हो जाए।

बुद्ध बोलते-बोलते थोड़ा रुके। उन्होने स्वास्ति को सकेत से अपने पास आने को कहा। स्वास्ति हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। बुद्ध मुस्करा रहे थे।

उन्होने स्वास्ति का उपस्थित भिक्खुओ से परिचय कराते हुए कहा :

"दस वर्ष पहले मेरी भेट स्वास्ति से गया के समीप एक वन मे हुई थी जव मुझे सवोधि की प्राप्ति नहीं हुई थी। उस समय यह ग्यारह वर्ष का था। स्वास्ति की लाई हुई कुशा से मैंने आसन वनाया था जिस पर मै वोधि-वृक्ष के नीचे वैठा था। भैसो की देख-भाल की जो भी वाते मैने अभी वताई हैं, वे सव मैंने इसी से सीखी थीं। मैं जानता था कि यह बहुत अच्छा चरवाहा है, और आज मै जानता हू कि यह एक श्रेष्ठ भिक्खु भी वनेगा।"

सभी की आखे स्वास्ति पर लगी थीं। उसके कान और गाल एकदम लाल हो उठे। सभी लोगो ने हाथ जोड़कर उसको नमन किया और उसने भी सभी को नमन किया। सचेत श्वसन-क्रिया (प्राणायाम) की सोलह विधिया वताने की राहुल को आज्ञा देते हुए बुद्ध ने अपनी देशना समाप्त की। राहुल ने खड़े होकर हाथ जोड़े और घटा-ध्वनि के समान स्पष्ट स्वर मे प्रत्येक विधि का वर्णन किया और भिक्खु समुदाय को नमन किया। बुद्ध उठ खड़े हुए और मद गति से अपनी कुटिया मे चले गए। उनके वाद सभा मे आए सभी भिक्खुओ ने अपने-अपने आसन उठाए और धीरे-धीरे वन मे अपने-अपने स्थानो पर चले गए। कुछ भिक्खु कुटियो मे रहते थे। वहुत से भिक्खु वास के (वृक्षों) के नीचे ही खुले मे सोते और ध्यान-साधना किया करते थे। जव वहुत तेज वर्षा होती तो वे लोग अपने आसन उठाकर कुटियो मे या प्रार्थना-कक्षो मे शरण ले लेते थे।

स्वास्ति के आचार्य, सारिपुत्त ने राहुल के पास ही खुले मे उसके रहने का स्थान नियत किया था। जव राहुल छोटा ही था, तो वह आचार्य की कुटिया मे रहता। वही उसके मार्ग-दर्शक थे। अव उसे वास-वृक्षों के नीचे रहने का स्थान दिया गया था। राहुल के साथ रहने का स्थान पाकर स्वास्ति वहुत प्रसन्न था।

उसी दिन तीसरे पहर वैठकर ध्यान-साधना करने के पश्चात् स्वास्ति ने अकेले ही चलित ध्यान का अभ्यास शुरू किया। उसने एकान्त मार्ग चुना, जिस पर किसी से मिलना न हो किन्तु उसने पाया कि श्वसन-क्रिया पर ध्यान करते रहना कठिन कार्य है। उसका ध्यान अपने भाई-वहनो और घर की ओर चला गया। नैरजना नदी की ओर जाता हुआ मार्ग उसकी स्मृति मे कौंध गया। उसने देखा कि छोटी-सी भीमा ने अपने आसू छिपाने के लिए मुह नीचा कर लिया है और रूपक अकेले ही रामभूल की भैसो की

देख-भाल कर रहा है। उसने इन विचारो को चित्त से हटा देने और अपना ध्यान अपने पद-सचलन और श्वसन-क्रिया पर केन्द्रित करने का प्रयास किया। उसे इस वात पर शर्म आई कि वह अपने अभ्यास मे नही जुट पाया। वह बुद्ध के विश्वास के योग्य नहीं है। चलित ध्यान करने की इस चेष्टा के वाद उसने सोचा कि इस विषय मे वह राहुल से सहायता मागेगा। इसके अलावा और भी वाते थीं जो बुद्ध ने अपनी देशना के समय आज प्रातः कही थीं जिन्हे वह पूरी तरह से समझ नहीं पाया था। उसे विश्वास था कि उन वातो को राहुल समझा देगा। राहुल के विषय मे सोचते ही वह उत्साहित और शात हो गया। इससे उसे अपने श्वसन-क्रिया एव पग-सचलन पर ध्यान लगाना आसान हो गया।

स्वास्ति को राहुल की खोज नहीं करनी पड़ी क्योकि वह स्वय ही उसे ढूढता हुआ आ गया। वह स्वास्ति को लेकर वास के वृक्ष के नीचे अपने स्थान पर आ गया और कहा :

'आज अपराह्न मे मै मान्य आनद से मिला था। वह तुमसे उस समय की सभी वाते जानने के वहुत इच्छुक हैं, जव तुम पहली बार बुद्ध से मिले थे।'

'राहुल ये मान्य आनद कौन है ?'

'वह शाक्यवश के एक राजकुमार हैं और बुद्ध के चचेरे भाई है। वह सात वर्ष पूर्व ही भिक्खु वने है और आज श्रेष्ठतम शिष्यो मे उनकी गणना होती है। वही महान गुरु के स्वास्थ्य का ख्याल रखते है। मान्य आनद ने हम लोगो को कल शाम अपनी कुटिया मे आने के लिए कहा है। बुद्ध जव गया वन मे तपस्या कर रहे थे, उस समय के विषय मे तो मै भी सव कुछ जानना चाहूगा।'

'क्या वोधिसत्त्व ने आपको अभी तक वह सब नहीं वताया ?'

'वताया तो है किन्तु विस्तार से नही। मुझे विश्वास है कि उस समय की वहुत-सी वाते तुम वता सकोगे।'

'वाते तो वहुत अधिक नहीं है लेकिन मुझे जो भी याद है, अवश्य बताऊगा। राहुल, मान्य आनद कैसे व्यक्ति है ? मुझे उनसे मिलने मे कुछ घबराहट हो रही है।'

'चिन्ता बिल्कुल भी मत करो। वे बहुत दयालु एव मैत्रीपूर्ण है। मैंने उन्हे जव तुम्हारे परिवार के विषय मे बताया तो वह बहुत हर्षित हुए।'

राहुल जब उठकर चलने को हुआ तो स्वास्ति ने उसका चीवर पकड़

लिया और कहा- 'आप कुछ देर और नहीं रुक सकते ? मै आपसे कुछ बाते पूछना चाहता हू। आज सबेरे देशना मे बुद्ध ने ग्यारह बातो की चर्चा की थी, जिनका पालन भिक्खु को करना चाहिए। लेकिन मुझे वे सभी बाते याद नहीं रहीं। क्या आप मुझे वे बाते दोबारा बता सकेगे ?'

'मै स्वय उनमे से नौ बाते ही याद रख पाया हू। चिन्ता मत करो। कल वे सब बाते मान्य आनद से पूछ लेना।'

'क्या आपको विश्वास है कि मान्य आनद को वे सभी बाते याद होगी ?'

'निश्चय ही। यदि वे एक सौ ग्यारह होतीं, तो भी वे मान्य आनद को याद होतीं। तुम अभी उनको जानते नहीं। किन्तु यहा सभी उनकी प्रखर स्मरण-शक्ति के प्रशसक हैं। बुद्ध जो कुछ भी कहते है, उसकी छोटी से छोटी बात तक को पूर्ण शुद्धता के साथ वे दोहरा सकते हैं। यहा सभी उनको बुद्ध का सर्वाधिक ज्ञान-सम्पन्न शिष्य मानते है। जब भी कोई बुद्ध की देशना की कोई बात भूल जाता है, तो वह मान्य आनद से पूछ लेता है। कभी-कभी श्रमण वर्ग अध्ययन सत्रो का आयोजन करता है तो मान्य आनद बुद्ध की आधारभूत शिक्षाओं को सुनाते हैं।'

'तब तो हम बहुत ही भाग्यवान हैं। हम प्रतीक्षा करेगे और कल उनसे पूछ लेगे। लेकिन मै आपसे कुछ और भी पूछना चाहता हू कि चलित ध्यान करते समय आप मन को कैसे शान्त करते है ?'

'क्या तुम यह कहना चाहते हो कि चलित ध्यान के समय तुम्हारे मन मे अन्य विचार आ जाते हैं ? जैसे कि अपने परिवार की याद आना।'

स्वास्ति ने अपने मित्र का हाथ पकड लिया, 'आपको कैसे यह सब ज्ञात हुआ ? मेरे साथ, ठीक यही बीती है। पता नहीं क्यो आज शाम मुझे अपने परिवारजनो की बहुत जोर से याद आई। मुझे बड़ा खराब लगा। शायद मुझमे सद्धर्म-पालन का सकल्प दृढ़ नहीं है। मै आपके और बुद्ध के समक्ष शर्मिन्दा अनुभव करता हू।'

राहुल ने कहा-'इसमे शर्मिन्दा होने की क्या बात है। जब मैं पहले बुद्ध के सघ मे आया था तो मुझे अपनी माता, अपने दादा और अपनी दादी की बहुत याद आई। कई रातो तक मैं आसन मे मुह छिपाए, अकेला रोता रहा। मुझे पता है कि मेरी मा, दादाजी और दादी जी को भी मेरी बहुत याद आई होगी। लेकिन कुछ दिनो के बाद सब सामान्य हो गया।'

राहुल ने स्वास्ति को हाथ पकडकर खड़ा किया और मित्र भाव से उसको गले लगा लिया।

तुम्हारी भाई-वहने बड़ी प्यारी हैं। यह सर्वथा स्वाभाविक है कि तुम्हे उनकी याद आए। लेकिन तुम शीघ्र ही अपने इस नए जीवन के अभ्यस्त हो जाओगे। हमे यहा वहुत सारे काम करने है। हमे निरन्तर साधना-अभ्यास और अध्ययन करना चाहिए। लेकिन सुनो, जव भी मुझे अवसर मिलेगा, मै तुम्हे अपने परिवार के विपय मे वताऊगा। ठीक है न ?'

स्वास्ति ने राहुल का हाथ अपने दोनो हाथो मे थाम लिया और स्वीकृति मे सिर हिला दिया। इसके वाद राहुल अपने कपड़े धोने चला गया और स्वास्ति झाडू लेकर रास्ते मे पड़ी वास की पत्तिया साफ करने लगा।

अध्याय तीन

घास का उपहार

सोने से पहले स्वास्ति वास-वृक्ष के नीचे वैठा उन महीनो की याद करने लगा जव पहली वार उसकी वुद्ध से भेट हुई थी। उस समय उसकी आयु सिर्फ ग्यारह वर्ष की थी। उसकी मा का देहान्त हाल ही मे हुआ था। तीन सगे भाई-वहनो को पालने का भार उसके कधो पर आ पडा था। उसकी सवसे छोटी वहिन तो शिशु ही थी जिसके पीने के लिए दूध भी नहीं था। सौभाग्य से, गाव के रामभूल नामक व्यक्ति ने स्वास्ति को अपने चार वडे भैसो और एक भैस की देख-भाल के लिए रख लिया था। चराते समय वह भैस को दुह लिया करता था और इस प्रकार वह अपनी छोटी वहिन को दूध पिला पाता था। उसने भैसो की देख-भाल पूरी सावधानी से करना शुरू कर दिया था क्योकि वह जानता था कि कैसे भी हो, उसे यह नोकरी वनाए रखनी है, वरना उसके भाई-वहिन भूखो मर जाएगे। पिता की मृत्यु के वाद उसकी झोपड़ी की छत पर नया फूस भी नहीं डाला जा मका था। इससे, जव भी वर्पा होती थी, रूपक छत के छेदो के नीचे पत्थर की कोठारी रखता फिरता था ताकि वर्पा का पानी उसी मे जमा हो सके (और सारी झोपडी गीली न हो)। वाला केवल छ: वर्प की थी लेकिन उसे खाना वनाना, छोटी वहन की देख-रेख करना और जगल से, जलाने के लिए लकड़िया लाना भी सीखना पड़ा था। हालांकि वह वहुत ही छोटी थी, फिर भी आटे को गूध कर भाई-वहिनो के लिए रोटिया सेक ही लेती थी। शाक-सव्जी या दाल तो उन्हे शायद ही कभी नसीव होती हो। जव स्वास्ति भैंसो को, दिन भर चराने के वाद, रामभूल के घर छोड़ने जाता था तो सव्जी-मसाले की जो सुगध उसके रसोईघर से उठती थी, उससे स्वास्ति के मुह मे पानी भर आता था। जव से उसके पिता की मृत्यु हुई थी, मास

या सब्जी की मसालेदार तरी मे चपाती डुबोकर खाना तो उसके लिए अजानी रईसी बन गई थी। बच्चो के कपडे फट कर चीथड़े हो गए थे। स्वास्ति के पास बस एक पुरानी धोती ही थी। जब कडाके की सर्दी होती तो वह पुराना मटमैला कपडा अपने कधो पर डाल लेता था। हालाकि उस कपड़े का रग गायब हो गया था और तार-तार हो चुका था, फिर भी, उसके लिए वह बहुत ही कीमती था।

स्वास्ति को भैसो को चराने के लिए अच्छी घास वाली जगहे खोजकर रखनी पड़ती थीं क्योंकि अगर वह भैसो को भूखा ही बाड़े मे लौटा लाएगा तो रामभूल उसकी अच्छी पिटाई करेगा। इसके अलावा उसको भैसो के रात मे खाने हेतु एक गठरी घास भी काटकर लानी पडती थी। शाम को जब मच्छर अधिक होते तो स्वास्ति आग जलाकर उसके धुए से मच्छरो को भगाने का इन्तजाम भी करता था। इसके बदले मे रामभूल उसे हर तीसरे दिन चावल, आटा और नमक दिया करता था। कभी-कभी स्वास्ति नैरजना नदी के किनारे से कुछ मछलियां पकड़ लाता था।

एक दिन दोपहर मे, जब वह भैसो को नहला चुका और घास भी काट ली तो स्वास्ति ने सोचा कि ठडे वन मे कहीं एकान्त मे कुछ क्षणो के लिए विश्राम कर ले। भैसो को जगल मे नदी के किनारे चरते छोड़कर, स्वास्ति ऐसे बडे वृक्ष की खोज करने लगा जिसके तने से पीठ लगाकर आराम किया जा सके। अचानक वह रुक गया। उससे बीस फुट की दूरी पर पीपल के वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति चुपचाप बैठा था। स्वास्ति ने उसकी ओर आश्चर्य से देखा। उसने आज तक किसी को इतने सीधे तने हुए ढग से बैठे हुए नहीं देखा था। उसकी पीठ सीधी थी और उसने पाव जघाओ पर रखे हुए थे। वह एकदम स्थिर एव सयत भाव से बैठा था। उसकी आखे अधखुली लग रही थीं और उसके हाथ गोदी मे सहजता से एक-दूसरे के ऊपर रखे हुए थे। वह ईंटिया रग का वस्त्र इस प्रकार धारण किए हुए था कि उसका एक कधा खुला हुआ था। उसके शरीर का शात, गभीर और गरिमामय ओज सब ओर फैल रहा था। केवल उसकी ओर एक बार देख लेने से उसे आश्चर्यजनक ताजगी महसूस हुई। उसका हृदय धड़कने लगा। वह समझ ही नहीं पा रहा था कि जिस व्यक्ति से वह मिला तक नहीं है, उसके लिए मन मे यह विशिष्ट भाव क्यो जाग रहा है। फिर भी, वह उसके प्रति आदर-भाव से भरा बड़ी देर तक अविचल खड़ा देखता रहा।

तब उस व्यक्ति ने आखे खोलीं। पहले उसने स्वास्ति को नही देखा

क्योकि उसने अपना पद्मासन खोलकर धीरे-धीरे अपनी टागे अलग की और टखनो और तलवो को मलने लगा। धीरे से वह उठ खड़ा हुआ और चलने लगा। वह विपरीत दिशा मे चल रहा था, इसलिए उसने तब तक भी स्वास्ति को देखा नहीं। किसी प्रकार की आहट किए बिना, स्वास्ति उसे वन-भूमि पर धीमे-धीमे ध्यानपूर्वक कदम रखकर चलते देखता रहा। सात-आठ पग चलकर व्यक्ति पीछे की ओर मुड़ा और तभी स्वास्ति पर उसकी दृष्टि पडी।

वह वालक की ओर देखकर मुस्कराया। स्वास्ति की ओर आज तक किसी ने ऐसी मृदुल एव सतोषदायी मुस्कान से नहीं देखा था। किसी अज्ञात शक्ति से खिंचा स्वास्ति उसकी तरफ दौड़ पड़ा लेकिन जब वह उससे कुछ ही फुट की दूरी पर था तो अकस्मात् रुक गया। उसे याद आ गया कि उसे किसी उच्च वर्ण के व्यक्ति के समीप जाने का अधिकार नहीं है।

स्वास्ति एक अछूत था। वह समाज मे प्रचलित चार वर्णों मे से किसी वर्ण का नहीं था। उसके पिता ने वताया था कि ब्राह्मण सबसे उच्च वर्ण के होते हैं। इस वर्ण मे जन्मे लोग आचार्य तथा अध्यापक होते हैं जो वेदो तथा अन्य धर्म-ग्रथो का अध्ययन और देवताओ की अर्चना करते हैं। जब ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की तो 'ब्राह्मण' उनके मुख से प्रकट हुए थे। ब्राह्मणो के वाद सर्वोच्च वर्ण के लोग 'क्षत्रिय' होते हैं। वे राजनेता और योद्धा हो सकते हैं क्योंकि उनका जन्म ब्रह्मा की दोनों भुजाओ से हुआ था। 'वैश्य' वर्ण के लोग व्यापारी, कृषक और दस्तकार होते हैं और उनका जन्म ब्रह्मा की जघाओ से हुआ था। शूद्रो का जन्म ब्रह्मा के चरणो से हुआ था और चातुर्वर्ण-व्यवस्था मे उनका स्थान सवसे नीचा था। किन्तु स्वास्ति के परिवारजन तो अछूत थे जो किसी भी वर्ण के नहीं थे। इन लोगो को गाव की सीमा के वाहर घर वनाकर रहना होता था और ये सबसे नीच किस्म के काम करते थे जैसे कूड़ा-कर्कट उठाना, खेतों मे खाद डालना, सड़के वनाना, सूअर पालना और भैसो को चराना या उनकी देख-भाल करना। जो व्यक्ति जिस वर्ण मे जन्मा हो, उससे वही वर्ण मानकर चलने की अपेक्षा की जाती थी। पवित्र धर्म-ग्रथो ने वताया है कि अपनी स्थिति को स्वीकार कर लेना ही श्रेयस का मार्ग है।

यदि स्वास्ति सरीखा अछूत उच्च वर्ण के किसी व्यक्ति को छू लेगा तो उसकी पिटाई की जाएगी। उरुवेला गाव मे एक अछूत की इसीलिए जमकर पिटाई की गई थी क्योंकि उसने ब्राह्मण को अपने हाथ से छू लिया था। यदि किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय को कोई अछूत स्पर्श कर ले तो वह अपवित्र

हो जाता है और अपनी शुद्धि के लिए उसे घर जाकर कई सप्ताहो तक उपवास और प्रायश्चित करना पड़ता है। जब भी स्वास्ति भैसो को वापस ले जाता तो इस बात की बेहद सावधानी बरतता था कि रामभूल के घर के बाहर या रास्ते मे किसी उच्च वर्ण के व्यक्ति के पास से भी न गुजरे। स्वास्ति को लगता था कि मुझसे तो ये भैसे ही अधिक भाग्यवान है क्योकि इन्हे छूकर ब्राह्मण अपवित्र नहीं होता। भले ही अछूत का कोई दोष न हो, फिर भी, यदि उच्चवर्ण का कोई व्यक्ति अकस्मात् उससे छू जाता तो, अछूत की ही बेरहमी से पिटाई होती।

यहा स्वास्ति के सामने, अत्यधिक आकर्षक एव तेजस्वी व्यक्ति खड़ा था और उसे देखकर स्पष्ट था कि वह उसके सामाजिक स्तर का नही है। जिसकी इतनी कृपालु एव सतोषपूर्ण मुस्कान हो, वह निश्चय ही स्वास्ति द्वारा छू लेने पर उसे पीटेगा तो नही। किन्तु वह किसी विशिष्ट व्यक्ति को अपवित्र करने का कारण नहीं बनना चाहता था, इसीलिए वह उस समय ठिठक गया जब उस व्यक्ति से कुछ ही कदम दूर था। स्वास्ति की हिचकिचाहट देखकर वह व्यक्ति स्वय ही आगे बढ़ आया। उस व्यक्ति से वह छू न जाए, इसके लिए स्वास्ति कुछ कदम पीछे हट गया। किन्तु वह व्यक्ति स्वास्ति से अधिक फुर्तीला निकला। उसने क्षणभर मे अपने बाए हाथ से स्वास्ति का कधा पकड़ लिया। अपने दाहिने हाथ से उसने स्वास्ति के सिर पर प्यार भरी धौल जमा दी। स्वास्ति अवाक् खड़ा का खड़ा रह गया। आज तक किसी ने उसके सिर पर इतने स्नेह से कृपापूर्ण हाथ नहीं रखा था। फिर भी, स्वास्ति एक भय के भाव से सिहर उठा।

'डरो मत बच्चे।' उस व्यक्ति ने शात और आश्वसनपूर्ण स्वर मे कहा।

उसका स्वर सुनते ही स्वास्ति की भय-भावना गायब हो गई। उसने अपना सिर उठाया और उसकी कृपा एव सतोपदायी मुस्कान को निहारता रहा। एक क्षण की हिचक के बाद उसने लड़खड़ाती आवाज मे कहा–'श्रीमन्, आप मुझे बहुत अच्छे लगे।'

उस व्यक्ति ने स्वास्ति की ठोढ़ी अपने हाथ से ऊपर करके उसकी आंखो से आखे मिलाकर कहा–'मुझे भी तुम अच्छे लगे। क्या पास ही कहीं रहते हो ?'

स्वास्ति ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने उस व्यक्ति का बाया हाथ अपने दोनो हाथो मे ले लिया और उसके मन को उलझन मे डालने वाला प्रश्न कर ही डाला–'जब मैं आपका इस प्रकार स्पर्श कर रहा हूं तो क्या आप अपवित्र नहीं हो गए।'
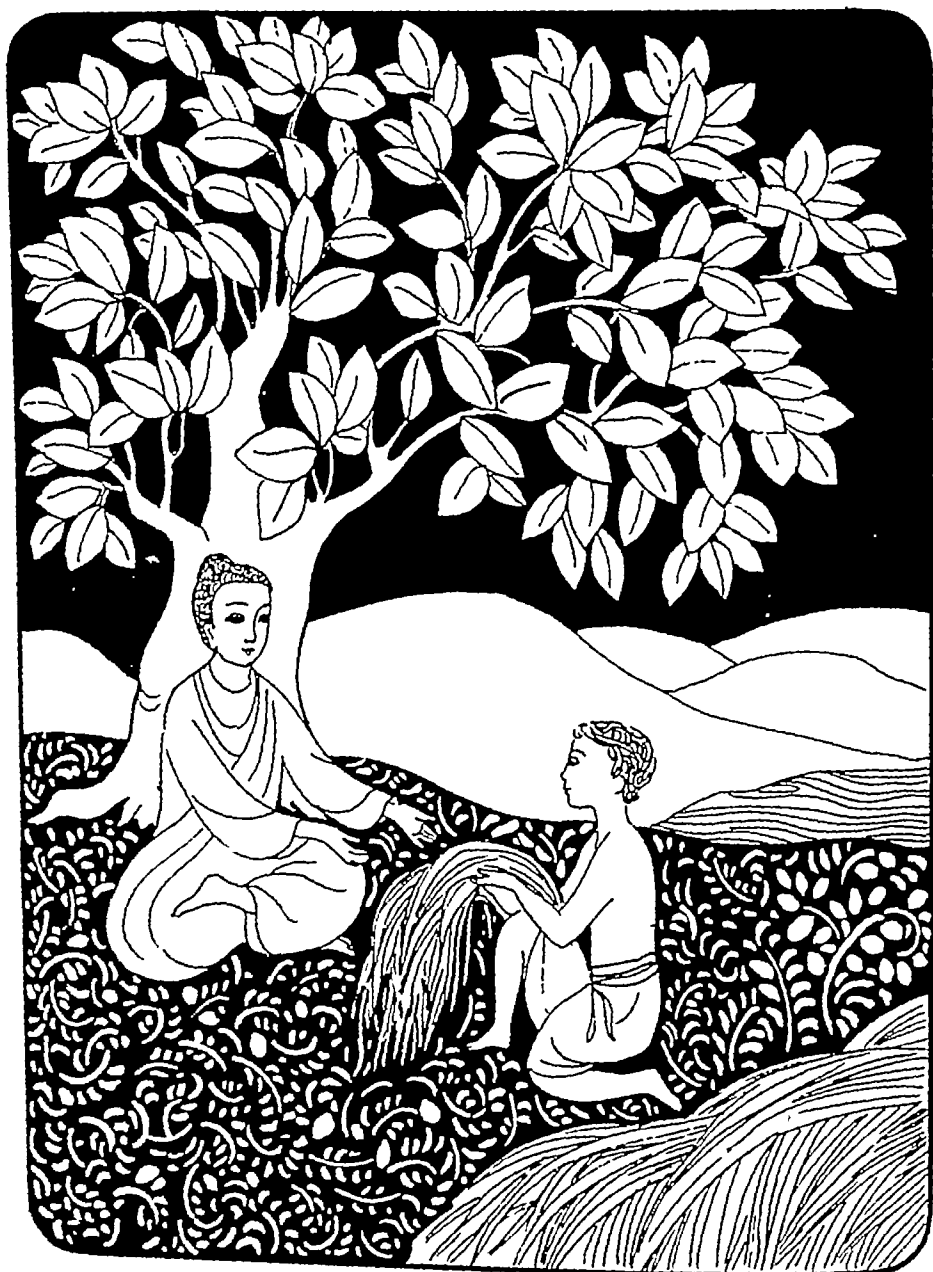
सिद्धार्थ को आसन वनाने हेतु स्वास्ति ने घास की पूली उपहार मे दी

वह व्यक्ति हस पडा और सिर हिलाते हुए वोला–'विलकुल नहीं, बच्चे। तुम एक इसान हो और मै भी एक इसान हू। तुम मुझे अपवित्र कर ही नहीं सकते। लोग तुमसे जो कुछ कहते है, उसकी चिन्ता मत करो।'

उसने स्वास्ति का हाथ पकड़ा और उसके साथ वन के छोर तक साथ-साथ गया। भैंसे अव भी आराम से चर रहे थे। उस व्यक्ति ने स्वास्ति की ओर देखा और पूछा–'क्या तुम इन भैंसो को चराते हो ? यह घास तुमने भैसो के रात मे खाने के लिए काटी होगी। तुम्हारा नाम क्या है ? क्या तुम्हारा घर कहीं आस-पास ही है ?'

स्वास्ति ने नम्रता से उत्तर दिया–'जी हा, मै इन चार भैसो और एक भैंस को चराता हू। मै नदी के उस पार उरुवेला गाव से जरा-सा आगे रहता हू। क्या आप कृपा करके अपना नाम वताएगे ? और क्या यह भी वताने की कृपा करेगे कि आप रहते कहा है ?'

उस व्यक्ति ने स्नेहपूर्वक उत्तर दिया–'जरूर-जरूर। मेरा नाम सिद्धार्थ है। मेरा घर यहा से वहुत दूर है लेकिन इन दिनो मै इस वन मे ही रहता हू ?'

'क्या आप सन्यासी है।'

सिद्धार्थ ने सिर हिलाकर हामी भरी। स्वास्ति जानता था कि साधु-सन्यासी सामान्यतः पहाड़ो पर रहते हैं और वहीं तपस्या करते है।

हालाकि वे अभी-अभी मिले थे और उनके वीच थोड़े से शब्दो का ही आदान-प्रदान हुआ था, फिर भी, स्वास्ति को अपने इस नए मित्र के प्रति गहरे लगाव का अनुभव हुआ। उरुवेला मे किसी ने कभी उसके साथ ऐसा मैत्रीपूर्ण व्यवहार नहीं किया था और न उससे इतने स्नेहपूर्वक बातचीत की थी। उसे प्रचुर आनद की अनुभूति हो रही थी और वह अपनी प्रसन्नता प्रकट करना चाहता था। काश ! उसके पास देने के लिए कोई उपहार होता जो वह सिद्धार्थ को भेट कर पाता। उसकी जेब मे तो धेला भी नहीं था, न गन्ने का टुकडा था और न गुड़। तब वह क्या भेट करे ? उसके पास कुछ नहीं था, फिर भी वह साहस करके बोला :

'श्रीमन्, मेरी इच्छा थी कि मै आपको कुछ उपहार दे पाता, लेकिन मेरे पास तो कुछ भी नही है।'

सिद्धार्थ ने स्वास्ति की ओर मुस्करा कर कहा, 'लेकिन तुम्हारे पास देने के लिए है। तुम्हारे पास वह है, जो मुझे बहुत अच्छा लगेगा।'

'मेरे पास है ?'

सिद्धार्थ ने कुश घास के ढेर की ओर सकेत किया। 'भैंसो के लिए तुमने जो घास काटी है, वह नरम है और महकती है। अगर तुम इसमे से कुछ घास दे सको तो मै वृक्ष के नीचे ध्यान करने के लिए बैठने का आसन बना लूगा। इससे मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।'

स्वास्ति की आखे चमक उठीं। वह घास के ढेर की ओर लपका और उसकी पतली बाहो मे जितनी घास आ सकी, उतनी सिद्धार्थ को समर्पित कर दी।

'मैं यह घास नदी के किनारे से काटता हू। कृपया इसे स्वीकार करे। मैं भैंसो के लिए और घास आसानी से काट लूंगा।'

सिद्धार्थ ने अपने दोनो हाथ पसार कर कुश घास का उपहार स्वीकार कर लिया। उन्होने कहा–'तुम बहुत ही दया भाव वाले बच्चे हो। धन्यवाद। जाओ, अपनी भैंसो के लिए, देर होने से पहले ही, कुछ और घास काट लो। अगर मौका मिले तो कल दोपहर को जगल मे आकर मुझसे मिल जाना।'

किशोर स्वास्ति ने उनको विदा करते हुए सिर झुकाकर अभिवादन किया और तब तक खडा-खड़ा देखता रहा, जब तक कि सिद्धार्थ जंगल मे जाते हुए दिखते रहे। उसके बाद उसने हंसिया उठाया और नदी किनारे की ओर चल दिया। उसका हृदय बेहद उमग भरा था।

स्वास्ति नेरजना नदी के उथले पानी वाले मार्ग से भैंसो को हाकता हुआ वापस रामभूल के घर की ओर ले चला। भैंसे मीठी नरम घास चरना छोड़कर जाने को तैयार ही नहीं थे इसलिए स्वास्ति को उन्हे धकेल कर ले जाना पडा। उसके कधे पर रखा घास गट्ठर भी भारी नहीं था और स्वास्ति भैंसो के साथ-साथ नदी पार कर आया।

अध्याय चार

घायल हंस

अगले दिन सबेरे ही स्वास्ति भैसो को चराने के लिए ले गया। दोपहर तक उसने दो डलिया घास भी काट ली थी। स्वास्ति चाहता था कि भैंसे जगल से लगी नदी के इस पार ही चरते रहे। इस प्रकार, जब वह घास काट लेगा तो वह थोड़ी देर आराम कर लेगा और भैसो द्वारा धान के खेतो मे घुसकर नुकसान करने की चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी। उसके पास हसिया ही था, जिससे वह अपनी रोजी कमाता था। स्वास्ति ने चावल की वह पोटली खोली जिसमे बाला ने केले के पत्ते मे पके हुए चावल दोपहर मे खाने के लिए रख दिए थे। जैसे ही वह खाने के लिए तैयार हुआ, वैसे ही उसे सिद्धार्थ का ध्यान आ गया।

उसने सोचा कि मै यह चावल सन्यासी सिद्धार्थ के लिए ले जाऊगा। निश्चय ही वह मेरे चावलो को तुच्छ नही समझेगे। स्वास्ति ने चावल को केले के पत्ते मे फिर लपेटा और भैसो को जगल के किनारे चरता छोड़ उस रास्ते चल दिया, जहा से जाकर वह कल सिद्धार्थ से मिला था।

दूर से ही उसने देखा कि उसका नया मित्र उस पीपल वृक्ष के नीचे बैठा है। लेकिन सिद्धार्थ अकेले नहीं थे। उनके सामने स्वास्ति की ही आयु की एक लड़की बढ़िया सफेद साड़ी पहने बैठी थी। उनके सामने भोजन रखा हुआ था। इसे देखकर स्वास्ति अचानक ठहर गया। लेकिन सिद्धार्थ ने उसे देख लिया था और उसे 'स्वास्ति' कहकर आवाज़ दी और उसे भी अपने पास ही आकर बैठने का सकेत किया।

सफेद साड़ी वाली लड़की ने उसकी ओर देखा। स्वास्ति पहचान गया कि गाव के रास्ते पर गुजरते समय उसने उसे देखा है। स्वास्ति के आने पर वह अपनी बाईं ओर थोड़ी सरक गई ताकि स्वास्ति के लिए जगह हो

जाए। सिद्धार्थ ने उसे बैठने का सकेत किया। सिद्धार्थ के सामने केले का पत्ता बिछा हुआ था जिस पर मुट्ठी भर चावल और थोड़ा-सा तैलचूर्ण युक्त नमक रखा था। सिद्धार्थ ने चावल को दो भागो मे बाट ,कर रखा हुआ था।

'वच्चे, क्या तुमने खाना खा लिया ?'

'नहीं, श्रीमन्, अभी नहीं खाया।'

'तव ठीक है। हमे यही भोजन मिल-बाटकर खाना है।'

सिद्धार्थ ने आधा चावल स्वास्ति को दिया। स्वास्ति ने धन्यवाद मे हाथ जोडे किन्तु चावल लेना स्वीकार नहीं किया। उसने अपनी चावल की छोटी-सी पोटली निकालते हुए कहा कि 'मैं भी थोडा-सा खाना लाया हू।'

उसने अपना केले का पत्ता खोला जिसमे भूरे रग के मोटे चावल थे। सिद्धार्थ की पत्तल पर नरम सफेद चावल थे। उसके चावलो मे नमक भी नहीं था। सिद्धार्थ दोनो वच्चो को देखकर मुस्कराए और कहा कि 'क्यो न हम सभी भोजन मिलाकर आपस मे बाटकर खाए ?'

उन्होने आधा सफेद चावल तैलचूर्ण युक्त नमक से लगाकर स्वास्ति को दिया। फिर उन्होने स्वास्ति के चावल के गोले के दो हिस्से किए और उसे खुशी-खुशी खाने लगे। स्वास्ति को अजीब-सा लग रहा था लेकिन सिद्धार्थ की स्वाभाविकता देखकर, उसने भी खाना शुरू कर दिया।

'आपका चावल वहुत ही स्वादिष्ट था।'

'इसे सुजाता लाई थी।' सिद्धार्थ ने कहा।

'तो इस लड़की का नाम सुजाता है,' स्वास्ति ने सोचा वह उम्र मे स्वास्ति से एक-दो साल वड़ी लग रही थी। उसकी वड़ी-बड़ी काली-काली आखो मे खूव चमक थी। स्वास्ति ने वीच मे खाना रोककर कहा-'मैने पहले भी तुम्हे गाव के रास्ते पर देखा था किन्तु यह नहीं जानता था कि तुम्हारा नाम सुजाता है।'

'हा, मैं सुजाता हू और उरुवेला गाव के प्रधान की वेटी हू। तुम्हारा नाम स्वास्ति ही हे न ? गुरु सिद्धार्थ मुझे अभी-अभी तुम्हारे विषय मे ही वता रहे थे।' फिर कोमलतापूर्वक कहा कि 'सन्यासी को श्रीमन् कहने की अपेक्षा गुरुदेव कहना अधिक ठीक होगा।'

स्वास्ति ने स्वीकृति मे सिर हिला दिया।

सिद्धार्थ मुस्कराये। 'तव ठीक है, मुझे तुम दोनो को परस्पर परिचित कराने की जरूरत ही नहीं रही। वच्चो, तुम जानते हो कि मै भोजन करते समय

सिद्धार्थ, स्वास्ति और सुजाता सचेतावस्था में भोजन करते हुए

मौन क्यो रहता हू ? यह चावल और तैलचूर्ण युक्त नमक वहुत ही मूल्यवान है। मै इन्हे चुपचाप खाना पसद करता हू ताकि मैं इनका पूरा स्वाद आत्मसात् कर सकू। सुजाता क्या कभी तुमने ये भूरे मोटे चावल खाए है ? अगर तुमने पहले खाए भी हो तो स्वास्ति के इन चावलो को भी थोडा चखो। ये वड़े स्वादिष्ट है। अब हम एक साथ मिलकर मौन साधे भोजन करेगे। जव हम भोजन समाप्त कर लेगे तो मैं तुमको एक कहानी सुनाऊगा।'

सिद्धार्थ ने भूरे चावलो का एक भाग तोड़ा और सुजाता को दे दिया। उसने दोनो हाथ फैलाकर चावल सादर स्वीकार कर लिए। तीनो ने जगल मे व्याप्त शाति के बीच चुपचाप भोजन किया।

भोजन समाप्त हो जाने के वाद सुजाता ने केले के पत्ते उठा लिए। सुजाता ने अपने साथ लाए और पास रखे ताजे पानी का जग उठाया और एक मात्र प्याले मे पानी डाला। उसने वह प्याला उठाकर सिद्धार्थ को दिया, उन्होने वह प्याला अपने दोनो हाथो मे लेकर स्वास्ति को दिया। वह अचकचा गया और घवराहट मे वोला, 'श्रीमन्, मेरा मतलव गुरुदेव, कृपया आप पहले जल ग्रहण कीजिए।'

सिद्धार्थ ने कोमल वाणी मे कहा–'मेरे वच्चे, पहले तुम पानी पिओ। मै चाहता हू कि पहले तुम ही जल ग्रहण करो।' उन्होने दुबारा प्याला उठाकर स्वास्ति की ओर वढ़ा दिया।

स्वास्ति को वड़ी उलझन लग रही थी किन्तु वह यह नहीं जानता था कि वह इस अस्वाभाविक सम्मान को कैसे नकारे। उसने धन्यवाद सहित दोनो हाथो से प्याला ले लिया। उसने एक ही घूट मे सारा पानी पी लिया और खाली प्याला सिद्धार्थ की ओर वढा दिया। सिद्धार्थ ने प्याले मे फिर पानी भरने के लिए सुजाता से कहा। प्याला भर जाने पर उन्होने उसे उठाकर अपने होठो से लगा लिया और धीरे-धीरे प्रेमपूर्वक आनद ले-लेकर पानी पीने लगे। जल के इस आदान-प्रदान मे सुजाता की आखे सिद्धार्थ और स्वास्ति पर से हटी नहीं। सिद्धार्थ ने पानी पी लेने के वाद, प्याले मे तीसरी वार पानी भरने को कहा। अवकी वार उन्होने प्याला सुजाता की ओर वढाया। उसने जग नीचे रख दिया और दोनो हाथो से पानी का प्याला ले लिया और धीरे-धीरे छोटे घूटो मे, सिद्धार्थ की ही तरह पानी पिया। उसे पता था कि पहली वार उसने उसी प्याले से पानी पिया है जिससे एक अछूत ने पानी पिया था। लेकिन सिद्धार्थ उसके गुरुदेव है और जब उन्होने अछूत के जूठे प्याले से पानी पी लिया, तव वह क्यो न पीती ? साथ ही उसने

यह भी देखा कि उनके मन मे अपवित्र होने की कोई भावना नही थी। आत्म-स्फूर्त भाव से उसने बढ़कर उस चरवाहे के सिर पर हाथ रख दिया। सब कुछ इतने आकस्मिक ढंग से हुआ कि स्वास्ति को दूर हट जाने का मौका ही न मिला। तब तक सुजाता ने पानी पीना समाप्त कर लिया था। उसने खाली प्याला जमीन पर रख दिया और साथ बैठे दोनो व्यक्तियो की ओर देखकर मुस्करा दी।

सिद्धार्थ ने सिर हिलाया। 'तो बच्चो तुमने मेरा आशय समझ लिया। व्यक्ति जन्म से किसी जाति का नहीं होता। हर व्यक्ति के आसू खारे होते हैं और हर एक के रक्त का रंग लाल। लोगो को जाति-भेद के आधार पर बाटना, उनको विभाजित रखना तथा ऊच-नीच का भेद-भाव करना गलत है। अपनी साधना के दौरान यह बात मुझे स्पष्ट रूप से समझ मे आ गई है।'

सुजाता गभीर हो गई और उसने कहा-'हम आपके शिष्य है और हमे आपके उपदेशो पर विश्वास है। लेकिन ससार मे आप जैसा एक भी व्यक्ति दिखाई नहीं देता। अन्य प्रत्येक व्यक्ति यह मानता है कि शूद्रो और अछूतो का जन्म ब्रह्मा के पैरो से हुआ है। वेद-शास्त्रो मे भी यही कहा गया है। कोई उनके मत से भिन्न सोचने की हिम्मत भी नही कर सकता।'

'हा, यह बात मै जानता हू। किन्तु सत्य तो सत्य है, चाहे कोई उस पर विश्वास करे, या न करे। भले ही लाखो-करोड़ो लोग किसी भी झूठ पर विश्वास करे किन्तु झूठ-झूठ ही रहेगा। सत्य-पथ पर चलकर जीवन-निर्वाह करने के लिए बहुत अधिक साहस की आवश्यकता होती है। इस सिलसिले में मै अपने बचपन की एक घटना तुम लोगो को सुनाता हू।

'जब मैं नौ वर्ष का था और एक दिन अपने उद्यान मे सैर कर रहा था तो अचानक मेरे सामने एक हस आकाश से जमीन पर गिरा जो भीषण कष्ट से तड़फड़ा रहा था। मैंने दौड़कर उसे उठाया तो देखा कि उसके एक पंख मे एक तीर गहरा घुसा हुआ है। जहा तीर लगा था, उस जगह को कसकर पकड़कर मैंने जोर लगाकर तीर खींचा और बाहर निकाला। हस दर्द से फडफडा उठा। उसके घाव से रक्त की धारा बहने लगी। मैंने घाव पर उगली रखकर दवा दी जिससे खून अधिक न निकले। मै हंस को महल मे ले गया और राजकुमारी सुदरी की ओर देखा। वह मेरा आशय समझ थोड़ी-सी औषधीय पत्तिया तोड़ लाई और उसकी पुलटिस बनाकर हस के घाव पर बाध दी। हस काप रहा था। मैंने अपनी जैकेट उतारी और उसके चारो ओर लपेट दी। उसके बाद मैंने हस को राजकीय अगीठी के पास बैठा दिया।'

सिद्धार्थ ने थोड़ा रुककर स्वास्ति की ओर देखा। 'मैंने अभी तक तुम्हे यह नहीं वताया कि बचपन मे मैं एक राजकुमार था–राजा शुद्धोधन का पुत्र जिनकी राजधानी कपिलवस्तु थी। सुजाता इस बात को जानती है। जव मै हस के लिए कुछ चावल लाने हेतु चलने को हुआ, तो मेरा आठ वर्षीय चचेरा भाई देवदत्त धड़धड़ाता हुआ कमरे मे घुसा। वह अपना धनुष और तीर पकड़े हुए था। उसने उत्तेजनापूर्ण स्वर मे पूछा, 'क्या तुमने सफेद हस को यहा आस-पास गिरते देखा है ?'

"जव तक मैं कुछ उत्तर देता, देवदत्त ने हस को अगीठी के पास वैठे देख लिया। वह उसकी ओर झपटा, लेकिन मैंने उसे रोक दिया।"

"तुम इस पक्षी को नहीं ले जा सकते।"

"मेरे चचेरे भाई ने विरोध किया। यह पक्षी मेरा है। इसका मैंने स्वय शिकार किया है।"

"मै पक्षी को नहीं ले जाने दूगा, इस पक्के इरादे से मैं देवदत्त और हस के वीच खडा हो गया। मैंने उससे कहा–'यह पक्षी घायल है। मैं इसकी रक्षा कर रहा हू। अभी इसे यहीं रखने की आवश्यकता है।'

देवदत्त अड़ा हुआ था और अपनी जिद छोड़ने को तैयार नहीं था। उसने तर्क दिया, "सुनो भाई, जव तक यह पक्षी आकाश मे उड़ रहा था तव तक किसी का नहीं था। जव मैंने इसका आकाश मे उड़ते समय शिकार कर लिया तो न्याय के अनुसार यह अव मेरा हो गया।"

"उसका कथन तर्कपूर्ण लग रहा था लेकिन इसे सुनकर मुझे क्रोध आ गया। मुझे लग रहा था कि उसके तर्कों मे कुछ असगति है लेकिन उस असगति को मै पकड नहीं पा रहा था। इसलिए मै विना उत्तर दिए, खडा रहा और मन मे और अधिक परेशान हो उठा। मुझे इतना ताव आ रहा था कि मै देवदत्त को थप्पड जड़ दू। लेकिन मैंने उसे, पता नहीं क्यो, थप्पड मारा नहीं। फिर मुझे उसका उत्तर देने का आधार मिल गया।

"सुनो भाई," मैंने उससे कहा–"जो एक-दूसरे को प्रेम करते है, वे साथ-साथ रहते हैं और जो विरोधी भाव रखते हे, वे अलग-अलग रहते हैं। तुमने हस को मारने की चेष्टा की तो तुम दोनो एक-दूसरे के शत्रु हुए। यह पक्षी तुम्हारे पास नहीं रह सकता। मैंने इसे वचाया है, इसके घाव पर पट्टी वाधी है, इसे शीत से वचाकर गरमी पहुचाई है और जव तुम आए थे तो मैं इसके लिए खाना लेने जा रहा था। यह पक्षी और मै एक-दूसरे को प्यार करते हे और साथ-साथ रह सकते है। पक्षी को मेरी जरूरत है, तुम्हारी नहीं।"

सुजाता ने जोर से तालियां वजाई। "विलकुल ठीक, आप एकदम सही थे।"

सिद्धार्थ ने स्वास्ति की ओर देखा। "और वच्चे, तुम मेरे इस कथन के विषय मे क्या सोचते हो।"

स्वास्ति ने एक क्षण के लिए सोचा और फिर धीरे से कहा–"मै समझता हू कि आपने ठीक ही कहा। लेकिन वहुत से लोग इससे सहमत नही होगे। अधिकाश लोग देवदत्त का ही पक्ष लेगे।"

सिद्धार्थ ने सिर हिला कर कहा–"तुम ठीक ही कहते हो स्वास्ति। अधिकाश लोग देवदत्त की ही वात का पक्ष लेगे।"

"अव मैं वताता हूं कि उसके वाद क्या हुआ। जव हम दोनो आपस में सहमत नहीं हुए तो झगड़ा वडो के पास पहुचा। उस दिन महल मे दरवार लगा हुआ था, इसलिए, हम न्यायालय कक्ष मे जा पहुचे जहा सव विशिष्ट लोग मौजूद थे। मैं हस को गोद मे लिए था और देवदत्त धनुष ओर वाण लिए हुए था। हमने अपनी समस्या मन्त्रिपरिषद् के समक्ष रखी और उनका निर्णय जानना चाहा। राज-काज रुक गया था क्योकि वे हमारी उक्तिया सुन रहे थे। पहले देवदत्त ने अपना पक्ष प्रस्तुत किया और वाद मे मैंने। उन्होने विस्तार से इस पर विचार-विमर्श किया किन्तु किसी निर्णय पर नहीं पहुचे। वहुमत देवदत्त के पक्ष मे झुकता दिख रहा था तो मेरे पिता, राजा ने कई वार खासा। सभी मन्त्रियो ने एकदम वोलना वद कर दिया। मंत्रियो ने मेरी उक्ति का समर्थन किया और निर्णय दिया कि पक्षी मुझे दे दिया जाए। देवदत्त गुस्से मे तिलमिला रहा था लेकिन इस निर्णय के आगे, वह कुछ नहीं कर सकता था।

"पक्षी मुझे मिल गया किन्तु मै वास्तव मे प्रसन्न नहीं हुआ। मै उस समय छोटा ही था, किन्तु मुझे लगता था कि मेरी विजय सम्मानजनक नहीं थी। यह पक्षी मुझे इसलिए दे दिया गया था क्योकि मन्त्रिगण मेरे पिता को प्रसन्न करना चाहते थे, न कि इसलिए कि उन्हे मेरा कथन सत्य लगा था।"

"वड़े खेद की वात है।" सुजाता ने कहा और अप्रसन्न दिख पड़ी।

"हा, खेद की ही वात थी। मैंने पक्षी की ओर अपना ध्यान मोड़ा और इस वात से राहत मिली कि हस की जान बच गई थी। वरना निश्चय ही इसे मारकर पका-खा लिया गया होता।

"इस ससार मे चद लोग ही ऐसे है जो मन मे करुणा का भाव रखते हैं, अन्यथा हम एक-दूसरे के प्रति क्रूर और निर्दयी ही है। शक्तिशाली सदैव

ही दुर्बल को सताते हैं। मै अब भी मानता हू कि उस दिन का मेरा तर्क सही था क्योकि वह तर्क प्रेम और समत्वभाव पर आधारित था। प्रेम और समझदारी से समस्त प्राणियो के कष्ट दूर हो सकते हैं। सत्य तो सत्य है, चाहे बहुसख्यक लोग उसे स्वीकार करे या न करे। इसलिए, बच्चो ! मैं तुमसे कहता हू कि जो ठीक है, उसकी खातिर उठ खड़े होने और उसकी रक्षा करने की खातिर बहुत ही साहस की आवश्यकता होती है।"

"गुरुदेव, उस हस का क्या हुआ ?" सुजाता ने जिज्ञासा की।

"चार दिनो तक, मैंने उसकी सेवा की। जब मैंने देखा कि उसके घाव भर गए हैं तो मैंने उसे छोड़ दिया और उसे चेतावनी दी कि वह उड़कर बहुत दूर चला जाए ताकि वह फिर किसी का शिकार न होने पाये।"

सिद्धार्थ ने दोनो बच्चो की ओर देखा। उनके चेहरे शान्त और गभीर थे। "सुजाता अब तुम घर जाओ। तुम्हे समय रहते घर लौट जाना चाहिए, वरना तुम्हारी मा चिन्ता करने लगेगी। स्वास्ति क्या अब समय नहीं हो गया कि तुम अपने भैसो को देखो और अधिक घास काटो ? कल तुम जो कुशा घास मुझे दे गए थे, उससे ध्यान करने के लिए बढ़िया आसन बन गया था। कल रात और आज सवेरे मै उस पर बैठा था और मेरा ध्यान बहुत ही शांतिपूर्ण रहा। बहुत-सी बाते मेरे समक्ष स्पष्ट हुईं। स्वास्ति तुमने मेरी बहुत मदद की। जैसे-जैसे मेरी दृष्टि स्पष्ट होती जाएगी, मैं तुम दोनो के समक्ष अपनी साधना के अनुभव बताता जाऊगा। अब मैं बैठकर ध्यान करूगा।"

स्वास्ति ने उस घास को देखा जिससे सिद्धार्थ ने आसन बनाया था। हालांकि घास को कसकर बाधा गया था, किन्तु स्वास्ति को लगा कि वह अभी सूखी नहीं है और उसकी अपनी सुगध आ रही है। वह अपने गुरुदेव के लिए हर तीसरे दिन कुश घास ले आया करेगा ताकि वे उससे नया आसन बना लिया करे। स्वास्ति सुजाता के साथ ही उठ खड़ा हुआ और हाथ जोडकर सिद्धार्थ को नमन किया। सुजाता अपने घर की ओर रवाना हो गई और स्वास्ति ने भैसो को थोड़ा आगे हाककर नदी के किनारे-किनारे चरने के लिए छोड़ दिया।

अध्याय पांच

एक कटोरी दूध

प्रतिदिन स्वास्ति जगल मे सिद्धार्थ से मिलने जाता। जव वह दोपहर तक दो गट्ठे घास काट लेता तो दोपहर का भोजन उन्हीं के साथ करता। लेकिन गर्मिया आ जाने के कारण ताजी घास मिलना दिनो-दिन कठिन हो गया तो वह तीसरे पहर अपने मित्र और गुरु के पास पहुंच पाता। कभी-कभी तो ऐसा होता जव स्वास्ति पहुचता तो सिद्धार्थ वैठे ध्यान कर रहे होते तो वह वालक थोड़ी देर तक शातिपूर्वक वैठता और जगल वापस आ जाता क्योकि वह अपने गुरु की ध्यान-साधना मे विघ्न नहीं डालना चाहता था। लेकिन जव वह देखता कि सिद्धार्थ जगल के रास्ते पर टहल रहे हैं तो वह भी उनके साथ हो लेता। कभी-कभार साधारण-सी वातचीत भी हो जाती थी। स्वास्ति की जगल मे अक्सर सुजाता से भेट हो जाती। वह प्रतिदिन सिद्धार्थ के लिए एक कटोरी चावल और उसके साथ कोई चीज और लाती जैसे—तैलचूर्ण युक्त नमक, मटर की सब्जी या थोड़ी-सी कढ़ी। वह उनके लिए दूध या खीर या गुड़ भी लाती थी। इन वच्चो को जगल के किनारे वैठकर थोड़ी देर वाते करने का भी अवसर मिल जाता जव कि भैंसे चर रहे होते थे। कभी-कभी सुजाता अपनी सहेली सुप्रिया को भी साथ ले आती थी जो स्वास्ति की उम्र की थी। स्वास्ति भी अपने भाई-वहिनो को लाकर सिद्धार्थ से मिलवाना चाहता था। उसे भरोसा था कि उसके भाई-वहिन उस जगह से विना कठिनाई के नदी पार कर पाएगे जहा पानी सबसे उथला था।

सुजाता ने वताया कि कई महीने पहले उसकी सिद्धार्थ से पहली वार कैसे भेट हुई और तभी से वह प्रतिदिन दोपहर को उनके लिए खाना लाने लगी। उस दिन पूर्णिमा थी। अपनी मा के कहने पर उसने नयी गुलाबी

"बच्चे, मुझे थोडा और दूध दो"

साड़ी पहनी हुई थी और एक थाली मे भोजन रखकर वन-देवताओ को समर्पित करने वन मे आयी थी। भोजन मे चपातियां, दूध, खीर, शहद आदि सभी कुछ था। दोपहरी तप रही थी। ज्यो ही वह नदी के किनारे आयी, उसने रास्ते पर एक व्यक्ति को वेहोशी की हालत मे पड़े देखा। उसने थाली नीचे रख दी और उसकी तरफ दौडी। वह मरी-मरी सी सास ले रहा था और उसकी आखे एकदम वद थीं। उसके गाल भीतर को वैठे थे, जैसे उसे न जाने कितने समय से खाना न मिला हो। उसके लम्वे-लम्वे वाल, उलझी हुई दाढ़ी और फटे-पुराने कपड़ो से लग रहा था कि वह पहाड़ो मे रहकर तप करने वाला कोई सन्यासी होगा जो भूख के मारे वेहोश हो गया है। सुजाता ने वेहिचक प्याली मे दूध डाला और उसे उस व्यक्ति के पास ले जाकर उसके होठो पर थोडा गिरा दिया। पहले तो उसमे कोई हरकत नहीं हुई। फिर उसके होठ थोड़े-थोड़े हिले और मुह थोड़ा-सा खुल गया। सुजाता ने धीरे-धीरे उसके मुह मे दूध डाला। उसने धीरे-धीरे दूध पीना शुरू किया और थोड़ी ही देर मे कटोरी खाली हो गई।

सुजाता वहीं नदी के किनारे वैठकर देखने लगी कि इस व्यक्ति को होश आता भी है या नहीं। धीरे-धीरे वह उठकर वैठ गया और अपनी आखे खोल दीं। सुजाता को देखकर वह हल्का-सा मुस्कराया। उसने अपने उत्तरीय का कोना अपनी पीठ पर डाला और पद्मासन पर वैठ गया। पहले उसकी श्वास-प्रश्वास धीमी ही रही। वाद मे वह गहरी सास लेने लगा उसकी वैठने की मुद्रा स्थिर और सुदर थी। उसे कोई पर्वतीय शरीर-पीड़न-तप करने वाला सन्यासी समझकर सुजाता ने हाथ जोड़े और उसे नमन किया। किन्तु उस व्यक्ति ने उसे इशारे से ऐसा करने से रोक दिया। सुजाता वैठ गई और उस व्यक्ति ने मीठी आवाज मे कहा–'वच्ची ! मुझे थोड़ा दूध और दो।'

उसे वोलते हुए देखकर प्रसन्न सुजाता ने प्याली मे दूध डाल दिया जिसे उसने सारा का सारा पी लिया। उसने अनुभव किया कि इस दूध ने उसे कितनी शक्ति दी। एक घटे पहले उसे लगा था कि वह अतिम सासे ले रहा है। अव उसकी आखो मे चमक आ गई थी और होठो पर मृदु मुस्कान। सुजाता ने उससे पूछा कि 'आप मार्ग पर कैसे अचेत हो गए थे ?'

"मैं पहाड़ो मे शरीर-पीड़न-तप कर रहा था। इस तप के कठोर अनुशासन और नियमो के पालन के कारण मेरा शरीर बेहद कमजोर हो गया था। इसलिए आज मैने निश्चय किया कि मै पहाड़ से उतरकर नीचे गाव मे जाऊगा और भिक्षा के द्वारा कुछ भोजन प्राप्त करूगा। लेकिन यहा आते-आते मेरी

शरीर-शक्ति ने जवाव दे दिया। तुमको धन्यवाद है कि तुम्हारी कृपा से मेरी जीवन-रक्षा हो सकी।"

वे नदी के किनारे वैठ गए और उस व्यक्ति ने सुजाता को अपने विषय मे वताया। वह शाक्य वश के राजा शुद्धोधन के पुत्र सिद्धार्थ थे। सिद्धार्थ जो कुछ कह रहे थे, उसे सुजाता ध्यान से सुनती रही, "मैंने देख-समझ लिया है कि शरीर के साथ अन्याय करके शाति और ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता। शरीर कोई यत्र-मात्र नहीं है। यह तो आत्मा का मदिर है। यह वह नाव है, जिसके माध्यम से नदी पार करके दूसरे किनारे तक पहुचा जा सकता है। मै आत्म-हनन की सीमा तक तपस्या नहीं करूगा। मै प्रतिदिन सवेरे गाव मे जाकर भिक्षा माग कर लाया करूगा।"

सुजाता ने हाथ जोड़कर कहा-"मान्य सन्यासी, यदि आप आज्ञा दे तो मै प्रतिदिन आपके लिए भोजन ले आया करू। इसके लिए आपको अपनी ध्यान-साधना मे विघ्न डालने की आवश्यकता नहीं। मेरा घर यहा से दूर नहीं है ओर मैं जानती हू कि मेरे माता-पिता आपके लिए भोजन लाने पर प्रसन्न ही होगे।"

सिद्धार्थ एक क्षण के लिए चुप रहे, फिर कहा, "मै प्रसन्नता के साथ तुम्हारा प्रस्ताव स्वीकार करता हू। लेकिन समय-समय पर मैं गाव मे भिक्षाटन करने अवश्य आऊंगा ताकि मैं गाव वालो से भी मिल सकू। मैं तुम्हारे माता-पिता और गाव के अन्य वच्चो से भी मिलना चाहूगा।"

सुजाता वहुत प्रसन्न हुई। उसने हाथ जोड़े और कृतज्ञता प्रकट करते हुए नमन किया। सिद्धार्थ उसके घर आएगे और उसके माता-पिता से मिलेंगे, यह विचार एकदम अद्‌भुत था। वह यह भी जानती थी कि प्रतिदिन उनके लिए खाना ले जाने मे कोई दिक्कत नहीं होगी क्योकि उसका परिवार गाव मे सवसे धनी था। उसने यह वात सिद्धार्थ को नहीं वताई थी। वह केवल इतना ही समझ सकी थी कि वह सन्यासी असाधारण हैं और इनको भोजन कराना दर्जनो वन देवताओ को अन्न-अर्पण करने से भी अधिक लाभप्रद है। उसने सोचा कि यदि सिद्धार्थ की ध्यान-साधना गहन होती गई तो इनका प्रेम और ज्ञान ससार को कष्टो से मुक्त करने मे सहायक हो सकेगा।

सिद्धार्थ ने दगश्री पर्वत की ओर सकेत किया जहा की गुफाओ मे वह रहते थे। "आज के वाद मै वहा वापस नहीं जाऊगा। यह वन शीतल और आनददायी है। यहा श्रेष्ठ पीपल का वृक्ष है। उसी को मैं अपनी तपस्या का स्थान वनाऊगा। कल जव आओ तो भोजन लेकर वहीं आना। आओ मैं तुम्हे वह स्थान दिखा दू।"

सिद्धार्थ सुजाता को नदी के उस पार शीतल वन मे ले गए जो नैरजना नदी के उस पार था। उन्होंने उसे वह वृक्ष दिखाया, जिसके नीचे बैठकर वह ध्यान-साधना करेंगे। सुजाता ने पीपल वृक्ष के मोटे तने को देखा और पाया कि उसकी शाखा-प्रशाखाओ के पत्तो से जैसे चारो ओर छप्पर-सा बन गया हो। पीपल वृक्ष की शाखाओ मे उसे चहचहाती चिड़ियो का गान सुनाई दिया। यह स्थान वास्तव मे शात और स्फूर्तिदायक है। वह इस वृक्ष तक पहले भी अपने माता-पिता के साथ आ चुकी थी जब उसने वन-देवो को भोजन अर्पित किया था।

"तो गुरुदेव, यह आपका नया निवास है।" सुजाता ने अपनी काली-काली गोल आखो से सिद्धार्थ की ओर देखा। "मै यहा आपके पास प्रतिदिन आया करूगी।"

सिद्धार्थ ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया। वह सुजाता को जगल के बाहर तक छोडने आए और नदी के किनारे आकर उसको विदा किया। इसके बाद वह अकेले पीपल के वृक्ष की ओर वापस आ गए।

उस दिन के बाद, सुजाता सूरज के चढ़ने पर सन्यासी के लिए रोज चावल अथवा चपातिया लेकर आती थी। कभी-कभी वह उनके लिए दूध और खीर भी ले आती। कभी-कभार सिद्धार्थ अपना भिक्षा-पात्र लेकर गाव मे भिक्षा मागने भी जाते। उस दौरान वह सुजाता के पिता (जो गाव के प्रधान थे) और उसकी माता से भी मिले। सुजाता ने उनको गाव के बच्चो से मिलवाया और नाई के पास भी ले गई ताकि वह अपने सिर के बाल और दाढी मुडवा सके। सिद्धार्थ का स्वास्थ्य तेजी से सुधर रहा था और उन्होने सुजाता को यह भी बताया कि उनकी ध्यान-साधना फलदायी हो रही है। उसके बाद वह दिन भी आया जब सुजाता स्वास्ति से मिली।

उस दिन सुजाता कुछ जल्दी आ गई थी। वह सिद्धार्थ से, एक दिन पहले हुई स्वास्ति से मुलाकात की बात सुन रही थी। उसने यह कहा ही था कि वह स्वय ही स्वास्ति से मिलना चाहती है कि तभी स्वास्ति आ उपस्थित हुआ। उसके बाद, जब भी उसका स्वास्ति से मिलना हुआ, वह कभी उसके भाई-बहिनो का हाल-चाल पूछना नही भूली। वह और उसका नौकर पूर्णा स्वास्ति की झोपड़ी तक भी गए थे। नौकरानी राधा जब मोतीझारा से मर गई थी तो पूर्णा को नौकर रख लिया गया था। जब सुजाता स्वास्ति के घर गई तो कुछ पुराने कपड़े भी साथ ले गई जो स्वास्ति के परिवारजनो के पहनने लायक थे। पूर्णा को उस समय बड़ा ही आश्चर्य हुआ जब सुजाता

ने वच्ची भीमा को गोद मे ले लिया। इस पर सुजाता ने पूर्णा को हिदायत की कि वह उसके माता-पिता को यह न वताए कि उसने अछूत वच्चे को गोद मे लिया था।

एक दिन वहुत से वच्चो ने मिलकर सिद्धार्थ के पास जाने का निश्चय किया। स्वास्ति का तो सारा परिवार उनमे शामिल था। सुजाता अपनी सहेलियो वालागुप्ता, विजयसेना, उल्लुविल्लिके और जतीलिका को भी ले गई। उसने अपनी चचेरी वहन, सोलह वर्षीया नदवाला को भी आमन्त्रित किया। वह अपने चौदह वर्षीय भाई नलक और नौ वर्षीय सुभाष को भी साथ ले आई। उस दिन ग्यारह वच्चे सिद्धार्थ के चारो ओर घेरा वनाकर वैठ गए और उन्होने अपना दोपहर का भोजन खामोशी के साथ वहीं किया। स्वास्ति ने वाला और रूपक को भी समझा दिया था कि खाना किस प्रकार मौन रहकर खाना है। यहा तक कि स्वास्ति की गोदी मे वैठी भीमा ने भी विना कोई आवाज किए खाना खाया किन्तु वह देख टुकुर-टुकुर रही थी।

स्वास्ति सिद्धार्थ के लिए, कौली भरकर ताजी घास लाया। उसने अपने चरवाहे मित्र गवमपति से कहा कि रामभूल के भैसो की देख-भाल करते रहना ताकि वह सिद्धार्थ के साथ भोजन करके आ सके। खेतो मे सूरज तप रहा था किन्तु वन मे सिद्धार्थ और वच्चे पीपल वृक्ष की छाह और शीतल वायु का आनद ले रहे थे। वृक्ष की छतनार शाखाए इतनी दूर-दूर तक फैली थीं जिनके नीचे दस घर आ सकते हैं। वच्चे एक-दूसरे के खाने मे से हिस्सा वाट कर खा रहे थे। रूपक और वाला को मटर की सव्जी की तरी और तैलचूर्ण युक्त नमक मिलाकर सुगधित सफेद चावल और कढ़ी के साथ चपातिया खाने मे वड़ा मजा आया। सुजाता और वालागुप्ता इतना पानी साथ लाई थी जो सवके पीने के लिए पर्याप्त हो। स्वास्ति आनद से फूला नहीं समा रहा था। यद्यपि वातावरण मौन एव शात था, फिर भी, उसमे आनद की चरम सीमा ध्वनित हो रही थी। उस दिन सुजाता के अनुरोध पर सिद्धार्थ ने अपनी जीवन-कथा उन लोगो को सुनाई। सारे वच्चे एकदम चुप रहकर ध्यान पूर्वक उस कथा को आदि से अन्त तक सुनते रहे।

अध्याय छ:

जम्बू वृक्ष के नीचे

सिद्धार्थ जब नौ वर्ष के थे तो उन्हे बताया गया कि उनके जन्म के पहले उनकी माताजी को क्या स्वप्न आया था। स्वप्न मे छः दातो वाला एक अति सुदर सफेद हाथी आकाश से आशीर्वचनो की गूज के साथ नीचे उतरा। बर्फ-सा सफेद हाथी उनके पास आया। वह अपनी सूड़ मे मनमोहक गुलाबी कमल लिए हुए था। उसने वह कमल रानी के शरीर मे स्थापित कर दिया। उसके बाद वह हाथी भी बिना प्रयास के उनके शरीर मे समा गया। इसके साथ ही रानी एकदम कष्टमुक्त होकर आनद से भर गई। उन्हे प्रतीत हुआ कि जैसे उन्हे कभी कोई कष्ट, कोई चिन्ता या पीड़ा थी ही नहीं। वह जब जगी तो अपार ईश्वर कृपा की उमग से भरी हुई थीं। जब बिस्तर से उठी तो स्वर्गिक सगीत उनके कानो मे उस समय तक गूज रहा था। उन्होने अपने पति अर्थात् राजा को अपना स्वप्न सुनाया तो वह भी उसे सुनकर चमकृत रह गए। उस दिन उन्होने राजधानी मे सभी साधु-सन्तो को बुलवाया और रानी के स्वप्न का रहस्य जानने की जिज्ञासा की।

स्वप्न की सारी बाते विस्तार से सुनने के बाद उन्होने कहा, "महामहिम, रानी ऐसे पुत्ररत्न को जन्म देगी जो महान नेता बनेगा। वह या तो चक्रवर्ती सम्राट बनेगा जिसका चारो दिशाओ मे साम्राज्य होगा अथवा वह ऐसा महान गुरु बनेगा जो स्वर्गलोक और भू-लोक के सभी प्राणियो को सद्धर्म का मार्ग दिखाएगा। हमारी धरती ऐसे महापुरुषो के अवतरण की, न जाने कब से, प्रतीक्षा कर रही है।"

यह सुनकर शुद्धोधन का मुखमडल चमक उठा। रानी से परामर्श करके उन्होने सरकारी खजाने से देशभर मे रोगियो और दुर्भाग्यग्रस्त लोगो को दान

दिए जाने का आदेश दिया। इस प्रकार शाक्य साम्राज्य के प्रजाजन राजा-रानी के भावी पुत्र की महानता के हर्षोल्लास मे सहभागी बने।

सिद्धार्थ की माताजी का नाम महामाया था। वह महान गुणो से सपन्न महिला थीं जिनके हृदय मे सभी प्राणियो, पशुओ और वृक्षो तक के लिए प्रेम था। उस समय वह परपरा थी कि महिला अपने मायके मे ही जाकर सन्तान को जन्म देती थी। महामाया कौलिय गणराज्य की राजपुत्री थीं, इसलिए वह सन्तान को जन्म देने के लिए कौलिय राज्य की राजधानी रामग्राम के लिए रवाना हुई। मार्ग मे वह लुम्बिनी के उद्यान मे विश्राम करने के लिए रुकीं। वहा के वन मे नाना भाति के सुन्दर फूल थे, चिड़िया वृक्षो पर अपना राग अलाप रही थीं और प्रभाती शीतल वायु मे मोर नाच रहे थे। लहलहाते अशोक वृक्ष का अवलोकन करने रानी उसकी ओर बढी और अचानक जब पग लड़खडाए तो उन्होने अशोक वृक्ष की शाखा पकड ली। उसके कुछ क्षण बाद ही अशोक वृक्ष की शाखा पकड़े-पकड़े ही रानी महामाया ने दिव्य आलोक से जगमगाते हुए पुत्र-रत्न को जन्म दिया।

महामाया की परिचारिकाओ ने नवजात युवराज को साफ पानी से नहलाया और पीले रेशमी वस्त्र मे लपेट लिया। अब रामग्राम जाने की आवश्यकता ही नहीं रह गई थी, इसलिए रानी और नवजात युवराज को चार घोड़ो वाले रथ मे अपने घर लाया गया। अपने महल मे पहुच जाने के उपरान्त युवराज को फिर गरम पानी मे नहलाया गया और रानी की बगल मे लिटा दिया गया।

पुत्र-जन्म का समाचार सुनते ही राजा शुद्धोधन अपनी पत्नी और पुत्र को देखने आए। उनकी प्रसन्नता की तो कोई सीमा ही नहीं थी। उनकी आखो से खुशी छलकी पड़ रही थी। उन्होने अपने युवराज का नाम 'सिद्धार्थ' रखा। राज्य मे सभी बहुत हर्षित हुए और एक-एक करके रानी को बधाई देने आने लगे। शुद्धोधन ने सिद्धार्थ का भविष्य जानने के उद्देश्य से तुरन्त ही ज्योतिषियो को बुलवाया। बच्चे के नयन-नक्श को देखकर सभी ने एक स्वर मे कहा कि बच्चे के सभी लक्षण तो महापुरुष के हैं और इसमे तनिक भी सदेह नहीं कि वह ऐसे शक्तिशाली साम्राज्य पर राज करेगा जो चारो दिशाओ मे फैला होगा।

एक सप्ताह बाद, एक सन्त पुरुष असित कालदेवल राजमहल मे पधारे। दीर्घ आयु के कारण उनकी कमर झुक गई थी और जिस पर्वत पर वह निवास करते थे, उससे नीचे आने के लिए उन्हे लाठी का सहारा लेना पडता

राजा शुद्धोधन शीघ्रता से अपनी पत्नी और नवजात शिशु को देखने आये
तो उनके हर्ष का वारापार न था

था। जब राजमहल के द्वारपालो ने बताया कि आचार्य असित पधारे हैं तो राजा शुद्धोधन स्वय ही उनका स्वागत करने द्वार तक आए। राजा उन्हे नवजात युवराज को दिखाने ले गए। आचार्यवर बड़ी देर तक युवराज को देखते रहे लेकिन बोले एक भी शब्द नहीं। इसके बाद वह रोने लगे और उनके कापते शरीर को लाठी का सहारा लेना पडा। उनकी आखो से आसुओ की अविरल धारा बह रही थी।

राजा शुद्धोधन को बड़ी चिन्ता हुई और कहा–"क्या हुआ ऋषिवर ? क्या आप बालक का कोई अनिष्ट होने की सभावना देखते हैं ?"

आचार्य असित ने अपने हाथो से आसू पोछे और नकार मे सिर हिलाकर कहा–"महामहिम, मैं बच्चे के लिए किसी अनिष्ट की सभावना नहीं देखता। मैं तो अपने लिए रोया था कि इस बालक मे सच्ची महानता के गुण है। बालक समस्त ब्रह्माड के रहस्यो का भेदन करने मे समर्थ होगा। महामहिम, आपका पुत्र राजनीतिज्ञ नहीं होगा वरन् यह तो सद्धर्म का महान आचार्य होगा। भू-लोक और स्वर्ग-लोक इसके निवास होगे। समस्त प्राणी इसके सबधी जन होगे। मै इसलिए रोया कि शाश्वत सत्यो का साक्षात्कार करके जब यह उनकी उद्घोषणा करेगा तो उस वाणी को सुन पाने से पहले ही मैं इस ससार से विदा ले चुका होऊगा। महामान्य, आपको और आपके देश को ऐसे महान बालक को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।"

असित जाने के लिए मुड पडे। राजा ने थोड़ा रुकने का उनसे अनुरोध भी किया लेकिन व्यर्थ रहा। वृद्ध आचार्य पहाड़ चढ़ने लगे। आचार्य असित के आने से राजा उद्विग्नता से पागल हो उठे। वह नहीं चाहते थे कि उनका पुत्र सन्यासी बने। वह चाहते थे कि उनका पुत्र सिंहासन पर बैठे और अपने राज्य की सीमाओ का विस्तार करे। राजा ने सोचा, 'असित हजारो-लाखो सतो मे से एक हैं। हो सकता है उनकी भविष्यवाणी भ्रमपूर्ण हो। जिन सतो ने कहा है कि सिद्धार्थ महान सम्राट बनेगा, उनका कथन निश्चय ही सत्य है।' आशा की इस डोरी को पकडने से राजा की उद्विग्नता कुछ कम हुई।

सिद्धार्थ को जन्म देने की लोकोत्तर प्रसन्नता का गौरव पाने के बाद महामाया का आठ दिन के बाद ही देहान्त हो गया। समस्त राज्य मे इस पर शोक छा गया। राजा शुद्धोधन ने रानी महामाया की बहिन महाप्रजापति को बुलवाया और अनुरोध किया कि वह नई रानी बन जाए। महाप्रजापति जिन्हे गोतमी भी कहते थे, इस पर सहमत हो गई। उन्होने सिद्धार्थ का

लालन-पालन अपने पुत्र के समान किया। बालक सिद्धार्थ जब बड़ा हुआ तो उसे यह जानने की जिज्ञासा हुई कि उसकी वास्तविक मा कौन है तो उन्हे पता चल पाया कि गौतमी अपनी बहिन को कितना चाहती थी और वह ससार मे सबसे अधिक प्यार सिद्धार्थ को करती थी, जितना उसकी अपनी सगी मा कर सकती थी। गौतमी के लालन-पालन से सिद्धार्थ स्वस्थ और सुदृढ़ होने लगे।

एक दिन सिद्धार्थ को उद्यान मे खेलते देख गौतमी ने अनुभव किया कि वह अब इतना बड़ा हो गया है कि उसे स्वर्ण और रत्नजटित आभूषण पहनाए जा सकें। उसने अपने अनुचरो को आदेश दिया कि वह मूल्यवान रत्नजटित आभूषण लाए जिन्हें वह सिद्धार्थ को पहनाकर देख सके। किन्तु उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कोई भी आभूषण पहनकर वह उतना सुन्दर नही लग रहा था जितना बिना आभूषणो के लगता था। ऐसे आभूषण पहनने पर सिद्धार्थ ने भी असुविधा प्रकट की तो गौतमी ने वे आभूषण वापस ले जाने को कहा।

जब सिद्धार्थ की आयु विद्या अर्जित करने की हुई तो वह अन्य शाक्य कुमारो के साथ साहित्य, उत्तम लेखन, सगीत और खेल-कूद की शिक्षा प्राप्त करने लगे। उसके सहपाठियो मे उसका चचेरा भाई देवदत्त और किम्बिल, तथा राजमहल के विशिष्ट प्रतिष्ठित व्यक्ति का पुत्र कालुदयी भी था। स्वभाव से कुशाग्र बुद्धि होने के कारण, सिद्धार्थ अपने पाठ बहुत शीघ्रता से पढ़-समझ लेते। उनके गुरुवर विश्वामित्र ने पाया कि देवदत्त बहुत तेज विद्यार्थी है किन्तु उन्होने अपने अब तक के अध्यापन काल मे सिद्धार्थ सरीखा प्रतिभाशाली विद्यार्थी नहीं देखा था।

नौ वर्ष की आयु मे एक दिन सिद्धार्थ और उसके सहयोगी छात्रो को भूमि-कर्षण (प्रथम हल चलाने का) उत्सव देखने की अनुमति दी गई। गौतमी ने स्वय ही सिद्धार्थ को अवसर के उपयुक्त वस्त्र और जूते तक पहनाए। सर्वोत्तम राजकीय वेशभूषा मे राजा शुद्धोधन ने समारोह की अध्यक्षता की। शीर्षस्थ सन्त और ब्राह्मण आचार्य तरह-तरह के रगो के वस्त्र धारण किए समारोह मे पधारे थे। यह समारोह राज्य के सर्वोत्तम खेतो मे आयोजित किया गया था जो राजमहल के समीप ही थे। प्रत्येक द्वार पर तथा समारोह स्थल तक ध्वज और रग-बिरगी झडियो से सजावट की गई थी। मार्ग पर दोनो ओर मचो पर नाना प्रकार के खाद्य और पेय पदार्थ रखे हुए थे। राज कर्मचारी और सगीतकार समारोह मे आई भीड़ की व्यवस्था और मनोरजन कर रहे

थे जिससे हर्षोल्लास का वातावरण आनदपूर्ण हो उठा था। सिद्धार्थ के पिता तथा अन्य गण्यमान्य व्यक्ति जव समारोह के कर्मकाड के लिए उठकर खडे हुए तो आचार्यों एव पडितो ने पूर्ण निष्ठा के साथ मन्त्रोच्चार आरभ किया। सिद्धार्थ पीछे खड़े थे और उनके दोनो ओर देवदत्त और कालुदयी खडे थे। वच्चे वहुत ही उत्साहित हो रहे थे क्योकि उन्हे वताया गया था कि समारोह की समाप्ति पर घास के मैदान पर सभी को दावत खाने को मिलेगी। सिद्धार्थ प्राय आमोद-प्रमोद के लिए घूमने नहीं जाता था, इसलिए यहा आकर प्रसन्न था। आचार्यों का मन्त्रोच्चार चलता ही जा रहा था जैसे वह कभी रुकेगा ही नहीं। इससे नौजवान वर्ग मे वेचैनी होने लगी। अधिक विलम्व सहन न कर पाने के कारण वे वहा से खिसक लिये। कालुदयी सिद्धार्थ का हाथ पकडे था और वह उस दिशा मे चल दिए जिस ओर सगीतकार और नर्तक अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे थे। तपता सूरज, तीखी धूप और नृत्य मे अग-सचालन के कारण उनके वस्त्र पसीने से तर-व-तर हो उठे थे। सिद्धार्थ को भी गरमी लगी और वह अपने मित्रो को छोड़कर सडक पर लगे जम्वू वृक्ष की छाया मे आ खड़ा हुआ। वृक्ष की छाया मे सिद्धार्थ को चैन मिला। उसी क्षण गौतमी उसे देखती हुई वहा आईं और कहने लगी "अरे तुम कहा थे। मैं तुम्हे खोजती घूम रही हू। अव तुम्हे समारोह की समाप्ति मे भाग लेने के लिए चलना चाहिए। इससे तुम्हारे पिता जी प्रसन्न होगे।'

"मा समारोह वहुत लम्वा चला। पडित लोग इतनी देर तक क्या मन्त्रोच्चार कर रहे थे।"

"मेरे वच्चे, वे वेद मन्त्रो का सस्वर पाठ कर रहे थे। वेद मन्त्रो के अर्थ वहुत गूढ होते है। अगणित पीढियो पहले, सृष्टि कर्त्ता व्रह्मा ने स्वय इनकी शिक्षा व्राह्मणो को दी थी। तुम भी शीव्र ही इनका अध्ययन करोगे।"

"व्राह्मणो की वजाय इन मन्त्रो का पाठ पिताजी स्वय क्यो नहीं करते?"

"मेरे वच्चे, वेद मन्त्रोच्चार की अनुमति केवल व्राह्मण वर्ण के लोगो को ही प्राप्त है। शक्तिशाली राजा को भी पूजा-पाठ का यह कर्म पडितो से ही कराना होता है।"

सिद्धार्थ ने गौतमी के शव्दो पर गौर से विचार किया। वहुत देर के बाद हाथ जोडकर गौतमी से अनुरोध किया कि "मा कृपा करके पिताजी से मुझे यहीं रहने देने की अनुमति ले लीजिए। इस जम्वू वृक्ष के नीचे बैठकर मुझे वहुत आनंद आ रहा है।"

अपने बच्चे की इस सद्‌वृत्ति पर गौतमी मुस्करा दी और स्वीकृति दे दी। उसने सिद्धार्थ के सिर पर हाथ फेरा और वापस चली गई।

आखिरकार ब्राह्मणो का मन्त्रोच्चार समाप्त हुआ। राजा शुद्धोधन उतरकर खेतों मे आ गए और दो सेनाधिकारियो के साथ, हल से खेत मे पहला कूड़ जोता। राजा के द्वारा जुताई-बुवाई का शुभारभ करने पर उपस्थित भीड़ ने तीव्र हर्ष-ध्वनि की। इसके बाद किसानो ने राजा का अनुकरण करते हुए अपने खेतो की जुताई आरभ की। लोगो की हर्ष-ध्वनि सुनकर सिद्धार्थ खेतो को देखने गए तो उन्होने देखा कि भैंसे भारी हल को खींचने के लिए जोर लगा रहे हैं और एक तगड़ा किसान, जिसका, धूप मे रहने के कारण रंग तावे जैसा हो गया था, उनके पीछे-पीछे चल रहा था। वह बाए हाथ से हल को सीधा रख रहा था और दाए हाथ के चाबुक से भैंसो को हाक रहा था। सूरज की तेज धूप से उसके शरीर पर से पसीने की धारे चल रही थीं। हल चलने से खेत की जो मिट्टी ऊपर आ रही थी, उसमे कीड़े-मकोड़े और केचुए, सावुत या कटकर, ऊपर आ रहे थे। इन कीड़ो को देखते ही चिड़िया उड़कर वहां पहुंच जातीं और कीड़ो को अपनी चोच मे दवाकर ले उड़तीं। तभी सिद्धार्थ ने देखा कि एक बाज नीचे आया और एक छोटी चिड़िया को पंजो मे दवाकर ले गया।

इन घटनाओ को देखने मे खोए सिद्धार्थ भी चिलचिलाती धूप मे खड़े होने के कारण पसीने से तर हो गए। वह वापस जम्बू वृक्ष के नीचे आ गए। उसने अभी अपनी आंखो के सामने बहुत-सी अद्‌भुत बाते देखी थीं जिनका उसे पहले ज्ञान तक न था। वह सहजासन पर बैठ गए और जो कुछ देखा था, उस पर मनन करने लगे। वह सीधी पीठ किए बड़ी देर तक उसी तरह बैठे रहे। खेत मे जो कुछ देखा और बहुत से प्राणियो पर जो बीती, उसके चित्र उनकी आखो के सामने तैरते रहे। उनके आस-पास जो संगीत, नृत्य और मनोरंजन के कार्यक्रम चल रहे थे, उनकी तरफ उनका ध्यान बिलकुल नहीं था। कुछ देर बाद जब राजा तथा रानी उधर से गुजरे तो उन्होने देखा कि सिद्धार्थ अब भी मनन-चिंतन करते बैठे है। सिद्धार्थ छोटी-सी स्थिर मूर्ति सा दिखता कितना भला लग रहा था, इसे देखकर गौतमी की आखे भर आईं, किन्तु यह देखकर राजा शुद्धोधन एक आकस्मिक भय से भर उठे। यदि सिद्धार्थ इस छोटी आयु मे इस प्रकार निष्ठापूर्वक बैठ सकता है, तब क्या आचार्य असित की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होने वाली है ? इस विचार से राजा इतने उद्विग्न हो उठे कि समारोह मे और नहीं रुके तथा अपने राजकीय वाहन से अकेले ही महल को लौट आए।

देहात के कुछ गरीब वच्चे जोर-जोर से वाते करते और हसते हुए उस वृक्ष के पास से गुज़रे। गौतमी ने उन्हे चुप रहने का इशारा किया और दिखाया कि सिद्धार्थ जम्वू वृक्ष के नीचे वैठे हैं। उत्सुकतावश, वच्चे उन्हे घूर-घूरकर देखने लगे। अकस्मात् सिद्धार्थ ने आखे खोली और रानी को सामने देखकर मुस्कराने लगे।

उन्होने कहा-"माताजी, वेद मत्रो के उच्चार ने उन कीड़ो और उस चिड़िया को वचाने की खातिर तो कुछ नहीं किया।"

सिद्धार्थ उठ खड़े हुए और दौड़कर गौतमी का हाथ थाम लिया। उसने देखा कि वच्चे उनकी ओर गौर से देख रहे हैं। वे सव उन्हीं की उम्र के थे। उनके वस्त्र फटे हुए थे, चेहरे धूल भरे थे और उनके हाथ-पाव वहुत ही पतले थे। राजकुमार की वेशभूपा पहने हुए सिद्धार्थ को अपने सामने खडा देख उन्हे अपने वस्त्र वड़े अटपटे से लगे। लेकिन वह उनके साथ खेलने के लिए वहुत इच्छुक था। वह मुस्कराए और उनकी ओर देखकर हाथ हिलाया। एक वच्चे ने मुस्करा कर सिद्धार्थ की मुस्कान का प्रत्युत्तर दिया। इतना ही प्रोत्साहन सिद्धार्थ के लिए पर्याप्त था। उसने वच्चो को उत्सव की दावत मे निमंत्रित करने की माताश्री से अनुमति मागी। पहले तो वह थोडी हिचकीं, किन्तु वाद मे उन्होने सहमति दे दी।

अध्याय सात

सफेद हाथी का पुरस्कार

जब सिद्धार्थ चौदह वर्ष के थे तो रानी गौतमी ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम नंद था। सारे महल मे खुशी छा गई। सिद्धार्थ भी प्रसन्न था क्योकि उसे एक छोटा भाई मिल गया। प्रतिदिन पढ़ने के वाद वह नद को देखने चला जाता। हालांकि सिद्धार्थ की आयु इतनी हो गई थी कि उसे अन्य वातो की ओर आकृष्ट होना चाहिए किन्तु वह अक्सर देवदत्त के साथ नद को चलाता हुआ ले जाता।

सिद्धार्थ के रिश्ते मे लगने वाले भाइयों मे तीन–महानाम, भद्दिय और किम्बिल—को वह वहुत पसद करते थे। वह प्रायः इन लोगो को, महल के पीछे वने पुष्पोद्यान मे खेलने के लिए वुला लिया करते थे। रानी गौतमी कमल सरोवर के पास वैच पर वैठकर इन लोगो को खेलते देखकर प्रसन्न होती थीं। उसके कर्मचारी इन वच्चो के लिए नाश्ता-पानी लाने के लिए सदैव आस-पास रहते।

प्रतिदिन सिद्धार्थ अपनी शिक्षा मे अधिकाधिक प्रगति करते गए और देवदत्त को अपनी ईर्ष्या दवाना कठिन हो गया। सिद्धार्थ सभी विषयो मे यहा तक कि युद्ध-विद्या मे भी पारगत होते गए। देवदत्त शारीरिक दृष्टि से बलशाली था, तो सिद्धार्थ अधिक फुर्ती-चुस्ती वाले थे। गणित मे अन्य विद्यार्थी भी सिद्धार्थ का लोहा मान गए। सिद्धार्थ के प्रश्नो का उत्तर देने के लिए अध्यापक अर्जुन तक को घटो मगजपच्ची करनी पड़ती थी।

सगीत तो सिद्धार्थ को दिया प्रकृति का वरदान था। सगीत अध्यापक ने उन्हे दुर्लभ एव मूल्यवान वशी दे दी थी और सिद्धार्थ अकेले ही सध्याकाल मे वासुरी-वादन करते थे। कभी-कभी उनके गीत मधुर और कोमल होते तो कभी उनका सगीत ऐसा होता कि श्रोताओ को प्रतीत होता कि वे ऊपर

उठते हुए आकाश मे विचरण कर रहे है। गौतमी प्रायः शाम को वाहर बैठ जाती जिससे वह अपने पुत्र का सगीत सुन सके। जव वह अपना हृदय सिद्धार्थ के सगीत के साथ वहने देतीं तो उन्हे वहुत सतोष प्राप्त होता।

अपनी आयु के अनुरूप सिद्धार्थ अपने धार्मिक और दार्शनिक अध्ययन मे अधिकाधिक गहनता लाते गए। उन्हे सभी वेदो की शिक्षा दी गई और वे वेदो मे वर्णित विचारो तथा विश्वासो के गूढ़ अर्थों का गहन मनन करते। उन्होंने ऋग्वेद और अथर्ववेद का विशेप रूप से अध्ययन किया। वालपन से ही सिद्धार्थ ने व्राह्मणो को मत्रोच्चार करते और कर्मकाड करते देखा था। अव वह स्वय इन पवित्र ग्रथो की शिक्षाओ के विषयो मे प्रवेश करने लगे थे। व्राह्मणो द्वारा इन पुनीत ग्रथो को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता। इन मत्रो के शव्दो और ध्वनियो मे वड़ी शक्ति समाहित मानी जाती थी जिनसे व्यक्तियो और प्रकृति को भी प्रभावित एव परिवर्तित किया जा सकता था। ग्रहो की स्थिति और प्राकृतिक ऋतुओ का प्रार्थनाओ और यज्ञादि से घनिष्ठ सवध था। आकाश और पृथ्वी के गोपनीय रहस्यो को समझने की क्षमता व्राह्मणो मे ही निहित समझी जाती थी। वे ही मानवीय एव प्रकृति-जगत मे समुचित समन्वय रखने के लिए प्रार्थना करने और यज्ञ करने के अधिकारी माने जाते थे।

सिद्धार्थ को वताया गया था कि सृप्टि का निर्माण पुरुष अथवा व्रह्म से हुआ है। समाज मे सभी वर्णो के व्यक्ति व्रह्मा के शरीर के विभिन्न भागो से सृजित हुए है। प्रत्येक व्यक्ति मे उस परम व्रह्म का अश आत्मा के रूप मे विद्यमान रहता है।

सिद्धार्थ ने 'व्राह्मणो' और 'उपनिपदो' सहित अन्य धर्म-ग्रथो का भी गहन अध्ययन किया। उनके अध्यापकगण परम्परागत विश्वासो से ही शिष्यो को परिचित कराना चाहते थे किन्तु सिद्धार्थ और उनके साथी उनसे ऐसे प्रश्न करते जिनसे अध्यापको को सम-सामयिक परिस्थितियो के अनुसार उनकी व्याख्या करनी पड़ती जो सदैव परम्पराओ के अनुरूप नहीं होती।

जव विद्यार्थियो की विद्यालय से छुट्टी होती तो सिद्धार्थ उन्हे समझा-वुझाकर राजधानी के जाने-माने पडित-पुजारियो और व्राह्मणो के पास ले जाते और इन विपयो पर विचार-विमर्श करते। इसके फलस्वरूप सिद्धार्थ को ज्ञात हुआ कि देश मे ऐसे अनेक आदोलन हो चुके है, जिनमे व्राह्मणो के इस एकछत्र अधिकार को चुनौतियां दी गई थीं। इन आदोलनो को उन असतुप्ट निम्न वर्ग वालो ने ही नहीं चलाया था जो व्राह्मणो की विशिप्ट सत्ता मे भागीदारी

के इच्छुक थे, वल्कि इनमे सुधारवादी व्राह्मण भी सम्मिलित थे।

जव से देहात के गरीव वच्चो को राजसी पिकनिक मे बुलाने की अनुमति सिद्धार्थ को मिली, तभी से उन्हे यह भी अनुमति मिल गई कि वे राजधानी के आस-पास के छोटे गावो मे भी घूम आया करे। इन अवसरो पर वह एकदम सादी वेशभूषा मे जाते। इन लोगो से सीधी वातचीत करने पर सिद्धार्थ को ऐसी वहुत-सी वातो की जानकारी हो सकी, जिन्हे महल मे रहकर वह कभी भी न जान पाते। उन्हे पता था कि लोग व्रह्मा, विष्णु और शिव की भक्ति और पूजा करते है। लेकिन उन्हे यह भी ज्ञात हुआ कि व्राह्मण पुजारी भक्त लोगो का शोषण भी करते हैं। जन्म विवाह और शव-संस्कार के समय इन लोगो को भोजन, धन और वेगार के रूप मे कुछ न कुछ देने को वाध्य होना पडता है, भले ही वे लोग स्वय चाहे कितने ही गरीव क्यो न हो।

एक दिन सिद्धार्थ फूस की झोपडी के पास से गुजरे तो भीतर से शोकपूर्ण रुदन की आवाजे सुनाई दीं। उन्होने देवदत्त से भीतर जाकर वास्तविकता का पता करने को कहा तो ज्ञात हुआ कि परिवार के मुखिया की मृत्यु हो गई है। परिवार वेहद गरीव था। पत्नी और वच्चे वेहद दुवले थे। उनका घर गिरने की अवस्था तक जर्जर था। परिवार का मुखिया रसोई वनवाने के लिए व्राह्मण द्वारा भूमि-पूजन कराना चाहता था। भूमि-शुद्धि के लिए व्राह्मण ने उससे वेगार करने को कहा। कई दिनो तक व्राह्मण ने वड़े-वडे पत्थर ढोकर लाने तथा लकड़िया चीरने का काम उससे कराया। मेहनत करते-करते वह व्यक्ति वीमार पड गया तो व्राह्मण ने उसे घर जाने की छुट्टी दे दी लेकिन घर पहुचने से पहले ही वह राह पर गिरकर मर गया।

अपने मनन के आधार पर सिद्धार्थ व्राह्मणवाद के इन मूलभूत सिद्धान्तो पर प्रश्न उठाने लगे कि वेदाध्ययन का एकमात्र अधिकार व्राह्मणो को ही है, व्रह्माड की सर्वोच्च सचालक शक्ति व्रह्म है और उसकी प्रार्थना एव पूजा करने से, उनको सवसे अधिक शक्ति प्राप्त होती है। इन अधी मान्यताओ को सीधी चुनौती देने वाले पुजारियो और पडितो के प्रति उनकी सहानुभूति जागने लगी। इस सदर्भ मे उनकी रुचि कभी कम नहीं हुई और वेदाध्ययन सवधी शिक्षा की कोई कक्षा उन्होने नहीं छोड़ी।

साधु-सन्यासियो से मिलना और उनसे धर्म-चर्चा करना सिद्धार्थ को पसद था, किन्तु उनके पिताजी इसे नापसद करते थे, इसलिए सिद्धार्थ भ्रमण की ऐसी योजनाए वनाते जिनसे उन्हे सत ज्ञानी जनो से मिल पाने का अवसर मिल सके। इन सन्यासियो को भौतिक पदार्थों या उच्च सामाजिक प्रतिष्ठा

की चिन्ता ही नहीं होती थी जबकि ब्राह्मण खुल्लमखुल्ला पद-लोलुपता प्रदर्शित करते। ये सन्यासी आत्मा की मुक्ति के लिए-ससार के समस्त सुख-दु.खो से छुटकारा पाने के लिए-सब कुछ त्याग देते थे। ये वे लोग थे जिन्होने वेदो और उपनिपदो के गूढ़ तत्त्वो का अध्ययन मनन किया था। सिद्धार्थ को पता था कि ऐसे सन्यासी कौशल में (जो शाक्य राज्य का पश्चिमी पड़ोसी राज्य था) और उनके राज्य के दक्षिणी पड़ोसी राज्य मगध मे रहते हैं। सिद्धार्थ को विश्वास था कि एक न एक दिन उन्हे इन क्षेत्रो मे जाने और ऐसे सन्यासियो के पास अध्ययन करने का अवसर मिलेगा।

राजा शुद्धोधन सिद्धार्थ की इन आकाक्षाओ से अवगत थे। उनको भय था कि किसी न किसी दिन उनका पुत्र राजमहल छोड़कर सन्यासी बन जाएगा। उन्होने अपने छोटे भाई दृढ़धनराज से (जो देवदत्त और आनद के पिता थे) अपनी चिन्ता की चर्चा की . "कौशल के लोगो की निगाहे हमारे देश के क्षेत्र पर लगी हैं। अपने देश की भविष्य-रक्षा के लिए हमे सिद्धार्थ और देवदत्त सरीखे युवको की बड़ी आवश्यकता है। किंतु मुझे भय है कि आचार्य असित कालदेवल की भविष्यवाणी के अनुसार सिद्धार्थ कहीं सन्यासी न बन जाए। यदि ऐसा हुआ तो देवदत्त भी उसका अनुकरण करेगा। तुम्हे पता है कि इन लोगो को बाहर जाकर साधु-सन्यासियो से मिलना कितना प्रिय है।"

राजा के ये शब्द सुनकर दृढधनराज आश्चर्य मे पड गए। एक क्षण तक विचार करने के बाद उन्होने राजा के कान मे कहा कि "यदि आप मुझसे पूछते है तो आप सिद्धार्थ का विवाह कर दीजिए। एक बार गृहस्थी के चक्कर मे फसते ही वह सन्यासी बनने का विचार भूल जाएगा।" राजा शुद्धोधन ने इस पर स्वीकृति सूचक सिर हिलाया।

उस रात राजा ने अपनी चिन्ता गौतमी को भी बताई। उन्होंने निकट भविष्य मे ही सिद्धार्थ का विवाह करने का वचन दिया। यद्यपि उन्होने हाल ही मे सुन्दरी नदा नामक राजकुमारी को जन्म दिया था। किन्तु उसके बाद भी वह राज्य मे युवको के सम्मेलन करने लगीं। सिद्धार्थ सगीत, खेलकूद और धावक प्रतियोगिताओ मे उत्साह से भाग लेने लगे। इस दौरान बहुत से युवक एव युवतिया उनके सपर्क मे आए।

राजा शुद्धोधन की छोटी बहिन पामिता थी जिनके पति कोलिय के राजा दण्डपाणि थे। ये लोग कोलिय के राजधानी रामग्राम और कपिलवस्तु दोनो ही स्थानो पर रहते थे। शाक्य और कोलिय राज्यो की सीमा का विभाजन रोहिणी नदी करती थी और कई पीढ़ियो मे इनकी प्रजा आपस मे सद्भावपूर्वक

रहती चली आ रही थी। दोनो की राजधानियो के बीच इतनी ही दूरी थी जिसे एक दिन मे तय किया जा सकता था। गौतमी के अनुरोध पर कुनाऊ झील के किनारे बड़े मैदान मे युद्ध-विद्या की प्रतियोगिता आयोजित करने के लिए कोलिय के राजा और रानी सहमत हो गए। राजा शुद्धोधन ने इस समारोह की अध्यक्षता करना स्वीकार कर लिया जिससे अपने राज्य के युवको की शक्ति बढ़े और युद्ध-विद्या में प्रवीणता प्राप्त हो सके। राजधानी के सभी युवक-युवतियो को इसमे आमत्रित किया गया था। युवतियो को खेल-कूद प्रतियोगिताओ मे भाग तो नहीं लेना था किन्तु युवको को, प्रशसा करके और तालिया बजाकर प्रोत्साहित करना था। रानी पामिता और राजा दण्डपाणि की पुत्री यशोधरा को सभी अतिथियो का स्वागत करने का दायित्व सौपा गया था। प्राकृतिक सौंदर्य और चेहरे की ताजगी के कारण वह बहुत प्यारी तथा आकर्षक लग रही थी।

सभी प्रतियोगिताओ, जैसे—धनुर्विद्या, खड्ग प्रयोग, घुड़दौड़ और भारोत्तोलन आदि मे सिद्धार्थ सर्वप्रथम आए थे। यशोधरा ने उनको पुरस्कार स्वरूप सफेद हाथी भेट किया। दोनो हाथ जोड़ थोड़ा सिर झुकाए हुए सयत और गरिमापूर्ण स्वर मे यशोधरा ने कहा–"राजकुमार सिद्धार्थ, अपनी कौशलपूर्ण विजय पर कृपया इस हाथी को स्वीकार कीजिए। इसके साथ ही मेरी हार्दिक बधाई भी अगीकार कीजिए।"

राजकुमारी की गतिविधियां शालीन और अनासक्त भाव वाली थीं। उसकी वेशभूषा भी गौरवमयी और सुरुचिपूर्ण थी। उसकी मुस्कान अधखिले कमल के समान आकर्षक थी। सिद्धार्थ ने झुकते हुए उसकी आंखो मे देखते हुए शान्त स्वर मे कहा–"धन्यवाद, राजकुमारी जी।"

देवदत्त सिद्धार्थ के पीछे खड़ा था और प्रतियोगिता मे द्वितीय स्थान ही पा सकने के कारण अप्रसन्न था। वह इस बात से भी उखड़ा हुआ था कि यशोधरा ने उसकी ओर देखा तक नहीं। उसने झपटकर हाथी की सूंड पकडी जोर से उसके मर्म भाग पर मुष्टि-प्रहार किया। कष्ट के मारे हाथी घुटनो के बल बैठ गया।

सिद्धार्थ ने क्रोधपूर्ण दृष्टि से देखते हुए देवदत्त से कहा–"भाई यह तो दुराचार पूर्ण कार्य है।"

सिद्धार्थ ने हाथी की सूड़ के मर्म-स्थल को स्नेहपूर्वक सहलाया और उससे सान्त्वना के स्वर मे धीरे से कुछ कहा। धीरे-धीरे हाथी उठकर खड़ा हो गया और राजकुमार को सिर झुकाया। दर्शको ने प्रशसा मे तुमुल हर्षध्वनि

सभी प्रतिस्पर्द्धाओं मे सिद्धार्थ सर्वप्रथम आए, तो यशाधरा द्वारा पुरस्कार स्वरूप सफ़ेद हाथी भेंट

को। सिद्धार्थ हाथी की पीठ पर बैठ गए और विजय-यात्रा निकली। अपने महावत के हाकने पर सफेद हाथी ने सिद्धार्थ को राजधानी कपिलवस्तु मे घुमाया। मार्ग मे लोगो ने तालिया बजाकर उनका स्वागत किया। यशोधरा शालीनतापूर्वक पग रखती हुई, उनके पीछे-पीछे चल रही थी।

अध्याय आठ

रत्नजटित हार

युवा होने पर सिद्धार्थ को राजमहल का जीवन बधा-बधा-सा लगने लगा इसलिए उन्होने नगर के बाहर जाकर घूमना शुरू कर दिया ताकि वह बाहर के जीवन का परिचय प्राप्त कर सके। निष्ठावान सेवक चन्ना सदैव उनके साथ रहता। कभी-कभी उनके भाई और मित्र भी साथ होते। चन्ना सिद्धार्थ के रथ का सारथी भी था। वह और सिद्धार्थ, घोड़ो की रासे बारी-बारी से सभालते। सिद्धार्थ घोड़ो को कभी चाबुक नहीं मारते थे, इसीलिए चन्ना भी चाबुक का प्रयोग नहीं करता।

इन यात्राओ मे सिद्धार्थ ने शाक्य राज्य भर मे भ्रमण कर लिया था। वह उत्तर मे स्थित हिमालय की तराई के ऊबड़-खाबड़ भागो से लेकर दक्षिणी मैदानो तक, सभी जगह गए। राजधानी कपिलवस्तु निचाई वाले भाग मे थी जहा आबादी सबसे अधिक सघन थी और यह भाग बहुत धन-धान्यपूर्ण था। पड़ोस के कौशल और मगध राज्यो की तुलना मे शाक्य राज्य बहुत छोटा था। पहाडो से निकलकर रोहिणी और बाण गगा नदिया इसके उर्वर खेतो की सिचाई के लिए जल सुलभ करतीं। ये दोनो नदिया हिरण्यमयी नदी से मिलतीं जो और भी आगे जाकर गगा मे मिल जाती। सिद्धार्थ को बाण गगा नदी के किनारे बैठकर नदी का अविरल प्रवाह देखना बहुत प्रिय था।

स्थानीय जनता का विश्वास था कि बाण गगा के जल मे स्नान करने मे इस जन्म और पूर्व जन्म के पापो से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। इसलिए बेहद ठडे जल मे लोग डुबकिया लगा-लगाकर स्नान करते। एक दिन जब सिद्धार्थ नदी तट पर बैठे हुए थे तो उन्होने अनुचर चन्ना से पूछा—"क्या तुम भी विश्वास करते हो कि इस नदी मे स्नान करने से पाप-कर्म धुल जाते है ?"

"श्रीमन्, अवश्य धुलते होगे वरना इतने लोग इसमे स्नान करने क्यो आते ?"

सिद्धार्थ मुस्कराए। "तव तो इसके जल मे सदा रहने वाली मछलियां, केकड़े और घोघे तो सर्वाधिक शुद्ध और पुण्यवान प्राणी होने चाहिए।"

चन्ना ने उत्तर दिया–"कम से कम मैं इतना तो अवश्य कह सकता हूं कि इस नदी मे स्नान करने से शरीर की मैल-मिट्टी धुल ही जाती है।"

सिद्धार्थ यह सुनकर हसे और चन्ना की पीठ थपथपाकर बोले–"तुम्हारे इस कथन से मैं निश्चय ही सहमत हू।"

एक दिन जव सिद्धार्थ राजमहल लौट रहे थे तो यशोधरा को एक छोटे गरीब गांव मे अपनी नौकरानी के साथ देखकर आश्चर्य से भर उठे क्योंकि वह गांव के उन वच्चो की तीमारदारी कर रही थी जिनकी आंखो मे कष्ट था या जिन्हे फ्लू, चर्म रोग या अन्य रोग थे। यशोधरा सादे कपड़े ही पहने थी लेकिन वह गरीवो के वीच अवतरित देवी सी लग रही थी। सिद्धार्थ इस वात से अत्यधिक प्रभावित हुए कि एक राजकुमारी अपनी सुख-सुविधाओं को बिसरा कर असहाय लोगो की देख-भाल कर रही थी। वह रोगी बच्चो की आखे और शरीर धो-साफ कर दवा लगा रही थी और उनके गदे कपड़े धो रही थी।

"राजकुमारी आप यह सेवा-कार्य कव से कर रही है", सिद्धार्थ ने पूछा, "आपको यहा देखकर बहुत अच्छा लगा।"

यशोधरा ने एक छोटी-सी लड़की की बांह धोते हुए ही ऊपर की ओर देखकर कहा, "राजकुमार जी, करीब दो सालो से। लेकिन इस गाव मे मैं दूसरी ही बार आई हू।"

"मै यहा प्रायः आया करता हू।" यहाॅ के बच्चे मुझे जानते हैं। राजकुमारी जी, आपको यह काम करके बहुत सतोष मिलता होगा ?"

यशोधरा ने कोई उत्तर न देकर केवल मुस्करा दिया और वह बच्ची की बांह धोने मे जुट गई।

उस दिन सिद्धार्थ को यशोधरा से कुछ क्षण बात करने का अवसर मिला था। उन्हे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उसके विचार उनके अपने विचारो से कितने मिलते थे। यशोधरा आख मूदकर परम्पराओ का पालन करते हुए महल मे ही बद रहने से सतुष्ट नहीं थी। उसने भी वेदो का अध्ययन किया था और वह भी समाज के अन्याय की परोक्ष रूप से विरोधी थी। सिद्धार्थ के समान ही वह भी धनी एव राजपरिवार की सुविधाभोगी सदस्या बनकर

यशोधरा को अनाथ बच्चे की तीमारदारी करते देख
सिद्धार्थ अत्यधिक प्रभावित हुए

प्रसन्न नहीं थी। राजदरबारियो और ब्राह्मणो के बीच होने वाले सत्ता-सघर्ष को भी वह पसद नहीं करती थी। वह समझती थी कि एक नारी होने के कारण वह बड़ा सामाजिक परिवर्तन तो ला नहीं सकती, इसलिए सेवा-कार्य आरभ करके उसने अपनी मान्यताओ को व्यक्त किया है। उसे आशा थी कि उसका मित्र-वर्ग उसके अपने उदाहरण से, इस वात का महत्त्व समझेगा।

सिद्धार्थ को, पहली वार देखने के वाद से ही मन मे यशोधरा के प्रति एक विशेष आकर्षण का अनुभव होता था। अव उन्होने पाया कि वह यशोधरा के वोले हुए प्रत्येक शब्द मे डूव ही गए हैं। उनके पिता की इच्छा थी कि वह शीघ्र ही विवाह कर ले। इसके लिए यशोधरा उपयुक्त नारी है। संगीत और खेल-कूद प्रतियोगिताओ मे सिद्धार्थ ने वहुत-सी सुन्दर युवतियां देखी थीं, किन्तु यशोधरा सवसे सुन्दर ही नहीं थी, वरन् उसके साथ उन्हे अपनापन और सतुष्टि का भी अनुभव हो रहा था।

एक वार, रानी गौतमी ने राजधानी की सभी युवतियो का मिलन समारोह आयोजित किया। उन्होने यशोधरा की मा पामिता से, तैयारियो मे सहायता करने को कहा। कपिलवस्तु की हर युवती को आमत्रित किया गया जिसमे प्रत्येक को एक अच्छा-सा आभूषण उपहारस्वरूप दिया जाना था। रानी पामिता ने सुझाव दिया कि सिद्धार्थ आभूषणो का वितरण उसी प्रकार अपने हाथो से करे, जिस प्रकार युद्ध-विद्या की प्रतियोगिता मे सभी मेहमानो का स्वागत यशोधरा ने किया था। राजा शुद्धोधन और राज-परिवार के सभी सदस्य भी इस अवसर पर उपस्थित रहेगे।

एक सुखद शीतल सध्या को इस मिलन समारोह का आयोजन किया गया। प्रासाद के कक्षो मे खाद्य एव पेय पदार्थ लगा दिए गए थे और सगीतकार अभ्यागतो के मनोरंजन के लिए अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे थे। नीचे फूलो से सजे दीपाधारो के उज्ज्वल प्रकाश मे सजी-धजी युवतिया पधारी जो सोने की तारकशी से युक्त रग-बिरगी साड़िया पहने थीं। प्रत्येक युवती को राजकीय मेहमानो तथा राजा-रानी के सामने से गुजरना था। राजकुमार की वेशभूषा मे सिद्धार्थ एक मेज की बाईं ओर खड़े थे। मेज पर मोतियो के हार, स्वर्ण तथा रत्नजटित नाना प्रकार के आभूषण रखे हुए थे जो आई हुई करीब एक हजार युवतियो को भेट किए जाने थे।

पहले तो सिद्धार्थ ने यह उपहार वितरित करने से मना कर दिया किन्तु गौतमी तथा पामिता ने अनुरोध किया कि "तुम्हारे हाथो से उपहार पाकर कोई भी व्यक्ति गौरव और हर्ष का अनुभव करेगा। तुमको यह समझना चाहिए।"

यह कहकर पामिता विश्वासपूर्वक मुस्करा दीं। दूसरों को प्रसन्न करने की बात को सिद्धार्थ टाल नहीं सके। हजारो अभ्यागतो के सामने खड़े हुए सिद्धार्थ यह समझ नहीं पा रहे थे कि प्रत्येक युवती की पात्रता के अनुसार आभूषण का चयन कैसे करे। जिस पहली युवती को आभूषण-उपहार देना था, वह एक राजकुमार की पुत्री सोमा थी। पामिता के अनुदेश के अनुसार उसे राजकीय सीढियो पर चढ़कर राजा-रानी तथा मान्य अतिथियो को नमन करके धीरे-धीरे चलते हुए सिद्धार्थ के पास आना था। जब वह सिद्धार्थ के सामने पहुची तो झुककर प्रणाम किया। प्रत्युत्तर मे सिद्धार्थ भी झुके और उसे मोतियो का तोड़ा भेट किया। सभी अतिथियों ने तालिया बजाईं। सोमा ने नमन किया। उसने इतने मंदस्वर मे सिद्धार्थ को धन्यवाद दिया कि वह उसके शब्द भी नहीं सुन-समझ सके।

दूसरी युवती रोहिणी आई। सिद्धार्थ ने पात्र की गरिमा एव सौंदर्य के अनुसार आभूषण का चयन करना बद कर दिया और जो भी आभूषण सामने पडता गया, उपहार मे देते गए। हालाकि युवतियो की सख्या काफी थी, किन्तु सिद्धार्थ के इस व्यवहार से उपहार-वितरण शीघ्र समाप्त हो गया। रात के दस बजे के करीब अधिकाश आभूषण दिए जा चुके थे। सभी समझते थे कि आभूषण का उपहार पाने वाली अंतिम युवती शैला है। जब सिद्धार्थ समझ रहे थे कि उनका काम समाप्त हो गया, तभी दर्शको के बीच से उठकर एक अन्य युवती धीरे-धीरे मच की ओर बढ़ी। यह यशोधरा थी जो सफेद साड़ी पहने हुए प्रभाती शीतल मद पवन की भांति आई। राजा-रानी को उसने नमन किया और शालीनता के साथ सिद्धार्थ के पास पहुची, मुस्कराई और पूछा-"मान्यवर क्या मेरे लिए कुछ बचा है ?"

सिद्धार्थ ने यशोधरा को देखा और मेज पर बचे हुए आभूषणो पर उलझन भरी दृष्टि डाली। उन्हे यह देखकर बड़ी निराशा हुई कि यशोधरा को उपहार मे देने योग्य कुछ बचा ही नहीं था। अकस्मात् उन्होने अपना कठहार उतारा और यशोधरा को ओर बढ़ाते हुए कहा-"राजकुमारी जी, आपके लिए मेरा यह उपहार है।"

यशोधरा ने इनकार मे सिर हिलाते हुए कहा, "यहा मैं आपके प्रति आदर व्यक्त करने आई थी। मैं भला आपका कठहार कैसे ले सकती हू।"

सिद्धार्थ ने उत्तर में कहा कि "मेरी माताश्री गौतमी प्राय: कहा करती हैं कि मैं आभूषण के बिना ही अच्छा लगता हू। राजकुमारी जी, कृपया यह उपहार स्वीकार करे।"

उन्होने यशोधरा को थोड़ा निकट आने का सकेत किया ताकि वह चमचमाता रत्नजटित हार उसके गले मे पहना सके। अतिथियो ने इस पर जो तालिया वजाना आरभ किया तो प्रतीत होता था कि वे कभी थमेगी ही नहीं। सभी लोग अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए उठकर खड़े हो गए थे।

अध्याय नौ

सदयता का पथ

अगली शरद् ऋतु मे सिद्धार्थ और यशोधरा का विवाह हो गया। समस्त राज्य मे यह प्रसन्नता और समारोह का दिन था। राजधानी कपिलवस्तु झडो, दीपाधारो और पुष्पो से सजाई गई। सभी जगह सगीत के स्वर गुजित हो रहे थे। अपने रथ मे बैठकर सिद्धार्थ और यशोधरा जहा-जहा गए, सभी जगह तुमुल हर्ष-ध्वनि से उनका स्वागत किया गया। उन्होंने ग्रामो तथा नगलो (छोटे गावो) की भी यात्रा की और बहुत से निर्धन परिवारो के लिए भोजन-वस्त्र लेकर गए।

राजा शुद्धोधन ने नव विवाहित युगल के लिए तीन ऋतुओ के अनुरूप तीन प्रासादो का निर्माण अपनी देख-रेख मे कराया। ग्रीष्मकालीन प्रासाद का निर्माण पहाड़ की ऊचाई पर एक रमणीक स्थान पर कराया गया। किन्तु वर्षा और शरद ऋतु के प्रासाद राजधानी मे ही बनवाए गए। प्रत्येक प्रासाद के समीप कमल सरोवर बने थे जिनमे से किसी मे नील कमल, किसी मे पद्म (लाल कमल) तो किसी मे पुडरीक (श्वेत कमल) लगे हुए थे। नव विवाहित युगल के सुरुचिपूर्ण वस्त्र एव पादत्राण और प्रतिदिन जलाने के लिए चदन चूर्ण दक्षिण पश्चिम मे स्थित काशी राज्य की राजधानी वाराणसी से विशेष रूप से मगवाया गया था।

राजा शुद्धोधन का चित्त शात था क्योंकि अब सिद्धार्थ उस मार्ग पर चलने लगे थे, जिस पर चलने की वह अपने पुत्र से आशा करते थे। अपने पुत्र और नव परिणीता वधू के सतत सुखद मनोरजन के लिए उन्होने स्वय सर्वोत्तम सगीतकारों एव नर्तकियो का चयन किया था।

किन्तु सिद्धार्थ और यशोधरा की प्रसन्नता को धन और पद-गरिमा से अर्जित नहीं किया जा सकता था। उनकी प्रसन्नता हृदय की उन्मुक्तता और
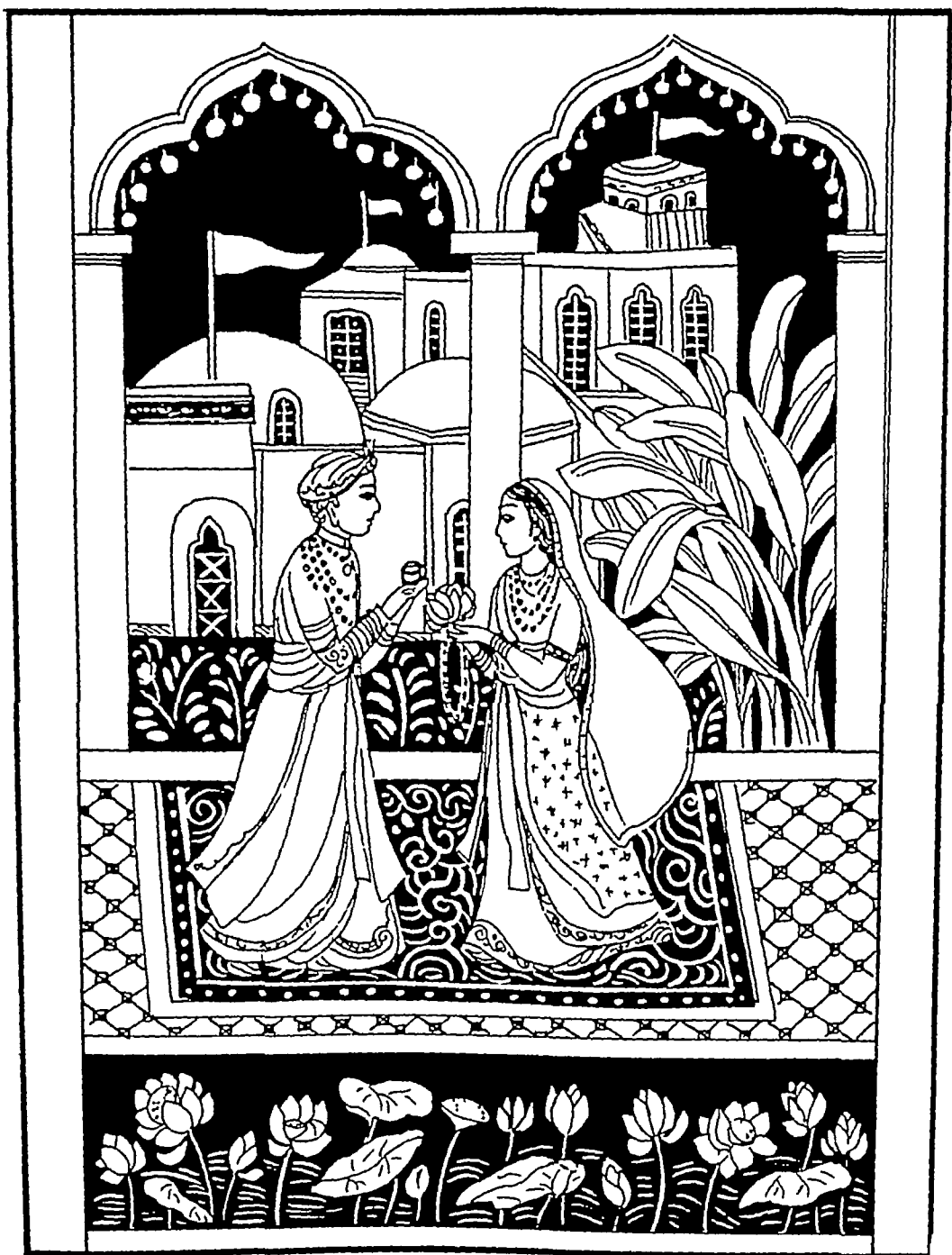
सिद्धार्थ और यशोधरा का विवाह पूरे राज्य में महान् हर्ष और उल्लास का कारण बना

एक-दूसरे के आतरिक मनोभावो को समझकर चलने मे निहित थी। वे विशिष्ट पकवानो या सुस्वादु भोजन और बढिया-बढ़िया रेशमी वस्त्रो से प्रभावित नहीं होते थे। वे सगीतज्ञो और नर्तक-नर्तकियो की कला की सराहना तो कर सकते थे किन्तु वे उनके द्वारा दिए जाने वाले वासनात्मक सुखो मे डूबने को तैयार नहीं थे। उनके अपने ही सपने थे—आध्यात्मिक प्रश्नो के उत्तर पाना और समाज मे नई व्यवस्था की स्थापना करना।

अगली ग्रीष्म ऋतु में जव सिद्धार्थ निष्ठावान बाल-साथी चन्ना के साथ ग्रीष्मकालीन प्रासाद मे गए तो उन्होने राज्यभर के वे स्थान यशोधरा को दिखाएं जो उसने अव तक नही देखे थे। वे प्रत्येक स्थान पर कई-कई दिन ठहरे और कभी-कभी तो ग्राम-वासियो के घरो मे भी ठहरे, उनका सादा भोजन किया और वान की वुनी हुई चारपाइयो पर सोये। वे जहा-जहा गए, वहा की जीवन-चर्या और परम्पराओ के विषय मे भी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त किया।

कभी-कभी तो उन्होने वहुत ही कष्टपूर्ण स्थितिया भी देखी। वे ऐसे परिवारो से भी मिले जिनके नौ-दस बच्चे थे और प्रत्येक बच्चा बीमार था। उनके माता-पिता चाहे जितना परिश्रम करे, फिर भी, वे इतना नहीं कमा पाते थे कि इतने वच्चों का लालन-पालन कर सके। किसानों का जीवन तो कठिनाइयो का पर्याय ही था। सिद्धार्थ ने ऐसे वच्चे देखे जिनके हाथ-पाव सूखी लकड़ियो से पतले थे और कीड़ो तथा कुपोषण के कारण उनके पेट निकले हुए थे। उन्होने देखा कि विकलाग और लूले-लगड़े गलियो मे भिक्षा मागते फिर रहे थे। इन सव दृश्यो को देखकर उनकी सारी खुशिया काफूर हो गई। उन्होने देखा कि लोग ऐसी विपम स्थितियो मे फसे हुए हैं, जिनसे उन्हे कभी मुक्ति नही मिल सकती। निर्धनता और रोगो के अतिरिक्त ब्राह्मण उनको और भी कष्ट देते थे। और, उनके अत्याचारों के विरुद्ध किसी से शिकायत भी नहीं की जा सकती थी। राज्य की राजधानी वहा से वहुत दूरी पर अवस्थित थी। यदि वे वहा पहुच भी जाए, तो उनकी सुनेगा कौन ? वह जानते थे कि राजा को भी इस स्थिति मे परिवर्तन लाने का कोई अधिकार नहीं है।

राज दरवार भीतरखाने कैसे चलता हे, इसे सिद्धार्थ एक अरसे से समझ चुके थे। प्रत्येक अधिकारी जरूरतमदो की तकलीफे दूर करने की अपेक्षा अपनी सत्ता को सुरक्षित रखने तथा उसे सुदृढ करने मे लगा रहता था। उन्होने देखा कि वे एक-दूसरे के विरुद्ध भीपण पड्यत्र रचते रहते और और इसी

कारण, उनको राजनीति से वितृष्णा हो गई थी। वह जानते थे कि स्वय उनके पिता की सत्ता भी वड़ी नाजुक और सीमित है। एक राजा को भी किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं है और वह अब अपनी स्थिति की कैद मे फसा हुआ है। उनके पिता जानते थे कि वहुत से अधिकारी अत्यन्त लालची और भ्रष्टाचारी हैं किन्तु अपने शासन के स्थायित्व के लिए राजा को उन्हीं व्यक्तियो पर निर्भर रहना पड़ता है। सिद्धार्थ ने अनुभव किया कि यदि अपने पिता के स्थान पर वह स्वय भी राजा होगे तो उन्हे भी यही कुछ करना पड़ेगा। उन्होने यह वात भली प्रकार से समझ ली थी कि यदि लोगो के हृदयो से लोभ और ईर्ष्या की दुष्ट भावनाए निकाल दी जाए तभी स्थिति मे कुछ सुधार हो सकता है। इसी कारण आध्यात्मिक मुक्ति के मार्ग पर चलने की उनकी इच्छा और भी वलवती हो जाती थी।

यशोधरा चतुर और दूर की वात भापने मे कुशल थी। वह सिद्धार्थ की दृढ़ मनोवाछा को समझती थी। उसे यह भी विश्वास था कि यदि सिद्धार्थ ने आत्म-मुक्ति के पथ पर कदम वढ़ाने का सकल्प कर लिया तो वह उसमे सफल भी अवश्य होगे। लेकिन वह पूर्णतया व्यवहार- कुशल महिला थी। इस खोज मे उन्हे महीनो, यहा तक कि वर्षों भी, लग सकते है। इस बीच लोगो के कष्ट तो वने ही रहेगे, वल्कि वढ़ेगे भी। इसलिए उसकी यह मान्यता थी कि इन कष्टो को दूर करने के लिए जो भी करना है, तुरन्त किया जाना चाहिए। समाज के सवसे निर्धन वर्ग के कष्टो को दूर किया जा सकता है, इस विषय पर उसने सिद्धार्थ से गहन विचार-विमर्श भी किया था। समाज-सेवा के काम वह पिछले कुछ वर्षों से करती आ रही थी। उसके प्रयासो से कुछ लोगो के कष्ट कम भी हुए थे और उसे स्वय भी यह सब करके सतोष की अनुभूति हुई थी। उसे विश्वास था कि सिद्धार्थ के समर्थन से वह समाज-सेवा का कार्य लम्वे समय तक करती रह सकती है।

नवविवाहित युगल की ग्रीष्मकालीन आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु कपिलवस्तु से सभी प्रकार की वस्तुए और नौकर-चाकर भी आते रहते थे। सिद्धार्थ और यशोधरा ने अधिकाश नौकरो को वापस भेज दिया और उद्यान की देख-भाल करने, रसोई बनाने तथा महल के काम-काज के लिए कुछ ही कर्मचारियो को अपने पास रखा। चन्ना तो सदा साथ ही रहता था। यशोधरा ने राजमहल मे भी सादगी-भरे जीवन की व्यवस्था कर ली थी। वह स्वय रसोईघर मे जाकर सादगीपूर्ण वैसा ही भोजन तैयार करवाती जो सिद्धार्थ को पसद था।

सिद्धार्थ के वस्त्रो की देख-भाल वह स्वय ही करती थी।

जब ये लोग राजधानी वापस आए तो यशोधरा ने अपने समाज-सेवा के कार्य मे सिद्धार्थ का मार्ग-दर्शन प्राप्त करना चाहा। समाज-सेवा करके स्वय को व्यस्त रखने की उसकी आवश्यकता को सिद्धार्थ बखूबी समझते थे और कभी भी उसका समर्थन करने मे कोताही नहीं बरती। इसके कारण यशोधरा को अपने पति पर अगाध विश्वास हो गया था।

यद्यपि सिद्धार्थ यशोधरा के समाज-सेवा कार्य का महत्त्व समझते थे, तथापि उन्हे लगा कि उसके मार्ग से ही सच्ची शांति नहीं लाई जा सकती। लोग रोगो और अन्यायपूर्ण सामाजिक स्थितियो से ही कष्ट मे नहीं है, बल्कि उन दु:खो और लालसाओ से पीडित हैं जो उनके अपने हृदय और मन मे उठती हैं। और, यदि यशोधरा किसी समय भय, क्रोध, कडुआहट या निराशा की शिकार हो गई तो उसे अपना समाज-सेवा का कार्य आगे करते रहने की शक्ति कहा से प्राप्त होगी ? राजमहल तथा समाज मे कैसी-कैसी घटनाए होती है, उनको देखकर सिद्धार्थ ने स्वय आशका, निराशा और कष्ट की अनुभूति की है। उन्हे ज्ञात था कि सच्चे सामाजिक कार्य का एकमात्र आधार आतरिक शांति है। उन्होने इन विचारो के विषय मे यशोधरा से कुछ विचार-विमर्श नहीं किया था क्योकि उन्हे भय था कि यदि उससे ऐसी बाते कीं तो उसके मन मे अनिश्चय और चिन्ता की भावनाए आ जाएगी।

जब नवदम्पति अपने शीतकालीन महल लौटे तो उन्हे ढेर सारे अभ्यागतो का स्वागत करना पडा। यशोधरा परिवार के सदस्यो और मित्रो का स्वागत उत्साह और आदर के साथ करती, किन्तु जब सिद्धार्थ उन लोगों के साथ दार्शनिक या धार्मिक विषयो पर बातचीत करते और उन विषयो के राजनीति एव समाज के साथ सबधो पर चर्चा चलती तो सारी बातें यशोधरा बहुत ध्यानपूर्वक सुनती। नौकरो को आदेश देने के लिए भी जब उसे इधर-उधर जाना पड़ता तब भी यशोधरा के कान उनकी हर बात की ओर लगे रहते। उसे आशा थी कि उनके मित्रो मे से कुछ लोगो को खोज निकाला जा सकता है जिन्हे सामाजिक कार्यों या गरीबो की मदद के कामो मे रुचि हो। लेकिन चद लोगो मे ही इस दिशा में काम करने की इच्छा दिखी। अधिकाश लोग तो दावत खाने तथा मौज-मस्ती करने ही आए थे फिर भी, सिद्धार्थ और यशोधरा ने धैर्यपूर्वक सबकी खातिर की।

सिद्धार्थ के अलावा यशोधरा के कार्यों का हृदय से स्वागत करने वाला कोई था तो वह थीं गौतमी-रानी महाप्रजापति। रानी अपनी कुलवधू की प्रसन्नता

का सवसे अधिक ध्यान रखती थीं क्योकि वह जानती थीं कि यदि यशोधरा प्रसन्न रहेगी तो सिद्धार्थ भी प्रसन्न रहेगा। यशोधरा के सद्कार्यों का समर्थन करने के लिए उसके सामने एकमात्र यही कारण नहीं था। गौतमी करुणामयी स्वभाव की थीं और जव वह पहली वार यशोधरा के साथ गरीवो के गाव मे गई थीं, तो उसी क्षण उन्होने यशोधरा के कार्य का सच्चा मूल्य समझ लिया था। गरीवो को चावल, दाल, कपड़े या दवाइयो सरीखी भौतिक वस्तुएं देना ही महत्त्वपूर्ण वात नहीं थी, अपितु कष्टग्रस्त लोगो के प्रति ममत्वपूर्ण दृष्टि, सहायता और स्नेहपूर्ण हृदय के भाव उनको अधिक संवल प्रदान करते थे।

रानी महाप्रजापति राजमहल की अन्य महिलाओ जैसी न थीं। वह प्रायः यशोधरा से कहतीं कि महिलाओ मे भी पुरुपो के समान वुद्धि और शक्ति होती है और उन्हे भी समाज के दायित्व वहन करने चाहिए। महिलाओ के अदर अपने परिवार मे प्रेम तथा प्रसन्नता वनाए रखने के विशेष गुण होते है। तव कोई कारण नहीं कि वे रसोईघर अथवा महल तक ही सीमित रहे। पुत्र-वधू के रूप मे गौतमी को ऐसी महिला मिल गई थी जो उसकी जैसी ही थी क्योंकि यशोधरा विवेक-सम्पन्न और स्वतत्र विचारो वाली थी। रानी, यशोधरा के कार्यों के प्रति सहमति ही व्यक्त नही करती थीं, वरन् यशोधरा के साथ जाकर सामाजिक कार्यों मे भाग भी लेती थीं।

अध्याय दस

अजन्मा बालक

इसी दौरान राजा शुद्धोधन ने यह इच्छा व्यक्त की कि सिद्धार्थ अब उनके साथ अधिक समय तक रहा करे जिससे वे उनसे राजनीति और राज-काज के विषय मे बात कर सके। राजकुमार को अनेक राजकीय सभाओ मे भाग लेने के लिए बुलाया गया। कभी इनमे राजा तथा राजकुमार ही होते तो कभी राजा के दरबारी भी उपस्थित होते। सिद्धार्थ उपस्थित प्रश्नो की ओर पूरा ध्यान देते थे। वह समझ गए थे कि किसी राज्य की राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक समस्याओ की जडे राजनीति से सबंधित लोगो की स्वार्थपूर्ण आकाक्षाओ मे ही निहित होती है। वे लोग अपनी सत्ता की रक्षा के लिए ही चिन्तित होते है और जन-साधारण की भलाई करने वाली प्रगतिशील नीतिया अपनाना असभव सी बात है। जब सिद्धार्थ देखते कि भ्रष्ट अधिकारी नैतिकता और सदाचार की लम्बी-चौड़ी बाते कर रहे है, तो सिद्धार्थ का हृदय भीतर से क्रोध से खदबदा उठता। लेकिन वह अपने क्रोध को दबा जाते क्योकि उनके सामने उन बातो का कोई विकल्प नहीं था जिसे वे सभा के समक्ष प्रस्तुत कर सकते।

अनेक अधिकारियो के साथ हुई लम्बी बातचीत के बाद, एक दिन राजा शुद्धोधन ने सिद्धार्थ से पूछा कि "राजदरबार मे तुम चुपचाप बैठे रहते हो, तुम वहा अपने विचार व्यक्त क्यो नहीं करते ?"

सिद्धार्थ ने अपने पिता की ओर देखकर कहा, "ऐसी बात नहीं कि मेरे मन मे विचार नहीं होते, किन्तु उन्हे व्यक्त करना व्यर्थ होगा। मेरे विचार केवल रोग की ओर ही सकेत कर सकेगे। राजदरबार के मन्त्रियो की स्वार्थपूर्ण महत्त्वाकाक्षाओ का मै अभी कोई इलाज नहीं निकाल पाया हू। उदाहरण के लिए विश्वामित्र को ही लीजिए। दरबार मे वह महत्त्वपूर्ण शक्ति-सम्पन्न

मंत्री है। आप जानते भी हैं कि वह महा भ्रष्ट है। कई वार तो उसने आपके अधिकार-क्षेत्र में भी घुसने का यत्न किया लेकिन आप अव भी उसकी सेवाओं पर निर्भर रहने के लिए बाध्य हैं। आखिर क्यो ? क्योंकि आप जानते हैं कि यदि ऐसा नहीं करेंगे तो अराजकता फैल जाएगी।"

राजा शुद्धोधन बड़ी देर तक अपने पुत्र को चुपचाप देखते रहने के वाद बोले, "सिद्धार्थ तुम भलीभांति जानते हो कि अपने परिवार और राज्य मे शांति बनाए रखने के लिए व्यक्ति को कुछ चीजे सहन करनी पड़ती है। मेरी अपनी सत्ता भी सीमित है। लेकिन मुझे विश्वास है कि यदि तुम स्वय को राजा बनने के लिए तैयार कर सको तो तुम मुझसे अच्छा शासन कर सकते हो। तुम मे इतनी प्रतिभा है कि भ्रष्टाचार को समाप्त कर सको और अपने देश मे अराजकता भी न फैलने दो।"

सिद्धार्थ ने दुःख भरे स्वर मे कहा–"पिताजी, मै नहीं समझता कि इसमे किसी प्रकार की प्रतिभा की आवश्यकता है। मेरा विश्वास है कि मूलभूत समस्या यह है कि व्यक्ति अपने चित्त और हृदय को मुक्त करे। मे स्वयं भी क्रोध, ईर्ष्या, भय और इच्छाओ की भावनाओ से ग्रसित हू।"

पिता-पुत्र मे इस प्रकार की जो वाते होती थीं, उनसे राजा शुद्धोधन और अधिक चिन्तित हो उठते। वह यह भलीभांति समझते थे कि सिद्धार्थ के विचारों और चिन्तन मे असाधारण गहराई है और वे यह भी देख रहे थे कि संसार को देखने की उनकी और उनके पुत्र की दृष्टि मे कितना अन्तर है। फिर वह मन में यह आशा लगाए बैठे थे कि समय वीतने पर सिद्धार्थ उनकी भूमिका को स्वीकार कर लेगा और अधिक योग्यता के साथ राज-काज संभाल लेगा।

राजदरबार मे उपस्थित होने और यशोधरा के कार्यों मे सहायता करने के अलावा सिद्धार्थ विख्यात ब्राह्मण विद्वानो और संन्यासियो से भी मिलते रहते और अध्ययन करते रहते। वह समझते थे कि धर्माचरण केवल पवित्र ग्रंथो के अध्ययन तक ही सीमित नहीं है वल्कि हृदय और चित्त की मुक्ति के लिए ध्यान-साधना भी आवश्यक है। वह तत्त्व ज्ञानियो से ध्यान-साधना के विषय मे अधिकाधिक सीखने का प्रयत्न करते। इन अध्ययनो से वे जो कुछ सीखते, उसे महल मे रहते हुए भी अपने जीवन मे उतारने का प्रयास करते। इन प्रयासो के परिणामो की चर्चा वह यशोधरा से भी किया करते।

सिद्धार्थ यशोधरा को प्यार से 'गोपा' कहते थे। उन्होने गोपा से कहा–"संभवतः तुम्हे भी ध्यान-साधना का अभ्यास करना चाहिए। इससे तुम्हे

साधनारत मौन पति-पत्नी

आतरिक शांति मिलेगी और तुम समाज-सेवा का कार्य अधिक समय तक करती रह सकोगी।"

यशोधरा ने उनके परामर्श के अनुसार आचरण करना आरभ कर दिया। उसको काम की व्यस्तता चाहे जितनी होती, वह ध्यान-साधना के लिए समय निकाल ही लेती। पति और पत्नी प्रायः साथ-साथ ही मौन बैठकर ध्यान करते। उस समय उनके परिचर उन्हे अकेला छोड़ देते और सगीतकारो तथा नर्तकों को अपनी कला का कौशल अन्यत्र दिखाने के लिए कह दिया जाता।

बचपन से ही सिद्धार्थ को बताया गया था कि ब्राह्मण के जीवन के चार आश्रम होते है। प्रथम, ब्रह्मचर्य आश्रम—इसमे ब्राह्मण वेदो का अध्ययन करता है। दूसरे, गृहस्थ आश्रम—इसमे ब्राह्मण विवाह करके परिवार-पालन करता ह और समाज-सेवा करता है। तीसरे, वानप्रस्थ आश्रम मे बच्चे बड़े हो जाते है और ब्राह्मण जीवन-चर्याओ से उपराम होकर धार्मिक अध्ययन करता है। चौथे आश्रम मे सभी बंधनो और दायित्वो से मुक्त होकर ब्राह्मण सन्यासी का जीवन व्यतीत करता है। सिद्धार्थ ने इस वर्णाश्रम व्यवस्था पर चिन्तन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि जब तक व्यक्ति वृद्ध होकर सन्यास ग्रहण करता है, तब तक बहुत विलम्ब हो चुकता है और सद्धर्म का परिपूर्ण अध्ययन हो ही नहीं पाता। वह इतनी देर तक प्रतीक्षा करने के लिए तैयार नहीं थे।

"व्यक्ति चारो आश्रमो को एक साथ क्यो नहीं जीता ? कोई भी व्यक्ति पारिवारिक जीवन व्यतीत करते हुए भी धार्मिक जीवन क्यो नहीं अपना सकता ?"

सिद्धार्थ अपने वर्तमान पारिवारिक जीवन मे ही सद्धर्म का अध्ययन और अभ्यास करना चाहते थे। इसके साथ ही वह यह विचार करने से अपने को रोक नहीं सके कि श्रावस्ती और राजगृह के दूरस्थ स्थानो मे भी अध्ययन किया जाए। उन्हे विश्वास था कि यदि ऐसे महान् आचार्यों से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो सके तो वह बहुत अधिक प्रगति कर सकेगे। जिन सन्यासियो और विद्वानो से वह प्रायः मिलते रहते थे, उन सभी ने आलार कालाम और उद्दक रामपुत्त सरीखे महान आचार्यों के नामो की चर्चा अवश्य की थी। हर कोई ऐसे महान आचार्यों से शिक्षा प्राप्त करने की आकांक्षा करता है। जो भी दिन बीतता, उसके साथ ही सिद्धार्थ के मन मे इन आचार्यों से शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा और भी बलवती होती जाती थी।

एक दिन जब दोपहर मे यशोधरा घर लौटी तो उसका चेहरा उतरा हुआ

एव दुख मे भरा था। वह आकर किसी से कुछ न बोली। जिस बच्चे की वह एक सप्ताह से सेवा कर रही थी, वह अभी-अभी चल बसा था। अपने सभी प्रयासो के बाद भी वह उस बच्चे को मृत्यु के मुख से बचा नहीं पाई थी। गहन दुख के उन क्षणो मे वह ध्यान करने बैठ गई जबकि आसू ढलक-ढलक कर उसके गालो को भिगो रहे थे। भावनाओ पर नियत्रण करना असभव हो रहा था। सिद्धार्थ राजदरबार से एक बैठक मे भाग लेकर जब लौटे तो वह फफक-फफक कर रोने लगी। सिद्धार्थ उसे सीने से लगाकर धीरज बधाने लगे।

"गोपा, कल मैं उसकी अन्त्येष्टि मे तुम्हारे साथ चलूगा। अभी रो लो। इससे तुम्हारे हृदय का कष्ट कुछ कम हो जाएगा। जन्म, वृद्धावस्था, बीमारी और मृत्यु के भारी बोझ को हममे से प्रत्येक इस जीवन मे ढोता है। उस बच्चे के साथ जो कुछ घटित हुआ, वह हममे से किसी के साथ किसी भी क्षण घटित हो सकता है।"

सुबकते-सुबकते यशोधरा ने कहा—"प्रतिदिन मैं अनुभव कर रही हू कि आप जो कुछ कहते है, वह कितना सत्य होता है। लोगो के कष्टो की तुलना मे मेरे ये दो हाथ कितने छोटे हैं। मेरा हृदय निरन्तर चिन्ता और दुख से भरा रहता है। मेरे पतिदेव, कृपा करके मुझे यह मार्ग बताओ, जिससे मैं अपने हृदय की वेदना से पार पा सकू।"

सिद्धार्थ ने यशोधरा को अपनी बाहो मे कस लिया। "प्रिये, मैं स्वय अपने हृदय के कष्टो और चिन्ताओ से मुक्त होने का मार्ग खोज रहा हू। मैने समाज और मानवो की विविध स्थितिया देखी हैं लेकिन समस्त प्रयासो के बाद भी मै अभी तक मुक्ति का मार्ग नहीं खोज पाया हू। लेकिन इतना मुझे विश्वास है कि एक न एक दिन मै सभी प्राणियो के कल्याणार्थ मुक्ति का मार्ग खोज लूगा। गोपा, मुझ पर विश्वास रखो।"

"प्रियतम, मुझे आप पर सदैव आस्था रही है। मैं जानती हू कि जब एक बार आप कुछ करने की ठान लेते हैं तो उस कार्य मे तब तक जुटे रहते हैं, जब तक कि सफल न हो जाएं। मैं यह भी जानती हू कि एक दिन आप सद्धर्म की खोज के लिए अपनी समस्त सम्पदा और सुख-सुविधाओ को लात मार कर निकल ही पडेगे। लेकिन प्रियतम कृपा करके मुझे अभी मत छोडना। मुझे अभी आपकी बहुत जरूरत है।"

सिद्धार्थ ने यशोधरा की ठोढी पकडकर मुह ऊंचा किया और उसकी आंखो मे आखे डालकर कहा, "नहीं-नहीं, मैं अभी छोड़कर नहीं जाऊगा। जाऊगा तभी जब, जब   "

यशोधरा ने सिद्धार्थ के मुह पर हाथ रख दिया–"सिद्धार्थ कृपया अव आगे कुछ मत कहिए। मै आपसे कुछ पूछना चाहती हू। यदि मुझसे आपको वच्चा प्राप्त होना हो तो आप पुत्र चाहेगे या पुत्री ?"

सिद्धार्थ यह सुनकर स्तंभित रह गए। उन्होने यशोधरा को गौर से देखा। "गोपा, यह तुम क्या कह रही हो ? क्या तुम्हारा अर्थ है कि तुम ..."

यशोधरा ने स्वीकृति मे सिर हिला दिया। उसने अपने पेट की ओर सकेत किया और कहा–"मै इस वात से वड़ी प्रसन्न हू कि हमारे प्रेम का फल मेरी कोख मे पल रहा है। मैं चाहती हू कि वह पुत्र हो जो हू-व-हू तुम्हारे जैसा हो। तुम्हारे समान वुद्धिमान और दयावान।"

सिद्धार्थ ने यशोधरा को वाहो मे भरकर अपने से सटा लिया। परम आनददायक इस स्थिति मे उन्हे चिन्ता के वीज विद्यमान होने की आशका हुई। फिर भी, वह मुस्कराए और कहा–"चाहे वह सन्तान पुत्र हो या पुत्री, मैं प्रसन्न ही होऊगा वशर्ते कि वच्चा तुम्हारे समान दयाभाव रखे और प्रखर वुद्धि हो। गोपा! तुमने यह वात माता जी को वताई या नहीं ?"

"अभी तो यह मैने केवल आपको ही वताई है। आज शाम को मैं मुख्य राजमहल मे जाऊगी और रानी गौतमी को इस सवध मे वताऊगी। साथ ही मैं उनसे यह भी पूछूगी कि इस अजन्मे वालक की देखभाल कैसे करनी होगी। कल मैं जाकर अपनी माताजी रानी पामिता को भी यह वताऊंगी। मुझे विश्वास है, यह खवर सुनकर सभी वहुत प्रसन्न होगे।"

सिद्धार्थ ने सिर हिलाया। उन्हे पता था कि माताजी यह खवर पाते ही इसकी सूचना पिताजी को भी दे देगी। राजा प्रसन्नता से फूले न समाएगे और निश्चय ही इस अवसर पर आनदोल्लास व्यक्त करने के लिए समारोह आयोजित करेगे। सिद्धार्थ ने अनुभव किया कि राजमहल मे रहने के वधन अव और कसते जा रहे हैं।

अध्याय ग्यारह

धवल चंद्रिका में बांसुरी-वादन

सिद्धार्थ के मित्र उदयन, देवदत्त, किम्बिल, भद्दिय, महानाम, कालुदयी और अनिरुद्ध अक्सर आकर सिद्धार्थ से राजनीति और नैतिकता पर चर्चा किया करते थे। जव मिद्धार्थ राजा वनेगे तो आनद और नद के अलावा, ये ही लोग सिद्धार्थ के निकटस्थ परामर्शदाता वनेगे। ये लोग विचार-विमर्श आरभ करने मे पूर्व कई चपक मद्य पीते थे। अपने मित्रो का अनुरोध मानकर मिद्धार्थ प्राय. राजकीय सगीतकारो और नर्तको को काफी देर रात तक अपनी कला का प्रदर्शन करने का अवसर देते।

देवदत्त राजनीतिक विषयो पर अतहीन वहस कर सकता था और देवदत्त जो भी मुद्दे उठाता था, उदयन और महानाम विना थके उनके प्रत्युत्तर देते रहते। मिद्धार्थ इस चर्चा मे वहुत ही कम वोलते। नृत्य और सगीत के बीच कभी-कभी अनिरुद्ध अधनींदे झोके लेने लगते। प्रकटत: वह सायकालीन गतिविधियो के कारण थका होता। सिद्धार्थ अनिरुद्ध को झकझोर कर जगाते, दोनो चुपचाप वाहर खिसक जाते और चन्द्रमा को देखते तथा निकटस्थ नदी की धारा की कल कल ध्वनि सुनते। अनिरुद्ध महानाम का छोटा भाई था। उनके पिता राजकुमार अमृतोधन सिद्धार्थ के चाचा थे। अनिरुद्ध मिलनसार और सुदर-मजीला युवक था और राजदरवार मे अनेक युवतिया इसको पसद करती थीं किन्तु वह स्वय किसी भी प्रेम-प्रसग मे पड़ना नहीं चाहता था। कभी-कभी तो मिद्धार्थ और अनिरुद्ध उद्यान मे आधी रात तक वैठे रहते। उस समय उनके अन्य मित्र नशे मे इतने चूर हो जाते या वाद-विवाद करके इतने थक जाते कि वे अतिथिशालाओ मे चले जाते। तव, सिद्धार्थ अपनी वंशी निकालते और शान्त चन्द्रिका मे वासुरी की तान छेड़ देते। गोपा चट्टान पर चदन की अगर धूप का पात्र रख लेती और उसके पास वैठी हुई चुपचाप

वशी के सगीत स्वर के उतार-चढ़ाव को रात की गरम-गरम हवा मे सुनती रहती।

इसी प्रकार समय बीतता गया और यशोधरा के प्रसव का समय आ पहुंचा। रानी पामिता ने कहा कि प्रसव कराने के लिए उसे मायके जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उन दिनो वह स्वय ही कपिलवस्तु में रह रही थीं। रानी महाप्रजापति और पामिता ने राजधानी की सर्वोत्तम दाइयो को प्रसव के समय यशोधरा के पास रखने के लिए चुन रखा था। एक दिन जब यशोधरा को प्रसव-पीड़ा होने लगी तो रानी महाप्रजापति और रानी पामिता भी वहीं थीं। समूचे महल मे आशापूर्ण वातावरण था। यद्यपि राजा शुद्धोधन वहा स्वयं नहीं आए किन्तु सिद्धार्थ जानते थे कि राजा अपने पौत्र के जन्म का समाचार पाने के लिए कितने बेचैन है।

जब यशोधरा को प्रसव-पीडा तेजी से होने लगी तो परिचारिकाए उसे भीतरी कक्ष मे ले गई। उस समय दोपहर थी किन्तु आकाश मे अंधेरा छा गया मानो किसी देवता के हाथ ने सूर्य को बादलो मे छिपा दिया हो। सिद्धार्थ बाहर ही बैठे हुए थे। यद्यपि उनके तथा उनकी पत्नी के बीच दो दीवारे थीं किन्तु बाहर बैठे वह यशोधरा की चीखे साफ-साफ सुन पा रहे थे। हर बीतते क्षण के साथ उनकी चिन्ता भी बढ़ती जाती थी। उधर यशोधरा की चीखे बढ़ती ही जा रही थीं, तो इधर सिद्धार्थ निपट अकेले थे। उसकी चीखें उनके हृदय पर आघात करती थीं और एक क्षण ऐसा आया कि उनका वहा बैठ पाना भी कठिन हो गया। वह उठ खड़े हुए और प्रागण मे टहलने लगे। कभी-कभी तो यशोधरा की चीखे इतनी तेज होती कि वह अपने मन मे व्याप्त आतक को छिपा नहीं पाते। उनकी माता महामाया उन्हे जन्म देने के कारण ही चल बसीं थीं जिसका दुख वह कभी नहीं भुला सके। अब यशोधरा उनके अपने बच्चे को जन्म दे रही थी। बच्चे को जन्म देने के कष्ट का अनुभव हर महिला को करना होता है जिसमे बहुत खतरा होता है और जान जाने तक की नौबत आ जाती है। कभी-कभी तो मा और बच्चा दोनो ही मृत्यु के ग्रास हो जाते है।

एक सन्यासी से जो सीखा था, उसे याद करके सिद्धार्थ पद्मासन लगाकर बैठ गए और अपने हृदय और चित्त को स्थिर करने का प्रयास करने लगे। यह समय गुजारना उनकी सच्ची परीक्षा थी। यशोधरा की चीखे सुनते हुए भी उन्हे अपने हृदय को शात रखना था। अकस्मात् एक नवजात शिशु का चित्र उनकी आंखो के समक्ष तैरने लगा। हर किसी को आशा थी कि पुत्र

धवल चंद्रिका में बैठे अनिरुद्ध के समक्ष सिद्धार्थ द्वारा बांसुरी-वादन

होगा और पुत्र पाकर वह प्रसन्न होगे। वह स्वय भी बच्चे की कामना करते थे। लेकिन अब जब शिशु का वस्तुतः जन्म हो रहा था तो वह समझ पाए कि बच्चे का जन्म होना कितना अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। उन्हे अभी सद्मार्ग की प्राप्ति नहीं हुई थी, उन्हे पता भी नहीं था कि वह कहा जा रहे हैं। फिर भी, उनके बच्चे का जन्म हो रहा था। तब क्या वह बच्चा दया का पात्र नहीं था ?

यशोधरा की चीखे अचानक बंद हो गईं। वह उठकर खड़े हो गए। क्या हो गया ? उस समय उनका हृदय इतनी तेजी से धड़क रहा था कि वे उसकी धड़कने स्वयं सुन सकते थे। चित्त को शात करने के लिए उन्होने श्वसन-क्रिया पर ध्यान करना शुरू किया। उसी क्षण बच्चे के रोने की आवाज आई। बच्चे का जन्म हो गया । सिद्धार्थ ने अपने माथे का पसीना पोछा।

रानी गौतमी ने कमरे का दरवाजा खोला और उनकी ओर देखकर मुस्कराई सिद्धार्थ समझ गए कि यशोधरा सुरक्षित है। रानी ने उनके सामने बैठकर कहा–'गोपा ने पुत्र को जन्म दिया है।'

सिद्धार्थ मुस्कराए और अपनी माता की ओर कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से देखा।

"उसका नाम राहुल रखा जाएगा।"

उसी दिन अपराह्न मे सिद्धार्थ अपने पत्नी और पुत्र को देखने उस कक्ष मे गए। यशोधरा ने उनकी ओर गौर से देखा। उसकी आखे प्रेम से भरी चमक रही थीं। उनका बच्चा यशोधरा की बगल मे रेशमी वस्त्रो मे लिपटा लेटा हुआ था। सिद्धार्थ उसका गुदगुदा चेहरा मात्र देख पाए। सिद्धार्थ ने यशोधरा की ओर देखा मानो कुछ कहना चाह रहे हो। उनके भाव को समझते हुए यशोधरा ने सहमति जताते हुए सकेत किया कि सिद्धार्थ स्वय ही राहुल को उठा ले। सिद्धार्थ ने नवजात शिशु को अपने हाथो मे उठा लिया और यशोधरा पिता-पुत्र की ओर देखने लगी। सिद्धार्थ को प्रतीत हो रहा था मानो वे हवा मे तैर रहे हो किन्तु उनका हृदय चिन्ता से भारी हो रहा था।

यशोधरा ने कई दिनो तक विश्राम किया। रानी गौतमी ने उनकी हर प्रकार से देख-भाल की। वह उसके लिए विशेष खाद्य पदार्थ बनाने से लेकर माता और पुत्र को गरमी पहुंचाने के लिए राजकीय अगीठी को गर्म रखने तक का पूरा ध्यान रखतीं। एक दिन सिद्धार्थ जब राहुल को गोद मे उठाए हुए थे तो सोचने लगे कि मानव-जीवन कितना मूल्यवान और नाजुक होता है। उन्हे वह दिन स्मरण हो आया जब वह और यशोधरा चार साल के एक गरीब बालक की अत्येष्टि मे गए थे। वे दोनो वहा पहुचे तो बच्चा

मृत्यु-शैया पर ही लेटा था। जीवन के सभी लक्षण लुप्त हो चुके थे और बच्चे की त्वचा पीली पड़ गई थी। उसका शरीर ऐसा था मानो हड्डियों पर खाल चिपकी हुई हो। बच्चे की मां खाट के पास बैठी रो रही थी। वह आसू पोंछ लेती और फिर रोने लगती। कुछ क्षण पश्चात् एक ब्राह्मण उसका अंतिम संस्कार करने आया। उसके पड़ोसी रात भर जागते रहे थे। वे बांस की अर्थी लाए थे। उस पर लिटाकर बच्चे को नदी तट पर ले गए। सिद्धार्थ और यशोधरा गरीब गांव वालों की शव-यात्रा में पीछे-पीछे चल रहे थे। नदी के किनारे सामान्य-सी चिता बना दी गई थी। ब्राह्मण के आदेश पर लोग अर्थी को नदी के पानी मे ले गए और उसमें शव को डुबकी लगवाई। वे अर्थी को बाहर निकालकर लाए और किनारे पर रख दिया जिससे पानी निचुड़ सके। यह शव का शुद्धिकरण था क्योंकि लोगो को विश्वास था कि बाण गंगा का जल बुरे कर्मों से मुक्ति दिला सकता है। एक व्यक्ति ने चिता पर सुगंधित पदार्थ डाला और तब चिता पर बच्चे का शव रखा गया। ब्राह्मण ने हाथ में मशाल पकड़ी और मंत्रोच्चार करते हुए चिता की परिक्रमा की। सिद्धार्थ समझ गए कि वे मंत्र वेदों के थे। ब्राह्मण ने चिता की तीन बार परिक्रमा की और चिता को अग्नि लगा दी। चिता धू-धू करके जल उठी। बच्चे की माता, भाई और बहनें बिलख उठीं। थोड़ी ही देर में छोटे से बच्चे के शव को अग्नि लील गई। सिद्धार्थ ने यशोधरा की ओर देखा तो पाया कि उसकी आंखो में आंसू भरे थे। भीतर से सिद्धार्थ का हृदय भी रोने को हो रहा था। 'बच्चे, ओ शिशु, अब यहा से तुम कहा जाओगे।' सिद्धार्थ इस विषय पर सोचने लगे।

सिद्धार्थ ने राहुल को यशोधरा की गोद मे दे दिया। वह बाहर चले गए और अकेले ही उद्यान में सायंकाल तक बैठे रहे। एक नौकर उन्हें खोजते हुए वहां आया। "राजकुमार जी, रानी मां ने मुझे आपको ढूंढ़ने भेजा है। आपके पिताश्री महाराज आए हुए हैं।"

सिद्धार्थ उद्यान से लौटकर भीतर चले गए। महल में जगह-जगह मशालें जल रही थीं जिनसे सर्वत्र प्रकाश फैला हुआ था।

अध्याय बारह

महाभिनिष्क्रमण

यशोधरा ने शीघ्र ही स्वास्थ्य-लाभ कर लिया और जल्दी ही अपना समाज-सेवा का कार्य आरभ कर दिया, हालाकि उसे बालक राहुल की खातिर भी पर्याप्त समय देना होता था। वसन्त ऋतु मे एक दिन रानी गौतमी के अनुरोध पर चन्ना सिद्धार्थ और यशोधरा को देहात मे घुमा लाने को ले गया। वे साथ मे राहुल को भी ले गए। बच्चे को सभालने के लिए रत्ना नामक परिचारिका भी साथ थी।

सूर्य की सुखद धूप नरम-नरम हरे पत्तो पर पड़ रही थी। अशोक और जम्बू वृक्षो की डालो पर पक्षियो का कलगान चल रहा था। चन्ना भी घोड़ो को आराम-आराम से चलने दे रहा था। देहात के लोग सिद्धार्थ और यशोधरा को देखकर पहचान गए, उठकर खड़े हो गए और हाथ हिलाकर उनका अभिवादन करने लगे। जब वे लोग बाण गगा के किनारे पहुचे तो चन्ना ने घोड़ो की रासे खींच लीं जिससे रथ अचानक रुक गया। उनके सामने एक आदमी सड़क पर बेहोश पड़ा था। उसके हाथ और पाव सिकुड़े हुए छाती से लगे थे और उसका पूरा शरीर थर-थरा रहा था। उसके अधखुले मुह से कराहने की आवाजे निकल रही थी। सिद्धार्थ रथ से कूदकर नीचे आए। उनके पीछे चन्ना भी था। सड़क पर पड़ा व्यक्ति बीस साल से भी कम उम्र का लग रहा था। सिद्धार्थ ने उसका हाथ पकड़ा और चन्ना से बोले-"लगता है, यह फ्लू बिगड़ने से गिर गया है। आओ इसकी हथेलियो और तलवो को मले, और देखे कि इससे उसे कुछ लाभ होता है।"

चन्ना ने नकार मे सिर हिलाते हुए कहा-"मान्यवर, ये फ्लू बिगड़ने के लक्षण नहीं है। मुझे तो लगता है कि यह ऐसे रोग से ग्रस्त है, जिसका इलाज आज तक किसी को ज्ञात नहीं है।"

"क्या तुम्हे पक्का यकीन है ?" सिद्धार्थ उस व्यक्ति को एकटक देखते हुए बोले-"क्या हम इसको राज-वैद्य के पास नहीं ले जा सकते ?"

"मान्यवर, राजवैद्य भी इस बीमारी का इलाज नहीं कर सकते। मैंने सुना है कि यह बहुत ही सक्रामक रोग है। अगर हम इसे अपने रथ मे ले जाएगे तो यह रोग आपकी पत्नी, आपके बच्चे और स्वय आपको हो सकता है। कृपया अपने स्वास्थ्य की खातिर इसका हाथ छोड़ दीजिए।"

किन्तु सिद्धार्थ ने उसका हाथ नहीं छोड़ा और कभी उसके हाथ को देखते तो कभी अपने हाथ को। सिद्धार्थ का स्वास्थ्य सदैव अच्छा रहा था लेकिन अब उस मरते व्यक्ति को जो उनकी आयु से अधिक का न होगा, देखकर, अपने स्वस्थ होने की भावना उनके मन से एकदम गायब हो गई। नदी के किनारे से शोकपूर्ण आवाजे आ रही थी। उन्होने देखा कि वहा चिता बन रही थी। दुखपूर्ण रुदन के बीच से मत्रोच्चार के स्वर गूज रहे थे और चिता को जब आग लगाई गई तो अग्नि की चटचटाहट सुनाई दे रही थी।

मुडकर जब सिद्धार्थ ने उस व्यक्ति को देखा तो उसका श्वास लेना भी बद हो चुका था। उसकी आखे ऊपर की ओर देखती हुई खुली थीं। सिद्धार्थ ने उसका हाथ छोड़ दिया और चुपचाप उसकी आखे बद कर दीं। जब सिद्धार्थ उठे तो उन्होंने पाया कि यशोधरा उनके पीछे पास ही खड़ी थी। वह वहा कब से खड़ी थी, इसका उनको पता भी नहीं चला।

उसने मद स्वर मे कहा कि"प्रियतम, कृपया जाकर नदी मे हाथ धो लीजिए। चन्ना तुम भी ऐसा ही करो। इसके बाद हम अगले गाव मे चलेगे और वहा के अधिकारियो से कहेगे कि इस मृतक के सस्कार की व्यवस्था करे।"

इसके बाद किसी का मन भ्रमण में नहीं लग सका। सिद्धार्थ ने चन्ना से वापस चलने के लिए कहा। रास्ते भर किसी ने एक शब्द भी नहीं बोला।

उस रात तीन विचित्र स्वप्नो के कारण यशोधरा की नींद खराब हो गई। उसने पहले स्वप्न मे देखा कि एक सफेद गाय है जिसके माथे पर लगा हीरा ध्रुव तारे के समान चमचमा रहा है। गाय कपिलवस्तु मे बाहर जाने का रास्ता खोजती हुई घूम रही है। इन्द्र के सिंहासन से गभीर घोष हुआ कि 'यदि तुम इस गाय को रोक नहीं पाए तो राजधानी मे प्रकाश ही नहीं रह जाएगा।' हर कोई उस गाय के पीछे दौड़ रहा था किन्तु कोई भी उसे

रोक नहीं पाया। गाय नगर द्वार तक गई और अदृश्य हो गई।

दूसरे स्वप्न मे उसने सुमेरु पर्वत पर स्वर्ग के चार देवताओ को देखा जो कपिलवस्तु पर प्रकाश फैला रहे थे। अकस्मात् इन्द्रासन का झडा बड़ी जोर से फड़फड़ाया और जमीन पर गिर पड़ा। सभी रगो के पुष्पो की आकाश से वर्षा होने लगी और लोकोत्तर सगीत की ध्वनि राजधानी मे भर गई। तीसरे स्वप्न मे तीव्र घोप करती हुई आकाशवाणी हुई–'वह समय आ गया है।' 'वह समय आ गया है।' भयभीत यशोधरा सिद्धार्थ के आसन की ओर देखती है तो पाती है कि वह जा चुके है। उसके जूड़े मे खोसा हुआ चमेली का फूल धरती पर गिरा पड़ा है। आसदी पर सिद्धार्थ जो वस्त्र आभूषण छोड़ गए थे, वे एक सर्प मे परिणत हो गए और वह सर्प दरवाजे के बाहर रेग गया। यशोधरा भयाक्रात हो गई। उसी समय उसे नगर द्वार के बाहर से गाय के रभाने की आवाज सुनाई दी, इन्द्रासन का ध्वज फड़फड़ा उठा और आकाशवाणी होने लगी–'वह समय आ पहुचा है।' 'वह समय आ पहुचा है।'

स्वप्न देखकर यशोधरा जाग गई। उसका मस्तक पसीने-पसीने हो रहा था। वह सिद्धार्थ की ओर मुड़ी और उन्हे हिलाकर कहा–"सिद्धार्थ, सिद्धार्थ, कृपा करके जागो।"

सिद्धार्थ जाग ही रहे थे। उन्होने यशोधरा के सिर पर हाथ फेरा और उसे सान्त्वना देते हुए पूछा–"गोपा, तुमने स्वप्न मे क्या देखा, मुझे भी बताओ।"

उसने तीनो स्वप्न उन्हें सुना दिए और पूछा कि "क्या ये स्वप्न इस वात का संकेत हैं कि तुम मुझे छोड़ जाओगे ताकि सद्धर्म का मार्ग खोज सको ?"

सिद्धार्थ मौन रहे। फिर उसे सात्वना देते हुए बोले–'गोपा, तुम चिन्ता मत करो। तुम गहन गभीर प्रकृति की नारी हो, मेरी जीवन-सगिनी हो जो मेरी आकाक्षा को भली प्रकार समझ सकती है। यदि निकट भविष्य मे मुझे तुझसे दूर जाना ही पड़ा, तो भी मै जानता हू कि तुममे अपना कार्य जारी रखने का साहस है। भले ही मैं चला जाऊ और शरीर से तुमसे बहुत दूर भी होऊ, फिर भी मेरा प्रेम पूर्ववत् रहेगा। गोपा! मै तुम्हे प्रेम करना नहीं छोड़ सकता। यह जान लेने पर तुम हम लोगो के विरह को सहन कर सकोगी। और, जव मुझे सद्धर्म का मार्ग मिल जाएगा, मै तुम्हारे और तुम्हारे पुत्र के पास चला आऊगा। अब तुम कृपया थोड़ा-सा आराम करने का प्रयास करो।'

सिद्धार्थ के ये शब्द इतने प्रेम से सने थे कि यशोधरा के हृदय मे घर करते चले गए। उसे चैन मिला, उसने आखे बद कर लीं और सो गई।

अगले दिन प्रात. सिद्धार्थ अपने पिताजी से बात करने गए और बोले, "पिताजी, महाराज, मैं आपसे घर छोड़कर सन्यास-ग्रहण करने की आज्ञा लेने आया हू जिससे मैं सद्‌धर्म का ज्योतिर्मय मार्ग खोज सकू।"

यह सुनकर राजा शुद्धोधन बहुत ही चिन्तित हो गए। हालाकि वह बहुत समय से जानते थे कि एक न एक दिन यह क्षण अवश्य आएगा लेकिन निश्चय ही वह यह नहीं जानते थे कि वह दिन इतनी जल्दी यो अकस्मात् आ जाएगा। वह बड़ी देर तक अपने पुत्र की ओर देखते रहे और फिर वोले–"हमारे परिवार के इतिहास मे कुछ पूर्वज सन्यासी बने है लेकिन किसी ने तुम्हारी आयु मे सन्यास धारण नहीं किया। सभी ने पचास वर्ष तक की आयु होने की प्रतीक्षा की थी। क्यो न तुम भी उस आयु तक प्रतीक्षा करते ? तुम्हारा पुत्र अभी छोटा है और समूचा देश तुम पर आशाए लगाए हुए है।"

"पिताजी, सिंहासन पर एक दिन के लिए भी बैठना मेरे लिए दहकते अगारो पर वैठने के समान है। यदि मेरा हृदय ही शान्त नहीं होगा तो मैं आपके या जनता के विश्वास की रक्षा कैसे कर सकता हू ? मैंने देखा है कि समय कितनी तेजी से गुजरता है। मुझे पता है कि मेरा यह यौवन भी ऐसा ही नहीं रहेगा। कृपया मुझे जाने की आज्ञा प्रदान करे।"

राजा ने अपने पुत्र को हतोत्साहित करते हुए कहा–"तुम अपनी मातृ-भूमि के विपय मे, अपने माता-पिता, यशोधरा और अपने उस बच्चे के विषय मे सोचो जो अभी शिशु ही है।"

"आप सव लोगो के विषय मे खूव सोच-समझकर ही, मैं आपसे जाने की अनुमति प्राप्त करने आया हू। ऐसा नहीं है कि मैं अपने उत्तरदायित्वो से मुह चुरा रहा हू। पिताजी आप जानते हैं कि आप लोग मेरे हृदय के कष्ट को दूर नहीं कर सकते। आप स्वय भी अपने हृदय के कष्टो से मुक्त कहाँ हैं ?"

राजा उठ खडे हुए और अपने पुत्र का हाथ थाम लिया। "सिद्धार्थ, तुम जानते हो कि मुझे तुम्हारी कितनी आवश्यकता है। मैंने तुम पर अपनी सारी आशाए केन्द्रित कर रखी थीं। मुझे यो छोड़कर मत जाओ।"

"मैं आपको कभी त्याग नहीं सकता। मैं आपसे कुछ समय के लिए चले जाने देने का अनुरोध करने आया हू। जव मैं सद्‌धर्म का मार्ग प्राप्त कर लूगा तो मैं लौट आऊगा।"

राजा शुद्धोधन के चेहरे पर कष्ट के भाव उभर आए। उन्होने कहा कुछ भी नहीं और चुपचाप अपने कक्ष की ओर चले गए।

बाद मे, गौतमी यशोधरा के पास पूरा दिन बिताने आईं। शाम को सिद्धार्थ का एक मित्र उदयन; देवदत्त, आनद, भद्दिय, अनिरुद्ध और किम्बिल के साथ उनसे मिलने आ पहुचा। उदयन ने उद्यान-भोज का आयोजन किया था जिसमे राजधानी की सर्वोत्तम नर्तकियो के दल को नृत्य करने के लिए बुलाया गया था। महल मे समारोह की मशाले जल रही थीं।

गौतमी ने यशोधरा को बताया कि राजा ने उदयन को बुलवाया था और जो भी ठीक समझे, वह सब कुछ करने को उससे कहा था जिससे सिद्धार्थ महल मे ही फंसे रहे। उदयन की पहली योजना के अनुरूप यह समारोह हो रहा था।

यशोधरा ने गौतमी के साथ अपने कक्ष मे विश्राम के लिए जाने से पहले अपने परिचरो को निर्देश दिए कि आने वाले मेहमानो के खाने-पीने की ठीक-ठाक व्यवस्था की जाए। सिद्धार्थ स्वय मेहमानो की अगवानी करने बाहर आए। उस दिन उत्तराषाढ़ की पूर्णमासी थी।

गौतमी देर रात गए तक यशोधरा से बाते करती रही और उसके बाद वह अपने कक्ष मे चली आई। यशोधरा उसके साथ बाहर आई तो उसने देखा कि आकाश मे पूर्ण चन्द्रमा चादनी फैला रहा है। सगीत, वार्तालाप और ठहाको की आवाजें अदर तक आ रही हैं। द्वार तक आई यशोधरा स्वयं ही चन्ना को खोजने निकल पड़ी। वह सो चुका था, अतः यशोधरा ने उसे जगाते हुए फुसफुसाकर कहा–"सभव है कि राजकुमार को आज ही रात तुम्हारी आवश्यकता पड़े। इसलिए 'कतक' अश्व को सवारी के लिए तैयार रखना। दूसरा घोड़ा अपने लिए भी तैयार रखना।"

"राजकुमारी जी, राजकुमार जा कहा रहे हैं ?"

"कृपया, यह सब मत पूछो। जैसा मैंने कहा है, वैसा करो क्योंकि राजकुमार को आज रात ही घोड़े पर सवार होकर जाना पड़ सकता है।"

चन्ना ने स्वीकृति मे सिर हिलाया और घुड़साल मे घुस गया। यशोधरा महल् मे वापस चली आई। उसने यात्रा के लिए उपयुक्त वस्त्र निकालकर सिद्धार्थ की कुर्सी पर रख दिए। उसने हल्का कबल लेकर राहुल को ओढ़ाया और स्वय भी बिस्तर पर लेट गई। वह लेटी-लेटी सगीत, वार्तालाप तथा हंसी-ठट्ठे की आवाजे सुनती रही। बहुत देर बाद वे आवाजे कम हुईं और अततः समाप्त हो गईं। वह समझ गई कि मेहमान-अपने-अपने कक्षो मे

जा चुके है। महल मे शांति छा गई और यशोधरा चुपचाप लेटी हुई थी। वह वहुत देर तक प्रतीक्षा करती रही किन्तु सिद्धार्थ अपने कक्ष मे लौटकर नहीं आए।

सिद्धार्थ बाहर अकेले बैठे हुए आकाश मे चन्द्रमा और चमकते हजारो तारको को देखते रहे। उन्होने निश्चय कर लिया था कि वे आज रात को ही महल छोड देगे। आखिरकार, वह अपने कक्ष मे आए और कुर्सी पर रखे यात्रा के वस्त्र पहने। पर्दा हटाकर वे बिस्तर की ओर निहारते रहे। गोपा लेटी हुई सो रही थी। राहुल उसकी बगल मे लेटा हुआ था। सिद्धार्थ के मन मे आया कि वह भीतर जाए और यशोधरा से विदा ले किन्तु ठिठक गए। उन्हे इस सदर्भ मे जो कुछ भी यशोधरा से कहना था, कह ही चुके थे। यदि अव वह उसे जगाते हैं तो विदा के क्षण और भी बोझिल हो उठेगे। उन्होने पर्दा गिरा दिया और निकलने को तैयार होकर मुड़े। उन्हे फिर हिचकिचाहट हुई। उन्होने एक बार फिर पर्दा उठाया जिससे अपनी पत्नी और पुत्र को आखिरी वार देख सके। वे टकटकी लगाए उन्हे निहारते रहे जिससे उस प्रेमपूर्ण दृश्य को अपने हृदय-पटल पर चिर स्थायी रूप से अंकित कर सके। फिर उन्होने पर्दा छोड दिया और बाहर निकल आए।

जव वे अतिथिशाला के पास से गुजर रहे थे तो उन्होने देखा, कि गहरी नींद मे सोई नर्तकिया वहा विछे कालीनो पर पसरी हैं। उनकी सजी हुई केश-राशि विखरी हुई है। ठनके मुह ऐसे खुले हुए थे मानो मरी हुई मछलियो के मुह हो। उनकी वाहे जो नृत्य के समय बड़ी कोमल तथा आकर्षक थीं, अव अकड़कर लकडी बनी हुई पड़ी थीं। उनके पैर एक-दूसरों के शरीरो से ठलझे हुए ऐसे पड़े थे जैसे युद्ध-भूमि मे शहीद हुए वीरो के शरीर हो। सिद्धार्थ को अनुभव हुआ जैसे वे किसी कब्रिस्तान से गुजर रहे हो।

वह सीधे अश्वशाला पहुचे और देखा कि चन्ना अव भी जागा हुआ है।

"चन्ना, कृपा करके 'कतक' की पीठ पर साज कसो और मेरे पास लाओ।"

चन्ना ने सिर हिलाकर "हां" कही। उसने सारी तैयारी पूरी की। 'कतक' को लगाम लगाई और जीन कसी। चन्ना ने पूछा-"राजकुमार, क्या मैं भी आपके साथ चल सकता हू।"

सिद्धार्थ की सिर हिलाकर की गई 'हा' के वाद चन्ना अपने घोड़े को तैयार करने अश्वशाला मे घुसा। इसके वाद दोनो ने राजमहल के प्रागण को पार किया। यहा सिद्धार्थ जरा रुके और कतक की गर्दन के वालो को

कंतक को लम्बी यात्रा के लिए तैयार करके चन्ना ने सिद्धार्थ से पूछा, 'क्या मैं आपके साथ चल सकता हूं'

थपथपाया और कहा, "कतक, आज की रात बहुत महत्त्वपूर्ण है। तुम इस यात्रा के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देना।"

सिद्धार्थ 'कतक' पर सवार हुए और चन्ना अपने अश्व पर। वे अपने-अपने घोड़ो को विना कोई तेज आवाज किए चला रहे थे। पहरेदार प्रगाढ़ निद्रा मे सोए हुए थे और वे सुगमता से नगर द्वार के बाहर आ गए। नगर द्वार से वाहर निकलने के वाद कुछ दूर आ जाने पर सिद्धार्थ ने राजधानी पर अतिम दृष्टि डाली जो चद्रमा की शीतल चादनी मे शात सो रही थी। यह वही नगर था, जहा सिद्धार्थ जन्मे और जहा उनका लालन-पालन हुआ। यहीं उन्होने न जाने कितने आनदो, दुःखो, चिन्ताओ और आकाक्षाओ का अनुभव किया था। इसी नगर मे उनके अपने सगे-सवधी-उनके पिता, गौतमी, यशोधरा, राहुल और अन्य सभी इस समय गहरी नींद मे सो रहे हैं। उन्होने अपने मन मे कहा-"यदि मैं सद्धर्म का मार्ग खोजने मे विफल रहा तो मैं कपिलवस्तु कभी भी नहीं आऊगा।"

उन्होने अपना अश्व दक्षिण की ओर मोड़ दिया और 'कतक' तेजी से सरपट आगे वढ़ चला।

अध्याय तेरह

तपश्चर्या का श्रीगणेश

पूरी तेजी से घोड़ा दौड़ाते लाने पर भी वे लोग शाक्य राज्य की सीमा को पौ फटने से पहले पार नहीं कर सके। उनके सामने अनोमा नदी वह रही थी। वे उसके किनारे-किनारे बहाव की दिशा मे तब तक चलते गए जब तक उन्हे ऐसा उथला स्थल नहीं मिल गया, जहा से वे नदी के पार जा सकते। वहा से उन्होने अपने अश्वो पर एक लम्बी यात्रा और की। तब कहीं वे जगल के किनारे पहुच पाए। वहा एक हिरन पेड़ की आड़ से वाहर झाकता और फिर भीतर घुस जाता। चिड़िया उन मानवो की उपस्थिति से विना डरे, उनके पास से उड़ती फिर रही थीं। सिद्धार्थ अपने अश्व से उतरे और मुस्कराते हुए उसकी गर्दन के बालो को थपथपाया।

"कतक तुम अद्‌भुत अश्व हो। तुमने यहां तक पहुचाया है। इसके लिए धन्यवाद।"

अश्व ने सिर उठाया और अपने मालिक की ओर प्रेम भरी दृष्टि से देखा। घोड़े की काठी मे लगी तलवार सिद्धार्थ ने निकाल ली और अपने सिर के वालो की लम्बी-लम्बी लटे बाए हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से काट दीं। चन्ना भी अपने अश्व की पीठ पर से उतर पड़ा था। सिद्धार्थ ने अपने कटे वाल और तलवार चन्ना को सौंपी। इसके बाद उन्होने अपना रत्नजटित कठहार उतार लिया।

"चन्ना, मेरा यह कठहार, तलवार और मेरे बाल ले जाकर मेरे पिताजी को सौप देना। कृपा करके उनसे यह भी कहना कि वह मुझ पर भरोसा रखे। मैंने केवल अपने स्वार्थ के कारण उत्तरदायित्वो से भागने के लिए घर नहीं छोड़ा है। मै अब आप सब और प्राणिमात्र की ओर से आगे बढ रहा

हू। कृपया पिताजी और माताजी को मेरी ओर से सात्वना देना। यशोधरा को भी धीरज वधाना, यह काम मैं तुम्हे सौंप रहा हू।"

जव चन्ना ने वह रत्नजटित कठहार अपने हाथो मे लिया तो उसकी आखे वरस पड़ीं। "राजकुमार जी, सभी को वहुत ही कष्ट होगा। मुझे नहीं ज्ञात कि मैं महाराज और महारानी अथवा आपकी पत्नी यशोधरा को किन शब्दो मे सव वता पाऊगा। राजकुमार आप किस प्रकार पेड़ो के नीचे सन्यासी की भाति सो पाओगे क्योकि अव तक तो आप गरम विस्तरो और कंबलो का ही प्रयोग करते रहे है।"

सिद्धार्थ हस दिए। "चन्ना तुम चिन्ता मत करो। मैं उसी प्रकार रह लूगा जिस प्रकार अन्य लोग रहते हैं। तुम शीघ्र वापस पहुचो और सभी लोगो को मेरा निर्णय वता दो वरना वे मुझे घर मे न पाकर अनेक प्रकार की चिन्ताए करने लगेगे। अव मुझे अकेला छोड दो।"

चन्ना ने अपने आसू पोछते हुए कहा, "राजकुमार, आप कृपया मुझे अपनी सेवा के लिए साथ ही रहने की अनुमति दे दे। मुझ पर दया कीजिए और जिन्हे मै श्रद्धा की दृष्टि से देखता हू, उन्हें यह कष्टपूर्ण समाचार देने का कठोर कर्म मुझसे मत कराइए।"

सिद्धार्थ ने अपने सेवक की पीठ थपथपाई। उनका स्वर गभीर हो गया, "चन्ना, मेरी खातिर तुम लौट जाओ। मेरे परिवार वालो को यह समाचार जाकर वताओ। यदि तुम्हे मेरे प्रति सच्चा प्रेम है, तो जो मैं कह रहा हू, वह करो। चन्ना, मुझे यहा तुम्हारी आवश्यकता नहीं है। किसी सन्यासी को अपने साथ अपना निजी अनुचर रखने की आवश्यकता नहीं होती। तुम अव कृपा करके घर लौट जाओ।"

चन्ना ने अनमने भाव से राजकुमार की आज्ञा का पालन किया। उसने राजकुमार के वाल और रत्नजटित कठहार सावधानी के साथ रख लिए और तलवार को कतक की काठी मे ही लटका दिया। उसने सिद्धार्थ की वाह अपने दोनो हाथो से पकड ली और विनम्रता से प्रार्थना की—"जैसी आप आज्ञा कर रहे हें, मै वैसा ही करुगा, किन्तु राजकुमार मुझे याद रखिएगा, हम सवको स्मरण रखिएगा और जव आप सद्‌धर्म के मार्ग की खोज़ पूरी कर ले तो कृपया वापस लौटना न भूले।"

सिद्धार्थ ने सिर हिलाकर हामी भरी और चन्ना की ओर आश्वस्तिपूर्वक मुस्कराए। उन्होंने कतक के सिर पर हाथ फेरा। "मेरे मित्र कतक अव घर लौट जाओ।"

चन्ना ने कंतक की लगाम पकड़ी और अपने अश्व पर सवार हो गया। कंतक ने मुड़कर सिद्धार्थ की ओर आखिरी वार देखा। उसकी आंखो से भी उसी प्रकार आंसू गिर रहे थे, जिस प्रकार चन्ना की आखो से।

सिद्धार्थ तव तक खड़े चन्ना और दोनो अश्वो को देखते रहे जब तक कि वे दृष्टि से ओझल नहीं हो गए। इसके वाद वह वन की ओर, अपना नया जीवन आरम करने के लिए मुड़े। उनके अदर राहत और सतोष की भावना भर गई। उसी क्षण एक व्यक्ति वन से निकलता दिखा। देखने-से सिद्धार्थ को लगा कि वह कोई सन्यासी होगा क्योंकि वह वैसे ही वस्त्र धारण किए हुए था। लेकिन ध्यान से देखने पर सिद्धार्थ ने देखा कि उसके हाथ मे धनुष था और उसकी पीठ पर तरकस वंधा हुआ था।

"क्या तुम कोई शिकारी हो ?" सिद्धार्थ ने उससे पूछा।

"आपने ठीक जाना।" उस व्यक्ति ने उत्तर दिया।

"यदि तुम एक शिकारी हो तो सन्यासी के वस्त्र क्यो पहने है ?"

शिकारी मुस्कराया और वोला-"मेरी इस वेशभूषा से पशु मुझसे भय नहीं खाते। इस प्रकार मै उनका आसानी से शिकार कर पाता हूं।"

सिद्धार्थ ने अपना सिर हिलाया, "तव तो तुम उन लोगो के दया-भाव का दुरुपयोग करते हो जो अध्यात्म साधना के पथ पर चलते है। क्या तुम मेरी वेश-भूषा के वदले अपने वस्त्र मुझे दोगे ?"

शिकारी ने सिद्धार्थ की ओर देखा तो पाया कि वह राजकीय वेशभूषा पहने है जिसके मूल्य का तो वह अनुमान भी नहीं लगा सकता।

"क्या आप वास्तव मे वस्त्रो का आदान-प्रदान करना चाहते है ?" उसने पूछा।

"मैं सर्वथा तैयार हू।" सिद्धार्थ ने कहा। "तुम इन वस्त्रो को बेचकर पर्याप्त धन प्राप्त कर सकते हो। तुम पशुओ का शिकार करना बद करके कोई धधा आरंभ कर सकते हो। रही मेरी वात, सो मै सन्यासी बनना चाहता हू और मुझे तुम्हारे जैसे वस्त्रो की आवश्यकता है।'

शिकारी खुशी से फूला न समाया और वह अपने वस्त्रो के बदले सिद्धार्थ के मूल्यवान कपड़े प्राप्त करके झपटकर चला गया। अब सिद्धार्थ वास्तव मे एक सन्यासी दिखते थे। वह वन मे गए और नीचे बैठने के लिए एक वृक्ष खोज लिया। पहली बार गृहहीन सन्यासी की भाति वह ध्यान करने बैठे। राजमहल मे अतिम दिन की हलचलो और घोड़े की पीठ पर बैठकर रात भर यात्रा करने के बाद भी अब सिद्धार्थ को बेहद ताजगी का अनुभव

हुआ। वन मे प्रवेश करते ही उन्होने राहत और स्वतत्रता की भावना का अनुभव किया था, उसी को चित्त मे रखकर वह ध्यान करने बैठ गए।

वृक्षो के बीच से छनकर आती सूर्य की किरणे सिद्धार्थ की आखो पर पड़ रही थी। उन्होने अपनी आखे खोली तो एक साधु को सामने खड़ा पाया। उसका चेहरा और शरीर दुबला था और वह शरीर-पीड़न तपस्या की कठोरता से क्षीणकाय हो गया था। सिद्धार्थ उसके स्वागत हेतु उठ खड़े हुए और दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उन्होने सन्यासी से कहा कि मैंने अभी-अभी गृह-त्याग किया है और अभी तक किसी गुरु से दीक्षा लेने का अवसर नहीं मिला। उन्होने अपनी यह इच्छा भी व्यक्त की कि मैं आचार्य आलार कालाम के आश्रम मे जाकर उनका शिष्य बनना चाहता हू।

उस सन्यासी ने सिद्धार्थ को बताया कि मैंने स्वय आचार्य आलार कालाम से शिक्षा प्राप्त की है और इस समय आचार्य जी ने वैशाली के उत्तर मे अपना एक विद्या केन्द्र आरभ किया है। वहा उनसे शिक्षा प्राप्त करने चार सौ विद्यार्थी आ चुके हैं। सन्यासी को ज्ञात था कि वहा कैसे पहुचना है और उसने कहा कि मैं आपको वहा प्रसन्नतापूर्वक पहुंचा दूगा।

सिद्धार्थ वन मे उसके पीछे चल दिए। पहाड़ पार करके वह दूसरे वन मे प्रविष्ट हुए। दोपहर तक वे चलते रहे तो सन्यासी ने बताया कि किस प्रकार जगली फलादि खाने के लिए प्राप्त करने हैं। जब खाने के लिए फल या खाद्य फलिया आदि भी न मिले तो मूल (जडें) खोदकर खाई जा सकती हैं। सिद्धार्थ समझते थे कि उन्हे दीर्घकाल तक वन मे रहना होगा, इसलिए उन्होने खाद्य फलो के नाम पूछे और संन्यासी ने जो कुछ बताया, उसे ध्यान से स्मरण कर लिया। उन्हें ज्ञात हुआ कि वह सन्यासी ऐसे थे जो जगली फल और कद-मूल का ही आहार करके साधनारत थे। उनका नाम भार्गव था। उन्होने सिद्धार्थ को बताया कि आचार्य आलार कालाम केवल वन्य फलो या कदमूल के खाद्य पर निर्भर नहीं रहते। फलो के अतिरिक्त उनके शिष्य भिक्षा माग लाते हैं अथवा पडोस के गावो से जो कुछ भी अन्नादि उपहार मे आता है, उसे स्वीकार कर लेते हैं।

नौ दिन की यात्रा करके वे लोग अनुप्रिया के समीप बने आचार्य आलार कालाम के, वन मे स्थित विद्या केन्द्र पहुच गए। ये लोग उस समय पहुचे जब आचार्य चार सौ शिष्यो के समक्ष प्रवचन कर रहे थे। उनकी आयु सत्तर वर्ष के लगभग दिख रही थी। यद्यपि वे दुबले-पतले दिख रहे थे, किन्तु उनकी आखे दमक रही थीं और उनकी वाणी गूज रही थी। सिद्धार्थ और

उनका साथी शिष्यो के वृत्त के वाहर खडे होकर आचार्य का प्रवचन सुनते रहे। जव उन्होने अपना प्रवचन समाप्त किया तो उनके शिष्य वन मे अपना साधना-अभ्यास करने के लिए इधर-उधर चले गए। सिद्धार्थ आगे वढ़कर उनके पास तक गए और अपना परिचय देने के उपरान्त बोले–"श्रद्धेय आचार्य, मेरा निवेदन है कि आप मुझे अपना शिष्य वनाना स्वीकार कर ले। मै आपके निदेशन मे रहना और ज्ञानार्जन करना चाहता हू।"

आचार्य ने उनकी वात सुनकर ध्यान से सिद्धार्थ को देखा और अपनी अनुमति दे दी। "सिद्धार्थ, तुम्हे शिष्य रूप मे स्वीकार करके मुझे प्रसन्नता होगी। तुम यहां रह सकते हो। यदि तुमने मेरी शिक्षाओ और साधना-पद्धतियो के अनुसार अभ्यास किया तो तुम अल्प समय मे ही मेरी शिक्षा का फल प्राप्त करने मे सक्षम होगे।"

अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए सिद्धार्थ ने उनको साष्टांग प्रणाम किया।

आचार्य आलार कालाम अपने शिष्यो द्वारा निर्मित फूस की कुटिया मे निवास करते थे। वन मे यत्र-तत्र उनके शिष्यो की घास-फूस की कुटिया वनी हुई थीं। उस रात सिद्धार्थ एक समतल भूमि पर वृक्ष की जड़ को तकिया वनाकर लेट गए। लम्वी यात्रा की थकान के कारण, सवेरे तक वह गहरी नींद मे सोते रहे। जव वह जगे तो सूर्योदय हो चुका था और पक्षियो के संगीत से वन गूज रहा था। वह उठकर वैठ गए। अन्य साधु अपनी प्रातःकालीन ध्यान-साधना कर रहे थे और नगर मे भिक्षाटन के लिए जाने की तैयारी कर रहे थे। सिद्धार्थ को भी एक भिक्षा-पात्र दे दिया गया और वताया गया कि किस प्रकार भिक्षा मागनी है।

अन्य साधुओ के पीछे चलते हुए, उन्होने भिक्षा-पात्र हाथ मे लिए वैशाली नगर मे प्रवेश किया। जीवन मे पहली वार भिक्षा-पात्र पकड़े हुए सिद्धार्थ को ज्ञात हुआ कि एक भिक्खु के जीवन और अकर्मण्य व्यक्ति के जीवन मे कितना साम्य है। भिक्खु भी जन-समुदाय पर अपने भोजन के लिए निर्भर रहता है। इस भिक्षाटन मे उन्होने सीखा कि किस प्रकार भिक्षा-पात्र पकड़ना है, किस प्रकार चलना और खड़े होना है। जो खाद्य पदार्थ भिक्षा मे दिया जाए, उसे किस प्रकार स्वीकार करना है, और जो भिक्षा-दान करते है, उन्हे धन्यवाद करते समय किस प्रकार प्रार्थना करनी है। उस दिन सिद्धार्थ को कुछ चावल और कढ़ी-भिक्षा मे प्राप्त हुई थी।

वह अपने नए साथियो के साथ वापस वन लौट आए और सब बैठकर

भोजन करने लगे। भोजन समाप्त करके वह आचार्य आलार के पास आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करने गए। जव सिद्धार्थ वहा पहुचे तो आचार्य गहरी समाधि की अवस्था मे थे। अतः वह वहीं आचार्य के सम्मुख चुपचाप बैठकर अपने चित्त को एकाग्र करने लगे। वहुत देर के वाद आचार्य आलार ने अपनी आखे खोलीं। सिद्धार्थ ने उनको दडवत प्रणाम किया और आचार्य से शिक्षा देने की प्रार्थना की।

आचार्य आलार कालाम ने नए सन्यासियो को श्रद्धा-विश्वास रखने और परिश्रम करने के विषय मे बताया और उन्हे प्राणायाम करके दिखाया कि किस प्रकार चित्त की चचलता का निरोध करना होता है। उन्होने स्पष्ट किया कि मेरी शिक्षा मात्र सैद्धान्तिक नहीं होती। प्रत्यक्ष अनुभव और स्वय की साधना करके ही ज्ञान की प्राप्ति होती है न कि मानसिक तर्क-वितर्क के द्वारा। ध्यान-साधना के उच्चतर स्तरो तक पहुचने के लिए यह आवश्यक है कि स्वय को अतीत के राग-द्वेषो से और भविष्य की कामना-आकांक्षा के भावो से मुक्त रखो। तुमको केवल आत्म-मुक्ति के लिए ही समस्त चेतना केन्द्रित करनी चाहिए।

सिद्धार्थ ने पूछा कि शरीर और आवेगो को किस प्रकार नियत्रण मे करना होगा। यह जान लेने के वाद उन्होने गुरु को सादर धन्यवाद दिया और धीरे-धीरे वन मे जाकर ऐसा स्थान खोजने लगे, जहा वह साधना कर सके। उन्होने साल वृक्ष के नीचे, छोटी-सी पर्णकुटी वना ली जहा उनकी ध्यान-साधना पुष्ट हो सके। उन्होने वहुत ही परिश्रम के साथ साधना करना आरभ कर दिया। वह हर पाच-छ दिनो के वाद आचार्य के पास जाकर साधनाकाल मे आई कठिनाइयों का निवारण करने के हेतु उनसे मार्ग-दर्शन प्राप्त करते। इस प्रकार अल्प-काल मे ही सिद्धार्थ ने साधना के क्षेत्र मे पर्याप्त गति प्राप्त कर ली थी।

ध्यान-साधना मे वैठने के समय वह अपने मन मे विचारो और अतीत के राग-द्वेषो एव भविष्य सवधी कामनाओ को आने नहीं देते थे। इससे उन्हे आश्चर्यजनक शातिमय निर्मलता और आतरिक आनद की अनुभूति हुई हालाकि वह समझते थे कि नाना विचारो एव रागो के वीज अभी भी उनके हृदय से नष्ट नहीं हुए हैं। कुछ सप्ताहो तक आगे साधना करने पर वह तपश्चर्या के उच्चतर स्तर तक पहुच गए और उनका चित्त निर्विचार तथा वीतराग हो गया। राग-द्वेष समूल नष्ट हो गए। उसके वाद तो वह ऐसे स्तर पर पहुच गए कि आनद अथवा पीड़ा की अवस्थाए भी समाप्त हो गईं। उन्हे

अनुभूति हुई कि इन्द्रियो के पाचो कार्य-व्यापार भी समाप्त हो चुके है और उनका चित्त वायुविहीन सरोवर के जल के समान स्थिर हो गया है।

जव सिद्धार्थ ने अपनी साधना की अनुभूतिया आचार्य आलार कालाम को वताई तो वह वहुत प्रभावित हुए। इन्होने सिद्धार्थ से कहा कि तुमने तो अल्पकाल मे ही अत्यन्त उल्लेखनीय प्रगति कर ली है। उन्होने साधना के अगले चरण का ज्ञान दिया जिससे वह चित्त को असीम आकाश मे तिरोहित कर सकते हैं। इस चरण मे मन 'अनन्त' के साथ तदाकार हो जाता है और सभी भौतिक पदार्थों और दृश्य जगत के अस्तित्व का भान ही नही रहता और आकाश ही समस्त पदार्थों का अजस्र-अनन्त स्रोत दिखाई देता है।

सिद्धार्थ ने अपने गुरुदेव के निर्देशो के अनुसार उस स्थिति की प्राप्ति के लिए ध्यान करना आरभ किया और तीन दिन से भी कम समय मे उस अवस्था को प्राप्त करने मे सफल हो गए। सिद्धार्थ को अव भी लग रहा था कि अनत आकाश की अनुभूति करने के वाद भी वह अपनी प्रगाढ़ चिन्ताओ और दुःखो से मुक्त नहीं हुए है। चेतना की इस अवस्था के वाद भी वह वाधाओ का अनुभव करते थे। अतः वह आचार्य आलार के समीप मार्ग-दर्शन हेतु पुनः जा पहुचे। आचार्य ने उनसे कहा–'अव तुमको अगले चरण की ओर वढ़ना होगा।' 'अनंत आकाश का क्षेत्र' सारभूत रूप मे वही है जो चित्त के विचरण का क्षेत्र है। यह तुम्हारी जागृति का उद्देश्य नहीं है वरन् तुम्हे आत्मा-जागृति ही को प्राप्त करना है। अव तुम्हे 'असीम आत्म-जागृति के क्षेत्र' की अनुभूति प्राप्त करनी है।

सिद्धार्थ वन मे वापस अपनी साधना के स्थल पर आ गए और मात्र दो दिनो के अदर ही 'असीम आत्म-जागृति के क्षेत्र' की अनुभूति भी प्राप्त कर ली। उन्होने देखा कि सृष्टि के समस्त कार्य-व्यापार मे उनका मन दृष्टा-भाव से विद्यमान है। किन्तु इस सफलता के वाद भी वह गहन पीड़ा और चिन्ताओ से दुःख का अनुभव कर रहे थे। इसलिए सिद्धार्थ आचार्य आलार के श्रीचरणो मे जा पहुचे और अपनी कठिनाई उनके समक्ष रखी। आचार्य ने आदरपूर्वक उनकी आखो को गहराई से निहारा और कहा कि 'तुम अतिम लक्ष्य के वहुत समीप पहुच गए हो और समस्त जगत को माया रूप जानकर साधना करो। सृष्टि मे सभी कुछ इस चित्त से ही सृजित होता है। हमारा चित्त ही इस दृश्य जगत के प्रसार का सृजक है। रूपाकार, ध्वनि, गध, स्वाद और गरम-ठडे या कठोर-कोमल की भावना का जन्म भी मन से ही होता

है। ये सब वाते ठीक वैसी नहीं होतीं जैसी कि हम उन्हे समझते हैं। हमारी चेतना तो चितेरे की भाति है जो प्रत्येक प्रपच को एक आकार प्रदान कर देती है। एक वार जब तुम 'अपदार्थता की अवस्था' मे पहुंच जाओगे तो तुम सफल हो जाओगे। 'अपदार्थता की अवस्था' ऐसी स्थिति है जिसमे कोई प्रपच तुम्हारे चित्त से बाहर विद्यमान नहीं होता।

युवा सन्यासी ने अपने गुरुदेव के प्रति आदर भाव व्यक्त करने के लिए हाथ जोड़े और वन मे अपनी कुटिया में वापस आ गया।

जव सिद्धार्थ आचार्य आलार कालाम से शिक्षा प्राप्त कर रहे थे तो उनका अन्य अनेक सन्यासियो से परिचय हुआ। प्रत्येक सन्यासी सिद्धार्थ के दयालु एव प्रसन्नतादायक व्यवहार के कारण उनकी ओर आकर्पित था। पहले तो सिद्धार्थ को अपने भोज्य पदार्थों की व्यवस्था स्वय करनी होती थी लेकिन अब देखा कि खाद्य-सामग्री उनकी कुटिया मे ही रखी होती है। जब वे समाधि से उठते तो पाते कि कोई अन्य सन्यासी चुपचाप कुछ केले अथवा चावल का कटोरी भरा गोला वहा छोड़ जाता है। वहुत से सन्यासी सिद्धार्थ से मित्रता वढ़ाना चाहते थे ताकि वे उनसे शिक्षा प्राप्त कर सके क्योंकि उन्होने गुरुदेव से सिद्धार्थ की प्रगति की प्रशसा सुनी थी।

आचार्य आलार कालाम ने भी जब एक वार जानना चाहा कि सिद्धार्थ किस परिवार के हैं तो उन्हे ज्ञात हुआ कि सिद्धार्थ तो एक राजकुमार हैं। किन्तु जव अन्य सन्यासियो ने उनके राजकीय अतीत के विषय मे जिज्ञासा व्यक्त की तो सिद्धार्थ मात्र हसकर रह गए। उन्होने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया कि "वह कुछ महत्त्वपूर्ण वात नहीं है। सर्वोत्तम बात तो यह होगी कि हम सद्धर्म की प्राप्ति के मार्ग की प्रगतिजन्य अनुभूतियो ही की चर्चा करे।"

एक महीने से भी कम समय के अदर ही सिद्धार्थ ने 'अपदार्थता' के जगत् मे प्रवेश करने का चरण भी पूरा कर लिया। चेतना के इस चरण तक पहुचने पर प्रसन्न होकर उन्होने, वाद के कुछ सप्ताहो तक, उस स्थिति को अपने मन और हृदय की गहनतम वाधाओ का अवसान करने मे प्रयोग करने की चेष्टा की। यद्यपि 'अपदार्थता की स्थिति' ध्यान-साधना की उच्चतर अवस्था थी किन्तु इससे भी उन्हे अपने उद्देश्य मे सफलता नहीं मिली। अततः वह आचार्य आलार कालाम के समक्ष आगामी दिशा-निर्देश पाने के लिए जा पहुचे।

सिद्धार्थ ने जो कुछ कहा, उसे आचार्य ने वहुत ध्यान से सुना। सव कुछ सुनकर उनकी आखे चमक उठीं। सिद्धार्थ की प्रगति पर परम आदर

और प्रशसा व्यक्त करते हुए उन्होने कहा–"सन्यासी सिद्धार्थ, तुम अत्यधिक प्रतिभाशाली हो। जितनी शिक्षा देने की क्षमता मुझमे थी, उस स्तर तक तुम पहुच चुके हो। साधना की जिस अवस्था तक मै पहुच सका हू, उस सीमा तक तुम भी पहुच चुके हो। अव क्यो न हम मिलकर इस भिक्खु समुदाय को शिक्षा दे और उनका मार्ग-दर्शन करें।"

आचार्य आलार के आमत्रण पर विचार करते हुए सिद्धार्थ मौन ही रहे। यद्यपि 'अपदार्थता की स्थिति' तक पहुचना ध्यान-साधना का मूल्यवान परिणाम है किन्तु यह अवस्था भी जन्म और मरण की मूलभूत समस्या के समाधान मे सहायक नहीं है और न इससे समस्त दुःखो और चिन्ताओ से मुक्ति ही प्राप्त होती है। इससे व्यक्ति को पूर्ण मुक्ति का आनंद प्राप्त नहीं होता। सिद्धार्थ का लक्ष्य किसी सप्रदाय का नेता वनना नहीं था, बल्कि सच्ची मुक्ति का मार्ग खोजना था।

सिद्धार्थ ने गुरु को करवद्ध प्रणाम करते हुए उत्तर दिया, "आदरणीय आचार्य, 'अपदार्थता की स्थिति' तक पहुचना ही वह अतिम लक्ष्य नही, जिसकी खोज मे मैं निकला हू। आपने मुझे अपने पास रखकर जो शिक्षा दी, कृपया उसके लिए मेरा धन्यवाद स्वीकार कीजिए। किन्तु अब मै आपसे भिक्खु समुदाय छोड़कर जाने की आज्ञा चाहता हू जिससे मैं अन्यत्र जाकर सद्धर्म की खोज कर सकू। इतने महीनो तक आपने मन लगाकर मुझे शिक्षा प्रदान की है, इसके लिए मैं आपका सदैव कृतज्ञ रहूगा।"

आचार्य आलार कालाम निराशाग्रस्त हो गए किन्तु सिद्धार्थ ने तो अपना निर्णय कर लिया था। अगले दिन सिद्धार्थ फिर अगली मजिल पाने के लिए निकल पड़े थे।

अध्याय चौदह

गंगा के उस पार

व हा से चलकर सिद्धार्थ ने गगा नदी पार की और मगध साम्राज्य मे भीतर तक चलते गए। मगध राज्य सिद्धि-प्राप्त आध्यात्मिक गुरुओ के लिए प्रसिद्ध था। सिद्धार्थ ऐसे गुरु की खोज के लिए कृत-सकल्प थे जो उन्हे यह शिक्षा दे सके कि जन्म-मरण से मुक्ति कैसे प्राप्त की जा सकती है। अधिकाश आध्यात्मिक गुरु दूरस्थ पहाड़ो या वनो में निवास करते थे। विना थके सिद्धार्थ इन गुरुओ के आश्रम पूछते फिरते और उन तक पहुचते, भले ही इसके लिए उन्हे कितने ही पहाडो या घाटियो को क्यो न पार करना पड़े। चाहे वर्षा हो या कड़ी धूप, वह उन्हे लगातार खोजते रहे और महीने-दर-महीने वीत गए।

सिद्धार्थ ऐसे साधुओ से भी मिले जो दिगबर रहते तो अन्य साधु ऐसे थे जो अन्न ग्रहण न करके वन के फलो और कद-मूल पर ही जीवन निर्वाह करते। ये लोग पच प्रकृत तत्त्वों से अपने शरीर को तपाते। इन साधुओ का विश्वास था कि इस प्रकार की घोर तपश्चर्या से वे मृत्यु के उपरान्त स्वर्ग मे जन्म लेगे।

एक दिन सिद्धार्थ ने उनसे कहा—"भले ही आपका जन्म स्वर्ग मे हो, किंतु पृथ्वीवासियो की पीडाए तो ज्यो की त्यो रहेगी। सद्धर्म की खोज का अर्थ है जीवन की पीड़ाओ का समाधान निकालना, न कि जीवन से पलायन। यह सच है कि यदि हम अपने शरीरो को विषयासक्त लोगो के समान थुलथुल वना ले तो भी समस्या हल नहीं होगी लेकिन शरीर-पीड़न-तप मे भी तो कुछ लाभ नहीं।"

कुछ आध्यात्मिक आश्रमो मे तीन महीने, तो कुछ मे छः महीने रहकर भी सिद्धार्थ की खोज जारी थी। उनकी ध्यान-साधना और चित्त-केन्द्रीकरण

की उनकी शक्ति लगातार बढ़ रही थी किन्तु वह जन्म और मरण के दुःख से मुक्ति पाने के सद्धर्म का सच्चा मार्ग प्राप्त करने मे सफल नहीं हुए थे। महीने तेजी से बीत रहे थे और सिद्धार्थ को अपना घर छोडे हुए तीन वर्ष बीत चुके थे। कभी-कभी जब वन मे वह ध्यान लगाए बैठे होते थे तो सिद्धार्थ के मन मे पिताजी शुद्धोधन, यशोधरा और राहुल की आकृतिया अथवा अपने बचपन तथा यौवनावस्था के चित्र विचारो मे कौध जाते। हालाकि अधीरता और हताशा की भावनाओ से मुक्ति पाना कठिन होता, किन्तु उनका यह दृढ़ विश्वास कि एक न एक दिन वह सद्धर्म का मार्ग खोज ही लेगे, उनको अपनी खोज जारी रखने मे सहायक होता।

एक बार वह मगध की राजधानी राजगृह के पास पाडव पर्वत पर अकेले ही निवास कर रहे थे। एक दिन वह पहाड पर से उतरकर भिक्षा-पात्र लेकर भिक्षाटन के लिए राजधानी मे आए। उनकी मद गरिमामय चाल तथा उनके सौम्य एव आभायुक्त मुखमडल को देखकर मार्ग के दोनो ओर लोग रुककर इस सन्यासी को देखने लगते जो ऐसी शालीनता के साथ चल रहा था जैसे शेर पहाड़ी जगल मे चलता हो। सयोग से उसी समय मगध के राजा बिम्बिसार भी अपने रथ मे सवार उधर से गुजरे। राजा ने अपने सारथी को रथ रोकने के लिए कहा जिससे वह सिद्धार्थ को भली भाति देख सके। उन्होने अपने सेवक से कहा कि इस संन्यासी को भोजन दे दिया जाए और इसके पीछे-पीछे जाकर देखकर आओ कि इसका निवास कहा है।

अगले दिन दोपहर को राजा बिम्बिसार अपने रथ पर सवार होकर वहा गए, जहा सिद्धार्थ निवास कर रहे थे। अपने वाहन को पहाड़ के नीचे ही छोड़कर वह पहाड़ चढ़कर अपने एक सेवक के साथ सिद्धार्थ के निवास-स्थान पर जा पहुचे। जब उन्होने सिद्धार्थ को एक वृक्ष के नीचे बैठे देखा तो वह उनका अभिवादन करने उनके समीप गये।

सिद्धार्थ उठकर खड़े हो गए। आगन्तुक की वेशभूषा देखकर वह समझ गए कि आने वाला व्यक्ति मगध का राजा है। सिद्धार्थ ने हाथ जोड़े और उनको पास की एक बड़ी शिला पर बैठने का सकेत किया। सिद्धार्थ राजा के सामने की शिला पर बैठ गए।

राजा बिम्बिसार सन्यासी के कुलीन आचार और उत्कृष्ट व्यवहार से स्पष्टतः ही प्रभावित प्रतीत हुए। उन्होने कहा-"मैं मगध का राजा हू। मैं आपको अपने साथ अपनी राजधानी चलने के लिए आमन्त्रित करने की इच्छा से आया हूं। मेरी अभिलाषा है कि आप कुछ समय मेरे साथ बिताए और मुझे

संन्यासी की कुलीनता तथा आभिजात्य से राजा बिम्बिसार स्पष्टतः प्रभावित

अपनी शिक्षाओ तथा कृपा से लाभान्वित करे। जव आप मेरे साथ होगे तो मुझे विश्वास है कि मगध राज्य शाति और समृद्धि का अनुभव करेगा।

सिद्धार्थ ने मुस्कराकर कहा–"सम्राट, मै वनो मे ही रहने का अधिक अभ्यस्त हू।"

"यह तो वड़ा ही कठोर जीवन है। यहा न बिस्तर है, न चारपाई है और आपको सहायता करने वाला कोई सेवक भी नही है। यदि आप मेरे साथ चलना स्वीकार करे तो मैं आपको अपने महल मे ही ठहराऊगा। कृपा करके मुझे शिक्षा देने के लिए मेरे साथ वापस राजधानी चलिए।"

"सम्राट, महल का जीवन मुझे उपयुक्त नहीं लगता। मै अपने और अन्य सभी प्राणियो के जीवन को दु.खो से मुक्ति दिलाने का मार्ग खोजने मे जुटा हुआ हू। मुझ सन्यासी के हृदय की इस खोज की दृष्टि से महल का जीवन सारहीन है।"

"तुम मेरे समान ही युवा हो। मुझे ऐसे मित्र की आवश्यकता है, जिससे मैं अपने मन के विचारो का खुलकर आदान-प्रदान कर सकू। जब से मैंने तुम्हे देखा है, तभी से मै तुम्हारे साथ एक प्रकृत अपनापन अनुभव कर रहा हू। मेरे साथ चलो। यदि तुम्हे स्वीकार हो तो मैं तुम्हे अपना आधा राज्य देने को प्रस्तुत हू। जव तुम वयोवृद्ध हो जाओ तो पुनः सन्यासी बन जाना। तव सन्यासी वनना विलम्बकारी न होगा।"

"आपकी उदार हृदयता और संरक्षण के लिए धन्यवाद। किन्तु सत्य तो यह है कि मेरी एक ही इच्छा है कि ऐसा मार्ग खोज सकू, जिससे समस्त प्राणियो को दुख से छुटकारा मिल सके। सम्राट समय बहुत शीघ्रता से बीतता है। युवावस्था की शक्ति और ऊर्जा का मै अभी प्रयोग नहीं करूगा तो वृद्धावस्था के शीघ्र आने पर मुझे अत्यधिक खेद होगा। जीवन इतना अनिश्चित है कि रोग और मृत्यु कभी भी दबोच सकते है। लोभ, क्रोध, घृणा विषयासक्ति, ईर्ष्या और अहंकार की लपटो के कारण मेरे हृदय मे आतरिक अशाति व्याप्त है। जब सद्धर्म का मार्ग मुझे मिल जाएगा तो समस्त प्राणियो के कष्ट समाप्त होना सभव होगा। यदि आपके मन मे मेरे प्रति सच्चे प्रेम की भावना है तो मुझे उस मार्ग पर चलने दे जिस पर मैं इतने समय से चलता आया हू।"

सिद्धार्थ के इन वचनो से राजा बिम्बिसार और भी अधिक प्रभावित हुए। उन्होने कहा–"आपकी दृढ़ निश्चयपूर्ण बाते सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। प्रिय सन्यासी, अब क्या मैं यह पूछ सकता हू कि आप कहा से पधारे है और आपका वश नाम क्या है।"

"सम्राट, मैं शाक्य राज्य से आया हू। कपिलवस्तु मे राज कर रहे राजा शुद्धोधन मेरे पिता जी है और मेरी माता रानी महामाया थीं। मै वहा का राजकुमार था और सिंहासन का उत्तराधिकारी भी। किन्तु सद्धर्म का मार्ग खोजने के लिए मै सन्यासी बनना चाहता था, इसीलिए मै अपने माता-पिता, पत्नी और पुत्र को तीन वर्ष पूर्व त्यागकर चला आया हू।"

राजा विम्बिसार आश्चर्यचकित रह गए। "तब तो तुम स्वय ही राजवश के हो।" दयालु सन्यासी, आपसे मिलकर मैं गौरवान्वित हुआ हू। शाक्य और मगध के राजघरानो मे दीर्घकाल से घनिष्ठ सबध चले आ रहे हैं। मै कितना मूर्ख था कि आपको अपनी राजसत्ता और सपदा की वाते करके अपने साथ लौट चलने के लिए कह रहा था। कृपया मुझे क्षमा करे। मै आपसे यही जानना चाहता हू कि क्या आप समय-समय पर मेरे महल मे आते रहेगे और मुझे भोजन समर्पित करने की अनुमति देगे। और, जब आपको सद्धर्म का मार्ग मिल जाए तो आप दया करके वापस आकर अपने शिष्य के रूप मे मुझे शिक्षा दे। क्या आप यह वचन देगे ?"

सिद्धार्थ ने हाथ जोड़े और उत्तर दिया-"मैं वचन देता हू कि जब मै सद्धर्म का मार्ग-खोज लूगा तो वापस आकर आपको उसके सबध मे अवश्य वताऊगा।"

राजा विम्विसार ने सिद्धार्थ के समक्ष नमन किया और अपने सेवक के साथ पहाड से नीचे उतर गए।

वाद मे उसी दिन सन्यासी ने अपना निवास-स्थान बदल दिया क्योकि उन्हे भय था कि युवा राजा अपनी भेट भेज-भेजकर उनकी साधना मे व्यवधान उत्पन्न करेगा। दक्षिण की ओर चलकर उन्होने दूसरा ऐसा स्थान खोज लिया जो उनकी साधना के लिए उपयुक्त था। उन्हे एक महान आचार्य उद्रक रामपुत्त के आश्रम का पता चला जो ज्ञान-समुद्र मे वहुत गहराइयो तक उतरे हुए थे। उनका आश्रम राजगृह से अधिक दूर नहीं था। उनके आश्रम मे तीन सौ साधु रहते थे और चार सौ साधु आस-पास रहकर तपस्या करते थे। सिद्धार्थ उन्हीं के आश्रम की ओर वढ़ चले।

अध्याय पन्द्रह

शरीर-पीड़न-तप

आचार्य उद्रक की आयु पचहत्तर वर्ष की थी और सर्वत्र साक्षात् देव की भाति पूज्य थे। आचार्य उद्रक सभी नए शिष्यो को ध्यान अभ्यास एकदम प्रारभिक स्तरो से आरंभ कराते थे। इसलिए सिद्धार्थ को साधारणतम ध्यान-साधना से प्रारभ करना पड़ा किन्तु चद सप्ताहो मे ही उन्होने अपने नए आचार्य को दिखा दिया कि वह 'अपदार्थता के चरण' तक ध्यान- साधना कर चुके है। इससे वह वहुत प्रभावित हुए। उन्होने इस सौम्य युवा सन्यासी मे अपना उत्तराधिकारी वनने की संभावनाए देखीं और उन्होने सिद्धार्थ को अत्यधिक सावधानी और ध्यान से शिक्षा देनी आरभ कर दी।

"सन्यासी सिद्धार्थ गौतम 'अपदार्थता की अवस्था' मे रिक्तता वैसी ही नहीं होती जैसी आकाश की रिक्तता होती है और न इसे चेतना की जागृति कहा जा सकता है। जो शेप रहता है, वह भाव-बोध और भाव-बोध का कारक तत्त्व होता है। अतः मुक्ति का मार्ग सभी भाव-बोधो से अतीत होने के वीच से जाता है।"

सिद्धार्थ ने आदरपूर्वक जिज्ञासा की कि "आचार्य जी, यदि भाव-बोध को ही कोई समाप्त कर लेना है तो शेष क्या रहता है ? यदि भाव-बोध ही न होगा तो हम किसी प्रस्तर खड अथवा काष्ट खड से कितने भिन्न रह जाएगे ?"

"प्रस्तर खड या काष्ट खड भी भाव-बोध रहित नहीं होते। जड़ पदार्थ स्वय मे ही भाव-वोध है। तुम्हे चेतना के उस स्तर तक पहुचना है जहा भाव-बोध तथा भाव-बोध हीनता दोनो ही अवस्थाए तिरोहित हो जाती हैं। यह विचार से निर्विचार की ओर जाने का चरण है। युवा सन्यासी अब तुम्हे अकिचन पायतन नाम की अरूप समाधि की अवस्था प्राप्त करनी है।"

सिद्धार्थ ध्यान-साधना करने के लिए वापस आ गए और पद्रह दिनो के वाद वह गुरु द्वारा निर्देशित 'विचार से निर्विचार' की अवस्था अथवा अकिंचन पायतन समाधि की अवस्था मे पहुच गए। सिद्धार्थ ने पाया कि इस अवस्था मे साधक चेतना के समस्त सामान्य चरणो को पार कर जाता है। लेकिन जव भी वह समाधि की अवस्था से वाहर आता है तो समाधि की असाधारणता के वाद भी, इससे जीवन और मृत्यु के चक्र की समाप्ति के प्रश्न का कोई समाधान नहीं होता। यह आनद की परम शांतिपूर्ण अवस्था तो होती है, किन्तु यह जगत की चरम वास्तविकता की कुजी नहीं है।

जव वह आचार्य उद्रक रामपुत्त के समक्ष उपस्थित हुए तो आचार्य ने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और कहा-"सन्यासी सिद्धार्थ, तुम मेरे सर्वोत्तम शिष्य हो। मुझे तुम-सा उत्तम शिष्य अव तक नहीं मिला। इतने अल्पकाल मे तुमने असाधारण प्रगति की है। जो उच्चतम अवस्था मै प्राप्त कर सका हु, वह तुमने प्राप्त कर ली है। मैं वृद्ध हो गया हू और इस जगत मे अव और रहना नहीं चाहता। यदि तुम यहा रहते हो तो हम आश्रमवासियो का सयुक्त रूप से मार्ग-निर्देशन कर सकते हो और जव मै मृत्यु को वरण कर लू, तो तुम मेरे स्थान पर आचार्य पद को संभाल सकते हो।"

एक वार फिर सिद्धार्थ ने नम्रता से यह प्रस्ताव स्वीकार करने में असमर्थता व्यक्त कर दी। वह समझते थे कि 'न भाव-बोध और न भाव-वोध हीनता' की यह अवस्था (अकिंचन पायतन नाम की अरूप समाधि) भी जन्म एव मृत्यु के वधनो से मुक्ति दिलाने का साधन नहीं है और उन्हे इससे भी आगे वढ़ना है। उन्होंने आचार्य जी तथा सन्यासी समुदाय के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त किया और विदा मागी। प्रत्येक व्यक्ति सिद्धार्थ को स्नेह करने लगा था और सिद्धार्थ को जाते देख सभी को दुःख हो रहा था।

आचार्य उद्रक रामपुत्त के आश्रम मे रहते हुए उनकी एक युवा सन्यासी कौंडन्न (कौण्डन्य) से मित्रता हो गई थी। कौंडन्न को सिद्धार्थ वहुत प्रिय लगते थे और वह उनको अपना गुरु और एक अच्छा मित्र मानता था। समस्त सन्यासी वर्ग मे किसी ने भी 'अपदार्थता की अवस्था' तक प्राप्त नहीं कर पाई थी, 'विचार से निर्विचार' की स्थिति तक जाने का तो प्रश्न ही नहीं था। कौंडन्न जानते थे कि आचार्य जी सिद्धार्थ को अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकारी वनाने की सोच रहे थे। सिद्धार्थ के दर्शन मात्र से कौंडन्न को अपनी ध्यान-साधना पर विश्वास होने लगता था। वह प्रायः सिद्धार्थ के पास साधना सीखने चला जाता इसलिए उनके वीच विशेष मैत्री-भाव उत्पन्न हो

गया था। अपने मित्र के जाने का कौडन्न को सबसे अधिक खेद था। वह सिद्धार्थ के साथ पहाड़ के नीचे तक गया और तब तक वहा खड़ा रहा, जब तक वह आखो से ओझल नहीं हो गए। इसके बाद ही वह पर्वत पर लौटा।

देश मे ध्यान-साधना के दो सर्वोच्च तथा मान्य आचार्यों से शिक्षा पाकर सिद्धार्थ ने अध्यात्म के क्षेत्र मे बहुत कुछ प्राप्त कर लिया था किन्तु व्यक्ति को भव-पीड़ाओ से मुक्ति दिलाने का मूलभूत प्रश्न अब भी अनुत्तरित था जो उनके हृदय को दग्ध करता रहता। उन्होने अनुभव किया कि देशभर मे कोई भी साधु-सन्यासी या आचार्य सभवतः इससे अधिक शिक्षा नहीं दे सकता, इसलिए, बोधिसत्व की प्राप्ति के लिए उन्हे स्वय ही साधना करनी होगी।

पश्चिम की ओर धान के खेतो और कीचड़ भरी जल-धाराओ तथा नदियो को पार करते हुए, सिद्धार्थ नैरंजना नदी के तट पर पहुचे। वह उस नदी को भी पार करके तब तक चलते रहे, जब तक वह दगश्री पर्वत तक नही पहुच गए। उस पर्वत से उरुवेला ग्राम तक आधे दिन मे पैदल चलकर पहुचा जा सकता था। सिद्धार्थ ने निश्चय किया कि जब तक मुक्ति का सद्मार्ग नहीं खोज लेते, तब तक वह यहीं साधनारत रहेगे। उन्हे वहा ऐसी गुफा भी मिल गई, जहा वह लम्बे समय तक साधना-अभ्यास कर सकते थे। इस गुफा मे बैठकर उन्होने अपनी साधना के उन चरणो पर नए सिरे से दृष्टिपात किया जिनकी उन्होने पिछले पाच वर्षों से अधिक समय तक महामान्य आचार्यों से शिक्षा प्राप्त की थी। उन्हे स्मरण आया कि किस प्रकार उन्होने सन्यासियो को समझाया था कि अपने शरीर के साथ अत्याचार मत करो। इससे तो दुःख मे डूबे जगत के दुःख और बढ़ेगे। अब उन्होने उनके मार्ग पर और गभीरता से मनन किया और सोचा कि "अग्नि-प्राप्ति की कामना करने वाला व्यक्ति जल मे खड़ा होकर या भूमि पर स्थिर होकर गीली अरणियो के घर्षण से अग्नि प्रज्वलित नहीं कर सकता। यही बात शरीर के लिए सत्य है। यदि व्यक्ति मन को तो भोगो से दूर रखता है किन्तु शारीरिक रूप से उसमे लिप्त रहता है तो वह धर्म-सप्राप्ति का अधिकारी नहीं बन सकता। अतः मै मुक्ति-लाभ के लिए आत्म-साधना और रागातीत अवस्था प्राप्त करने के लिए घोर शरीर-पीड़न तप करूगा।"

इस प्रकार सन्यासी गौतम ने घोर शरीर-पीड़न तप आरभ कर दिया। वह घुप्प अधेरी रातो मे घने भयानक जगलो मे घुस जाते जहां जाने के

विचार मात्र से ही व्यक्ति के, भय के मारे, रोगटे खड़े हो जाए। उन स्थानो मे वे सारी-सारी रात रहते। भले ही, उनका मन और शरीर भय और आतक से भरा होता, किन्तु वे वहा विना हिले-डुले बैठे रहते। जव कोई हिरण सूखे पत्तो से गुजरता तो पत्तो की खड़खडाहट से उनको लगता जैसे राक्षस उन्हे मार डालने के लिए आ रहे हो। किन्तु वे इस भय से विचलित नहीं होते। जव कोई मोर किसी सूखी-डाली को तोड़ता तो उन्हे लगता जैसे कोई अजगर पेड़ पर से उत्तर रहा है। भले ही वह भय से भीतर तक काप जाते, किन्तु वह फिर भी हिलते नहीं थे।

इस प्रकार उन्होने सभी भौतिक भयो पर विजय प्राप्त कर ली थी। वह मानते थे कि यदि उनका मन भय-भाव की गुलामी से मुक्त हो गया तो 'पीडा की जजीरे भी तोड फेकना सभव होगा। कभी-कभी वह अपने जबड़े भींचकर जिह्वा को पलट कर तालू से लगा लेते ताकि इच्छा-शक्ति के द्वारा समस्त भयो और आतको का दमन कर डाले। शरीर पसीने-पसीने हो जाने पर भी वह तनिक हिलते-डुलते नहीं थे। कभी-कभी कुभक प्राणायाम द्वारा अपनी श्वास अवरुद्ध कर लेते। इस अवस्था मे बहुत देर तक रहने पर उन्हे लगता जैसे कानो मे भीषण गर्जना हो रही है या जलती भट्टी उनके कानो मे समा गई है। कभी लगता कि किसी ने परसु से उनके सिर के दो भाग कर दिए हो। कभी-कभी उन्हे प्रतीत होता कि लौह-पट्टिका से बाधकर उनके सिर को निचोड़ा जा रहा हो या उनका पेट इस प्रकार फाड़ा जा रहा हो, जैसे कसाई वकरे का पेट फाड़ता है। कभी-कभी लगता कि उनके शरीर को आग मे भूना जा रहा है। हठयोग की इन क्रियाओ के द्वारा वह अपने साहस और आत्म-अनुशासन को सुदृढ, वनाना चाहते थे। इस सबसे उनका शरीर तो अकथनीय पीडाए सहने मे सक्षम हो गया किन्तु उनके हृदय को अव भी शाति प्राप्त नहीं हुई थी।

सन्यासी गौतम ने इस प्रकार आत्म-शोधन तथा रागातीत होने के लिए शरीर-पीड़न तप छ महीने तक किया। शुरू के तीन महीनो तक वह अकेले ही पर्वत पर निवास करते रहे थे किन्तु चौथे महीने मे आचार्य उद्रक रामपुत्त के पाच शिष्यो ने कौडन्न के नेतृत्व मे उनको खोज निकाला। सिद्धार्थ अपने मित्र कौडन्न से फिर से मिलने पर वड़े प्रसन्न हुए। उन्हे ज्ञात हुआ कि सिद्धार्थ के आश्रम छोडने के एक महीने वाद ही कौडन्न ने भी 'न भाववोध, न भाववोध हीनता' (चित्त की निर्विचार) अवस्था अपनी साधना द्वारा प्राप्त कर ली थी। जब यह देखा कि आचार्य उद्रक से कौडन्न को और कुछ

सीखना शेष नहीं रह गया है तो उन्होने सिद्धार्थ की खोज करने के लिए चार अन्य साथियो को भी सहमत कर लिया। अनेक सप्ताहो के बाद, उन्हे सिद्धार्थ को खोज पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होने अपनी यह इच्छा व्यक्त की कि वे उनके साथ ही रहेगे और साधना-अभ्यास करेगे। सिद्धार्थ ने उन्हे वताया कि मै आत्म-अनुसधान के मार्ग पर क्यो चल रहा हू। और, पाचो युवा संन्यासियो-कौंडन्न, वप्प, भद्दिय, अस्सजि और महानाम ने भी उनके साथ तपस्या करने का संकल्प लिया। प्रत्येक भिक्खु ने अपने-अपने लिए एक गुफा खोज ली थी जो पास ही पास थीं और प्रतिदिन एक भिक्खु वारी-बारी से भिक्षाटन करने नगर मे जाता। वह जब भिक्षा लेकर लौटता, तो उसकी लाई भिक्षा छः भागो मे बाट ली जाती। इससे प्रत्येक के हिस्से मुट्ठी भर से अधिक खाद्य पदार्थ नहीं आता था।

इस प्रकार दिन और महीने गुजरते गए और छहो सन्यासी दुबले और कृशकाय हो गए। उन्होने वह पहाड़ छोड़ दिया और पूर्व मे उरुवेला गाव की ओर नैरजना नदी के तट पर चले गए और उसी प्रकार तपस्या करना आरभ कर दिया। किन्तु सिद्धार्थ की आत्म-अनुसधान की कठोर तपस्या देखकर उन लोगो को लगने लगा कि सिद्धार्थ के समान कठोर तपस्या कर पाना उनके लिए सभव नहीं है। सिद्धार्थ ने नदी मे स्नान करना और भोजन करना भी छोड़ दिया था। किसी-किसी दिन तो वह पेड़ से गिरे किसी अमरूद को ही खाकर रह जाते अथवा जगल मे सूखे गोबर के टुकड़े को ही खा लेते। उनका शरीर एकदम क्षीण हो गया था और हड्डियां-हड्डिया निकल आई थीं जिनसे चिपकी त्वचा लटकने लगी थी। पिछले छः महीनो से उन्होने न तो अपनी दाढ़ी बनाई थी और न बाल काटे थे। जब भी वह अपने सिर पर हाथ फेरते थे तो ढेर सारे बाल उखड़ जाते मानो खोपड़ी की त्वचा मे इतनी भी शक्ति नहीं रह गई हो जो उन बालो को जमाए रखती।

और, तभी एक दिन, जब श्मशान मे बैठकर वह साधना कर रहे थे तो सिद्धार्थ को जैसे झटका लगा कि आत्म-ज्ञान प्राप्ति की दृष्टि से घोर शरीर-पीड़न तप का यह मार्ग कितना भ्रातिपूर्ण है। सूर्य ढल चुका था और मद पवन उनकी त्वचा को सहला रहा था। पूरे दिन तपती धूप मे बैठे रहने के बाद, शीतल पवन सुखद एव सुहाना लग रहा था। सिद्धार्थ ने अपने चित्त मे एक आनद की अनुभूति की, जो उन्हे दिन मे कभी नहीं हुई थी। उन्होने समझ लिया कि शरीर और चित्त एक ही अस्तित्व के अग हैं और इन्हे अलग-अलग करके देखा नहीं जा सकता। शरीर की भांति ही सुखद

स्थिति का, मन की शाति और शीतलता से सीधा सबध जुड़ा हुआ है। शरीर से अत्याचार करना चित्त के साथ भी अत्याचार करना है।

उन्हे याद आया कि जब वह नौ वर्ष के ही थे तो वर्ष के प्रथम भूमि-कर्षण समारोह के दिन जव वह जम्बू वृक्ष की शीतल छाया मे बैठकर उन्होने पहली बार ध्यान-साधना की थी तो सुखद सहजता के साथ ध्यान करने से उनकी चित्त-वृत्ति कितनी शात और स्पष्ट हुई थी। चन्ना के चले जाने के वाद वन मे साधना करने की अनुभूति का भी उन्हे स्मरण आया। आचार्य आलार कालाम के आश्रम मे आरंभिक ध्यान-साधना के दौरान किस प्रकार उनके शरीर और मन का पोषण हुआ था जिससे उनमे चित्त को एकाग्र करने और ध्यान-साधना की सक्षमता आई थी। किन्तु उसके वाद आचार्य आलार कालाम ने भौतिक जगत से परे के साधना-चरणों मे प्रवेश करने के लिए कहा था जैसे 'असीम आकाश और असीम चेतना' के क्षेत्र मे प्रवेश करना और 'अपदार्थता की अवस्था' प्राप्त करना। बाद मे 'न भाव-बोध और न भाव-बोध हीनता' (निर्विचार) की अवस्था भी प्राप्त की। सभी चरणो मे लक्ष्य यही था कि भाव-जगत, विचारो, सासारिक उद्वेगो और भाव-बोध से पलायन के साधन खोजे जाए। उन्होने स्वय से ही प्रश्न किया कि वेद-शास्त्रो द्वारा निर्धारित परम्पराओ का ही क्यो पालन किया जाए ? ध्यान-साधना से जो आनद प्राप्त होता है, उससे डरा क्यो जाए ? इस आनद का चेतना का आवरण वनाने वाले पाचो इन्द्रियजन्य सुखो से क्या लेना-देना। इससे तो केवल चित्त निर्विषय होता है। ध्यान-साधना की अवस्था मे प्राप्त आनद से तो शरीर और चित्त दोनो को वल मिलता है और इससे तो वह शक्ति मिलती है, जिससे मुक्ति के मार्ग पर आगे बढ़ा जा सके।

सन्यासी गौतम ने सकल्प किया कि वह अपना स्वास्थ्य सभालेगे और अपनी ध्यान-साधना के द्वारा तन-मन दोनो का पोषण करेगे। वह अगले दिन सवेरे से भिक्षाटन करना फिर से आरभ करेगे। वह अपने गुरु स्वय वनेगे और किसी अन्य व्यक्ति से शिक्षा ग्रहण नहीं करेगे। इस निर्णय से प्रसन्न होकर वह पृथ्वी पर ही लेट गए और शांतिपूर्वक निद्रा देवी की गोद मे विश्राम करने लगे। निरभ्र आकाश मे पूर्णिमा का चन्द्रमा अपनी चद्रिका विखेर रहा था और अतरिक्ष मे आकाश गगा वहुत स्पष्ट एव जगमगाती हुई दिख रही थी।

अगले दिन सवेरे सन्यासी गौतम चिड़ियो की चहचहाहट सुनकर जागे। वह उठ खड़े हुए और पिछली रात का किया निश्चय स्मरण हो आया।

वह धूल-मिट्टी मे सने हुए थे। उनके वस्त्र फटकर तार-तार हो चुके थे जिनसे शरीर ढकना भी कठिन हो रहा था। उन्हे याद आया कि श्मशान मे परसो एक शव देखा था। उन्होने अनुमान लगाया कि आज या कल लोग उसे उठाकर नीचे नदी मे ले जाएगे और वहा उसका अतिम सस्कार कर देगे। उस लाश पर ईंट के रग का जो कफन पड़ा है, उसकी उन्हे आवश्यकता नहीं रहेगी। वह शव के पास पहुचे और जीवन-मृत्यु के प्रश्न पर मन ही मन विचार करते हुए आदर सहित उस शव का कफन उतार लिया। वह शव किसी युवा महिला का था जो फूल गया था और बदरग हो गया था। सिद्धार्थ उस ललछौंहे कपडे को अपना नया अग-वस्त्र बना लेगे।

वह चलकर नदी तक गए जिससे स्वय भी नहा डाले और उस वस्त्र को भी धो ले। नदी का जल शीतल था और सिद्धार्थ को उसमे स्नान करने से बेहद ताजगी का अनुभव हुआ। उन्होने अपनी प्रवाहित जल-धारा के स्पर्श की त्वचा द्वारा सुखद अनुभूति की और नयी मानसिकता से उस मनमोहक अनुभव का स्वागत किया। उन्होने बहुत देर तक नदी मे स्नान किया और अपने नए अंग-वस्त्र को फचीटा तथा निचोड़ा। लेकिन ज्योही नदी जल से निकलकर वह किनारे पर चढ़ने लगे, उनकी शरीर-शक्ति जवाब दे गई। उनमे इतनी शक्ति शेष नहीं थी कि किसी प्रकार स्वय को कढ़ेरते हुए किनारे पर पहुच जाए। वह धीरे-धीरे खड़े हुए और शातिपूर्वक श्वसन-क्रिया करने लगे। इस दौरान उन्होने देखा कि उधर एक वृक्ष की शाखा जल की ओर झुकी हुई है और उसके पत्ते पानी को छू रहे है। वह उसकी ओर धीरे-धीरे बढ़े और उसे पकड़कर, उसका सहारा लेकर, नदी के जल से बाहर आ गए।

वह नदी के किनारे थोड़ा आराम करने की दृष्टि से बैठ गए। उधर सूर्य आकाश मे चढ़ आया था। उन्होने उस कपड़े को धूप मे सुखाने के लिए फैला दिया। जब वह कपड़ा सूख गया तो उसे उन्होने अपने बदन के चारो ओर लपेट लिया और उरुवेला गाव की ओर चलने लगे। अभी वह आधी ही दूर पहुचे थे कि उनकी शरीर-शक्ति एक बार फिर जवाब दे गई, उनकी सास उखड़ गई थी और वे बेहोश हो गए।

कुछ समय तक वह उसी बेहोशी मे पड़े रहे। तभी गाव की एक लड़की वहा आई। तेरह वर्षीया सुजाता को उसकी मा ने दूध, चावल, रोटिया और कमल गट्टे लेकर भेजा था कि वह इस खाद्य सामग्री को वन देवताओ को

सिद्धार्थ ने जब नदी मे से निकलने का प्रयास किया
तो शरीर-शक्ति जवाब दे गयी

समर्पित कर आए। उसने एक संन्यासी को मार्ग पर बेहोश पड़ा देखा जिसकी सास भी मुश्किल से आ-जा रही थी। वह उसे देखकर झुकी और दूध की कटोरी उसके होठो पर रख दी। वह समझ गई थी कि यह कोई शरीर-पीड़न तप करने वाला सन्यासी है जो दुर्बलता के कारण बेहोश हो गया है।

जब दूध की बूदो से जीभ और गला कुछ नम हुए तो सिद्धार्थ के शरीर मे तुरत उसकी प्रतिक्रिया हुई। उन्हे स्वाद आया कि दूध कैसी ताजगी लाने वाला था और उन्होने धीरे-धीरे पूरी कटोरी दूध पी लिया। दस-बीस सासे लेने के बाद उनमे इतनी शक्ति आ गई थी कि वह उठकर बैठ गए। उन्होने सुजाता को संकेत किया कि एक कटोरी दूध और पिलाओ। दूध से कितनी शीघ्रता से उनमे शक्ति आ गई थी ? उसी दिन उन्होने निश्चय किया कि साधना काल मे वह शरीर-पीड़न तप की विधि त्याग देगे और नदी के उस पार वन मे ही किसी शीतल स्थान पर बैठ कर तपस्या करेगे।

बाद के दिनो मे वह धीरे-धीरे सामान्य रूप से खाने-पीने लगे। कभी सुजाता उनके लिए भोजन ले आती और कभी वह स्वय गाव मे जाकर भिक्षा माग लाते। प्रतिदिन वह नदी के किनारे चलित ध्यान करते और शेष समय वह बैठकर ध्यान-साधना करते। प्रतिदिन सध्याकाल को वह नैरजना नदी मे स्नान करते। स्वय ही सद्धर्म का मार्ग खोजने के लिए उन्होने परम्पराओ और वेद-शास्त्र की शिक्षाओ पर निर्भर रहना छोड़ दिया था। वह अपनी ही सफलता और विफलताओ से अपने आप शिक्षा प्राप्त करने लगे। यदि ध्यान-साधना से उनके शरीर एव चित्त को पोषण मिलता था तो इससे उन्हे किसी प्रकार की हिचक नहीं थी। उनके अतर मे इससे शाति और आनद के भाव जागृत होते गए। वह स्वय अपने से भागते नहीं थे या अपनी भावनाओ या सकल्प-विकल्पो से पलायन नहीं करते थे किन्तु चित्त को दृष्टा बनाकर मन के विचारो का आना-जाना देखते रहते।

आत्म-बोध के भाव मे स्वय को लौटा लाने पर जागतिक प्रपचो से पलायन की इच्छा भी वह त्याग चुके थे। आत्म-बोध की अवस्था मे वह जागतिक प्रपचो मे स्वय को पूर्णतया उपस्थित पाते। एक श्वास, पक्षी के एक गान, एक पत्ते या सूर्य की किरण मे से किसी एक पर वह ध्यान लगा सकते थे। उन्होने यह समझना आरभ कर दिया था कि प्रत्येक श्वास, प्रत्येक पग और मार्ग का एक-एक रोड़ा भी मुक्ति के मार्ग की कुजी बन सकता है।

सन्यासी गौतम अपने शरीर पर केन्द्रीभूत ध्यान करने के अनतर अपनी

भावनाओ और सकल्प-विकल्पो (अवधारणाओं) पर ध्यान करते चले गए। यहा तक कि जो विचार उनके चित्त मे आते-जाते थे, उनपर भी ध्यान लगाया करते। इससे उन्होने शरीर और चित्त के ऐक्य का अनुभव किया और पाया कि शरीर के प्रत्येक अणु-परमाणु तक मे ब्रह्माण्ड का समस्त ज्ञान समाया हुआ है। उन्होने पाया कि धूल के उस पार से उन्हे गहरे देखने की आवश्यकता है और उसी से समस्त सृष्टि का दर्शन सभव है। वह धूल ही सृष्टि है और यदि उसकी विद्यमानता न स्वीकारे तो सृष्टि की विद्यमानता भी नहीं रहती। सन्यासी गौतम प्रत्येक प्राणी में एक आत्मन् होने के भाव से भी आगे बढ गए। उन्होने अनुभव किया कि वेदो मे प्राणि मात्र मे एक आत्मा का जो भाव प्रतिपादित किया गया है, वह भ्रमपूर्ण है। वास्तव मे सभी वस्तुए या प्राणी पृथक आत्माओ से रहित होते है। समस्त जागतिक प्रपचो की मूल प्रकृति आत्म रहित अथवा अनात्म की है। आत्मा का कोई पृथक् अस्तित्व ही नहीं होता। वह तो एक तड़ित के समान है जो सभी भ्रामक विचारो को नष्ट कर देती है। अनात्म भाव पकडने के बाद सिद्धार्थ एक ऐसे सेनापति हो गए जो ध्यान-साधना के युद्धक्षेत्र मे अपनी अन्तर्दृष्टि की तलवार उठाए हुए हो। दिन-रात वह पीपल वृक्ष के नीचे बैठे रहते और चेतना के नए-नए परत उनके सामने, बिजली की कौध के समान, खुलते जाते।

इस दौरान उनके मित्रो का उन पर से विश्वास उठ गया। उन्होने देखा कि वह नदी के किनारे बैठे रहते हैं और भोजन भी ग्रहण करते हैं। उन्होने देखा कि वह एक नवयुवती से बाते करते है, मुस्कराते हैं, दूध और चावल खाते है और गाव से भिक्षा भी माग लाते है। कौंडन्न ने अन्य साथियो से कहा-"अब सिद्धार्थ विश्वास करने योग्य नहीं रह गए। उन्होने सद्धर्म का मार्ग बीच मे ही छोड़ दिया है। अब उनकी चिन्ता अपने शरीर को समुचित आहार जुटाने तक ही सीमित रह गई है। हमे उनका परित्याग कर देना चाहिए और कोई अन्य स्थान अपनी साधना के लिए खोज लेना चाहिए। मैं अब यहा ठहरे रहने का कोई कारण नहीं देखता।"

जब उनके वे पाचो मित्र चले गए तो सिद्धार्थ का ध्यान उनकी अनुपस्थिति की ओर गया। जो नई अन्तर्दृष्टि उन्हें प्राप्त हो रही थी, उससे उत्साहित हो, सिद्धार्थ अपना सारा समय ध्यान-साधना मे लगाने लगे और वे अपने मित्रो को अपनी नई अनुभूतियो के विषय मे बताने का भी समय नहीं निकाल सके। उन्होने सोचा कि 'मेरे मित्रो ने मुझे गलत समझा है लेकिन मै उन्हे समझा-बुझाकर नए मत की ओर प्रवृत्त करने की दिशा मे अभी ध्यान भी

नहीं दे सकता। मुझे तो सद्धर्म का सच्चा मार्ग खोजने मे ही अपनी समस्त शक्तिया लगानी है। एक वार वह सद्धर्म-मार्ग मुझे मिल जाए तो मैं उनसे अपने विचारो का आदान-प्रदान करुगा।' इसके वाद वह अपनी नित्य नैमित्तिक ध्यान-साधना करने लौट आए।

सद्धर्म की खोज के मार्ग पर जव वह पर्याप्त प्रगति कर चुके तो उन्हीं दिनो भैंसो का चरवाहा वह ग्यारह वर्षीय किशोर मिला। उस किशोर ने जो कौली भर ताजी कुशा उनको उपहार मे दी, उसे सिद्धार्थ ने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। यद्यपि सुजाता, स्वास्ति और उनके मित्र अभी वालक ही थे, फिर भी, सिद्धार्थ ने अपनी नई अनुभूतियो मे से कुछ की चर्चा उनसे की। उन्हे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि देहात के उन अशिक्षित वच्चो ने नई खोजो को कितनी सहजता से स्वीकार कर लिया था। इससे उनको वहुत तसल्ली मिली क्योकि वह जानते थे कि पूर्ण सवोधि (नए प्रकाश) का द्वार उन्मुक्त होने ही वाला है। उन्हे पता था कि नवचेतना की कुजी उनके हाथ मे आ गई है। और यह कुजी है सभी जागतिक प्रपचो का परस्परावलम्बन और उनकी अनात्म प्रकृति होना।

अध्याय सोलह

क्या यशोधरा सो रही थी ?

निर्धन परिवार का होने के कारण स्वास्ति कभी भी विद्यालय नही गया था। सुजाता ने उसे शिक्षा की मोटी-मोटी आरंभिक बाते बताईं। उसके पास अब भी पर्याप्त शब्द-भडार नहीं था और बुद्ध के सम्बन्ध मे अपनी कहानी सुनाते समय वह जगह-जगह अटकता था क्योकि वह मन के भाव व्यक्त करने के लिए उचित शब्द नहीं खोज पाता था। उसके श्रोतागण इसमे उसकी सहायता करते। आनद और राहुल के अलावा दो अन्य व्यक्ति भी उसकी कहानी सुनने आ गए थे। इनमे से एक तो वयोवृद्ध भिक्खुनी महाप्रजापति थीं और दूसरे भिक्खु का नाम अस्सजि था।

राहुल ने दोनो का स्वास्ति से परिचय कराया। स्वास्ति इस बात से बहुत ही अभिभूत हो गया कि महा प्रजापति स्वय ही रानी गौतमी थीं जो बुद्ध की मौसी मा थीं और उन्होने ही शिशु सिद्धार्थ को पाल-पोस कर बडा किया था। वह पहली महिला थीं जिन्हे बौद्ध सघ मे भिक्खुनी के रूप मे प्रवेश मिला था। और अब वह सात सौ से अधिक भिक्खुनियो की नेतृ थीं। वह बुद्ध से मिलने उत्तर से यहा तक यात्रा करती हुई आई थीं जिससे बौद्ध सघ मे भिक्खुनियो के प्रवेश विषयक विचार बुद्ध से जान सके। स्वास्ति को ज्ञात हुआ कि वह पिछली सध्या को ही वहा आई थीं। उनका पौत्र राहुल जानता था कि बुद्ध द्वारा उरुवेला के वन मे बिताए दिनो के विषय मे सारी बाते स्वास्ति से स्वय सुनकर वह कितनी प्रसन्न होगी। इसीलिए वह उन्हे अपने साथ आने के लिए बुला लाया था। स्वास्ति ने हाथ जोड़कर भिक्खुनी नेतृ महाप्रजापति को नमन किया। बुद्ध ने उनके विषय मे जो कुछ कहा था, उसका स्मरण करके उसका हृदय उनके प्रति प्रेम और श्रद्धा-भाव मे छलछला उठा। महाप्रजापति ने भी स्वास्ति की ओर उसी प्रेम भरी दृष्टि से देखा, जिससे वह राहुल को देखती थीं।

राहुल ने अस्सजि का भी स्वास्ति से परिचय कराया और जब उसने जाना कि अस्सजि उन पाच मित्रो मे से एक थे, जिन्होने बुद्ध के साथ आत्म-सयम तथा वीतराग होने के लिए स्वास्ति के घर के निकट ही शरीर-पीडन तप किया था तो उसकी आंखे हर्ष से चमकने लगी। उन दिनो बुद्ध ने बताया था कि जव उनके मित्रो ने उन्हे दूध पीते और भोजन करते देखा तो वे यह मानकर कि वुद्ध ने शरीर-पीड़न का मार्ग त्याग दिया है, अपनी साधना करने अन्यत्र चले गए थे। स्वास्ति को आश्चर्य हो रहा था कि अब वही अस्सजि कैसे वुद्ध के शिष्य के रूप मे यहा वेणुवन विहार मे रह रहे है। वह बाद मे इस सवध मे राहुल से पूछकर अपनी जिज्ञासा शात कर लेगा।

अपनी कहानी सुनाने के प्रयासो मे स्वास्ति को भिक्खुनी गौतमी ने सर्वाधिक सहायता की। विस्तार की जो वाते स्वास्ति को महत्त्वपूर्ण नहीं लगी थीं और उसने छोड़ दी थी, उनके विषय मे गौतमी ने प्रश्न पूछे क्योकि वे स्पष्टत. उनके विपय मे जानना चाहती थीं। उन्होने पूछा कि बुद्ध की ध्यान-साधना के लिए जो कुशा तुमने उपहार मे दी थी, वह कहा से काटी थी और वह कितने दिनो वाद वुद्ध को ताजी कुशा देकर आता था। उन्होने यह भी जानना चाहा कि बुद्ध को कुशा दे देने के बाद क्या उसके पास भैंसो को रात के खाने के लिए पर्याप्त घास रह जाती थी ? क्या भैसो के मालिक ने कभी उसकी पिटाई भी की थी ?

अभी वहुत कुछ वताना शेष था कि स्वास्ति ने आज शाम बाते यहीं समाप्त करने की अनुमति मागी और वचन दिया कि वह अगले दिन शेष वाते वताएगा। किन्तु जाने से पूर्व वह भिक्खुनी गौतमी से कुछ बाते जानना चाहता था जो विगत दस वर्षों से उसके हृदय को मथ रही थीं। वह उसे देखकर मुस्कराईं और कहा-"अच्छा पूछो। यदि मै तुम्हारे प्रश्नो का उत्तर दे सकी तो मुझे अत्यधिक प्रसन्नता होगी।"

सबसे पहले स्वास्ति यह जानना चाहता था कि जब सिद्धार्थ ने, रवाना होने से पूर्व यशोधरा के कमरे का पर्दा उठाया था, उस समय क्या यशोधरा वास्तव मे सो रही थी या सोने का अभिनय कर रही थी ? स्वास्ति यह भी जानना चाहता था कि जब चन्ना सिद्धार्थ की तलवार, रत्नजटित कठहार और बालो के गुच्छे लेकर पहुचा तो राजा, रानी और यशोधरा ने क्या-क्या सोचा। छ. वर्षों की उनकी अनुपस्थिति के दौरान बुद्ध के परिवारजनो का जीवन कैसे-कैसे बीता ? सबसे पहले किसने यह समाचार सुना कि बुद्ध

को सवोधि प्राप्त हो गई है या सद्धर्म का मार्ग मिल गया है ? बुद्ध जब लौटे तो उनका स्वागत सवसे पहले किसने किया ? जब वह कपिलवस्तु पहुचे तो क्या नगर के सभी निवासी उनके स्वागत मे उमड़ पड़े थे ?

"तो तुम्हारे मन मे भी वहुत से प्रश्न हैं ।" भिक्खुनी गौतमी ने कहा। वह कृपापूर्ण दृष्टि से स्वास्ति की ओर देखकर और मुस्करा कर वताने लगीं, "तुम्हारे प्रश्नो का मै सक्षेप मे ही उत्तर दे रही हू। तुम्हारा पहला प्रश्न है कि उस समय यशोधरा वास्तव मे सो रही थी अथवा नहीं ? यदि तुम एकदम सही-सही जानना चाहते हो तो यह प्रश्न यशोधरा से करो। यदि तुम मुझसे पूछते हो तो मैं विश्वास नहीं करती कि वह सो रही थी। यशोधरा ने स्वय ही सिद्धार्थ के वस्त्र, शिरस्त्राण और पदत्राण तैयार करके कुर्सी पर रखे थे। उसने ही चन्ना से साज कसकर कतक को तैयार करने को कहा था। उसे ज्ञात था कि राजकुमार आज रात को निकल जाने वाले है। ऐसी रात मे वह कैसे सो सकती थी ? मैं समझती हू कि उस रात वह सोने का अभिनय ही कर रही थी। विदा की वेला मे वह राजकुमार और स्वय को विरह की पीडा मे डुवाना नहीं चाहती थी। स्वास्ति तुम अभी तक यशोधरा को जानते नहीं। राहुल की मा अत्यधिक दृढ सकल्प वाली महिला है। वह सिद्धार्थ की आतरिक इच्छा को समझती थी और अप्रत्यक्ष रूप से ही सही, उनको हार्दिक समर्थन प्रदान करती थी। यह बात मैं औरो की अपेक्षा कही अधिक अच्छी तरह जानती हू। सिद्धार्थ के बाद, यदि वह हृदय से किसी के निकट थी तो मेरे ही निकट थी।"

भिक्खुनी गोतमी ने स्वास्ति को वताया कि अगले दिन सबेरे जब यह ज्ञात हुआ कि सिद्धार्थ चले गए हैं तो यशोधरा को छोडकर सभी को गहरा धक्का लगा। राजा शुद्धोधन तो गुस्से से पागल हो गए। जो भी सामने पड़ता, उसी पर उवल पडते थे कि उन्होने राजकुमार को जाने से रोका क्यो नहीं। रानी गौतमी तुरन्त दौडी हुई यशोधरा के पास पहुची तो उन्होने पाया कि वह चुपचाप शान्त वैठी हुई रो रही थी। चारो दिशाओ मे अश्वारोही दौड़ाए गए। उन्हें आदेश दिए गए कि यदि राजकुमार उन्हे मिल जाए तो उनको लेकर आए। दक्षिण की ओर गए अश्वारोही दल को चन्ना मिला जो सवार रहित (कोतल) कतक को लिए चला आ रहा था। चन्ना ने उन्हे आगे जाने मे मना किया और कहा कि-"अध्यात्म मार्ग अपनाने गए राजकुमार को उस मार्ग पर शांति से जाने दो। मैं उनके सामने रोया-गिड़गिडाया और उनसे लौट चलने का हर सभव अनुरोध किया। किन्तु वह सद्धर्म का मार्ग खोजने

के लिए कृत सकल्प थे। जो भी है, वह उन घने जगलो मे प्रवेश कर गए है जो दूसरे राज्य मे पड़ते हैं। तुम उन्हे वहा खोजने जा ही नहीं सकते।"

जब चन्ना वापस राजमहल पहुचा तो अपना हार्दिक खेद व्यक्त करने के लिए तीन बार झुककर प्रणाम किया और सिद्धार्थ की तलवार उनकी कठमाला और बालो की लटे राजा की ओर देने के लिए बढ़ाई। उस क्षण रानी गौतमी और यशोधरा भी राजा के साथ ही बैठी हुई थीं। चन्ना के बहते आसू देखकर राजा ने चन्ना को भला-बुरा नहीं कहा लेकिन यह अवश्य पूछा कि सब कुछ कैसे घटित हुआ। राजा ने चन्ना से कहा कि सिद्धार्थ की तलवार, कठ- माला और बालो की लटे यशोधरा को दे दो। राजमहल का वातावरण शोकपूर्ण हो उठा। राजकुमार के चले जाने से जैसे दिन मे अधकार हो गया था। राजा अपने कक्ष मे चले गए और बहुत दिनो तक बाहर नहीं निकले। राजा की ओर से उनके मत्री विस्सामित्त राजकाज सभालते रहे।

अश्वशाला मे आने के बाद कतक ने न कुछ खाया, न कुछ पिया और कुछ दिनो के बाद मर गया। अश्व की मृत्यु के दुख से मर्माहत चन्ना ने यशोधरा से आज्ञा मागी कि राजकुमार के अश्व की अत्येष्टि विधान-पूर्वक सम्पन्न करने दी जाए।

भिक्खुनी गौतमी उस दिन यहीं तक अतीत का घटना क्रम बता पाई थीं कि ध्यान-साधना करने के समय का सूचक घटा बजा। हर कोई बहुत ही निराश दिख रहा था, किन्तु आनद ने कहा कि चाहे यह कथा कितनी ही प्रिय क्यो न हो, हमे ध्यान-साधना का क्रम नहीं तोड़ना चाहिए। उन्होने सभी को अगले दिन अपनी कुटिया मे आने का निमत्रण दिया। स्वास्ति और राहुल ने भिक्खुनी गौतमी, आनद तथा अस्सजि को हाथ जोड़कर नमन किया और इसके बाद वे आचार्य सारिपुत्त की कुटिया मे वापस आए। दोनो युवा मित्र साथ-साथ बिना बोले ही चलते आए थे। घटे की ध्वनि तरगे इस प्रकार प्रसरित हो रही थी जिस प्रकार सागर मे एक लहर के बाद दूसरी लहर आती चली जाती है। स्वास्ति ने अपनी श्वसन-क्रिया पर ध्यान दिया और मौन रूप से ही, घण्टा-ध्वनि सुनने के लिए 'गाथा' का पाठ करने लगा। "सुनो-सुनो, यह अद्भुत घटा-ध्वनि मुझे अपने सच्चे आत्म-भाव मे पहुचा रही है।"

अध्याय सत्रह

पीपल के पत्ते में ब्रह्माण्ड-दर्शन

पीपल वृक्ष के नीचे वैठकर सन्यासी गौतम ने ध्यान-साधना द्वारा अर्जित समस्त मन शक्तिया अपने शरीर पर केन्द्रित कर दीं। उन्होने देखा कि उनके शरीर का प्रत्येक अणु-परमाणु जन्म, अस्तित्व और मृत्यु की अनत प्रवाहमयी सरिता के जल की एक बूद के समान है और शरीर का कोई भी परमाणु ऐसा नहीं लगा जो अपरिवर्तित रहता हो या जिसका कोई स्वतत्र अस्तित्व हो। इस शरीर-सरिता के साथ ही, भावनाओ की सरिता मिल रही थी जिसमे प्रत्येक भावना उस सरिता की बूद के समान है। ये बूंदे भी जन्म, अस्तित्व और मृत्यु की प्रक्रिया-महाकाल की सरिता-से परस्पर टकरा रही थीं। कुछ भावनाए सुखद थीं तो कुछ भावनाए दुखद और कुछ इन दोनो से ही भिन्न। किन्तु ये सभी भावनाए अनित्य एव अस्थायी थीं और उनके शरीर के परमाणुओ के समान विलुप्त हो जाती थीं।

इसके वाद, और दृढ ध्यान-साधना से गौतम ने यह भी पाया कि शरीर और भावना-सरिताओ के साथ ही साथ, भाव-वोध की भी एक सरिता-प्रवाहित हो रही है जिसकी वूंदे एक-दूसरे से मिश्रित होती हुई जन्म, अस्तित्त्व और मृत्यु की प्रक्रिया पर भी परस्पर प्रभाव छोड़ रही है। यदि व्यक्ति का भाव-वोध निष्कलुप है तो परम तत्त्व महज ही अनुभूति सुलभ हो जाता है। यदि यह भाव-वोध भ्रमपूर्ण हे तो वह चेतन-तत्त्व माया के आवरण मे आच्छादित रहता है। लोग अनत कष्ट मात्र इसीलिए भोगते हैं क्योकि उनका भाववोध तिमिराच्छन्न होता हे। वह अनित्य को नित्य, अनात्म को आत्मयुक्त, जो मरणधर्मा हैं उसे अजर-अमर समझते हैं और जो अविभाज्य है उसे खडो मे विभक्त मानकर चलते हैं।

तदनतर गौतम ने अतल गहराई मे जाकर मानसिक अवस्थाओ को समझने

का प्रयास किया। ये अवस्थाए ही सभी कष्टो का स्रोत है। भय, क्रोध, घृणा, अहकार, द्वेष, लोभ और अज्ञान विविध मानसिक अवस्थाए है। उनके समक्ष चेतना का प्रकाश सूर्य के समान जगमगा उठा। सभी विरोधी मानसिक अवस्थाओ को प्रकाशित करने के लिए उन्होने उस चेतना-सूर्य का प्रयोग किया और पाया कि सभी मानसिक अवस्थाए अज्ञान के कारण जनमती है। ये सभी अवस्थाए चेतन-ज्ञान की विरोधी है, एक अधकार है-प्रकाश के अभाव से उत्पन्न। अत. मुक्ति की कुजी यही होगी कि इस अज्ञान-अधकार का भेदन किया जाए, परम तत्त्व मे प्रवेश किया जाए और उसका प्रत्यक्ष अनुभव किया जाए। यह ज्ञान बुद्धि के माध्यम से अर्जित ज्ञान नही होगा, अपितु प्रत्यक्ष अनुभूति से प्राप्त ज्ञान होगा।

अव तक, सिद्धार्थ भय, क्रोध और लोभ को समाप्त करने के मार्ग खोजते रहे किन्तु इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होने जो पद्धतिया अपनाईं, उनमे उन्हे सफलता नही मिली क्योकि वे सव विचारो और भावनाओ का मात्र दमन करती थीं। अव सिद्धार्थ समझ पाए थे कि उनका आदि जनक तो अज्ञान है और जव व्यक्ति अज्ञान से मुक्त हो जाता है तो मानसिक सकल्प-विकल्प अपने आप ही समाप्त हो जाते है जैसे सूर्योदय होने से अधकार। सिद्धार्थ को प्राप्त यह अन्तर्दृष्टि उनकी गहन ध्यान-साधना का ही फल थी।

वह मुस्कराए और उन्होने आसमान मे लहरा रहे पीपल के पत्ते की ओर देखा। पत्ते की पूछ आगे-पीछे हिलकर जैसे उनको आमन्त्रित कर रही हो। उस पत्ते की ओर त्राटक दृष्टि से देखने पर उन्होने स्पष्ट देखा कि उसमे सूर्य और तारागण सभी विद्यमान है क्योकि बिना सूर्य, बिना प्रकाश तथा विना अग्नि-तत्त्व के पत्ते का अस्तित्व ही सभव नहीं। यह पत्ता ऐसा इसीलिए है कि वे सभी तत्त्व उस प्रकार कार्यरत है। उन्होने उस पत्ते मे वादलो की (जल तत्त्व की) उपस्थिति देखी-बिना बादलो के वर्षा सभव नहीं और बिना वर्षा के पत्ते का अस्तित्व सभव नही। उन्होने देखा कि पृथ्वी, काल, आकाश और मनस् तत्त्व सभी उस पत्ते मे विद्यमान है। वास्तव मे उस पत्ते मे ही समस्त ब्रह्माण्ड अवस्थित है। उस पत्ते के अस्तित्व की सार्थकता का ज्ञान एक अद्भुत आश्चर्य से युक्त था।

यद्यपि हम सामान्यतः मानते हैं कि पत्ते का जन्म वसन्त ऋतु मे होता है किन्तु गौतम देख पा रहे थे कि उसका अस्तित्व तो अनंतकाल से सूर्य के प्रकाश मे, मेघो मे, वृक्ष मे और स्वय उनमे विद्यमान है। यह देखकर

कि पत्ता कभी जन्म नहीं लेता, वह भी कभी जन्म नहीं लेते। पत्ता और वह तो मात्र एक सत्ता की अभिव्यक्ति है – उनका न तो कभी जन्म हुआ और न कभी मृत्यु को प्राप्त होगे। यह अन्तर्दृष्टि प्राप्त होते ही जन्म-मरण और अस्तित्व एव अनस्तित्व के विचार तिरोहित हो गए, पत्ते की सच्ची आकृति और अपना सच्चा रूपाकार उनके समक्ष प्रकाशित हो उठा। वह यह देख पा रहे थे कि एक सृजन की उपस्थिति मे ही अन्य समग्र सृष्टि की विद्यमानता सभव होती है। एकत्व में ही वहुत्व और वहुत्व मे एकत्व समाहित है।

वह पत्ता और उनका शरीर एक ही सरीखे है। इनमे से किसी का न तो पृथक् अस्तित्व है और न वह अस्तित्व स्थायी है। समस्त जागतिक प्रपचो का परस्परावलवन देखकर सिद्धार्थ ने समस्त प्राणियो की खोखली प्रकृति को समझ लिया था कि वे सव पृथक् और स्वतत्र अस्तित्व से रहित हैं। उनको इस सत्य का साक्षात्कार हुआ कि मुक्ति की कुजी परस्पर अवलबन तथा अनात्म के सिद्धान्तों मे ही निहित है। आकाश मे पीपल वृक्ष के ऊपर मेघ तैर रहे थे जो पीपल वृक्ष की श्वेत पृष्ठभूमि वन रहे थे। सभव है कि उस शाम वादलो का शीतलता से सपर्क हो जाए वे जल बनकर वरस पड़े। एक ही तत्त्व (जल) की मेघ एक प्रकार की अभिव्यक्ति है तो वर्षा दूसरे प्रकार की। मेघो का भी जन्म नहीं हुआ था और न ही उनका मरण होगा। गौतम ने सोचा कि यदि मेघो को यह तथ्य ज्ञात हो जाए तो जव वे पर्वतो, वनो और चावल के खेतो मे वरसते हैं तो निश्चय ही हर्ष से उन्मत्त होकर गा उठें।

अपने शरीर, भावनाओ, अवधारणाओ, मानसिक भाव-वोध और चेतना की नदियो के प्रकाश की अनुभूति से सिद्धार्थ समझ गए थे कि जीवन के परम आवश्यक तत्त्व हैं—अनित्यता तथा अनात्मता। यदि ये न हो तो न तो कुछ अस्तित्ववान हो और न उसका विकास हो। यदि धान अनित्य एव अनात्म न हो, तो वह चावल के पौधे के रूप मे कैसे वढ़ सकता है। यदि मेघ अस्तित्व और आत्मवत्ता भाव से रहित न हो तो वे वर्षा मे कैसे परिणत हो सकते हैं। स्थायित्वहीनता और आत्मसत्ता रहित हुए विना वच्चा कभी वयस्क नहीं वन सकता। उन्होने समझा कि–"इस प्रकार जीवन को स्वीकार करने का अर्थ है अनित्यता और अनात्म होना। सभी कष्टो का स्रोत इस भ्रामक भाव-वोध मे निहित है कि हम अपने अस्तित्व को स्थायी और स्वय को पृथक् सत्ता मानते है। यदि लोग इस सत्य (प्रतीत्यसमुत्पाद) को समझ

ले तो न तो जन्म का भाव रहे, न मरण का, न उत्पत्ति और विनाश का, न एकत्व और वहुतत्व का, न अतर और वाह्य का, न अशुचिता और शुचिता का। प्रतीति परक से समस्त भ्रांत अवधारणाए तो वुद्धि की उपज है। यदि व्यक्ति सभी वस्तुओ की असारता को समझ ले तो वह समस्त मानसिक सकल्प-विकल्पो को पार कर लेगा और कष्टो के दुष्चक्र से मुक्ति प्राप्त कर लेगा।"

एक रात से दूसरी-तीसरी रातो तक गौतम पीपल वृक्ष के नीचे वैठकर अपने शरीर, अपने चित्त और निखिल व्रह्माण्ड की चेतना के प्रकाश से जगमगाते रहे। उनके पाच सहयोगी तो वहुत पहले ही उनको छोड़कर चले गए थे और अव उनके साथ साधना करने वाले थे वन, नदी, पक्षीगण, पृथ्वी और वृक्षो पर रहने वाले हजारो कीट-पतग। इस ध्यान-साधना मे महान पीपल वृक्ष उनके ज्येष्ठ सहोदर के समान था। प्रत्येक रात जव वे साधना के लिए वैठते थे तो आकाश मे उदित साध्य तारक भी ध्यान-साधना मे उनका भ्राता था। वह देर रात गए तक साधना-रत रहा करते।

गाव के वच्चे उनसे मिलने दोपहर के आस-पास ही आते। एक दिन सुजाता दूध, चावल और शहद की खीर वनाकर लाई और स्वास्ति ताजी कुश घास का पूला। जव स्वास्ति अपने भैसो को वापस घर ले जाने के लिए रवाना हो गया तो गौतम को आतरिक पूर्वाभास हुआ कि आज रात को उन्हे सम्यक् सवोधि—महान वोधितत्त्व—की प्राप्ति हो जाएगी।

उससे पिछली रात उन्हे वहुत ही असाधारण स्वप्न दिखे थे। प्रथम स्वप्न मे उन्होने पृथ्वी को अपने शयनासन के रूप मे देखा। सुमेरु पर्वत उनका शिरोधार्य है। उनका वामहस्त महा समुद्र और दक्षिण हस्त पश्चिम के मरुस्थल मे टिका हुआ है तथा उनके दोनो चरण दक्षिणी समुद्र के जल से प्रक्षालित हैं। द्वितीय स्वप्न मे उन्होने देखा कि क्षीरिका नामक घास उनकी नाभि से निकलकर आकाश की ओर उन्नतिशील है और रथ के पहिए के आकार का कमल खिला हुआ है। तीसरे स्वप्न मे उन्होने देखा कि नाना रगो के अगणित पक्षी समस्त दिशाओ से उड़कर उनके पास आ रहे हैं। ये सभी स्वप्न इस बात का आभास देते प्रतीत हो रहे थे कि उन्हे महान सबोधि की प्राप्ति होने ही वाली है।

उस सध्या वह कुछ जल्दी ही नदी के तट पर चलित-ध्यान करते घूम रहे थे। वे नदी के जल मे घुस गए और खूब स्नान किया। गोधूलि वेला मे वे अपने सुपरिचित पीपल वृक्ष के नीचे साधना मे बैठने के लिए आ

गए। वृक्ष के तने के नीचे फैली ताजी हरी घास की ओर देखकर मुस्कराए। इसी वृक्ष के नीचे उन्हे अपने ध्यान-साधना-काल मे अनेक प्रकार की नवीन महत्त्वपूर्ण अनुभूतिया प्राप्त हुई थीं। जिस क्षण की वह अब तक प्रतीक्षा करते रहे थे, वह समीप आ गया था। सबोधि—दिव्य ज्ञान—(चेतना का परम आनद) के द्वार खुलने ही वाले थे।

धीरे-धीरे सिद्धार्थ पद्मासन लगाकर बैठ गए। उन्होने उस नदी की ओर निहारा जो कुछ दूर शात प्रवाहित हो रही थी और शीतल मद पवन से नदी किनारे की कुश घास हिल रही थी। रात्रि मे वन-प्रातर शात किन्तु जागरित था। उनके आस-पास हजारो झिल्लिया झकार कर रही थीं। उन्होने प्राणायाम किया और धीरे से आखे मूद लीं। तव तक साध्य तारा आकाश मे उदित हो चुका था।

अध्याय अठारह

संबोधि की प्राप्ति

चेतना-जागृति के कारण, सिद्धार्थ का चित्त, शरीर और श्वसन-क्रिया पूर्णतया एकाकार हो गई थी। सजग चेतना के अभ्यास के कारण उनको चित्त के केन्द्रीकरण की महानशक्ति उपलब्ध हो गई थी जिसे वह चित्त और शरीर को जगाने-निखारने मे प्रयोग कर सकते थे। गहन समाधि की अवस्था मे वह अपने शरीर मे तत्क्षण असंख्य प्राणियो की विद्यमानता अनुभव कर सकते थे। जीवधारी और अन्य प्राणी खनिज, सेवार, घास, कीट-पतग, पशु और मानव सभी उनके अदर समाए लगते थे। उन्होने अपने सभी विगत जीवनो, जन्मो और मृत्युओ को देखा। उन्होने हजारो सृष्टियो तथा ग्रह-नक्षत्रो की रचना एव विनाश को देखा। उन्होने प्रत्येक जीवित प्राणियो जो मा के गर्भ से जन्मे या अडज एवं उद्भिज थे, के समस्त हर्षों और विषादो को अनुभव किया और उन्हे नया जीवन धारण करते देखा। उन्होने अपने शरीर के प्रत्येक अणु-परमाणु मे पृथ्वी एव स्वर्ग की उपस्थिति और भूत, वर्तमान एवं भविष्यत काल के तीनो आयामो—देश-काल की सभी अवस्थाए देखीं। यह उनके सृष्टि-दर्शन का प्रथम चरण था।

गौतम और भी गहन समाधि की गहराइयो मे उतरे तो उन्होने देखा कि किस प्रकार अगणित जगतो का उत्थान और पतन होता है, उनकी कैसे रचना होती है और विनाश होता है। उन्होने जाना कि किस प्रकार असख्य प्राणी असख्य जन्मो और मृत्युओ के बीच से गुजरते है। उन्होने देखा कि ये जन्म और मृत्युएं तो बाह्य दृश्य मात्र है, सच्ची वास्तविकता नहीं है। यह सब ठीक उसी प्रकार होता है, जैसे करोड़ो लहरे समुद्र की सतह पर लगातार उठती और गिरती हैं जबकि स्वय समुद्र का न तो जन्म होता है और न मृत्यु। यदि लहरे यह समझ ले कि वे स्वय भी जल ही हैं तो जन्म-मरण

के भ्रमजाल के पार चली जाए और सभी भयो को आधारहीन समझ शाति प्राप्त कर सके। इस अनुभूति ने गौतम को जन्म-मरण के जाल से पार जाने का मार्ग दिखाया। इससे वे मुस्करा उठे। उनकी मुस्कान रजनीगंधा पुष्प की भाति थी जिसमे प्रभापूर्ण आभा निकल रही थी। उनकी यह मुस्कान अद्भुत ज्ञान पाने, और समस्त मलिनताओ को नष्ट करने की अन्तर्दृष्टि पाने की मुस्कान थी। समाधि के दूसरे चरण मे उनको यह सब ज्ञान हुआ था।

ठीक उसी क्षण भीषण झझा-झकोर गर्जन हुआ और आकाश मे अपार शक्ति से विद्युत कौंधी मानो वह आकाश के दो भाग कर देगी। काले-काले घने बादलो ने चन्द्रमा और तारो को पूरी तरह ढक दिया। घनघोर वर्षा होने लगी। गौतम तर-ब-तर हो गए लेकिन वह अपने आसन से तनिक भी हिले-डुले नहीं। उनकी समाधि इससे भी विचलित नहीं हुई थी।

उन्होने अडिग रहकर अपनी चेतना को चित्त पर केन्द्रित किया। उन्होने देखा कि जीवित प्राणी इसलिए कष्ट पाते हैं क्योकि वे सभी प्राणियो की समान आधार-भूमि के सहभागी हैं। अज्ञान के कारण वे अनेक प्रकार के दुख, भ्रान्तिया और कष्ट भोगते हैं। लोभ, क्रोध, अहकार, भ्रम, द्वेष और भय सभी की जड अज्ञान है। जब हम चित्त को शात करके गहराई के साथ सत्य के दर्शन कर पाते हैं, तो हमे पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है जिससे प्रत्येक प्रकार के दु:खो और चिन्ताओ का निवारण हो जाता है। इससे स्वीकार्यता और प्रेम का उदय होता है।

अब गौतम ने समझा कि सहृदयता और प्रेम एक ही हैं। सहृदयता के बिना प्रेम हो ही नहीं सकता। प्रत्येक प्राणी की प्रकृति उसकी भौतिक-रचना, भावनात्मक और सामाजिक स्थितियो के अनुरूप निर्मित होती है। इस तथ्य को समझ लेने पर वह निर्दयतापूर्ण व्यवहार करने वाले के प्रति भी घृणा नहीं कर सकता। सहृदयता से करुणा और प्रेम के भावो का उदय होता है जिससे व्यक्ति सद्कर्मों की ओर प्रवृत्त होता है। प्रेम करने के लिए पूर्ण सत्य समझ लेने की आवश्यकता होती है इसलिए मुक्ति की कुजी सहृदयतापूर्ण ज्ञान है। भ्रमरहित ज्ञान की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति जागरूकता के साथ जिये, जीवन के वर्तमान क्षणो के साथ उसका प्रत्यक्ष सपर्क हो अर्थात् वह सही रूप मे यह देख सके कि व्यक्ति के अतस मे और बाहर क्या-क्या घटित हो रहा है। जागरूकता का अभ्यास करने से उसमे गहराई तक सोचने-समझने की सक्षमता आती है। जब वह किसी भी बात की गहराई मे उतरता है तो उसका रहस्य स्वय ही अनावृत हो जाता

है। जागरूकता ऐसा गोपन कोष है जिससे मुक्ति और चेतना की जागृति की दिशा में बढ़ा जा सकता है। जीवन शुद्ध ज्ञान, शुद्ध विचारो, शुद्ध वाणी, सद्कर्मों, शुद्ध आचरण, सही प्रयासो, सच्ची जागरूकता और चित्त के केन्द्रीकरण से प्रकाशित हो उठता है। सिद्धार्थ ने इसे 'आर्य मार्ग' कहा।

गहरी समाधि की अवस्था मे समस्त प्राणियो के हृदयो को देखते हुए सिद्धार्थ ने प्रत्येक के मनो की अवस्था जान ली, चाहे वे कितनी ही दूर क्यो न हो। इससे वे प्रत्येक व्यक्ति के हर्ष और विषाद की चीखे सुन पा रहे थे। इस प्रकार उन्होने दिव्य दृष्टि, दिव्य श्रवण और अपनी जगह बैठे-बैठे ही कहीं भी जा सकने की सामर्थ्य अर्जित कर ली थी। यह उनके लोकोत्तर दर्शन अथवा सबोधि का तीसरा चरण था। इसके बाद झझा की झकोर थम गई थी और प्रकाशित चन्द्रमा तथा तारो पर से मेघो का आवरण सिमिट गया था।

गौतम को ऐसी अनुभूति हुई जैसे हजारो योनियो के कारागार से मुक्ति मिल गई हो। इस कारागार का द्वारपाल था अज्ञान। इस अज्ञान के कारण ही उनका चित्ताकाश तिमिराच्छन्न था, ठीक वैसे ही जैसे झझावात मे सघन मेघो से चन्द्रमा और तारे छिप गए थे। अज्ञान मे डूबे विचारो की असख्य लहरो से वास्तविकता का सत्य, कर्त्ता और कर्म, स्व-पर, विद्यमानता तथा अविद्यमानता, जन्म और मरण तथा भ्रात विचार से जन्मे विभिन्न विभेदो मे विभक्त हो गया था और भावनाओ, आकाक्षाओ, स्वार्थ-साधना और अहमन्यता की कैद मे फस गया था। जन्म, जरा, रोग और मृत्यु ने उस कारागार की दीवारें और मोटी कर दी थीं। ऐसी अवस्था मे यही किया जा सकता था कि कारागार के द्वारपाल को पकड़ लिया जाए और उसका वास्तविक स्वरूप परख लिया जाए। यह द्वारपाल था अज्ञान। इस अज्ञान पर विजय पाने का साधन है पवित्र अष्टागिक मार्ग।* एक बार कारागार का द्वारपाल चला जाए तो वह कारागार ही ध्वस्त हो जाएगा और फिर वह कभी बन नहीं सकता।

सन्यासी गौतम मुस्कराकर आत्मालाप करने लगे-"ओ कारागार के प्रहरी ! मैंने तुमको देख लिया है। कितनी योनियो से तुमने मुझे जन्म-मरण के कारागार मे बद रखा है। किन्तु अब मैंने तुम्हारा वास्तविक स्वरूप भली-भाति

---

*अष्टांगिक मार्ग-प्रथम मार्ग, सम्यक् दृष्टि, द्वितीय, सम्यक् सकल्प, तृतीय, सम्यक् वचन, चतुर्थ, सम्यक् कर्मान्त, पंचम, सम्यक् आजीव, षष्ट, सम्यक् स्मृति, सप्तम्, प्रतीत्य समुत्पाद और अष्टम् मार्ग है-सम्यक् समाधि - सपादक

पहचान लिया है। अव इसके वाद तुम मेरे लिए और कारागारो का निर्माण नहीं कर सकोगे।"

सामने देखने पर, सिद्धार्थ ने देखा कि क्षितिज मे भोर के तारे का उदय हो गया है जो विशाल हीरे की भाति दमक रहा था। उन्होने पीपल वृक्ष के नीचे वैठकर भोर के इस तारे को अनेक वार देखा था किन्तु आज प्रातः देखने पर प्रतीत हुआ कि जैसे वह उसे पहली वार देख रहे हैं। यह सबोधि-प्राप्ति की स्मिति के समान ऐसा जगमगा रहा था जिससे आखे चुधिया जाए। सिद्धार्थ ने इस तारे को त्राटक दृष्टि से देखा और करुण भाव से कहा–"समस्त प्राणियो के अतराल मे सवोधि के वीज छिपे हुए हैं, फिर भी, हम हजारो योनियो से जन्म-मरण के सागर मे डूवते रहे हैं।"

सिद्धार्थ समझ गए कि उन्हे सद्धर्म का मार्ग मिल गया है। उन्होने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया है और उनके हृदय को पूर्ण शाति एव सहजता प्राप्त हो गई है। उन्होने इस मार्ग की खोज मे विताए समय का स्मरण किया जो निराशाओ और कठिनाइयो से भरा हुआ था। उन्हे अपने पिता, अपनी माता, मौसी, यशोधरा, राहुल और अपने सभी मित्रो का स्मरण हो आया। उन्हे अपने राजमहल, कपिलवस्तु, उसके प्रजाजन और देश की याद आई तथा वे सभी विशेपत वच्चे याद आए जो कष्टों से भरा जीवन जीते हे। मैंने उनसे सद्धर्म का मार्ग खोज लेने और अन्य लोगो को कष्टो से मुक्ति दिलाने मे सहायक होने का वचन दिया था। उनकी गहन अन्तर्दृष्टि मे समस्त प्राणियो के लिए अपार प्रेम-भाव जागृत हो चुका था।

घास युक्त नदी तट पर प्रभाती वेला के सूर्योदय मे खिले फूल जगमगा रहे थे। सूर्य की किरणे उनके पत्तो पर नृत्य करती हुई ओस कणो को चमक प्रदान कर रही थीं। उनके अतस का समस्त दुख अन्तर्धान हो गया था। जीवन की सभी अद्भुतताओ के स्वय ही दर्शन हो रहे थे। सभी कुछ असाधारण एव नया-नया लग रहा था। नील आकाश और उसमे तैरते धवल मेघ, सभी कुछ कितना अद्भुत दृश्य उपस्थित कर रहा था। उन्हे प्रतीत हुआ कि उनकी और समस्त सृष्टि की जैसे नए सिरे से रचना हुई हो।

उसी समय स्वास्ति आ गया। जव सिद्धार्थ ने देखा कि वह चरवाहा वालक भागता हुआ आ रहा है तो वह मुस्कराए। अकस्मात् वह रास्ते मे ही रुक गया और मुह फाडे सिद्धार्थ को एकटक देखता रह गया। सिद्धार्थ ने उसे आवाज दी–"स्वास्ति।"

वालक जैसे होश मे आया और उत्तर दिया–"गुरुदेव !" उसने हाथ जोडकर

स्वास्ति ने हाथ जोड़कर हिचकिचाते हुए कहा, "गुरुदेव, आज आप कुछ बदले-बदले दिखते है "

नमन किया। वह कुछ पग आगे बढा और फिर रुक गया। वह उनकी ओर भयभीत-सा ध्यान से देखने लगा। अपने इस व्यवहार पर सकोच व्यक्त करता हुआ वह रुक-रुक कर बोला-"गुरुदेव, आज आप कुछ बदले-बदले दिख रहे है।"

सिद्धार्थ ने बालक को समीप आने का सकेत किया। उसे अपनी बाहो मे भर लिया और पूछा, "आज मैं कैसे बदला-बदला दिख रहा हू।"

सिद्धार्थ की ओर निहारते हुए उसने उत्तर दिया-"यह बताना तो कठिन है। किन्तु आप आज बहुत बदले हुए लग रहे हो। ऐसा लग रहा है, जैसे, जैसे आप एक नक्षत्र बन गए हो।"

सिद्धार्थ ने बालक के सिर को हाथ से थपथपाया और कहा-"ऐसा है ? इसके अलावा मै तुमको कैसा लग रहा हू।"

"अभी-अभी खिले कमल जैसे लग रहे हैं। ऐसे लग रहे है जैसे-जेसे गयाशीर्ष पर्वत की चोटी पर चद्रमा निकला हो।"

सिद्धार्थ ने स्वास्ति की आखो मे देखकर कहा-"स्वास्ति, क्यो क्या तुम एक कवि बन गए हो। अच्छा अब बताओ कि आज तुम इतने सबेरे कैसे आ गए ? तुम्हारे भैसे कहा है ?"

स्वास्ति ने बताया कि आज उसे छुट्टी मिल गई है क्योकि भैसो को खेत जोतने के लिए ले जाया गया है। केवल एक भैस थी जिसे मै बाड़े मे ही छोड़ आया हू। आज उसे सिर्फ उस एक भैंस के लिए ही घास काट कर ले जानी है। आज रात मै और मेरे भाई-बहन भीषण आधी तूफान मे जग गए थे। तेज वर्षा के कारण टूटी छत टपकने से उनके बिस्तर गीले हो गए। हमने अब तक इतना भीषण आधी-तूफान नहीं देखा था। हमे चिन्ता थी कि वन मे सिद्धार्थ का क्या हाल होगा। तूफान थमने तक हम सब एक-दूसरे से सटे बैठे रहे और उसके बाद ही सो सके। जब दिन निकला तो स्वास्ति हसिया और बहगी का बाम लेने पशुओ के बाड़े मे गया और वहा से सीधा भागा-भागा यहा आया ताकि देख सके कि रात की वर्षा के बाद सिद्धार्थ ठीक-ठाक तो है।

सिद्धार्थ ने स्वास्ति का हाथ पकडा और कहा-"यह मेरे जीवन का सर्वाधिक प्रसन्नता का दिन है। अगर तुम्हारे लिए सभव हो तो सब बच्चो को लेकर आज दोपहर को पीपल वृक्ष के पास आ जाना। अपने भाई-बहिनो को लाना मत भूलना। लेकिन पहले भैंसो के लिए आवश्यक कुशा काट लो।"

स्वास्ति प्रसन्नता के साथ लौट पडा और सिद्धार्थ सूर्य-किरणो से स्नात नदी तट पर धीरे-धीरे पग रखते हुए भ्रमण करने लगे।

अध्याय उन्नीस

सचेतावस्था की आवश्यकता

जब सुजाता सिद्धार्थ के लिए दोपहर मे भोजन लाई तो उसने देखा कि वे पीपल के पेड के नीचे बैठे प्रभाती सूर्य के समान सुन्दर दिख रहे थे। उनके मुख-मडल एव काया से शाति, आनद और सौमनस्यता की किरणे फूट रही थीं। उसने सिद्धार्थ को पीपल वृक्ष के नीचे कुलीनता और आभिजात्य से युक्त बैठे हुए सैकड़ो बार देखा था लेकिन आज उनकी बैठने की मुद्रा ऐसी थी जैसे बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया हो। सिद्धार्थ की ओर देखते ही सुजाता को अनुभव हुआ कि उसके समस्त कष्ट और चिन्ताए विलुप्त हो गई है। मद-मद वासन्ती पवन के समान प्रसन्नता उसके हृदय मे भर गई। उसे लगा, जैसे उसे इस पृथ्वी पर कुछ भी प्राप्तव्य नहीं है, सृष्टि मे सभी कुछ अच्छा एव लाभकर है और अब किसी की चिन्ता या हताशा का कोई कारण नही रह गया है। सुजाता कुछ पग बढ़कर आगे गई और सिद्धार्थ के समक्ष भोजन रखा। उसने उनको नमन किया। उसे लगा जैसे शाति और आनद की लहरे सिद्धार्थ से प्रस्फुटित होकर उसके अपने हृदय मे समा गई हो।

सिद्धार्थ ने उसकी ओर मुस्कराकर देखते हुए कहा—"यहा, मेरे निकट आकर बैठो। पिछले महीनो तुम मेरे लिए भोजन और जल लाई, इसके लिए धन्यवाद। आज का दिन मेरे लिए सर्वाधिक प्रसन्नता का दिन है क्योकि कल रात मुझे सद्धर्म का मार्ग मिल गया है। तुम भी इस प्रसन्नता का आनद अनुभव करो। भविष्य मे यहा से जाकर अन्य लोगो को भी इस सद्धर्म की शिक्षा दूगा।"

सुजाता ने आश्चर्य से उनकी ओर देखा, "आप चले जाएगे ? आपके कहने का अर्थ है कि आप हमे छोड़ जाएगे ?"

सिद्धार्थ ने करुणापूर्ण स्मिति के साथ कहा, "हा, मुझे जाना ही चाहिए। लेकिन मैं तुम वच्चो को त्याग नहीं सकता। जाने से पहले मैं तुम लोगो को वह मार्ग बताऊगा जो मैंने खोजा है।"

सुजाता इस कथन से आश्वस्त नहीं हुई। वह उनसे कुछ प्रश्न करे, उससे पहले ही वह बोल उठे, "तुम बच्चो के साथ मैं यहा कुछ दिन रहूगा जिससे अपने प्राप्त ज्ञान की चर्चा तुम्हारे साथ रहकर कर सकू। उसके बाद ही मैं अगले मार्ग पर पग बढ़ाऊगा। किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मैं तुम लोगो को सदा के लिए छोड़ जाऊगा। समय-समय पर मैं तुम वच्चो से मिलने आता रहूगा।"

सुजाता को इससे कुछ राहत मिली। उसने केले का पत्ता खोलकर भोजन सामने रखा। जव वह भोजन कर रहे थे तो वह उनके समीप चुपचाप बैठी रही। वह देख रही थी कि किस प्रकार सिद्धार्थ ने चावल को पत्ते पर फैलाया और उसमे तैलचूर्ण युक्त नमक मिलाया। उसका हृदय आनद से गद्गद हो रहा था जिसकी अभिव्यक्ति सभव नहीं थी।

भोजन समाप्त करके सिद्धार्थ ने उसे घर लौट जाने को कहा और बताया कि मै आज तीसरे पहर गाव के वच्चो से वन में मिलना चाहता हू।

उनके वताए समय पर वहुत से वच्चे आए जिनमे स्वास्ति के भाई-वहिने भी थीं। सभी वच्चे नहा-धोकर साफ वस्त्र पहने हुए थे। लड़कियो ने अपनी सवसे प्यारी साडिया पहन रखी थीं। वच्चो मे फूलो के समान ताजगी और रग-विरगापन था। वे सव पीपल वृक्ष के नीचे सिद्धार्थ के पास घेरा बनाकर वेठ गए।

सुजाता अपने साथ एक टोकरी मे नारियल और ताड़गुड़ की वट्टिया उपहारस्वरूप लाई थी। वच्चो ने नारियल की गिरी निकाल कर ताडगुड के साथ स्वाद ले-लेकर खाई। नद वाला और सुभाष अपने साथ टोकरी भर मिट्टे (सतरे के समान फल) लाया था। जव सिद्धार्थ वच्चो के साथ वैठे तो पूर्ण आनद की अवस्था मे थे। रूपक ने पीपल के एक पत्ते पर रखकर नारियल की गिरी और ताड़गुड़ उनको प्रस्तुत किया। नन्द वाला ने उनको एक मिट्टा भेट किया। सिद्धार्थ ने उनके उपहार ले लिए और वच्चो के साथ खाने लगे।

वे सव लोग अभी खाने मे ही व्यस्त थे कि सुजाता ने उठकर घोपणा की कि "मित्रो, आज का दिन हमारे गुरुदेव के जीवन का सर्वाधिक हर्षप्रद दिन है। उन्हे सवोधि प्राप्ति हो गई है और उन्होने सद्धर्म का महान मार्ग
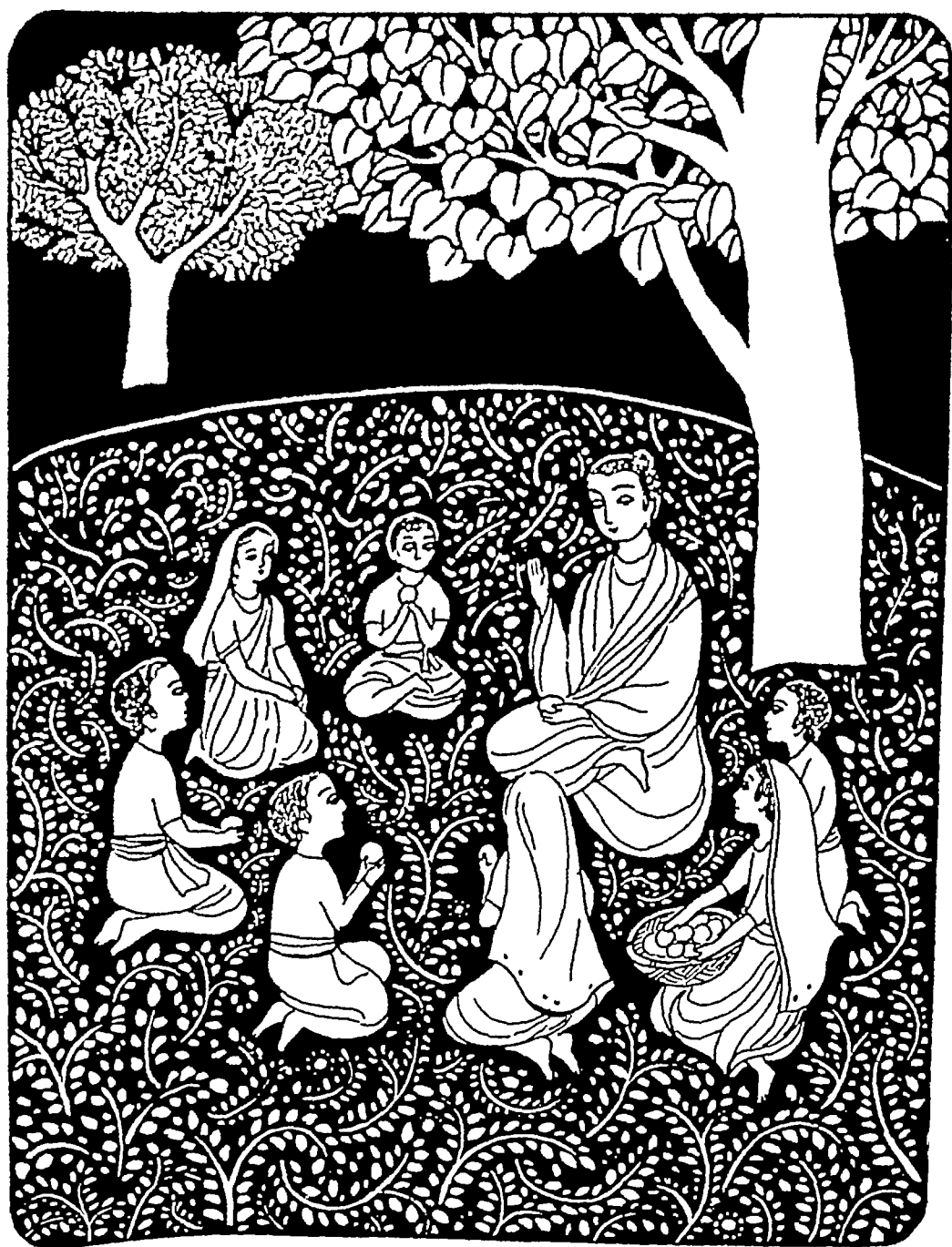
बच्चे सचेतावस्था मे मिठ्ठों की टोकरी एक दूसरे की ओर बढ़ाते हुए

खोज लिया है। मैं समझती हू कि यह दिन मेरे लिए भी वहुत महत्त्वपूर्ण दिन है। हमे आज का दिन महान हर्षोल्लास का दिन समझना चाहिए। आज हमे अपने गुरुदेव की ज्ञान-प्राप्ति का उत्सव मनाना चाहिए। गुरुदेव आपको सद्धर्म का महान् मार्ग मिल गया है। हम जानते हैं कि आप हमारे साथ सदैव नहीं रह सकते। कृपया हमे उन वातो की शिक्षा दीजिए जिन्हे हम वालक समझ सके।"

सुजाता ने अपना आदर और भक्ति-भाव व्यक्त करने के लिए हाथ जोड़े और नमन किया। नन्द वाला तथा अन्य वच्चो ने भी हाथ जोड़कर पूर्ण निष्ठा के साथ गुरुदेव के समक्ष नमन किया।

सिद्धार्थ ने विना वोले ही, वच्चो को वैठने का सकेत किया और कहने लगे, "तुम सभी समझदार वच्चे हो और मुझे विश्वास है कि मैं तुम्हे जो कुछ वताऊगा, उसको समझोगे और उस पर अमल करोगे। जो महान सद्धर्म मार्ग मैने खोजा है, वह वहुत गूढ़ और सूक्ष्म है लेकिन जो भी इस ओर अपना हृदय और चित्त लगाएगा, वह इसे समझ सकता है और उस पर चल सकता है।

"वच्चो, जव तुम मिट्ठे को छीलकर खाते हो तो उसे सचेतावस्था के साथ भी खा सकते हो और विना जागरूक रहे भी। सचेत होकर मिट्ठा खाने का क्या अर्थ हे ? जव तुम मिट्ठा खाओ तो तुम भलीभाति समझो कि तुम मिट्ठा खा रहे हो। तुम उसकी गध और स्वाद को पूरी तरह आत्मसात् करो। जव इसका छिलका उतारो तो तुम्हारा ध्यान छिलका उतारने मे हो और जव उसकी एक फाक निकालकर मुह मे डालो तो भी सजग रहो। जव तुम मिट्ठे की गध और मिठास का अनुभव करो तो उस अनुभूति के प्रति भी सचेत रहो। नद वाला ने मुझे जो मिट्ठा दिया है—उसमे नौ फाके है। मैने इसकी हर फाक को पूर्ण जागरूकता के साथ खाया है और पाया है कि यह कितनी मूल्यवान तथा अद्भुत वस्तु है। मै इस मिट्ठे को भूल नहीं सकता और मिट्ठा मेरे लिए एक निश्चित सत्य वन गया है। सचेत होकर मिट्ठा खाने का यही अर्थ है।

"वच्चो, विना सचेतनता के मिट्ठा खाने का क्या अर्थ हुआ ? जव तुम मिट्ठा खा रहे होते हो तो नहीं जानते कि मिट्ठा खा रहे हो। तुम मिट्ठा की मधुर गध और मीठे स्वाद का अनुभव ही नहीं कर पाते। जव तुम मिट्ठे का छिलका उतार रहे होते हो तो जानते ही नहीं कि मिट्ठे का छिलका उतार रहे हो। या उसकी एक फाक निकालकर मुह मे डालते हो तो तुम

जानते ही नहीं कि तुम उसकी फाक निकाल कर मुह मे डाल रहे हो। जव उस मिट्ठे की सुगध उठती है या उसका मिठास तुम ग्रहण करते हो तो तुमको पता ही नहीं होता कि तुम उसकी गध या स्वाद का अनुभव कर रहे हो। इस प्रकार मिट्ठा खाने से तुम उसकी मूल्यवान तथा अद्भुत प्रकृति को समझ ही नहीं पाते। यदि तुम सचेत नही हो कि तुम मिट्ठा खा रहे हो तो वह मिट्ठा तुम्हारे लिए एक सत्य नही वन सकता। यदि वह मिट्ठा सत्य नहीं है तो उसे खाने वाले की भी सत्य-स्थिति नहीं है। वच्चो, यह अचेत-रूप से मिट्ठा खाना है। "वच्चो, सचेत होकर मिट्ठा खाने का अर्थ है कि तुम वास्तव मे उसके सपर्क मे हो। उस समय बीते हुए कल या आगामी कल के विचारो मे खोए हुए नहीं हो वल्कि पूरी तरह इस क्षण को जी रहे हो। चेतन जागरूकता का अर्थ है वर्तमान के इस क्षण को पूर्णता के साथ जीना जिसमे तुम्हारा चित्त और शरीर इस समय यहा हो।

"सचेतावस्था का अभ्यास करने वाला व्यक्ति इस मिट्ठे मे वे चीजे देख सकता है जिन्हे अन्य लोग देखने मे असमर्थ होते है। सचेत व्यक्ति मिट्ठे का पेड़ देख सकता है, वसन्त ऋतु मे मिट्ठे को फलता देख सकता है, उस धूप और वर्षा को देख-समझ सकता है, जिससे मिट्ठे का पोषण होता है। और गहराई से देखने पर वह उन हजार बातो को भी जान सकता है, जिनके परिणामस्वरूप मिट्ठा पककर तैयार होता है। इस मिट्ठे को देखकर चेतनावस्था का अभ्यास करने वाला सृष्टि की अद्भुतताओ को समझ सकता है कि किस प्रकार समस्त चीजे एक-दूसरे के प्रति क्या क्रिया-प्रतिक्रिया करती है। वच्चो, हमारा जीवन भी इस मिट्ठे की भाति है। जिस प्रकार मिट्ठे की फाके है, उसी प्रकार प्रतिदिन के चौवीस घटे होते हैं। एक घटा मिट्ठे की एक फाक के समान है। दिन के चौवीस घटो को जीना इस मिट्ठे की सभी फाके खा लेने के समान है। मैने जो मार्ग खोजा है, उसके अनुसार दिन के प्रत्येक घटे को सचेतावस्था के साथ जीना है जिसमे चित्त और शरीर सदैव वर्तमान क्षण पर केन्द्रित हो। इसके विपरीत जीना अचेतावस्था मे जीना है। यदि हम अचेतावस्था मे जी रहे होते हैं तो हम जानते ही नहीं कि हम जी रहे हैं। हम जीवन का पूर्ण अनुभव इसी कारण नहीं कर पाते क्योंकि हमारा चित्त और शरीर वर्तमान क्षण को पूर्णता के साथ जीता ही नही।"

गौतम ने सुजाता की ओर देखा और उनका नाम पुकारा।

"जी, गुरुदेव !" सुजाता ने हाथ जोड़े।

"जो व्यक्ति सचेतनता की अवस्था मे जीता है, तुम्हारे विचार से वह अधिक गलतिया करेगा या कम ?"

"आदरणीय गुरुदेव, सचेतन व्यक्ति कम त्रुटिया करेगा। मेरी माता जी सदैव कहती हैं कि लड़की को इस वात का ध्यान रखना चाहिए कि वह कैसे चलती है, कैसे खड़ी होती है, कैसे वोलती और हसती है तथा कैसे काम करती है जिससे वह ऐसे विचारो, शब्दो और कार्यो से बच सके जो स्वय उसे या और लोगो को आहत कर सकते हो।"

"विलकुल ठीक। सचेतावस्था मे रहने वाला व्यक्ति जानता है कि वह क्या सोच रहा है, क्या कह रहा और क्या कर रहा है। ऐसा व्यक्ति उन विचारो, शब्दो या कार्यों से वच सकता है जिनसे उसे स्वय तथा दूसरो को कष्ट हो।

"वच्चो, सचेतावस्था मे जीने का अर्थ है—उस क्षण-विशेष मे जीना। तव वह जान रहा होता है कि उसके अपने व्यक्तित्व मे और आसपास क्या हो रहा है। यदि वह इसी अवस्था मे जीता रहता है, तो गहराई से यह समझने मे सक्षम होता है कि वह स्वय क्या है और आस-पास क्या-कुछ है। इस ज्ञान से सहनशीलता और प्रेम का उदय होता है। जब सभी प्राणी एक-दूसरे को ठीक से समझते है तो वे एक-दूसरे को स्वीकार करते हैं और प्रेम करने लगते है। उस अवस्था मे ससार मे अधिक कष्ट नहीं रह जाते। स्वास्ति, तुम्हारा विचार क्या है ? यदि लोगो के हृदय मे परस्पर ज्ञान नहीं हो तो क्या वह आपस मे प्रेम कर सकेगे ?"

"आदरणीय गुरुदेव, ज्ञान के विना प्रेम होना तो कठिन है। इससे मुझे अपनी वहिन भीमा के साथ घटित घटना स्मरण हो आई है। एक बार वह पूरी रात रोती रही तो मेरी वहिन वाला का धैर्य चुक गया और उसने भीमा को थप्पड़ लगा दिया। इससे भीमा और भी जोर-जोर से रोने लगी। मैंने भीमा को गोद मे ले लिया तो मुझे लगा कि इसे हल्का-हल्का वुखार हो गया है। वुखार है तो जरूर सिर मे दर्द हो रहा होगा। मैंने वाला को वुलाया और कहा कि इसके माथे पर हाथ रखो। जब उसने ऐसा किया तो वह तुरन्त समझ गई कि भीमा रो क्यो रही है। उसकी आखो मे सहृदयता भर आई। उसने भीमा को गोदी मे ले लिया और प्यार से लोरिया सुनाने लगी। भीमा ने रोना वद कर दिया हालांकि उसे उस समय भी वुखार वना हुआ था। आदरणीय गुरुदेव, यह इसलिए सभव हुआ क्योंकि वाला को यह ज्ञान

हो गया था कि भीमा परेशान क्यो हो रही है। इसलिए मै समझता हू कि ज्ञान के विना प्रेम करना सभव नही।"

"स्वास्ति, विलकुल ठीक कहा। जव परस्पर समझ होती है, तभी प्रेम होना सभव होता है। प्रेम के द्वारा ही स्वीकार-भाव आता है। वच्चो, सचेतावस्था मे रहने का अभ्यास करो। इससे तुम्हारी समझ-वूझ मे गहराई आएगी। तभी तुम स्वय को समझ सकोगे, और व्यक्तियो तथा अन्य वातो का भी ज्ञान प्राप्त कर पाओगे। और तव तुम्हारा हृदय प्रेमपूर्ण होगा। यही वह अद्भुत मार्ग है जो मैने खोजा है।"

स्वास्ति ने हाथ जोड़कर निवेदन किया-"आदरणीय गुरुदेव, क्या हम इस मार्ग को 'सवोधि का मार्ग' कह सकते है ?"

सिद्धार्थ मुस्कराकर वोले-"निश्चय ही हम इसे सवोधि का मार्ग कह सकते हैं। मुझे यह नाम वड़ा अच्छा लगा सवोधि का यह मार्ग पूर्ण आत्म-जागृति की दिशा मे ले जा सकता है।"

सुजाता ने हाथ जोड़कर कुछ कहने की अनुमति चाही। "आप पूर्ण जागृत व्यक्ति है जो यह मार्ग-निर्देश कर सकता है कि सचेतावस्था मे कैसे जीवन व्यतीत किया जा सकता है। क्या हम आपको 'पूर्ण जागृत व्यक्ति' कह सकते हैं ?"

सिद्धार्थ ने स्वीकृतिसूचक सिर हिलाकर कहा-"इससे मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।"

सुजाता की आखे चमक उठीं और उसने आगे कहा कि मागधी मे जागृति को 'वुध' कहते हैं। मागधी मे जागृत व्यक्ति को 'वुद्ध' कहेगे। हम लोग आपको 'वुद्ध' सज्ञा से ही सवोधित करेगे।"

सिद्धार्थ ने सिर हिलाकर हामी भरी। सभी वच्चे प्रसन्नता से भर उठे। वाल-वर्ग मे सवसे अधिक आयु के चौदह वर्षीय नलक ने कहा, "आदरणीय वुद्ध, सवोधि के मार्ग के सबध मे आपकी शिक्षा पाकर हम बहुत प्रसन्न हुए है। सुजाता ने हमे बताया है कि पिछले छः महीनो से आप इस पीपल-वृक्ष के नीचे ध्यान-साधना करते रहे हैं और बीती रात को ही आपने सबोधि का महान मार्ग प्राप्त कर लिया है। आदरणीय वुद्ध, इस समूचे वन-प्रदेश मे यह पीपल वृक्ष सबसे सुदर है। क्या हम इसे 'बोधिवृक्ष' कह सकते हैं। वोधि शब्द उसी धातु से वनता है, जिससे 'वुद्ध' शब्द निष्पन्न होता है।"

गौतम ने सिर हिलाकर हामी भरी। उन्हे भी इससे प्रसन्नता हो रही

थी। उन्हे यह कल्पना भी न थी कि वच्चो की इस गोष्ठी मे वच्चे उनके मार्ग, स्वय उनको और इस महान वृक्ष को विशेष सज्ञाओ से अभिहित कर देगे। नन्द वाला ने करवद्ध प्रार्थना की कि अव अधेरा हो चला है और हमे अपने-अपने घर लौट जाना चाहिए। किन्तु हम शीघ्र ही आपके पास अधिक शिक्षा प्राप्त करने अवश्य आएगे।"

सभी वच्चे उठ खडे हुए और उन्होने हाथ जोड़कर वुद्ध का धन्यवाद किया। प्रसन्न पक्षियो की चहचहाहट के समान ये वच्चे आपस मे वातचीत करते हुए रास्ते पर चलते जा रहे थे। वुद्ध भी प्रसन्न थे। उन्होने निश्चय किया कि वह इस वन मे कुछ समय और विताएगे जिससे वे ऐसे उपाय खोज सके कि किस प्रकार इस सवोधि के वीज लोगो के हृदयो मे वो सके और स्वय भी उस महान शाति और आनद को आत्मसात् करने का समय पा सके जो उन्हे सद्धर्म का मार्ग खोज लेने से प्राप्त हुआ है।

अध्याय बीस

हिरण की योनि

प्रतिदिन बुद्ध नैरजना नदी मे स्नान करते। नदी के किनारे और उनके अपने ही चलने से बने मार्ग पर चलित ध्यान साधना करते। कभी वह बहती नदी के तट पर और कभी बोधिवृक्ष के नीचे बैठकर समाधि लगाते। वृक्ष पर हजारो पक्षी अपना कल-नाद करते होते। उन्हे अपना वचन याद आया। वह समझते थे कि उन्हे वापस कपिलवस्तु लौट जाना चाहिए, जहा न जाने कितने लोग उनके सद्धर्म मार्ग की खोज कर लेने के समाचार की प्रतीक्षा कर रहे होगे। उन्हे राजगृह मे मिले युवराजा बिम्बिसार की भी याद आई। उनके पहले के पाच सह-तपस्वी भी स्मरण आ रहे थे। वह जानते थे कि इनमे प्रत्येक मे शीघ्र ही मुक्ति प्राप्त कर सकने की क्षमता है। बुद्ध उनको खोज लेना चाहते थे। निस्सदेह वह आस-पास मे ही कहीं रह रहे होगे।

बुद्ध के लिए सरिता, आकाश, चाद-तारे, पर्वत, वन, घास की एक-एक पत्ती और मिट्टी का कण-कण परिवर्तित हो चुका था। वह जानते थे कि सद्धर्म का मार्ग खोजने मे उन्होने जो लम्बा समय व्यतीत किया, वह व्यर्थ नहीं गया। समस्त परीक्षाओ और कठिनाइयो के कारण ही वह वास्तव मे अपने हृदय मे सद्धर्म मार्ग का मर्म खोजने मे समर्थ हुए थे। प्रत्येक चेतन प्राणी मे वह हृदय विद्यमान है जिसके माध्यम से वह मुक्त चेतना की प्राप्ति कर सकता है। उस चेतन प्रकाश के बीज प्रत्येक के हृदय मे विद्यमान होते हैं। चेतन प्राणियो को चेतना का प्रकाश अपने से बाहर खोजने की आवश्यकता नही क्योकि सृष्टि का समस्त ज्ञान और शक्ति तो उनके भीतर ही समाहित है। यही बुद्ध की महान खोज थी और सभी के हर्षित होने का कारण भी।

वच्चे प्राय उनसे मिलने आ जाया करते थे। बुद्ध इस बात से प्रसन्न थे। मुक्त चेतना के मार्ग को सहज-स्वाभाविक भाषा मे दूसरो को समझा पाना सभव है। देहात के निर्धन वालक जिन्होने विद्यालय मे कभी शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, वे भी उनकी शिक्षाओ को समझ सकते थे। इससे उन्हे वहुत प्रोत्साहन मिला।

एक दिन वच्चे टोकरी भरे मिट्ठे लेकर आए। वे चेतन भाव से मिट्ठे खाकर दिखाना चाहते थे, जिससे वे वुद्ध द्वारा दी गई पहली शिक्षा का अभ्यास कर सके। सुजाता ने गरिमापूर्वक प्रणत होकर वह टोकरी उनके सामने कर दी। उन्होने हाथ जोडे और एक मिट्ठा उठा लिया। सुजाता ने टोकरी स्वास्ति की ओर वढा दी जो वुद्ध के समीप ही बैठा था। उसने भी हाथ जोड़े और एक मिट्ठा ले लिया। इसके वाद उसने वारी-वारी से सबके सामने टोकरी वढाई जिससे सवने एक-एक मिट्ठा ले लिया। वह बैठ गई और हाथ जोड़ने के पश्चात् एक मिट्ठा खुद उठा लिया। सभी बच्चे शातिपूर्वक बैठे थे। बुद्ध ने उनसे कहा कि वे अपनी श्वास-प्रश्वास पर ध्यान करे और मुस्कराए। तव उन्होने मिट्ठे को अपने वाए हाथ मे लेकर ऊपर उठाया और उसे बड़े ध्यान से देखा। वच्चो ने उनके उदाहरण के अनुसार कार्य किया। उन्होने धीरे-धीरे मिट्ठे का छिलका उतारा और वच्चो ने अपने-अपने मिट्ठो को छीला। गुरु और शिष्यगण अपने-अपने मिट्ठे का, मौन सचेतनता के साथ आनद ले रहे थे। जव सभी ने अपने-अपने मिट्ठे खा लिए तो वाला ने सारे छिलके उठा दिए। वच्चो को सचेत होकर मिट्ठे खाने मे वहुत आनद आया। बच्चो के साथ यह अभ्यास-प्रक्रिया आरभ करके वुद्ध को भी वहुत हर्ष हुआ।

तीसरे पहर जव वच्चे बुद्ध के पास आए तो उन्होने प्रदर्शन करके बताया कि किस भाति विना हिले-डुले वैठना है और प्राणायाम करके, अवसाद या क्रोध की अवस्था मे चित्त को किस प्रकार शात करना है। अपने चित्त और शरीर को ताजगी देने के लिए चलते-चलते कैसे ध्यान किया जाता है, यह भी उन्होने सिखाया। उन्होने वताया कि किस प्रकार दूसरो को और स्वय अपने को ध्यान मे देखना है ताकि वे गहनता से देख सके, समझ सके और प्रेम कर सके। उन्होने जो कुछ सिखाया, उसे वच्चे भली प्रकार समझ गए।

नन्द वाला और सुजाता ने नया अग वस्त्र सिलने मे पूरा दिन लगा दिया था जिससे वे उसे वुद्ध को उपहार मे दे सके। उस चीवर का रग वैसा ही ईंटिया लाल था जैसा वुद्ध के पुराने वस्त्र का था। जव सुजाता

हम सब उम काल मे भी विद्यमान थे जब पृथ्वी पर न तो मनुष्य था, न पक्षी ओर न म्तनपायी प्राणी। उस समय समुद्र के भीतर केवल पौधे, वृक्ष तथा हरियाली ही पृथ्वी के ऊपर थी। उन दिनो हम लोग पत्थर, ओस और पौधो के रूप मे थे। उसके वाद हमने पक्षियो, सभी प्रकार के पशुओ और अन्त मे मानव का जीवन प्राप्त किया। इस समय हम साधारण मानव की स्थिति से कुछ उच्च स्तर पर है। धान के पौधे, फलदायी वृक्ष, सरिताए और वायु भी हमी हैं क्योंकि इनके बिना हमारा जीवन सभव नहीं। बच्चो, जब तुम चावल के पौधो, नारियल, मिट्टा और जल आदि को देखते हो तो तुम्हे स्मरण रखना चाहिए कि अपने जीने के लिए हमे बहुत-सी वस्तुओ और प्राणियो पर निर्भर रहना पड़ता है। वे अन्य प्राणी भी तुम्हारा ही भाग हे। यदि तुम यह सब अनुभव कर सको तो तुम्हे सच्चे ज्ञान और प्रेम की अनुभूति हो सकेगी।

"जो कथा मै सुनाने जा रहा हू, वह यद्यपि हजारो वर्ष पहले घटित हुई थी किन्तु यह सहज ही इस क्षण मे भी घटित हो सकती है। सावधानीपूर्वक मेरी कथा सुनो और यह समझने का प्रयास करो कि आप मे और इस कथा के पशु-पक्षियो मे कुछ समानता है अथवा नहीं।"

इसके वाद बुद्ध ने कथा कहनी आरभ की। उस समय बुद्ध हिरण की योनि मे थे जो एक जगल मे रहता जिसमे पीने के लिए स्वच्छ पानी का एक सरोवर भी था। एक कछुआ उस सरोवर मे रहता था और सरोवर के निकट खडे एक वृक्ष पर मैना रहती थी। तीनो मे घनिष्ठ मित्रता थी। एक दिन शिकारी हिरण के पावो के निशान देखता-देखता सरोवर के तट तक आ गया। उसने वहा मजबूत रस्सियो का एक जाल बिछा दिया और जगल के बाहर अपनी कुटिया मे आ गया।

उस दिन बाद मे जब हिरण पानी पीने सरोवर पर आया तो उस जाल मे फम गया। वह जोर से शोर करने लगा तो कछुआ और मैना भी वहा आ गए। उन्होने सोच-विचार किया कि अपने मित्र की सहायता कैसे करे। मना ने कहा, "कछुए भाई, तुम्हारे दात और जबड़े मजबूत है जिनसे तुम तो जाल की रस्सिया काटो और मैं जाकर शिकारी को इधर आने से रोकूगी।" यह कहकर मैना तेजी से उड गई। मैना शिकारी की झोपडी के पास आम के पेड पर जा बैठी। सारी रात वह उसकी प्रतीक्षा करती रही। सवेरा हुआ तो शिकारी तेज चाकू लेकर द्वार से बाहर निकला। शिकारी को देख मैना ने पूरी शक्ति से उसके मुह पर झपट्टा मारा। पक्षी के इस आक्रमण से

शिकारी कुछ क्षण के लिए घवराया और झोपड़ी के भीतर चला गया। बिस्तर पर कुछ क्षणो तक लेटा। वाद मे उठकर वह पीछे के दरवाजे से निकला लेकिन मैना उससे भी चतुर निकली। वह कटहल के वृक्ष की शाखा पर वैठी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। शिकारी को देखते ही उसने पूरी शक्ति से उसके चेहरे पर फिर प्रहार किया। दोवारा पक्षी के झपट्टे से आहत शिकारी ने सोचा कि आज का दिन शुभ नहीं है इसलिए आज घर ही रहना ठीक होगा। कल चलकर वहा देखेगे।

अगले दिन वह जल्दी उठा। उसने चाकू लिया और पक्षी के आघात से वचने के लिए अपने चेहरे को ढक लिया। जव मैना ने देखा कि वह उसके चेहरे पर झपट्टा नहीं मार सकती तो वह तेजी मे उड़कर वन की ओर गई। वह वहा पहुचकर चिल्लाई–"शिकारी आ रहा है।"

कछुआ ने जाल को करीव-करीव काट ही लिया था। एक रस्सी रह गई थी। दो रात तथा एक दिन तक कछुआ लगातार रस्सिया काट रहा था जिससे उसका जवडा लहू-लुहान हो गया था। उसे लगा कि आखिरी रस्सी जैसे लोहे की हो गई हो। तभी उन्हे शिकारी आता दिखाई दिया। भय से ग्रस्त हिरण ने जोर से झटका दिया जिससे वह जाल से मुक्त हो गया। हिरण तो भागकर जगल मे चला गया और मैना उडकर पेड़ पर जा बैठी। लेकिन कछुआ इतना थक चुका था कि वह सरककर सरोवर मे नही घुस पाया। हिरण के भाग जाने से क्रुद्ध शिकारी ने कछुए को ही पकड़ लिया और अपने थैले मे डाल वृक्ष पर ही टाग दिया। इसके वाद वह हिरण की खोज मे चल दिया।

हिरण वहीं झाडियो के पीछे छिपा सब देख रहा था और कछुए की मुसीवत को समझ गया। उसने सोचा–"मेरे मित्रो ने मेरी खातिर अपने प्राणो की वाजी लगा दी थी। अव मुझे भी उनके लिए यही कुछ करना चाहिए।" हिरण झाडी से निकलकर शिकारी के सामने आ गया और लगड़ा-लगड़ा कर धीरे-धीरे चलने लगा।

शिकारी ने समझा कि हिरण थक गया है, चल नहीं पा रहा है। मैं उसे जाकर पकड़ लूगा और अपने चाकू से मार डालूगा।

शिकारी हिरण के पीछे-पीछे भागता गया। हिरण उसे गहरे घने जगल मे ले गया लेकिन शिकारी से इतनी दूरी पर वना रहा कि उसे पकड़ न सके। जव वे सरोवर से वहुत दूर निकल आए तो हिरण ने चौकड़िया भरनी शुरू कर दीं और शीघ्र ही शिकारी की नजरो से ओझल हो गया। लेकिन

शीघ्र ही वह सरोवर के किनारे आया। उसने छलागे लगाकर थैले को वृक्ष की डाल से गिराकर कछुए को बाहर निकाला।

हिरण ने कहा कि "तुम दोनो ने शिकारी के हाथो होने वाली सुनिश्चित मृत्यु से मेरी रक्षा की है। शिकारी शीघ्र ही लौटकर आएगा, इसलिए मैना तुम तो उड़कर जगल मे सुरक्षित स्थान पर जा पहुचो। कछुआ भाई, तुम रेगकर पानी मे उतरकर छिप जाओ। मैं भी छलागे लगाता हुआ जगल मे चला जाऊगा।"

जब शिकारी वापस आया तो उसने अपना थैला नीचे पड़ा पाया जो खाली था। निराश शिकारी ने थैला उठाया और अपना चाकू पकड़े हुए घर की ओर चल पड़ा।

बुद्ध की कथा बच्चे बेहद ध्यान से सुनते रहे। जब बुद्ध बता रहे थे कि शिकारी का जाल काटते-काटते कछुआ के दात घिस गए और जबड़ा लहूलुहान हो गया तो रूपक और सुभाष तो रोने ही लगे थे। बुद्ध ने बच्चो से प्रश्न किया—"अच्छा बच्चो, यह बताओगे कि जब पिछले किसी जन्म मे मै हिरण था तब क्या तुममे से कोई कछुआ था ?"

इसके उत्तर मे सुजाता सहित चार बच्चों ने हाथ उठाए।

तब बुद्ध ने पूछा कि "तुममे से मैना कौन रही होगी ?"

स्वास्ति ने अपना हाथ उठाया। साथ ही जतीलिका और बाला गुप्ता ने भी हाथ उठाए।

सुजाता ने जतीलिका और फिर बाला गुप्ता की ओर देखा—"यदि उस समय तुम दोनो मैना पक्षी थीं तब तो तुम एक ही प्राणी हुईं। तब एक मैना का दूसरी मैना से झगड़ना पागलपन नहीं है ? क्या हमारी मित्रता मैना, कछुआ और हिरण की भाति प्रगाढ़ नहीं हो सकती ?"

बाला गुप्ता उठकर जतीलिका के पास गई। उसने अपनी सहेली का हाथ अपने दोनो हाथो मे ले लिया। जतीलिका ने बाला गुप्ता को अपनी बाहो मे भर लिया और थोड़ा खिसक कर बाला गुप्ता को अपने पास ही बैठाने की जगह बना ली।

बुद्ध ने मुस्कराकर कहा—"बच्चो, तुमने मेरी कथा को भलीभांति हृदयगम कर लिया है। याद रखो कि अभी मैंने जो कथा सुनाई है, वैसी घटनाए हमारे जीवन मे हर समय घटित होती रहती है।

अध्याय इक्कीस

कमल-सरोवर

बच्चो के घर लौट जाने के बाद बुद्ध 'चलित ध्यान' करने लगे। उन्होने चीवर को नीचे से थोडा-सा उठाकर नदी पार की और दो खेतो के बीच की मेड़ पर चलकर अपने प्रिय कमल-सरोवर तक गए। वहा वह बैठ गए और सुन्दर कमलो को ध्यान से देखने लगे।

जब वह कमल की डंडियो, पत्तो और फूलो को देख रहे थे तो वह कमलो के बढ़ने के विविध चरणो पर विचार करने लगे। कमल की जड़े कीचड मे गड़ी होती हैं। कुछ कमल- नाल पानी के तल से ऊपर नही निकले थे तो कुछ मे मुड़े हुए पत्ते निकलने का प्रयास कर रहे थे। कुछ कमल नालो पर कमल की अनखिली कलिया लगी थीं। कुछ कलियो से फूटकर पुष्पदल झाकने लगे थे और कुछ फूल पूरी तरह से खिले हुए थे। कुछ कमल नालो पर फूलो के पत्ते झड़ गए थे और कमल गट्टे बन गए थे। खिले कमलो मे कुछ सफेद कमल थे, कुछ नीले और कुछ गुलाबी। बुद्ध ने सोचा कि लोग भी कमलो से भिन्न नहीं होते। हर व्यक्ति का अपना-अपना स्वभाव होता है। देवदत्त आनद के समान नहीं, यशोधरा रानी पामिता जैसी नहीं थी और सुजाता, बाला जैसी नहीं थी। लोगो का व्यक्तित्व, गुण, बुद्धि और प्रतिभाए सर्वथा भिन्न-भिन्न होती हैं। इन विभिन्न प्रकार के लोगो के लिए बुद्ध द्वारा खोजे मुक्ति-मार्ग को समझाने की विधिया भी भिन्न होनी चाहिए। गाव के बच्चो को शिक्षा देना इसलिए आनददायक था क्योकि वह उनके साथ सीधे-सादे ढग से बातचीत कर पा रहे थे।

शिक्षण की विभिन्न पद्धतिया अलग-अलग द्वारो के समान थीं जिनसे विभिन्न प्रकार के लोग प्रविष्ट हो सके और उनकी शिक्षाओ को समझ सके। सभी प्रकार के लोगो से प्रत्यक्ष साक्षात्कार से ही 'धर्म द्वारो' का निर्माण

बुद्ध ने चीवर ऊपर करके नदी पार की ओर ध्यान करते हुए अपने प्रिय स्थान कमल सरोवर पहुचे

होगा। ऐसी कोई वनी वनाई पद्धतियां नहीं है जो वोधि वृक्ष के नीचे से चमत्कारी ढग से प्रकट हो जाए। वुद्ध ने समझ लिया था कि 'धर्म-चक्र' के प्रवर्त्तन और लोगो मे मुक्ति-मार्ग के वीज वोने के लिए समाज के वीच जाना परम आवश्यक होगा। सवोधि-प्राप्ति के वाद से उनचास दिन वीत गए थे। अव उरुवेला से चल पडने का समय आ गया था। उन्होने निश्चय किया कि नैरजना नदी के तट के शीतल वन, वोधिवृक्ष और वच्चो से विदा लेकर कल सवेरे निकल पड़ूगा। वह सवसे पहले अपने दो आचार्यो आलार कालाम और उद्रक रामपुत्त के पास जाना चाहते थे। उनको विश्वास था कि उन आचार्यो को मुक्ति का मार्ग प्राप्त करने मे अधिक समय नही लगेगा। इन आदरणीय गुरुओ को मुक्ति-मार्ग पाने मे सहायता देकर वह अपने उन पाच मित्रो को खोजेगे जिन्होने उनके साथ ही शरीर- पीड़न तप किया था। इसके वाद वह मगध जाकर राजा विम्विसार से मिलेगे।

अगले दिन प्रभात वेला मे ही वह नए वस्त्र धारण करके उरुवेला ग्राम गए। तव तक सवेरे का कुहासा समाप्त भी नहीं हुआ था। वह स्वास्ति की झोपडी पहुचे और उस चरवाहे वालक तथा उसके भाई-वहिनो से कहा कि आज विदा की वेला आ गई है। वुद्ध ने हर वच्चे के सिर पर हाथ फेरा और सभी के साथ-साथ सुजाता के घर गए। जव सुजाता ने सुना कि वुद्ध प्रस्थान कर रहे है, तो वह रो पड़ी।

वुद्ध ने कहा, "मुझे चलना ही चाहिए जिससे मैं अपने उत्तरदायित्वो का निर्वाह कर सकू, लेकिन मै वचन देता हू कि जव भी अवसर मिलेगा, मैं तुम लोगो से मिलने आता रहूगा। तुम वच्चो ने मेरी वहुत सहायता की है जिसके लिए मै आभारी हू। मैंने तुम लोगो को जो शिक्षाए दी हैं, उनको याद रखना और उनका अभ्यास करते रहना। यह करोगे तो मै तुमसे अलग कभी नही होऊगा। सुजाता! अव आसू पोछ डालो और मुस्करा कर विदा करो।"

अपनी साड़ी के पल्लू से सुजाता ने आसू पोछ लिए और मुस्कराने की चेष्टा की। उसके वाद वच्चे वुद्ध को गाव के वाहर तक विदा करने आए। वुद्ध जव वच्चो को 'अलविदा' कहने के लिए मुड़े तो उन्होने देखा कि एक युवा सन्यासी उनकी ओर ही वढता हुआ आ रहा है। सन्यासी ने अभिवादन करने के लिए हाथ जोड़े और वुद्ध की ओर जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखने लगा। वहुत देर के वाद उसने कहा-"सन्यासी जी महाराज, आप वहुत आभायुक्त और शात दिख रहे हैं। आपका शुभ नाम क्या है और आपके गुरुदेव कौन है।"

बुद्ध ने उत्तर मे कहा–"मेरा नाम सिद्धार्थ गौतम है। मैंने अनेक गुरुओ से शिक्षा प्राप्त की है किन्तु अव मेरा कोई भी गुरु नहीं है। आपका शुभ नाम क्या है और कहा से पधार रहे हैं ?"

सन्यासी ने उत्तर दिया, "मेरा नाम उपाक है। मैंने आचार्य उद्रक रामपुत्त का शिक्षा-केन्द्र अभी-अभी छोड़ा है।

"आचार्य उद्रक का स्वास्थ्य तो ठीक है ?"

"आचार्य उद्रक का कुछ दिन पहले ही स्वर्गवास हो गया।"

बुद्ध ने दुःख भरी सास ली। आखिरकार, मुझे अपने पूर्व गुरुदेव की सहायता कर पाने का अवसर नहीं ही मिलेगा। इसके वाद उन्होने प्रश्न किया–"आपने कभी आचार्य आलार कालाम से शिक्षा प्राप्त की है ?"

उपाक ने उत्तर दिया, "जी हा, किन्तु वह भी हाल ही मे स्वर्गवासी हो चुके हैं।"

"क्या आपको कौंडन्न नामक सन्यासी को जानने का अवसर मिला।"

उपाक ने कहा–"जी हा, जव मैं आचार्य उद्रक के शिक्षा-केन्द्र मे अध्ययन कर रहा था तो मैंने कौंडन्न और चार अन्य सन्यासियो के विषय मे सुना था। मैंने सुना है कि वे सभी वाराणसी के समीप ऋषिपत्तन के मृगदाय मे माधना कर रहे हैं। गौतम, क्षमा करे तो मैं अपनी यात्रा जारी रखू। अभी मुझे पूरे दिन तक यात्रा करनी है।"

उपाक को विदा करने के लिए बुद्ध ने हाथ जोड दिए। वह उसके वाद वच्चो की ओर मुड़े। "वच्चो, अव मैं वाराणसी की राह लूगा जिससे अपने पाचो मित्रो को खोज सकू। सूर्य चढ़ आया। अव तुम लोग घर लौट जाओ।"

बुद्ध ने विदा लेने के लिए हाथ जोडे। इसके वाद वह नदी के किनारे-किनारे उत्तर की ओर चल दिए। वह जानते थे कि यह मार्ग होगा तो लम्वा किन्तु यात्रा करना सुविधाजनक होगा। नैरजना नदी उत्तर की ओर वह कर गगा मे मिल जाती है। यदि वह गगा के किनारे-किनारे पश्चिम की ओर चलेगे तो कुछ ही दिनो मे पाटलि ग्राम पहुच जाएगे। वहा वह गगा के दूसरे किनारे पर जाकर, काशी राज्य की राजधानी वाराणसी पहुच सकेगे।

बुद्ध जव तक आखो से ओझल नहीं हो गए, वच्चे उनकी ओर निहारते रहे। वच्चे वेहद दुखी और खेद से भरे हुए थे। सुजाता तो रो रही थी और स्वास्ति भी रोना-रोना हो रहा था। किन्तु वह अपने भाई-वहिनो के सामने रोना नहीं चाहता था। वड़ी देर के वाद उसने कहा–"वहिन सुजाता,

अब मुझे अपने भैसो को चराने हेतु ले जाने की तैयारी करनी है। हम सभी घर चले। बाला, याद रखना कि आज रूपक को स्नान कराना है। भीमा को मै लिए जा रहा हू।"

वे आपस मे बिना बोले, चुपचाप नदी के किनारे-किनारे गाव आ गए।

|

मान्य आनद बहुत ही नेक, मिलनसार और असाधारण स्मरण-शक्ति के धनी थे। बुद्ध ने जो-जो देशनाए दी थीं, वे सब ब्यौरेवार उनको याद थीं। भैसो की देख-भाल के जो ग्यारह सूत्र बुद्ध ने बताए थे, वे सारे उन्होने स्वास्ति तथा राहुल को अनुग्रहपूर्वक दोहरा दिए थे। स्वास्ति ने अनुभव किया कि अभी उसने बुद्ध के उरुवेला-प्रवास के समय की जो बाते बताई है, वे आनद को स्मरण हो गई होगी।

जब बुद्ध के उरुबेला-प्रवास की कथा स्वास्ति सुना रहा था तो वह प्रायः भिक्खुनी गौतमी की ओर देख लेता था। उनकी चमकती आखो से विदित होता था कि वह जो कुछ कह रहा था, उसे वह कितने आनद से सुन रही है। उसने इस बात का विशेष प्रयास किया था कि जो भी छोटी-छोटी बाते उसे याद थीं, वे सब सुना दे। उरुवेला के बच्चो के विषय मे बाते सुनकर भिक्खुनी गौतमी को विशेष आनद आया, खासकर, वन मे बुद्ध के साथ, सचेतन अवस्था मे मिट्ठे खाने की बात।

स्वास्ति जो कुछ कह रहा था, उसे सुनकर राहुल को कितना आनद आ रहा था, इसका अनुमान सहज ही मे लगाया जा सकता था। स्वास्ति ने दो दिन तक जो कुछ बताया था, उसके दौरान अस्सजि एक शब्द भी नहीं बोले थे, किन्तु यह स्पष्ट था कि इसमे उनको भी आनद आ रहा था। स्वास्ति को ज्ञात था कि अस्सजि उन पाच मित्रो मे से थे जिन्होने बुद्ध के साथ शरीर-पीड़न तप किया था। स्वास्ति यह जानने के लिए बहुत उत्सुक था कि छः माह तक पृथक रहने के बाद जब बुद्ध उनसे मिले थे तो क्या-क्या गुजरी। किन्तु यह पूछते हुए उसे झेप हो रही थी। भिक्खुनी गौतमी ने उसके मन के भाव समझकर स्वास्ति से कहा, "स्वास्ति क्या तुम अस्सजि से यह सुनना चाहोगे कि जब बुद्ध उरुबेला से चले आए तो उसके बाद क्या हुआ। अब अस्सजि बुद्ध के साथ विगत दस वर्षों से है लेकिन मैं नहीं समझती कि उन्होने कभी भी यह बताया हो कि ऋषिपत्तन के मृगदाय मे क्या कुछ हुआ। मान्य अस्सजि क्या आप यह बताने की कृपा करेंगे

कि बुद्ध द्वारा सर्वप्रथम धर्म-चक्र-प्रवर्तन के अवसर पर और उसके बाद के दस वर्षों मे क्या-क्या हुआ ?"

अस्सजि ने हाथ जोडकर कहा—"भिक्खुनी गौतमी, मुझे मान्य कहकर सबोधित करने की कोई आवश्यकता नहीं। आज हमने भिक्खु स्वास्ति से बहुत कुछ सुन लिया है। अब ध्यान-साधना का भी समय होने ही वाला है। आप सब लोग क्यो न कल मेरी कुटिया मे पधारे और जो भी मुझे स्मरण है, आप लोगो को मै वह सब बताऊगा।"

अध्याय बाईस

धर्म-चक्र-प्रवर्तन

अस्सजि मृगदाय मे तपस्या कर रहे थे। एक दिन जब वह ध्यान लगाए बैठे थे तो उन्होने देखा दूर कोई सन्यासी उनकी ओर आ रहा है। जब वह अजनबी निकट आया तो उन्होने पहचाना कि वह कोई और नहीं, सिद्धार्थ थे। अस्सजि ने शीघ्रता से अपने चारो मित्रो को यह बात बताई।

भद्दिय ने कहा कि–"सिद्धार्थ ने शरीर-पीड़न-तप का मार्ग बीच मे ही त्याग दिया था। उन्होने चावल खाए, दूध पिया और गांव के बच्चो के साथ रहे। उन्होने वास्तव मे हमारे साथ विश्वासघात किया है। मेरा कहना तो यही है कि हमे उनका स्वागत तक नहीं करना चाहिए।" इसी कारण, पाचो मित्र इस बात पर सहमत हो गए कि वे मृगदाय के द्वार तक जाकर उनकी अभ्यर्थना नहीं करेगे। यदि वह स्वय ही चलकर मृगदाय मे आ जाते हैं तो उठकर उनका स्वागत करने का भी निश्चय किया। किन्तु वास्तव मे जो हुआ, वह इससे सर्वथा भिन्न था।

जब सिद्धार्थ मृगदाय के द्वार से प्रविष्ट हुए तो पाचो सन्यासी उनके मुख पर फैले प्रभा-मडल से बहुत ही प्रभावित हो गए और वे सभी तुरन्त उठकर खड़े हो गए। सिद्धार्थ देवोपम आभा-मडल के प्रकाश से जगमगा रहे थे। वह जो भी पग आगे रख रहे थे, उससे उनकी दुर्लभ आध्यात्मिक शक्ति का आभास होता था। उनकी मर्म-भेदिनी दृष्टि से उनके मन से अपमान करने की इच्छा ही तिरोहित हो गई। कौंडन्न (कौंडिन्य) उनकी ओर दौड़ा और जाकर उनका भिक्षा-पात्र अपने हाथ मे ले लिया। महानाम पानी भर लाया ताकि उनके हाथ-पैर धुलाए जा सके। भद्दिय ने एक तिपाही खींच ली जिस पर वह बैठ सके। वप्प ने ताड़-पत्र का पखा हाथ मे ले लिया

जिसमे उनकी हवा कर सके। अस्सजि एक ओर को खड़े हो गए क्योकि उनकी समझ मे ही नहीं आ रहा था कि वह क्या करे।

जव सिद्धार्थ ने अपने हाथ और पैर धो लिए तो अस्सजि को ख्याल आया कि वह उन्हे पीने के लिए ठडे जल की एक कटोरी वढ़ा सकता है। पाचो मित्र सिद्धार्थ के चारो ओर घेरा वनाकर वैठ गए। सिद्धार्थ ने शांतिमय दृष्टि से उन्हे देखा और कहा–"भ्राताओ, मुझे सद्धर्म का मार्ग मिल गया है और में वह मार्ग तुमको दिखाऊगा।"

सिद्धार्थ के शव्दो पर अस्सजि न तो विश्वास कर पा रहे थे, और न अविश्वास। सभवत. और लोगो की भी ऐसी ही अवस्था थी क्योकि वहुत देर तक कोई कुछ नहीं वोला। इसके वाद कौंडन्न बोले–"सिद्धार्थ तुमने शरीर-पीडन तप का मार्ग वीच मे ही छोड दिया था। तुमने चावल खाए, दूध पिया और गाव के वच्चो के साथ समय विताया। तुम कैसे मुक्ति के मार्ग की खोज कर सकते थे ?"

सिद्धार्थ ने कौडन्न की आखो से आखे मिलाकर देखा और पूछा, "मित्र कोडन्न, आप तो मुझे दीर्घकाल से जानते हैं। इस दौरान मैंने कभी आपके समक्ष असत्य भापण किया है ?"

कौडन्न ने स्वीकार किया कि तुम कभी असत्य नहीं बोले। "वास्तव मे सिद्धार्थ, मैंने तुम्हे सत्य के अतिरिक्त कुछ बोलते सुना ही नहीं।"

वुद्ध ने कहा–"तो मित्रो! कृपया सुने। मुझे सद्धर्म का मार्ग मिल गया है और वह मै आपको दिखाऊगा। आप लोग मेरी देशना सुनने वाले प्रथम व्यक्ति होगे। धर्म मात्र चिन्तनजन्य नहीं होता। यह तो प्रत्यक्ष अनुभव का विपय है। पावन मन से मेरी वात सपूर्ण चेतनता के साथ सुनिए।"

वुद्ध की वाणी ऐसे आध्यात्मिक अधिकार से परिपूर्ण थी कि उनके पाचो मित्रो ने अपने हाथ जोड दिए और उनके मुख की ओर ताकने लगे। कौडन्न ने उनकी सवकी ओर से कहा–"मित्र गौतम, हम पर दया करके हमे सद्धर्म की शरण मे लेकर शिक्षा देने की कृपा कीजिए।"

पावनता के साथ वुद्ध ने अपनी देशना आरभ की–"मित्रो, धर्म-पथ के अनुगामी को 'अतियो' से वचना चाहिए। एक छोर तो विपय वासना मे आकठ डूवने का है और दूसरा छोर घोर तपश्चर्या के द्वारा शरीर को कष्ट देने या मूलभूत आवश्यकताओ से भी वंचित करने का है। इन दोनो प्रकार की "अतियों" मे अत मे विफलता ही हाथ लगती है। जो मार्ग मैंने खोजा है, वह मध्य मार्ग (मज्झ मार्ग) है जिसमें दोनो प्रकार की 'अतियों' के लिए

कॉडन्न ने सिद्धार्थ का भिक्षा-पात्र पकड़ा, महानाम जल ले आया, भदिया
ने पीठ आसन रख दिया, वप्प ताड़ का पखा झलने लगा, किन्तु अस्सजि
की समझ में न आया कि वह क्या करे और एक ओर खड़ा हो गया

कोई स्थान नहीं और यह मार्ग ज्ञान, मुक्ति और शांति के पथ पर अग्रसर करने की क्षमता रखता है। यह पवित्र अष्टागिक मार्ग है जिसके माध्यम से सम्यक् ज्ञान, सम्यक् विचार, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्म, सम्यक् जीवन-यापन, सम्यक् प्रयास, सम्यक् चेतना और सम्यक् एकाग्रता सभव होती है। मैंने इस पावन अष्टागिक मार्ग को अपनाया है और ज्ञान, मुक्ति एव शाति की अनुभूति की है।

"भाइयो, इस मार्ग को मैं इसलिए सम्यक् मार्ग कहता हू कि इसमें न तो कष्टो से वचा जाता है और न उसका अस्वीकार किया जाता है बल्कि कष्टो का सीधे सामना किया जाता है ताकि उनसे उबरा जा सके। पवित्र अष्टागिक मार्ग सचेतनावस्था मे जीने का मार्ग है। सतत सचेतनावस्था इसकी आधारशिला है। सचेतनावस्था का अभ्यास करने से चित्त मे इतनी एकाग्रता आ जाती है कि इससे ज्ञान (प्रज्ञा) की प्राप्ति की जा सकती है। सम्यक् एकाग्रता से चेतना, विचारो, वाणी, कर्म, जीवन-यापन और प्रयास की सम्यकता प्राप्त हो पाती है। इस प्रकार जो ज्ञान प्राप्त होता है, उससे कष्टो के हर वधन से मुक्ति मिलती है और सम्यक् शाति और आनद का उदय होता है।

"वन्धुओ, चार आर्य सत्य हैं—दुःखो की विद्यमानता, दुःखो का मूल, दुःखो का अन्त और दुःखों के नाश का उपाय एव मार्ग। मैं इन्हे चार आर्य सत्य कहता हू। प्रथम सत्य है दुःखो की विद्यमानता अर्थात् जन्म, जरा, रोग, मृत्यु शोक, क्रोध, द्वेप, चिन्ता, उद्वेग, भय और निराशा सभी दुःख हैं। प्रियजन का वियोग और अप्रिय जनो से मिलन भी दुःख है। कामनाए, मोह-ममता और जिन पच स्कधो से जीवधारियो का निर्माण हुआ है, वे सभी दुःखमय हैं।

"द्वितीय आर्य सत्य है—दुःखो का मूल। दुःख का मूल कारण है अज्ञान और लोगो द्वारा जीवन विपयक सत्य का दर्शन न कर पाना। सासारिक वस्तुओ की तृष्णा, क्रोध, द्वेप, दुःख, चिन्ता, भय और निराशा की आग मे जीवधारी झुलसते रहते हैं।

"तृतीय आर्य सत्य है—दुःखो का अन्त। जीवन के सच्चे स्वरूप का ज्ञान हो जाने पर प्रत्येक दुःख और शोक का अन्त हो जाता है और इससे शांति तथा आनद का उदय होता है।

"चतुर्थ सत्य है—दुःखों के नाश का उपाय एवं मार्ग। वह मार्ग वही श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग है जिसके विषय मे मैंने अभी वताया था। सचेतनावस्था का सतत् अनुसरण करने मे इस अष्टांगिक मार्ग का पोषण होता है। सतत्

सचेतनावस्था के फलस्वरूप चित्त की एकाग्रता एव ज्ञान-प्राप्ति सभव होती है जिससे आपको प्रत्येक दुःख और कष्ट से मुक्ति मिलती है और शाति एव आनद की अनुभूति होती है। इस मुक्ति-मार्ग की अनुभूति करने मे मै मार्ग-दर्शक वनूगा।"

जव सिद्धार्थ चार आर्य सत्यो का वर्णन कर रहे थे तो कौडन्न को अपने हृदय मे अकस्मात् ही महान प्रकाश उदय होने की अनुभूति हुई। अव तक वह जिस मुक्ति के लिए साधनारत थे, उसका आस्वादन वह कर सके। आनद से उनका मुखमडल प्रभासित हो गया। बुद्ध ने उनकी ओर सकेत करते हुए जोर से कहा-"कौंडन्न तुम्हे संवोधि प्राप्ति हो गई ! तुम्हे संवोधि प्राप्त हो गई !"

कौडन्न ने करवद्ध हो वुद्ध को नमन किया और अत्यधिक आदरपूर्वक वोले- "सम्माननीय गौतम, कृपया मुझे अपने शिष्य के रूप मे स्वीकार कर लीजिए। मैं जानता हू कि आपके निर्देशन मे मैं महान जागृत अवस्था प्राप्त कर सकूगा।"

अन्य चार भिक्खुओ ने भी वुद्ध के चरणो मे गिरकर शिष्य रूप मे अपनाए जाने की प्रार्थना की। वुद्ध ने अपने मित्रो को उठने का सकेत किया। जव वे पुनः अपने-अपने स्थान पर जा विराजे तो वुद्ध वोले-"उरुवेला ग्राम के वच्चो ने मेरा नाम 'वुद्ध' रख दिया था। यदि चाहो तो तुम भी मुझे इसी नाम से पुकार सकते हो।"

कौंडन्न ने कहा-"क्या वुद्ध का अर्थ सवोधि प्राप्त व्यक्ति नहीं है ?"

"हा, यह ठीक है। और उन्होने मेरे सद्धर्म मार्ग को 'सवोधि मार्ग' नाम दिया है। आपका इस नाम के विषय मे क्या मत है ?"

"अद्भुत ! अद्भुत ! !" ये नाम सत्य भी है और सरल भी हम प्रसन्नतापूर्वक इन्हीं नामो का प्रयोग करेगे। जैसा आपने अभी कहा, प्रत्येक दिन सचेतनावस्था मे व्यतीत करना ही अध्यात्म-साधना का आधार है।" पाचो भिक्खु एक मन से गौतम को गुरु मानेगे और उन्हे 'वुद्ध' नाम से ही पुकारा करेगे।

वुद्ध उनको देखकर मुस्कराए। "वधुओ, मुक्त एव सज्ञान आत्मा से साधना करो। तीन महीनो मे ही मुक्ति का फल तुम्हे प्राप्त हो जाएगा।"

अपने पाच मित्रो का मार्ग-दर्शन करने के लिए बुद्ध ऋषिपत्तन मे ठहर गए। उनकी शिक्षा के अनुसार, इन लोगो ने शरीर-पीड़न तप का मार्ग छोड़ दिया। प्रत्येक दिन तीन भिक्खु भिक्षाटन करने जाते और जो भी प्राप्त होता उसे छहो वाट कर खा लिया करते। बुद्ध ने प्रत्येक भिक्खु की ओर अलग-अलग

ध्यान दिया जिससे प्रत्येक भिक्खु अपनी साधना मे शीघ्रता से प्रगति कर सके।

बुद्ध ने उन्हे शिक्षा दी कि प्रत्येक वस्तु सारहीन और अनित्य है। उन्होने शिष्यो से कहा कि पच स्कध सतत प्रवहमान पाच सरिताओ के समान हैं जिनमे पृथक् अस्तित्ववान अथवा स्थायी (नित्य) कुछ भी नहीं है। ये पच स्कध हैं–शरीर, कामनाए, सकल्पनाए, अवधारणाए एव भाव-बोध। इन पच स्कधो पर ध्यान करने से इनका परस्पर और सृष्टि के साथ घनिष्ठ एव अद्भुत सबध दिखने लगता है।

अपनी साधना के द्वारा, उन सभी ने सद्धर्म के मार्ग की अनुभूति कर ली थी। सबोधि प्राप्ति करने वाला प्रथम भिक्खु कौंडन्न था। उसके बाद वप्प और भद्दिय ने अर्हत ज्ञान प्राप्त किया। उसके कुछ समय बाद ही महानाम और अस्सजि ने भी अर्हतत्व की अनुभूति की।

महान आनद के साथ बुद्ध ने उनसे कहा कि अब हमारा एक समुदाय बन गया है जिसे हम अपना 'सघ' कहेगे। यह सघ उन लोगो का वह समुदाय होगा जो परस्पर सद्भाव और सचेतनावस्था मे रहते हो। हमे इस चेतना-जागृति के बीज सभी स्थानो तक ले जाकर लोगो के मनो मे बो देने है।

अध्याय तेईस

धर्म का अमृत

बुद्ध का नित्य नियम था कि वह तड़के उठ जाते और बैठकर ध्यान-साधना करते। उसके वाद वन के वृक्षो के बीच भ्रमण करते समय चलित ध्यान करते। एक दिन जव वह भ्रमण कर रहे थे तो उन्होने बहुत सुदर से व्यक्ति को देखा जो अत्यन्त सुदर वेश-भूषा धारण किए हुए सबेरे के धुधलके मे चला जा रहा है। वुद्ध बड़ी-सी चट्टान पर बैठ गए। इसके बाद सत्ताईस-अट्ठाईस वर्ष का वह युवक चट्टान के समीप से गुजरा। उसे बुद्ध की उपस्थिति का कुछ ज्ञान नहीं था और बड़बड़ा रहा था-"अरुचिपूर्ण । घृणास्पद ! ।"

बुद्ध बोल उठे, "कुछ भी अरुचिपूर्ण नही, कुछ भी घृणास्पद नहीं होता।"

युवक चलते-चलते रुक गया। बुद्ध का स्वर स्पष्ट और शीतलतापूर्ण था। उस युवक ने देखा कि बुद्ध वहा सौम्य प्रसन्न मुद्रा मे बैठे है। उस युवक ने अपने जूते उतारे और बुद्ध के समक्ष भक्ति-भाव से नमन किया। वह स्वयं भी पास की चट्टान पर बैठ गया।

बुद्ध ने पूछा "क्या अरुचिपूर्ण है ? क्या इतना घृणास्पद है ?"

युवक ने अपना परिचय देते हुए कहा कि 'मेरा नाम यश है और मैं वाराणसी के एक सबसे धनी और सम्मानित श्रेष्ठि का पुत्र हू। मैंने अभी तक शान-शौकत तथा आमोद-प्रमोद का जीवन व्यतीत किया है। मेरे माता-पिता ने मेरी हर मरजी पूरी की है और सभी प्रकार की मौज-मस्ती के साधन जुटाए हैं। मेरे पास खासी सपत्ति रही है। हीरे, जवाहरात, धन-सपदा, शराब, नर्तकिया, आमोद समारोह और दावते सभी मे जिया हू, किन्तु यश भावनापूर्ण एव विचारवान युवक था। वह इस आमोद-प्रमोद के जीवन मे घुटन अनुभव करता था और इन सबसे उसे कोई सतुष्टि नहीं मिलती थी।
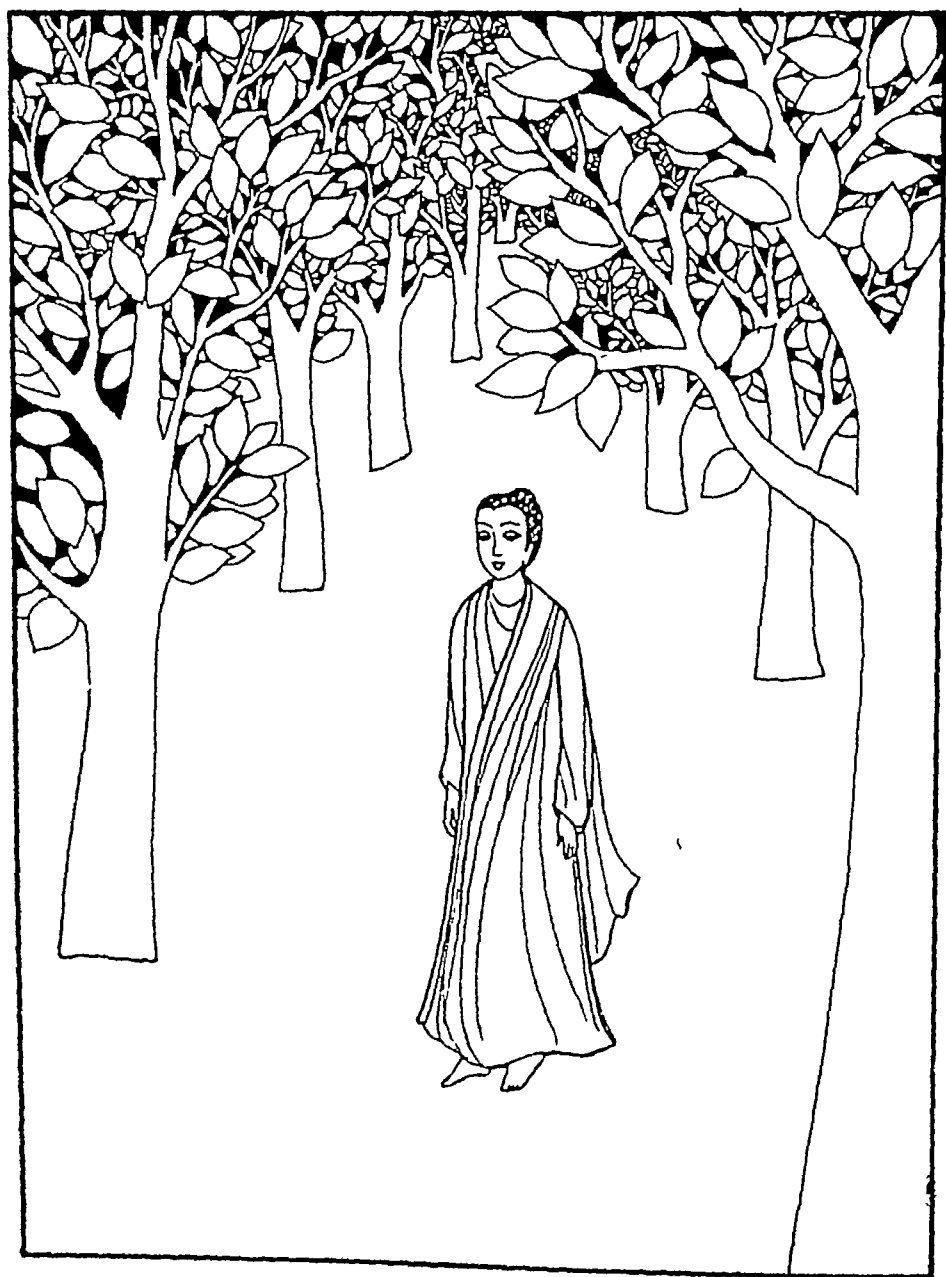
बुद्ध का नियम था कि प्रतिदिन वन के वृक्षो के मध्य ध्यान करते हुए टहले

वह ऐसे व्यक्ति के समान था जिसे खिड़कीविहीन कमरे मे वद कर दिया गया हो और वह ताजी हवा, सादगी भरे सतोषपूर्ण जीवन के लिए छटपटा रहा हो। कल की रात यश के कुछ मित्र एकत्र हुए थे। उन्होने वहुत वढ़िया-वढिया व्यजन खाए, खूव मदिरा पी, सगीत सुना और सुदर युवा नर्तकियो का नृत्य देखा था। रात मे जव उसकी नींद टूटी तो उसने अपने मित्रो और उन नर्तकियो को नींद मे वेहोश निढाल पसरे देखा। उस क्षण उसके मन मे आया कि वह इस प्रकार के जीवन को और अधिक नहीं जी सकता। उसने अपना दुशाला ओढा, जूते पहने और वाहर के द्वार से निकल पडा। उसे पता नहीं था कि उसे कहा जाना है। तमाम रात वह उद्देश्यहीन इधर-उधर घूमता फिरा और सयोग से उसने स्वय को ऋषिपत्तन के मृगदाय मे पाया। अव दिन चढ आया है तो वह वुद्ध के सामने बैठा हुआ था।

वुद्ध ने उसे समझाया कि "यह जीवन तो आधि-व्याधियो से भरा है किन्तु यश, इस जीवन मे वहुत ही अद्‌भुतताए भी है। काम-भोग और इन्द्रियजन्य विपय वासना मे लिप्त होने से शरीर और चित्त दोनो ही अस्वस्थ हो जाते हैं। यदि कामनाओ को त्यागकर तुम सादगी और पूर्णता के साथ जीवन व्यतीत करो तो तुम जीवन की अनेक अद्‌भुतताओ का अनुभव कर सकते हो। यश, तुम अपने चारो ओर दृष्टि फैलाओ। सामने प्रभाती कुहासे से खड़े पेड़ तुम देख रहे हो ? क्या ये सुदर नहीं है ? चद्रमा, तारकगण, सरिताए, पर्वत, सूर्य का प्रकाश, चिड़ियो का गान, झरनो के गिरने की मधुर ध्वनि—यह सव सृष्टि का ऐसा प्रसार है जो हमे अनत आनद प्रदान कर सकता है।

"इन सवसे हमे जो आनद प्राप्त होता है, उससे हमारा चित्त और शरीर दोनो पुष्ट होते हैं। अपनी आखे वद करो और गहरी सास लेकर श्वास को वाहर निकालो। यह श्वसन-क्रिया कुछ बार करो। अब आखे खोलो। अव क्या दिखाई देता है ? वृक्ष, कुहासा, आकाश और सूर्य की किरणे। तुम्हारे अपने ही दोनो नेत्र अद्‌भुत है। तुम इन समस्त अद्‌भुतताओ के सान्निध्य मे नहीं रहे हो इसलिए अपने चित्त और शरीर से घृणा करने लगे हो। कुछ लोग तो अपने चित्त और शरीर से इतनी घृणा कर उठते है कि आत्म-हत्या तक करना चाहते हैं। उन्हे जीवन मे कष्ट ही कष्ट दिखाई देते है। किन्तु सृष्टि की सम्यक् प्रकृति कष्टदायी नहीं है। कष्ट तो हमारी जीवन-पद्धति और जीवन विपयक भ्रात धारणाओ का परिणाम होते है।"

वुद्ध के शब्दो से यश को लगा जैसा उसके तपते हृदय पर शीतल

ओस की बूदे आ गिरी हो। प्रसन्नता से अभिभूत होकर वह बुद्ध के चरणो मे गिर पड़ा और उनसे अनुरोध किया कि मुझे अपना शिष्य बना लीजिए।

बुद्ध ने सहारा देकर उसे उठाया और कहा–"एक भिक्खु को अत्यन्त सादगी और विनम्रता युक्त जीवन व्यतीत करना होता है। उसके पास धन नहीं होता। उसे घास-फूस की झोपड़ी में या वृक्ष के नीचे सोना होता है। उसे भिक्षा में जो भी अन्नादि मिलता है, वही खाता है, और, दिन मे एक बार भोजन करता है। क्या तुम ऐसा जीवन व्यतीत कर सकोगे ?"

"जी गुरुदेव, मैं ऐसा जीवन व्यतीत करके प्रसन्न होऊगा।"

बुद्ध ने आगे कहा कि "भिक्खु को अपना चित्त और शरीर मुक्ति की प्राप्ति मे लगाना होता है, जिसे वह अपनी और समाज की सहायता कर सके। लोगो को कष्ट से मुक्ति दिलाने मे सहायक होने की दिशा मे ही उसके सारे प्रयास केन्द्रित होते हैं। क्या तुम ऐसा करने का वचन देते हो ?"

"जी गुरुदेव, मै ऐसे मार्ग का अनुसरण करने का वचन देता हू।"

"तब मैं तुम्हे अपना शिष्य अगीकार करता हू। हमारे विहार मे शिष्य को 'भिक्खु' कहते हैं। प्रतिदिन तुमको भिक्षाटन करने जाना होगा जिससे अपने शरीर के पोषण के लिए भोजन ला सको, विनम्रता का आचरण सीख सको और अन्य लोगो के सपर्क मे रह सको और तुम उन्हे सद्धर्म का मार्ग दिखा सको।"

उसी समय बुद्ध के पाच मित्र वहा आ गए। यश खड़ा हो गया और प्रत्येक को उसने सादर नमन किया। बुद्ध ने उनसे यश का परिचय कराया और कौंडन्न को देखकर कहा–"यश की इच्छा भिक्खु बनने की है। मैने इसे शिष्य रूप मे अगीकार कर लिया है। कृपया इनको बताओ की चीवर कैसे धारण करना है, भिक्षा-पात्र लेकर कैसे चलना है, प्राणायाम कैसे करना है और बैठकर एव चलते हुए ध्यान-साधना कैसे करनी है।"

यश ने बुद्ध को नमन किया और कौंडन्न के पीछे-पीछे चला गया। वह उसे अपनी कुटिया मे ले गए जहा उन्होने उसके सिर के बाल उतारे और बुद्ध की इच्छानुसार उसे अन्य निर्देश दिए। कौंडन्न ने एक अप्रयुक्त चीवर और एक भिक्षा-पात्र भी यश को दिया।

उसी दिन तीसरे पहर यश का पिता उसको खोजता हुआ वहा आया। सवेरे यश के पिता के आदेश के अनुसार समूचे परिवारजन और परिचर यश को जोरो से खोज कर रहे थे। एक नौकर यश के पद-चिह्नो के अनुसार

चलते-चलते मृगदाय मे आ गया। यहा उसने एक बड़ी चट्टान के पास छोड़े उसके स्वर्ण जटित जूते देखे। पूछताछ करने पर ज्ञात हुआ कि उनका युवा मालिक वहीं कुछ भिक्खुओ के साथ रह रहा है। वह जल्दी ही वापस चला गया जिससे जाकर यश के पिता को इस सवकी सूचना दे सके।

जव यश के पिता आए तो वुद्ध सौम्य मुद्रा मे एक चट्टान पर बैठे हुए थे। उसने हाथ जोड़कर आदरपूर्वक पूछा–"आदरणीय सन्यासी, क्या आपने मेरे पुत्र यश को देखा है ?"

वुद्ध ने पास की चट्टान की ओर सकेत किया और यश के पिता को उस पर वैठने के लिए कहा। उन्होने कहा कि "यश कुटिया मे है और शीघ्र ही वाहर आएगा।"

वुद्ध ने वताया कि आज प्रातः क्या-क्या हुआ। यश के पिता उसे सुनते रहे। वुद्ध ने यश के आतरिक विचारो और आकाक्षाओ के विपय मे समझाया। "यश समझदार और भावनापूर्ण युवक है। उसने अपने हृदय की मुक्ति का मार्ग पा लिया है। अव उसे श्रद्धा, शांति और आनद प्राप्त हो गए है। कृपया उसके इस कृत्य पर प्रसन्न होइए।"

वुद्ध ने यश के पिता को भी वताया कि दुःख और चिन्ताओ को समाप्त करके स्वय अपने को और अपने आस-पास के लोगो को लेकर शाति और आनद के मार्ग पर किस प्रकार चला जा सकता है। वुद्ध जो-जो वचन बोल रहे थे, उनके प्रत्येक शव्द से श्रेष्ठि के मन का वोझ हलका होता जा रहा था। वह उठकर खड़ा हो गया और हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि मुझे भी अपना शिष्य स्वीकार कर लीजिए।

वुद्ध कुछ क्षणो तक मौन रहे। तदुपरान्त वोले–"मेरे शिष्यो का प्रयास होता है कि वे सादगी के साथ सचेतनावस्था मे रहे, हिंसा न करे, पर-स्त्री-गमन न करे, सत्य वोले और मदिरा या उत्तेजक पदार्थों का सेवन न करे जो चित्त को भ्रमित करते है। यदि आप समझते है कि आप इस मार्ग का अनुसरण कर पाएगे तो मै आपको 'उपासक' के रूप मे स्वीकार कर लूगा।"

यश के पिता ने घुटनो के वल प्रणत होकर हाथ जोड़े। "कृपया मुझे अपने सद्धर्म-मार्ग की शरण मे ले लीजिए। इस जीवन का सद्धर्म दिखाइए। मै वचन देता हू कि मै जीवन भर निष्ठापूर्वक आपकी शिक्षाओ का पालन करूगा।"

वुद्ध ने श्रेष्ठि को उठाया। तव तक यश भी वहा आ गया। वह भिक्खु का चीवर पहने हुए था और उसका सिर मुडित था। नया भिक्खु अलभ्य

आनद से मुस्कराया। उसने हाथ जोड़कर अपने पिता को नमन किया। यश का मुख-मडल जगमगा रहा था। उसके पिता ने उसे कभी भी इतनी प्रसन्न मुद्रा मे नहीं देखा था। यश के पिता ने अपने पुत्र को नमन किया और कहा, "घर पर तुम्हारी माता जी तुम्हारे लिए बहुत चिन्तित है।"

यश ने उत्तर दिया-"उनकी चिन्ताए दूर करने के लिए मैं उनसे भेट करने अवश्य आऊगा। लेकिन मैंने गुरुदेव बुद्ध का अनुसरण करने और समस्त प्राणियो की सेवा मे जीवन बिताने का वचन दिया है।"

यश के पिता ने बुद्ध की ओर मुड़कर कहा-"आचार्यवर, कृपया मुझे कल अपने आवास पर आपको तथा आपके भिक्खुओ को भोजन पर आमत्रित करने की अनुमति दीजिए। यदि आप 'आत्म-जागृति' के मार्ग के विषय मे हमे कुछ शिक्षा देगे तो हम स्वय को गौरवान्वित अनुभव करेंगे।"

बुद्ध ने मुडकर यश की ओर देखा। प्रवृज्या प्राप्त नव भिक्खु की आखो मे चमक आ गई। तब बुद्ध ने सिर हिलाकर अपनी स्वीकृति दे दी।

अगले दिन बुद्ध और उनके छः भिक्खुओ ने यश के माता-पिता के यहा भोजन ग्रहण किया। अपने पुत्र को सुरक्षित और आनदित देखकर यश की मा इतनी पुलकित हुईं कि रो पड़ीं। बुद्ध और उनके भिक्खुओ को गद्दीदार कुर्सियो पर बैठाया गया। यश की माताजी ने स्वय भोजन परोसा। जब भिक्खु मौन-भाव से भोजन कर रहे थे तो कोई भी कुछ न बोला – घर के नौकर-चाकर तक चुप रहे। जब भोजन समाप्त हो गया और भिक्षा-पात्र धो लिए गए तो यश के माता-पिता ने बुद्ध को प्रणाम किया और उनके सामने नीचे आसनो पर बैठ गए। बुद्ध ने उपासको की साधना के आधार 'पच शीलो' की शिक्षा उन्हे दीं।

"इसका पहला शील है—'अहिंसा'। प्रत्येक प्राणी मृत्यु से भयभीत रहता है। यदि हम परस्पर समझ और प्रेम का मार्ग सच्चे हृदय से अपनाते हैं, तभी हम इस सिद्धात का पालन कर सकते हैं। हमे मानव जीवन की ही नहीं, पशुओ और प्राणीमात्र के जीवन की भी रक्षा करनी चाहिए। इस नियम का पालन करने से दया भाव और ज्ञान का उदय होता है।

"दूसरा शील है—अचौर्य अर्थात् चोरी नही करनी है। हमे किसी की भी सपत्ति चुराने का अधिकार नहीं है ओर न किसी अन्य के श्रम का लाभ उठाकर धन-प्राप्ति का अधिकार है। हमे ऐसा मार्ग खोजना चाहिए जिससे अन्य लोगो को अपने पैरो पर खडे होने मे सहायता दी जा सके।

"तीसरा शील है—इंद्रिय-भोग मे विरति। अन्य लोगो के अधिकारो और

मान्यताओं का उल्लंघन नहीं करना है। पत्नी सदैव अपने पति के प्रति और पति अपनी पत्नी के प्रति सदैव निष्ठावान रहे।

"चतुर्थ शील है—असत्य-भाषण से विमुखता। ऐसे वचन मत बोलो जिसमे सत्य को तोड़ा-मरोड़ा गया हो या जिससे दो हृदयो मे वैमनस्य या घृणा जागृत हो। जिस बात के विषय मे आप स्वय निश्चित न हो, ऐसी खबर दूसरो को न दे।

"पचम शील है—मदिरा या अन्य उत्तेजक पदार्थ का सेवन न करे।"

"यदि आप इन 'पच शीलो' की भावना के अनुसार जीवन विताएगे तो इससे न केवल आप स्वय कष्टो और जागतिक विकृतियो से बचेगे, वरन् अपने परिवार और अपने मित्रो को भी बचाएगे। आप पाएगे कि जीवन मे प्रसन्नता न जाने कितनी गुनी हो गई है।"

बुद्ध की देशना सुनने पर यश की माता को प्रतीत हुआ जैसे उसके हृदय मे आनद का द्वार खुल गया हो। उसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उसके पति को बुद्ध ने उपासक बनाना स्वीकार कर लिया है। वह बुद्ध के सामने हाथ जोड़कर प्रणत हुई। बुद्ध ने उसे भी 'उपासिका' के रूप मे स्वीकार कर लिया।

इसके उपरान्त बुद्ध और उनके छः शिष्य ऋषिपत्तन वापस लौट आए।

अध्याय चौबीस

प्रवृज्या की प्रक्रिया

यश के भिक्खु वन जाने का समाचार उसके मित्रो के बीच तेजी से फैल गया। उसके घनिष्ठ मित्रो–विमल, सुबाहु, पुन्नाजी और गावमपति–ने निश्चय किया कि वे ऋषिपत्तन मृगदाय मे जाकर उससे मिलेगे। रास्ते मे सुवाहु ने कहा, "यदि यश ने भिक्खु वनने का निर्णय किया है तो उसका गुरु वास्तव मे असाधारण होगा और उन्होने जो मार्ग बताया होगा, वह वहुत उच्च होगा। यश वहुत ही नीर-क्षीर विवेक वाला व्यक्ति हे।"

विमल ने इसका प्रतिकार करते हुए कहा, "इतने सुनिश्चित मत रहो। सभव है कि वह झोक मे आकर भिक्खु बन गया हो और इसका बहुत निर्वाह न कर पाये। छ. महीने या एक साल मे वह उस जीवन को त्यागकर भाग आएगा।"

गावमपति ने असहमति व्यक्त करते हुए कहा–"तुम यश को गभीरता से समझ नहीं पा रहे हो। मैने उसे सदैव पूर्णरूपेण गभीर पाया है। मुझे विश्वास है कि निष्ठापूर्ण विचार के विना वह ऐसा कुछ नहीं करेगा।"

जव वे मृगदाय मे यश से मिले तो यश ने उनका परिचय बुद्ध से कराया, "मेरे ये चारो मित्र वहुत अच्छे हैं। कृपया दया करके इनकी आखे खोल दीजिए जिससे ये भी मुक्ति-मार्ग अपना सके।"

बुद्ध उन चारो से वातचीत करने वैठ गये। पहले तो विमल सर्वाधिक शकालु था किन्तु ज्यो-ज्यो वह बुद्ध की देशना सुनता गया, उतना ही अधिक प्रभावित होता गया। अन्त मे उसने ही अन्य तीनो मित्रो को सुझाव दिया कि हम सब बुद्ध से अनुरोध करे कि वह हमे शिष्य रूप मे स्वीकार कर ले। चारो युवको ने बुद्ध के समक्ष नमन किया। उनकी निष्ठा का अनुमान

लगाने के उपरान्त बुद्ध ने उन्हे वहीं अपना शिष्य बना लिया। उन्होने कौंडन्न से कहा कि आप इन्हे आधारभूत निर्देश प्रदान करे।

यश के सैकड़ो अन्य मित्र भी थे। उन्होने शीघ्र ही सुना कि किस प्रकार यश और उसके चार घनिष्ठ मित्र भिक्खु बन गये है। इनमे से एक सौ वीस युवको ने जिनकी आयु बीस-पचीस वर्षो के बीच होगी, यश के घर के बाहर एकत्र होकर निश्चय किया कि तडके ही वे ऋषिपत्तन मृगदाय जाएगे। यश को उनके आगमन की सूचना दे दी गयी थी, अत. वह उनकी अगवानी करने बाहर ही आ गया। उसने बताया कि वह कैसे भिक्खु बना और तब वह उन सबको बुद्ध देव के दर्शन कराने ले गया।

उन युवको से फिर बुद्ध ने उस सद्धर्म मार्ग के विषय मे बताया जिससे कष्टो का अन्त हो सकता है और शाति एव आनद प्राप्त हो सकता है। उन्होंने अपनी आत्म-मुक्ति की खोज के विषय मे बताया और यह भी कहा कि युवावस्था मे ही उन्होंने भी सद्धर्म का मार्ग खोजने की प्रतिज्ञा की थी। सभी एक सौ बीस युवक सम्मोहित से उनकी देशना सुनते रहे। उनमे से पचास ने तो तत्क्षण भिक्खु बनने का आग्रह किया। अन्य सत्तर युवको में से बहुत से भिक्खु तो बनना चाहते थे किन्तु वे पुत्र, पति या पिता के उत्तरदायित्वो का त्याग नहीं कर सके।

यश ने बुद्ध से निवेदन किया कि इन पचास को तो आप शिष्य रूप मे स्वीकार कर लीजिए। इस निवेदन को बुद्ध ने स्वीकार कर लिया। अति प्रफुल्लित यश ने कहा–"यदि आपकी आज्ञा हो तो कल भिक्षा मागते हुए मैं अपने माता-पिता के घर के पास से निकलू। मैं उनसे अनुरोध करूगा कि क्या वह इन भिक्खुओ के लिए चीवर और भिक्षा-पात्र दान कर सकेगे।"

मृगदाय मे बुद्ध के पास साठ भिक्खु हो गये थे। उस समुदाय के मार्ग-दर्शन के लिए बुद्ध वहा तीन महीने और ठहर गये। इस समय मे सैकड़ो स्त्री-पुरुषो को भी बुद्ध ने शिष्य रूप मे स्वीकार कर लिया।

बुद्ध ने भिक्खुओ को यह अभ्यास करना सिखाया कि अपने शरीर, अपनी भावनाओ, अपनी कामनाओ, मन की अवधारणाओ और भाव-बोध पर कैसे ध्यान केंद्रित करना है। उन्होने सभी वस्तुओ की परस्परावलबी प्रकृति के विषय मे ज्ञान कराया और स्पष्ट किया कि अन्योन्याश्रिता पर ध्यान-साधना करनी कितनी महत्त्वपूर्ण है। उन्होने समझाया कि सभी वस्तुए अपने सृजन, विकास और ह्रास के लिए किस प्रकार एक दूसरे पर निर्भर हैं। सह-वर्द्धन की निर्भरता के बिना किसी भी वस्तु का अस्तित्व नहीं रह सकता। एक

ही वस्तु में सभी वस्तुए समाहित होती हैं। उन्होने कहा कि सह-वर्द्धन की निर्भरता पर ध्यान-साधना करना वह द्वार है, जिससे जन्म-मरण से मुक्ति (निर्वाण) का मार्ग प्रशस्त होता है। इसमे उन स्थिर एव सकीर्ण विचारो को नष्ट करने की शक्ति है जिनके अनुसार यह माना जाता है कि सृष्टि का सृजन ब्रह्मा ने किया है अथवा यह निर्माण पृथ्वी, जल, अग्नि या वायु सरीखे तत्त्वो द्वारा होता है।

मार्ग-निर्देशक के रूप मे बुद्ध अपने उत्तरदायित्वो को भलीभाति समझते थे। वह साठ भिक्खुओ की देख-भाल और मार्ग-निर्देशन एक बड़े भाई के समान करते। वह अपने प्रथम पाच शिष्यो के दायित्वो के निर्वहन मे भी भागीदारी करते। कौंडिन्न बीस युवको को प्रशिक्षण देते थे। भद्दिय, वप्प, महानाम और अस्सजि दस-दस युवको के मार्ग-निर्देशन मे सहायता करते। सभी भिक्खु सद्धर्म मार्ग पर श्रेष्ठ प्रगति कर रहे थे।

जब बुद्ध ने यह देखा तो उन्होने समस्त भिक्खु समुदाय को एकत्र करके कहा-"भिक्खुओ, हम पूर्णतः मुक्त हैं और किसी बधन मे बधे हुए नहीं है। आप लोग सद्धर्म मार्ग को अब जान चुके है। विश्वास के साथ आगे बढिए तो आप बहुत प्रगति कर सकेगे। तुम जब भी चाहो, ऋपिपत्तन से जा सकते हो। मुक्त व्यक्ति की भाति विचरिए और अन्य लोगो को सद्धर्म का मार्ग अपनाने मे भागीदार बनिए। आप मुक्ति और आत्म-जागृति तथा शाति एव आनद के बीज अन्य लोगो के मनो मे बोइए। उनको मुक्ति के उस मार्ग की शिक्षा दीजिए जो आदि से अन्त तक और स्वरूप एव तत्त्व की दृष्टि से सुदर ही सुदर है। धर्म-प्रचार के आपके कार्य से अन्य अगणित लोगो को लाभ होगा। जहा तक मेरी बात है, मैं शीघ्र ही यहा से चल दूगा। मेरी योजना पूर्व की ओर जाने की है। मै बोधि वृक्ष के दर्शन करना और उरुवेला के बच्चो से मिलना चाहता हू। इसके बाद मैं राजगृह मे अपने विशिष्ट मित्र से मिलने जाऊगा।"

बुद्ध के ये वचन सुनकर बड़ी सख्या मे भिक्खु गैरिक चीवर धारण किये और भिक्षा-पात्र हाथ मे लिए सद्धर्म की शिक्षाओ का प्रचार करने के लिए निकल पड़े। ऋपिपत्तन मे केवल बीस भिक्खु रह गये।

शीघ्र ही काशी और मगध राज्यो के बहुत से लोगो ने बुद्ध और उनके भिक्खुओ के विषय मे सुना। उन्हे ज्ञात हुआ कि शाक्य वश के राजकुमार ने सबोधि प्राप्त कर ली है और वह वाराणसी के समीप ऋपिपत्तन मे इस सद्धर्म मार्ग की शिक्षा दे रहे हैं। बहुत से सन्यासी, जिन्होने अभी तक मोक्ष का मार्ग प्राप्त नहीं कर पाया था, वे भी उत्साहित होकर सभी तरफ से

ऋषिपत्तन आने लगे। बुद्ध की देशना सुनकर अधिकाश सन्यासियो ने भिक्खु बनना स्वीकार कर लिया। बुद्ध की शिक्षाओ का प्रचार करने हेतु जो भिक्खु ऋषिपत्तन से गये थे, वे भी बहुत से युवको को साथ लेकर लौटे जो भिक्खु बनने के इच्छुक थे। इस प्रकार बुद्ध के शिष्यो की सख्या बहुत तेजी से बढ़ने लगी।

एक दिन बुद्ध ने भिक्खु सघ को मृगदाय मे एकत्र किया और कहा–"भिक्खुओ, अब यह आवश्यक नहीं रह गया कि हर नये भिक्खुओ को या जो भी यहां भिक्खु बनने आता है, उसे मै ही प्रवृज्या दू। जो लोग भिक्खु सघ मे प्रवेश करना चाहते हैं, वे अपने ग्रामवासियो और सम्बन्धियो के सामने भिक्खु बन जाए और आप लोगो की भाति मै भी यहा रहने या न रहने के लिए मुक्त रहूगा। अबसे आप जब भी निष्ठावान और इच्छुक नये भिक्खु मे मिले तो उसे आप स्वय भिक्खु सघ मे या जहा भी हो, वहीं प्रवृज्या दे दीजिए।

इस पर कौंडन्न उठकर खड़े हो गये और हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि "गुरुदेव हमे बताइए कि हम प्रवृज्या किस प्रकार दे। यह जान लेने पर हम भविष्य मे स्वयं भिक्खुओ को प्रवृज्या दे सकेगे।"

बुद्ध ने कहा–"वैसे ही जैसे मैने पहले किया है।"

अस्सजि ने खड़े होकर कहा कि आपकी उपस्थिति ही इतनी जागृतिपरक है कि किसी प्रकार की औपचारिक प्रवृज्या की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। किन्तु हम लोगो के लिए औपचारिक प्रवृज्या समारोह आवश्यक होगा। बधु कौडन्न सभव है कि आप कोई प्रवृज्या-प्रक्रिया सुझा सके। बोधिसत्व तो हमारे बीच है ही, आवश्यक हुआ तो वह आपके सुझावो मे सशोधन कर देगे।"

कौंडन्न एक क्षण के लिए मौन रहे। इसके बाद वह बोले–"आदरणीय बुद्ध, पहले चरण के रूप मे भिक्खु बनने के इच्छुक व्यक्ति के सिर और दाढ़ी के बालो का मुडन कर दिया जाए। फिर उसे निर्देश दिये जाएं कि वह चीवर कैसे धारण करे। वह परपरानुसार अपना दाया कधा खुला रखे और जो भिक्खु उसे प्रवृज्या दे रहा हो, उसको नमन करे क्योकि उस समय वह बुद्ध का ही प्रतिनिधित्व कर रहा होगा। जिसको प्रवृज्या दी जा रही हो, वह हाथ जोड कर तीन बार इन त्रिरत्नो का उच्चारण करे। "बुद्ध शरणम् गच्छामि", "धम्म शरण गच्छामि" और "सघ शरण गच्छामि।" इसके बाद उसे बुद्ध के सप्रदाय का भिक्खु स्वीकार कर लिया जाएगा। यह तो मेरा सुझाव मात्र है। यदि इसमे कुछ त्रुटि हो तो गुरुवर कृपया इसे सुधार दे।"

बुद्ध ने उत्तर देते हुए कहा–"भाई कौंडन्न, यह तो सर्वोत्तम विधि है। त्रिरत्नो का तीन बार उच्चारण करने और प्रवृज्या प्राप्त भिक्खु के समक्ष नमन करने से नव-शिष्य को दीक्षित मान लिया जाएगा।

इस निर्णय से समस्त भिक्खु समुदाय बहुत प्रसन्न हुआ।

कुछ दिन वाद बुद्ध ने अपना चीवर धारण किया और अपना भिक्षा-पात्र लेकर स्वेच्छापूर्वक ऋषिपत्तन से प्रस्थान कर दिया। वह गगा नदी के किनारे-किनारे चल दिये जिससे वापस मगध पहुच सके।

अध्याय पच्चीस

संगीत के उच्च शिखर

बुद्ध वाराणसी से राजगृह तक पहले भी जा चुके थे। वह धीरे-धीरे वनो एव धान के खेतो का आनद लेते हुए चले जा रहे थे। दोपहर को मार्ग मे पडने वाले ग्राम मे भिक्षाटन करने के लिए रुके। उसके वाद वह शांतिपूर्वक भोजन करने वन मे जा पहुचे। उसके वाद वह वहीं चलते-चलते ध्यान करने लगे। चलित ध्यान के वाद वह एक छायादार वृक्ष के नीचे वैठकर ध्यान-साधना मे लीन हो गये। जगल मे अकेले रहने का उन्हे आनद आ रहा था। जव वह वहा कुछ घंटो वैठकर ध्यान कर चुके तो अच्छे परिधान पहने कुछ युवक उधर से गुजरे जो किसी वात पर उत्तेजित हो रहे थे। उनमे से कुछ वाद्ययन्त्र पकड़े हुए थे। उस दल का नेता लगने वाले युवक ने बुद्ध को नमन किया और पूछा—"सन्यासीजी, क्या आपने इधर से किसी लड़की को भागकर जाते देखा है ?"

बुद्ध ने पूछा—"तुम उस लड़की को क्यो खोज रहे हो ?"

उस युवक ने आरभ से सारी कथा कहनी आरभ की। वे लोग वाराणसी निवासी थे और मौज-मस्ती करने जगल मे आये थे। अपने साथ ये वाद्य-यत्र और एक युवती को मनोरजनार्थ लाये थे। जव वे गाना-नाचना और खाना-पीना समाप्त कर चुके तो जंगल मे ही जमीन पर झपकी लेने के लिए लेट गये। लेकिन जब वह जागे तो उन्होने पाया कि वह युवती हम सब के जेवरात चुराकर भाग गयी है। तभी से हम उसको ढूढ़ते खोजते फिर रहे है।

बुद्ध ने शात भाव से उन युवको की ओर देखा और पूछा—"अच्छा वताओ, इस क्षण तुम्हे उस युवती को खोजना अच्छा लगेगा या स्वय को खोजना ?"

इस प्रश्न से युवक भौचक्के रह गये। बुद्ध के आभापूर्ण मुखमडल और असामान्य प्रश्न से युवक अपने आपे मे आ गये। उत्तर पहले युवक ने दिया, "आदरणीय मान्यवर, सभवतः हमे पहले अपने आत्म-भाव को ही खोजना चाहिए।"

बुद्ध ने कहा कि-"जीवन को वर्तमान क्षण मे ही खोजा जा सकता है किन्तु हमारा चित्त शायद ही कभी वर्तमान क्षण को जी रहा होता है। वर्तमान क्षण के स्थान पर हम या तो अतीत को खगालते रहते हैं अथवा अनागत भविष्य विषयक कामनाए करते रहते हैं। हम समझते हैं कि हम अपने आत्म-वोध मे जी रहे हैं किन्तु वास्तविकता यह है कि हम प्राय कभी भी अपने व्यक्तित्व के वास्तविक सान्निध्य मे नहीं रहते। हमारा चित्त या तो वीते कल की स्मृतियो के पीछे भागता रहता है या आने वाले कल के सपनो के पीछे। जीवन के सपर्क मे आने का एकमात्र उपाय है वर्तमान के क्षण को जीना। एक वार यह जान जाओगे कि वर्तमान के क्षण मे कैसे लौटा जा सकता है तो तुम सचेतन हो जाओगे और उसी क्षण अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सकोगे।

"इन कोमल पत्तियो की ओर देखो जिनका पालन धूप का प्रकाश कर रहा है। क्या तुमने कभी सौम्य और चेतन हृदय से इन हरी पत्तियो की ओर वास्तव मे देखा है इनका हर रग जीवन के आश्चर्यों मे से एक है। यदि इसे तुमने पहले कभी वास्तविकतापूर्ण दृष्टि से नहीं देखा तो अव देखिए।"

सभी युवक एकदम शात हो गये। वे ध्यान से बुद्ध की उस तर्जनी से सकेतित हरे पत्तियो को देखने लग गये थे जो अपराह्न की वायु मे धीरे-धीरे लहरा रही थीं। एक क्षण पश्चात् बुद्ध अपने पास बैठे युवक की ओर मुड़े और कहा-"मैं देख रहा हू कि तुम्हारे पास वासुरी है। कृपया इसे हम सवकी खातिर वजाइए।"

पहले तो युवक शरमाया, फिर उसने वासुरी अपने होठो पर रखी और उसे वजाने लगा। प्रत्येक व्यक्ति ध्यानपूर्वक सुन रहा था। वासुरी के सगीत मे निराश प्रेमी की दर्द भरी चीख उभर रही थी। बुद्ध की दृष्टि उस वासुरी वादक के चेहरे को एकटक देख रही थी। जव उसने वासुरी वजाना समाप्त किया तो वन की अपराह्न वेला में दर्द जैसे तैर रहा था। तव भी कोई नहीं वोला। अकस्मात् वासुरी वादक युवक ने बुद्ध के हाथ मे वासुरी देते हुए कहा-"आदरणीय सन्यासी, अव आप हमे कोई गीत सुनाइए।"

बुद्ध मुस्कराये जवकि कुछ युवक ठठाकर हसने लगे क्योकि उन्हे अपने

उस साथी का यह कथन मूर्खतापूर्ण लगा। क्या कभी किसी सन्यासी को किसी ने बांसुरी बजाते सुना है ? किन्तु उन्हे उस समय आश्चर्य हुआ, जब बुद्ध ने बासुरी अपने हाथ मे ले ली। सभी युवको की दृष्टि बुद्ध पर जा टिकी क्योकि वे अपने जिज्ञासा भाव को छिपाने मे असमर्थ थे। बुद्ध ने कुछ प्रगाढ़ निश्वास लिये और तब बासुरी अपने होठो से लगा ली।

बहुत पहले कपिलवस्तु के राजमहल मे बासुरी बजाने वाले युवक की छवि बुद्ध की आखो मे तैर गयी। उस रात्रि पूर्णिमा थी। वह देख रहे थे कि उस समय उद्यान मे बैठी महाप्रजापति शातिपूर्वक उसका बासुरी-वादन सुन रही थीं और उस समय यशोधरा चदन की अगरुधूम का पात्र लिये बैठी थी। बुद्ध ने बासुरी बजाना आरभ कर दिया।

बासुरी की ध्वनि इतनी मद थी जैसे कपिलवस्तु मे साझ के समय किसी सामान्य से घर से धुए की पतली लकीर निकल रही हो। धीरे-धीरे धुए की वह लकीर बढ़ती-बढ़ती आकाश मे मेघ बन गयी और वह मेघ जैसे सहस्रदल कमल बन गया हो जिसका प्रत्येक दल अलग-अलग रंग की आभा लिये था। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वह एक बासुरी दसियो हजार बासुरिया बन गयी थीं और सृष्टि के सभी अद्‌भुत रहस्य ध्वनियो मे परिवर्तित हो गये हो और ये ध्वनिया हजारो वर्ण और रूपाकार ले चुकी हो। वे ध्वनिया पवन के समान विलम्बित और तीव्र वर्षा के समान द्रुत, अपने ऊपर उड़ते हस के समान स्पष्ट, लोरी के समान आत्मीयतापूर्ण, चमचमाते रत्न के समान प्रकाशवान और उस स्मिति के समान सूक्ष्म थी जो उस व्यक्ति के मुख पर तैरती है जो हानि-लाभ के समस्त विचारो को पीछे छोड़ चुका होता है। वन-पक्षी उस लोकोत्तर सगीत को सुनने के लिए अपना गाना भूल गये थे और मद पवन तक पत्ते हिलाना बंद करके थम गया था। सारा वन प्रदेश पूर्ण शाति, निर्मलता और अद्‌भुतता से भर उठा था। बुद्ध के पास बैठे सभी युवक भरपूर ताजगी से परिपूर्ण हो गये और अब पूर्णतया वर्तमान के क्षण के स्थिर हो गये थे और वृक्षो की अपूर्वता, बुद्ध, बासुरी और एक-दूसरे के प्रति मैत्री-भाव के सानिध्य मे आ गये थे। बुद्ध ने जब बासुरी नीचे रख दी, तब भी उसका सगीत उनके कर्णरध्रो मे गुजरित हो रहा था। किसी भी युवक के मन मे उस युवती और उसके द्वारा चुराये हुए आभूषणो का विचार तक शेष नहीं रह गया।

बहुत देर तक उनमे से कोई भी नहीं बोला। तब बांसुरी वाले युवक ने बुद्ध से पूछा–"आप का बासुरी-वादन तो अद्‌भुत है। मैंने अभी तक किसी

को इतनी सुन्दर वासुरी बजाते नहीं सुना। आपने बासुरी-वादन किससे सीखा ? क्या आप मुझे शिष्य रूप मे स्वीकारेगे जिससे मैं आपसे बासुरी-वादन सीख सकू ?"

बुद्ध मुस्कराये और कहा-"मैने वासुरी बजाना उस समय सीखा था, जब मैं वालक ही था और अब लगभग सात वर्षों से वासुरी उठायी तक नहीं है। लेकिन मेरी वशी-ध्वनि अब पहले से अच्छी हो गयी है।"

"गुरुदेव यह कैसे हो सकता है ? यदि आपने सात वर्षों से अभ्यास नहीं किया तो वासुरी बजाने मे सुधार कैसे हो सकता है ?"

"वासुरी वजाना केवल अभ्यास पर ही निर्भर नही करता। अब मै पहले की अपेक्षा अच्छी वासुरी इसलिए बजा पाता हू क्योकि मैने अपने सच्चे आत्म-भाव के दर्शन कर लिये है। तुम कभी भी कला के उच्च शिखर पर तव तक नहीं पहुच सकते, जव तक पहले अपने हृदय मे विद्यमान अप्रतिम सौंदर्य की अनुभूति नही कर लेते। यदि तुम वास्तव मे बहुत सुदर वासुरी- वादन करना चाहते हो तो तुम्हे आत्म-जागृति के पथ पर चलकर पहले अपने आत्मन् को पहचान लेना चाहिए।"

वुद्ध ने उन लोगो को मुक्ति का मार्ग, चार आर्य-सत्य और वरेण्य अष्टागिक मार्ग समझाया। सभी युवक पूर्ण गभीरता के साथ उनकी वाते सुनते रहे। जव वुद्ध ने अपनी देशना समाप्त की तो उनमे से प्रत्येक युवक उनके सामने प्रणत हुआ और शिष्य रूप मे स्वीकार कर लिए जाने का अनुरोध करने लगा। वुद्ध ने उन सवको प्रवृज्या दी। इसके वाद उन्होने उन सवको ऋषिपत्तन जाने को कहा कि वहा जाकर भिक्खु कौंडन्न को अपना परिचय देना। वही तुम्हे सद्धर्म के मार्ग की साधना करने का दिशा-निर्देश करेगे। बुद्ध ने उनसे कहा कि मै शीघ्र ही आप लोगो से मिलूगा।

उस रात वुद्ध अकेले ही उस वन मे सोये। अगले दिन वह सवेरे गगा पार करके पूर्व दिशा की ओर चल पड़े। राजगृह जाकर राजा विम्विसार से मिलने से पूर्व वे उरुवेला के वच्चो से मिलना चाहते थे।

अध्याय छब्बीस

जल भी ऊर्ध्वगामी

सात दिन बाद, बुद्ध इस बात से प्रसन्न थे कि वे उस अरण्य मे आ गये थे, जहा बोधि वृक्ष स्थित था। रात भर उन्होने वहीं विश्राम किया। अगले दिन सबेरे उन्होने नैरजना नदी के समीप जाकर स्वास्ति को आश्चर्यचकित कर दिया। वह सरिता के तट पर थोड़ी देर साथ-साथ बैठे। बुद्ध ने स्वास्ति से कहा कि तुम भैसो के लिए कुशा काटना जारी रखो। उन्होने स्वय भी कुछ घास काटकर उसकी सहायता की। इसके बाद, स्वास्ति से विदा लेकर वह गाव मे भिक्षाटन के लिए चले गये।

अगले दिन अपराह्न मे गाव के बच्चे बुद्ध से मिलने वन मे आये। स्वास्ति का समूचा परिवार और सुजाता अपने सभी मित्रो के साथ आयी थी। बुद्ध को वहा पुनः आया देखकर सभी बच्चे बड़े प्रसन्न थे। पिछले साल बुद्ध ने क्या-क्या किया, इसका विवरण वे बच्चे बहुत ही ध्यान से सुनते रहे। बुद्ध ने स्वास्ति को वचन दिया कि जब वह बीस वर्ष का हो जाएगा तो बुद्ध उसे प्रवृज्या देकर भिक्खु बना लेगे। उस समय तक स्वास्ति के भाई-बहिन इतने बड़े हो चुके होगे कि वे अपनी देख-भाल स्वय कर सके।

बच्चो ने बुद्ध को बताया कि कुछ महीनो से पास ही मे एक ब्राह्मण के आचार्यत्व मे एक आध्यात्मिक समुदाय आकर बस गया है। उन भक्तो की सख्या पाच सौ होगी। वे लोग भिक्खुओ की भांति मुडित मस्तक नहीं होते बल्कि उनकी जटाए और दाढ़ी बढ़ी होती है। वे अग्नि देवता की आराधना करते है। आचार्य ब्राह्मण का नाम काश्यप है। जो भी उनसे मिलकर आता है, उनका बहुत सम्मान करता है।

अगले दिन बुद्ध सरिता पार करके उस भक्त मडली तक जा पहुचे। उनके भक्तजन सादी पर्ण-कुटियाओ मे रहते, और वल्कल (वृक्ष की छालें)

धारण करते हैं। वे गाव मे भिक्षाटन करने भी नहीं जाते। गाव वाले उन्हे जो कुछ सस्नेह उपहार स्वरूप दे जाते, उसी पर जीवन-निर्वाह करते थे। इनके अतिरिक्त वे पशु भी पालते जिससे उनको खाद्य मिल सके और जिन्हे पशु-बलि के लिए प्रयोग किया जा सके। बुद्ध ने काश्यप के एक भक्त को रोककर बातचीत की तो उसने बताया कि काश्यप जी वेदो के ज्ञाता हैं और परम सदाचारी हैं। काश्यप जी के दो छोटे भाई भी हैं जो अग्नि देव की पूजा मे भक्त समुदाय का नेतृत्व करते हैं। तीनो भाइयो की मान्यता है कि अग्नि तत्त्व ही निखिल ब्रह्माण्ड का सार है। उरुवेला काश्यप को दोनो भाई बहुत सम्मान देते हैं। नादि काश्यप नैरजना के तट पर तीन सौ भक्तजनो के साथ रहते है। वह स्थान यहा से उत्तर मे एक दिन का रास्ता है। गया काश्यप दो सौ भक्तजनो के साथ गया मे निवास करते हैं।

काश्यप का भक्त बुद्ध को अपने आचार्य की कुटी मे ले गया जिससे बुद्ध उनके दर्शन कर सके। यद्यपि काश्यप अब युवा नहीं रह गये थे किन्तु वह चुस्त एव सजग थे। जब उन्होने इस युवा आचार्य का चाल-ढाल और तेजस्विता देखी, तो उनकी ओर वे बहुत आकृष्ट हुए और उनका विशिष्ट अतिथि के रूप मे स्वागत किया। काश्यप ने बुद्ध को अपनी कुटी के आगे काष्ठ शिला पर बैठाया और उनसे बहुत देर तक बाते करते रहे। इस वार्तालाप से काश्यप समझ गये कि बोधिसत्त्व भी वेदो के कितने गहन ज्ञाता हैं। उन्हे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि वह युवा भिक्खु किस प्रकार वेदो के उन गूढ रहस्यो का साक्षात्कार कर सका, जिन्हे वे स्वय भी अभी तक समझ नहीं पाये थे। बुद्ध ने ऋग्वेद और अथर्ववेद के निगूढ़तम अशो की व्याख्या करने मे सहायता की जिन्हे काश्यप मानते थे कि उन्होने इन अशो को समझ लिया है किन्तु वे उनको वस्तुत. हृदयगम करने मे असमर्थ रहे थे। इससे भी अधिक आश्चर्य की बात तो यह थी कि बुद्ध को ब्राह्मणवादी कर्मकाडो के इतिहास, उनके सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षो का भी गहन ज्ञान था।

दोपहर मे बुद्ध ने उरुवेला काश्यप का साथ-साथ भोजन करने का निमत्रण स्वीकार कर लिया। बुद्ध ने अपने वस्त्र से एक भाग को कुशलता से तह लगाकर आसन बनाया और उस पर बैठ गये और सचेत शाति के साथ भोजन किया। उरुवेला काश्यप बुद्ध के निर्मल एव शालीनतापूर्ण व्यवहार से इतने प्रभावित हुए कि उन्होने शांति भंग नहीं की।

अपराह्न मे उन्होने अपनी वार्ता का क्रम जारी रखा। बुद्ध ने प्रश्न किया,

"आचार्य काश्यप, क्या आप मुझे बताएंगे कि अग्नि की पूजा करने से मोक्ष की प्राप्ति किसी भी व्यक्ति को कैसे हो सकती है ?"

उनका उरुवेला काश्यप ने सीधा उत्तर नहीं दिया। वह जानते थे कि इस असाधारण युवा भिक्षु को साधारण या ऊपरी तौर पर उत्तर देने से काम नहीं चलेगा। काश्यप ने यह बताना आरंभ किया कि अग्नि ब्रह्माण्ड का सारभूत तत्त्व है। अग्नि की उत्पत्ति ब्रह्म से हुई है। इस समुदाय की मुख्य वेदिका–अग्निशाला में पवित्र अग्नि–वैश्वानर–सतत् विद्यमान रहती है। अथर्ववेद में अग्नि पूजा की व्यवस्था है। अग्नि ही जीवन है। अग्नि तत्त्व के बिना जीवन रह ही नहीं सकता। अग्नि ही प्रकाश है, अग्नि ही ऊष्मा है और सूर्य के अग्नित्व का कारक है और सूर्य के कारण ही पौधे, पशु और मानव जीवन प्राप्त करते हैं। यही अंधकार को दूर भगाती है, शीत पर विजय प्राप्त करती है और सभी प्राणियों में आनंद एवं तेजस देने वाली है। अग्नि के माध्यम से ही खाद्य पदार्थ पकाए जाते हैं और अग्नि की कृपा से मृत्यु के उपरान्त प्राणी ब्रह्म में लीन होता है। अग्नि जीवन का स्रोत है, इसीलिए यह स्वयं ही ब्रह्म है। ब्रह्म की सहस्रों अभिव्यक्तियों में से अग्नि भी एक है। अग्नि-वेदिका पर अग्नि को द्विमुखी दिखाया गया है। एक मुख अग्नि के दैनंदिन प्रयोग का प्रतीक है और दूसरा मुख बलिदान का और जीवन के स्रोत की ओर लौटने का प्रतीक है। अग्नि के उपासक को चालीस बलियां देनी पड़ती हैं, त्यागमय तपस्या करनी होती है और परिश्रमपूर्वक साधना करनी होती है, जिससे उसे एक दिन मोक्ष प्राप्त हो सके।

काश्यप उन पाखंडी ब्राह्मणों के घोर विरोधी थे जो समाज में अपनी स्थिति का दुरुपयोग धनोपार्जन तथा ऐन्द्रिक वासना प्रधान साधनों की प्राप्ति में करते थे। उन्होंने कहा कि ऐसे ब्राह्मण धनवान बनने के लिए कर्मकांड कराते और वेदमंत्रों का उच्चार करते हैं। इसके कारण परंपरागत ब्राह्मणवादी मार्ग की प्रतिष्ठा धूल में मिल गयी है।

बुद्ध ने पूछा–"आचार्य काश्यप, आप उन लोगों के विषय में क्या धारणा रखते हैं जिनकी मान्यता यह है कि सृष्टि का मूलभूत सार जल है ? इन लोगों का मानना है कि जल ऐसा तत्त्व है जो शुद्धिकरण करता है और लोगों को ब्रह्मलीन होने की यात्रा कराता है।"

काश्यप थोड़ा हिचकिचाए। उन्होंने सोचा कि हजारों-लाखों व्यक्ति इस क्षण गंगाजी तथा अन्य पावन सरिताओं में स्नान कर रहे होंगे जिससे वे स्वयं की शुद्धि कर सकें।

"गौतम, जल किसी को मोक्ष की प्राप्ति मे वास्तव मे सहायक नहीं हो सकता। जल का स्वाभाविक प्रवाह अधोगामी है। केवल अग्नि ही जल कर ऊपर की ओर उठती है। जब हमारी मृत्यु होती है तो अग्नि की कृपा से ही हमारा शरीर धूम बनकर ऊर्ध्वगामी होता है।"

"आचार्य काश्यप यह स्थिति सर्वथा शुद्ध नहीं है। आकाश मे विचरण करते धवल मेघ भी जल तत्त्व का ही एक स्वरूप होते हैं। धुआ और मेघ दोनो ही अततः तरल रूप मे पृथ्वी पर जल रूप मे आते हैं। आप जानते ही हैं कि समस्त पदार्थों का एक चक्र होता है।"

"किन्तु सभी तत्त्व एक ही सार रूप ब्रह्म के अश हैं और अन्त मे उसी मे उनका विलय हो जाता है।"

"आचार्य काश्यप, सभी पदार्थ अपने अस्तित्व के लिए अन्य सभी पदार्थों पर निर्भर रहते हैं। उदाहरण के लिए मेरे हाथ के इस पत्ते को ही लीजिए। पृथ्वी, जल, ऊष्मा, बीज, वृक्ष, मेघ, सूर्य, देश-काल—सभी तत्त्वो की विद्यमानता से ही इस पत्ते की सत्ता होती है। यदि इनमे से कोई भी एक तत्त्व विद्यमान न हो तो यह पत्ता विद्यमान नहीं रह सकता। जड या चेतन सभी प्राणी परस्पर निर्भरता के अनुरूप सह-वर्द्धन के विधान के अनुसार ही विकास करते हैं। एक पदार्थ के विकास का कारक तत्त्व अन्य सभी पदार्थ होते हैं। कृपया इस तथ्य पर विवेक पूर्वक मनन कीजिए। क्या आप यह नहीं मानते कि मेरे हाथ मे यह जो पत्ता है, उसकी सत्ता सृष्टि प्रसार के अन्य समस्त कारक तत्त्वो के अन्तर्ग्रंथन का, जिसमे आपकी अपनी चेतना भी सम्मिलित है, प्रतिफलन है ?"

तब तक शाम हो चुकी थी और अधेरा बढ़ने लगा था। आचार्य काश्यप ने अनुरोध किया कि बुद्ध उनकी ही कुटिया मे शयन कर ले। यह पहला अवसर था, जब उन्होने किसी से अपनी कुटिया मे शयन करने का प्रस्ताव किया हो। किन्तु इससे पूर्व वह ऐसे किसी असाधारण सन्यासी से मिले भी तो नहीं थे। बुद्ध ने उनका यह प्रस्ताव स्वीकार करने से असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा कि मुझे रात में अकेले ही सोने की आदत पड चुकी है। यदि आप अन्यथा न समझे तो मैं उस अग्नि-वेदिका मे ही सोना चाहूगा।

ब्राह्मण आचार्य ने कहा, "उस अग्नि-वेदिका मे एक भीषण नाग घुस आया है। उसको खोजकर निकाल देने के सभी प्रयास व्यर्थ रहे हैं। मित्र गौतम आपको वहा नहीं सोना चाहिए। वहा सोना खतरनाक हो सकता है। उन विषधर के भय से हम सभी यज्ञादि अग्नि-वेदिका के बाहर ही सम्पन्न

करते हैं। कृपया अपनी सुरक्षा की दृष्टि से मेरी ही कुटिया मे शयन करना स्वीकार कर लीजिए।"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "आप चिन्ता मत कीजिए। मैं उस अग्नि-वेदिका मे ही सोना चाहता हू। मुझ पर किसी भी प्रकार का संकट नहीं आएगा।"

बुद्ध को उन दिनो का स्मरण हो आया जव वे निविड़ दुर्गम अरण्यो मे शरीर-पीड़न तप करने मे रत थे। उनके पास से गुजरते खतरनाक जगली पशु उन्हे किसी प्रकार का कष्ट पहुचाये विना निकलते चले जाते थे। कभी-कभी जव वह अपनी ध्यान-समाधि लगाये वैठे होते थे, तो ढेर सारे सर्प उनके सामने रेंगकर आ जाते थे। वह मानते थे कि यदि आप इस बात के प्रति सतर्क रहे कि उनको किसी प्रकार का आघात न लगे तो वे वन्य जीव भी आपको कोई क्षति नहीं पहुंचाएगे।

जव काश्यप ने देखा कि बुद्ध को अपना निश्चय वदलने पर सहमत नहीं किया जा सकता तो उन्होने कहा, "ठीक है, यदि आप अग्नि-वेदिका मे ही सोना चाहते हैं तो अवश्य सोइए। वहा आप जितनी रातो तक सोना चाहे, सो सकते हैं।"

उस रात बुद्ध उस अग्नि-वेदिका मे घुसे। केन्द्रीय वेदी मे निरन्तर अग्नि जल रही थी। कक्ष मे एक ओर चदन की लकड़िया रखी हुई थीं जिन्हे वाहर यज्ञ करने मे प्रयोग किया जाता था। बुद्ध ने अनुमान किया कि वह विषधर कहीं इन्हीं लकड़ियो मे छिपा वैठा होगा। इसलिए बुद्ध ने कक्ष मे दूसरी ओर वैठकर ध्यान-समाधि लगायी। उन्होने अपने चीवर को ही तह करके आसन के रूप मे प्रयोग किया। वह रात मे वहुत देर तक ध्यान-साधना करते रहे। अपनी साधना की समाप्ति के समय उन्होने देखा कि एक विशाल विषधर कमरे मे वीचो- वीच वैठा उनकी ओर देख रहा है। बुद्ध ने विनम्रता से उससे कहा, "मेरे प्रिय मित्र, अपनी जान वचाने की खातिर कृपा करके वन मे चले जाइए।"

बुद्ध की वाणी प्रेम और परिज्ञान से युक्त थी। विषधर ने अपनी कुडली खोली और द्वार के वाहर निकल गया। बुद्ध लेट गये और गहरी नींद मे सो गये।

जव वह जागे तो देखा चद्रमा की चमकती चादनी गवाक्ष से होकर उस स्थान पर पड़ रही है, जहा बुद्ध सोये हुए थे। उन्होने सोचा कि इस चद्रिका मे घूमते हुए चलित साधना करना कितना सुखद अनुभव होगा। उन्होने अपने चीवर को झाड़ा और उसे धारण करके अग्नि- वेदिका के बाहर आ गये।

भोर के प्रहर मे, न जाने कैसे अग्नि-वेदिका मे आग लग गयी। वहा लगी आग सबसे पहले देखने वाले ने चिल्लाकर अन्य लोगो को बुलाया। हर कोई नदी के किनारे से बाल्टियो मे पानी भर-भर कर उस आग पर डालता रहा किन्तु सब व्यर्थ। उस भीषण अग्नि को बुझाने के लिए जल देर से आ पाया। आखिर सभी पाच सौ भक्तगण असहाय खड़े-खड़े उस अग्नि- वेदिका को भस्म होते देखने के अतिरिक्त कुछ भी न कर सके।

उरुवेला काश्यप अपने अनुयायियो के साथ खड़े थे। उनका हृदय दुख से व्यथित था क्योकि वे उस सदाचारी एव प्रतिभा सम्पन्न युवा सन्यासी के विषय मे सोच रहे थे, जिससे वे कल ही तो मिले थे। वह युवा सन्यासी निश्चय ही उस भीषण अग्निकाड मे जल मरा होगा। यदि गौतम ने उनकी कुटी मे सोना स्वीकार कर लिया होता तो वह अवश्य जीवित होते। जब वह इस प्रकार के सोच मे पड़े ही हुए थे, तभी उन्होने बुद्ध को आते देखा। बुद्ध जब पहाड़ियो पर भ्रमण कर रहे थे तो उन्होने यह भीषण अग्नि लगी देखी और तुरन्त लौट पड़े।

कष्टप्रद विचारो से मुक्त हो, आनदित काश्यप ऋषि बुद्ध की ओर दौड़ पड़े और उनका हाथ थाम कर बोले-"ईश्वर का कोटिशः धन्यवाद कि मित्र गौतम तुम जीवित हो। तुमको कुछ नहीं हुआ। इससे मुझे असीम आनद हो रहा है।"

बुद्ध ने अपना हाथ उस ब्राह्मण आचार्य के कधे पर रखा और मुस्कराकर कहा-"धन्यवाद मित्र। हा, मैं बिलकुल सकुशल हू।"

बुद्ध जानते थे कि उस दिन उरुवेला काश्यप प्रवचन करेगे और उनके पाच सौ शिष्यो के अलावा कम-से-कम एक हजार लोग आस-पास के गावो से भी उनका प्रवचन सुनने आएगे। यह प्रवचन दोपहर के भोजन के बाद होगा। यह अनुमान लगाकर कि उनकी उपस्थिति से आचार्य काश्यप कुछ असुविधा अनुभव कर सकते हैं, इसलिए बुद्ध गाव मे भिक्षाटन के लिए निकल गये। भिक्षा प्राप्त करके वह कमल सरोवर के किनारे चले गये। वहीं उन्होने भोजन किया और उस मनोरम स्थल पर समस्त अपराह्न वेला व्यतीत की।

तीसरे प्रहर के बाद काश्यप उन्हे खोजते हुए वहा आ पहुचे। उन्होने जब गौतम को सरोवर तट पर देखा तो बोले-"मित्र गौतम, हम दोपहर को भोजन के समय आपकी प्रतीक्षा करते रहे किन्तु आप पधारे ही नहीं। आपने हमारे साथ भोजन क्यों ग्रहण नहीं किया ?"

बुद्ध ने कहा, "मै आपके प्रवचन के समय अनुपस्थित रहना चाहता था।"

"आप उस प्रवचन मे उपस्थित क्यो नहीं रहना चाहते थे ?" उरुवेला काश्यप ने प्रश्न किया।

बुद्ध के मुख पर मधुर मुस्कान उभर आयी। उस ब्राह्मण आचार्य ने भी कुछ नहीं कहा। वह समझ गये कि युवा सन्यासी को उनके विचार ज्ञात हो गये हैं। बुद्ध कितने चतुर और दूसरो का ख्याल रखने वाले थे।

वे दोनो कमल सरोवर के तट पर वैठकर वाते करने लगे। काश्यप ने कहा कि कल आप कह रहे थे कि पत्ते की सत्ता अनेक विभिन्न तत्त्वो की विद्यमानता का प्रतिफलन है। आपने यह भी कहा था कि मानव का अस्तित्व भी वहुत से अन्य तत्त्वो की विद्यमानता से ही सभव है। किन्तु जब ये सभी तत्त्व या स्थितिया विद्यमान नहीं रहतीं, तव आत्मा कहा जाती है?"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "दीर्घकाल से मानव इस भ्रातिपूर्ण धारणा के शिकार रहे हैं कि आत्मा की सत्ता पृथक है और शाश्वत वह्म की सत्ता पृथक् है। हम यह मानते आये हैं कि जव हमारे शरीर का क्षय हो जाता है तो आत्मा विद्यमान रहती है और अपने मूल स्रोत ब्रह्म से जा मिलती है। किन्तु मित्र काश्यप, यही आधारभूत भ्रांति है जिससे अनगिनत पीढ़िया भ्रमित होती रही हैं।

"मित्र काश्यप, आपको समझ लेना चाहिए कि सभी वस्तुए परस्पर अवलम्वन के कारण ही विद्यमान रहती हैं और परस्पर अवलम्वन के कारण ही उनका नाश होता है। यह विद्यमान है तो वह भी विद्यमान है। इसकी मृत्यु इसीलिए होती है क्योकि उसकी सत्ता समाप्त हो जाती है। परस्पर अवलम्वन के द्वारा सह-वर्द्धन का सिद्धान्त मैने अपनी साधना के माध्यम से खोजा है। सत्य तो यह है कि किसी की भी पृथक् और शाश्वत सत्ता नहीं है। आत्मा होती ही नहीं है—चाहे वह उच्च आत्मा हो या नीच आत्मा। आचार्य काश्यप आपने कभी अपने शरीर, भावनाओ, भाव बोध, मानसिक सकल्पो-विकल्पो और चेतना को केन्द्रित करके ध्यान-साधना की है ? व्यक्ति इन पचस्कधो का समुच्चयन है। ये सभी तत्त्व सतत् परिवर्तनशील सरिताए हैं जिनमे से किसी एक तत्त्व को पृथक् एव शाश्वत् या नित्य नहीं कहा जा सकता।

उरुवेला काश्यप कुछ क्षण मौन रहे फिर पूछा-"तब क्या यह कहा जा सकता है कि आप निरीश्वरवादी विचारधारा का प्रचार कर रहे है ?"

बुद्ध मुस्कराये और नकरात्मक सिर हिलाकर बोले–"नहीं, निरीश्वरवाद की धारणा भी असख्य संकीर्ण धारणाओ मे से एक सकीर्ण धारणा मात्र है। निरीश्वरवादी विचारधारा भी उसी प्रकार की एक भ्रात धारणा है जिस प्रकार पृथक् आत्म-सत्ता और उसकी शाश्वतता की धारणा। काश्यप जी, इस कमल सरोवर को देखिए। मैं यह नहीं कहता कि जल और कमल विद्यमान नहीं है। मैं केवल इतना कहता हू कि जल और कमल की सत्ता अन्य समस्त तत्त्वो की विद्यमानता और उनके परस्पर अवलम्बन के कारण है और सभी तत्त्व न तो सर्वथा पृथक् हैं और न शाश्वत हैं।"

आचार्य काश्यप ने अपना सिर उठाया और बुद्ध की आखो से आखे मिलाकर बोले, "यदि आत्मा की सत्ता ही नहीं है, यदि आत्मा होती ही नहीं है तो व्यक्ति आध्यात्मिक मार्ग अपनाकर क्यो साधना करे जिससे उसकी आत्मा को मुक्ति की प्राप्ति हो सके ?"

बुद्ध ने उस ब्राह्मण मित्र की आखो मे गहराई से झाका। उनकी दृष्टि सूर्य के समान तेजस्वितापूर्ण थी और चन्द्रमा के समान शीतल। उन्होने मुस्करा कर कहा, "काश्यप जी इस प्रश्न का उत्तर आप अपने अन्तर्मन मे खोजिए।"

दोनो साथ-साथ काश्यप के भक्त समुदाय मे आये। उरुवेला काश्यप ने पुनः अनुरोध किया कि बुद्ध रात्रि मे उनकी कुटिया मे विश्राम करे और वह स्वय अपने परम प्रिय भक्त की कुटिया मे शयन करने चले गये। बुद्ध ने देखा कि काश्यप के शिष्य अपने सम्माननीय गुरु के प्रति कितना भक्ति-भाव रखते हैं।

अध्याय सत्ताईस

सभी धर्म दग्ध हैं

प्रतिदिन सवेरे ही काश्यप बुद्ध को कुछ भोजन पहुचा आते। अतः बुद्ध को गाव मे भिक्षाटन करने के लिए जाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। भोजन करने के पश्चात् वह अकेले ही वन मार्गों पर टहलते रहते या कमल सरोवर तक चले जाते। अपराह्न मे काश्यप भी उनके साथ वृक्षो के नीचे अथवा कमल सरोवर के तट पर वैठकर विचारो का आदान-प्रदान करते रहते। काश्यप जैसे-जैसे बुद्ध के साथ अधिक समय व्यतीत करते जाते थे, त्यो-त्यो उनको अनुभव हो रहा था कि बुद्ध कितने विद्वान और तेजस्वी हैं।

एक रात इतनी जोर की वर्षा हुई कि नैरजना नदी मे बाढ़ आ गयी। वाढ़ के पानी मे आस-पास के खेत और मकान डूब गये। बाढ़ से घिरे लोगो को वचाने के लिए नौकाओ का प्रयोग किया गया। काश्यप का भक्त समुदाय समय रहते ही ऊचे स्थानो पर जा चढा था लेकिन गौतम को किसी ने नहीं देखा। काश्यप ने उन्हे खोजने के लिए अनेक नौकाए भेजीं। आखिरकार वह दूर पहाड़ी पर खड़े दिखाई दिये।

नदी मे जल जिस प्रकार तेजी से चढ़ा था, उसी प्रकार तेजी से उतर भी गया। अगले दिन बुद्ध भिक्षाटन के लिए गाव मे गये जिससे वे जान सके कि वाढ़ मे गाव वालो पर क्या बीती। सौभाग्य से कोई व्यक्ति बाढ़ मे डूबा नहीं था। लोगो ने बुद्ध को बताया कि उनके घरो मे सामान अधिक होता ही नहीं, तो बाढ़ मे बहता भी कितना।

काश्यप के शिष्य आग लगने से नष्ट हुई अग्नि-वेदिका का पुनर्निर्माण करने लगे और बाढ़ मे बह गयी अपनी-अपनी कुटिया फिर से बनाने मे जुट गये।

एक दिन अपराह्न मे वुद्ध और काश्यप जव नैरजना नदी के तट पर खडे थे तो काश्यप ने कहा—"उस दिन आपने शरीर, भावनाओ, भाव-बोध, मानसिक सकल्पो और चेतना पर ध्यान करने के लिए कहा था। मैं वह साधना करने के वाद अव समझने लगा हू कि व्यक्ति की भावनाए और उसका भाव-वोध उसके जीवन की श्रेष्ठता को निर्धारित करता है। मैं यह भी पाता हू कि इन पाचो सरित-प्रवाहो मे कोई भी तत्त्व स्थायी नही है और पृथक् आत्मा होने का विश्वास भी भ्रामक है। किन्तु मैं अब भी यह नहीं समझ पाया हू कि यदि आत्मा का अस्तित्व ही नहीं है तो किसी को भी आध्यात्मिक मार्ग अपनाने की आवश्यकता ही क्या है ? जब आत्मा है ही नहीं, तो मुक्त होगा कौन ?"

वुद्ध ने कहा, "काश्यप जी, क्या आप मानते है कि जीवन की विषमताए सत्य है ?"

"हा गौतम, मै मानता हू कि विषमताए एक सत्य है ?"

"तव तो सासारिक विपमताओ के कारण भी होगे ?"

"हा, मै मानता हू कि विषमताओ के कारण भी होते हैं।"

"काश्यप जी, जव तक विषमताओ के कारण रहेगे, ये विषमताए भी रहेगी। जव विपमताओ के कारण समाप्त हो जाएगे तो विषमताए भी समाप्त हो जाएगी।"

"हा, कारणो के अभाव मे विषमताए भी नहीं रहेगी क्योकि दोनो मे कार्य-कारण सवध होता है।"

"विपमताओ का कारण अज्ञान है जिससे सत्य का दर्शन भ्रमित दृष्टि मे होता है। अनित्य को नित्य समझना अज्ञान है। आत्मा नहीं होती, किन्तु उसकी सत्ता मानना अज्ञान है। अज्ञान से लोभ, क्रोध, भय, द्वेष और अन्य असख्य विपमताए जन्म लेती हैं। मुक्ति का मार्ग यही है कि सव कुछ को चेतन होकर सत्य रूप मे देखा जाए जिससे उनकी अनित्यता, आत्मा का पृथक् सत्ता और सभी वस्तुओ के परस्पर अवलम्वन के सत्य की अनुभूति कर ली जाए। यह वह मार्ग है, जिससे अज्ञान को पराभूत किया जा सकता है। यदि अज्ञान पर विजय पा ली जाए तो विपमताओ के पार भी जाया जा सकता है। यही सच्ची मुक्ति है। ऐसी अवस्था मे मुक्त होने के लिए आत्मा की आवश्यकता ही कहा होती है ?"

उरुवेला काश्यप एक क्षण तक मौन वैठे रहे और फिर वोले—"गौतम, मै समझता हूं कि आप अपने प्रत्यक्ष अनुभवो के आधार पर वोलते हो।

आपके शब्दो मे मात्र सिद्धान्त-कथन नहीं होता। आपने कहा है कि ध्यान-साधना के अभ्यास से और सभी पदार्थों के सचेतन दृक्पात करने से ही मुक्ति की प्राप्ति हो सकती है। क्या आप मानते है कि समस्त यज्ञादि कर्म, भक्ति साधना और प्रार्थनाए व्यर्थ के प्रयास है ?"

वुद्ध ने नदी के दूसरे तट की ओर सकेत किया और कहा, "काश्यप जी यदि कोई व्यक्ति नदी के उस तट पर जाना चाहे तो उसे क्या करना चाहिए ?"

"यदि पानी उथला हो तो व्यक्ति पैदल नदी पार कर सकता है, अन्यथा उसे तैरकर अथवा नाव के द्वारा उस पार जाना होगा।"

"आपकी वात मै स्वीकार करता हू। किन्तु यदि व्यक्ति न तो नदी पार करने के लिए पैदल चले, न तैरे और न नाव का प्रयोग करे तो क्या होगा ? यदि वह नदी के इस तट पर खड़ा होकर प्रार्थना करे कि दूसरा तट उसके पास आ जाए तो क्या यह सभव है ? ऐसे व्यक्ति के विषय मे आप क्या सोचेंगे ?"

"मै तो कहूंगा कि वह सर्वथा मूर्ख है।"

"ठीक कहा काश्यप जी ? यदि व्यक्ति अज्ञान और चित्त के सकल्पो-विकल्पो के पार नहीं जाता तो वह मुक्ति पाने के लिए उस तट तक कैसे पहुंचेगा, भले ही वह व्यक्ति अपना समस्त जीवन प्रार्थना करने मे क्यो न लगा दे।"

अकस्मात् काश्यप के नयन अश्रुपूरित हो गये और बुद्ध के चरणो पर गिर पड़े।" गौतम, मैंने अपना आधे से अधिक जीवन व्यर्थ ही गवा दिया। कृपया मुझे अपना शिष्य स्वीकार कर लीजिए और मुक्ति के मार्ग का अध्ययन और अभ्यास अपने चरणो मे वैठकर करने का अवसर प्रदान कीजिए। "

वुद्ध ने काश्यप को उठाकर वैठाया और कहा-"मुझे आपको शिष्य रूप मे अपनाने मे कोई कठिनाई नहीं है। किन्तु आपके पाच सौ भक्तो का क्या होगा ? यदि आप उन्हे छोड़ देगे तो उनका मार्ग-दर्शन कौन करेगा ?"

काश्यप ने उत्तर दिया-"सवेरे मुझे उनसे बातचीत करने का अवसर दीजिए। कल अपराह्न मे मै आपको अपना निश्चय बताऊगा।"

वुद्ध ने कहा-"उरुबेला के बच्चे मुझे 'बुद्ध' कहा करते है।" काश्यप ने साश्चर्य कहा-"इसका अर्थ है सबोधि प्राप्त व्यक्ति। है न ? मैं भी आपको इसी नाम से सबोधित किया करूगा।"

अगले दिन सबेरे बुद्ध उरुबेला गाव मे भिक्षाटन को गये। उसके बाद वह कमल सरोवर के तट पर बैठने जा पहुचे। अपराह्न मे काश्यप भी वहा

आ गये। उन्होने कहा कि मेरे समस्त भक्तजन आपके शिष्य वनने को तैयार है।

दूसरे दिन उरुवेला काश्यप और उनके पाच सौ शिष्यो ने अपने सिर और दाढी मुडवा ली और सिर एव दाढ़ियो के वाल तथा अग्नि-पूजा मे प्रयोग किया जाने वाला सारा सामान उरुवेला नदी मे वहा दिया। वह वुद्ध के समक्ष प्रणत हुए और तीन वार 'वुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' ओर 'सघ शरण गच्छामि' का उच्चारण किया। इन त्रिरत्नो के उच्चारण से समस्त वन प्रान्त गुजायमान हो उठा।

प्रवृज्या कार्य सम्पन्न हो जाने पर वुद्ध ने उन नव-भिक्खुओ को चार आर्य सत्यो की देशना दी और वताया कि किस प्रकार अपनी श्वसन-क्रिया, शरीर और चित्त पर केन्द्रित ध्यान-साधना करनी है। उन्होने प्रत्यक्ष दिखाकर समझाया कि किस प्रकार भिक्षाटन करना है और भिक्षा मे प्राप्त भोजन को केसे मौन रहकर ग्रहण करना है। उन्होने उनसे यह भी कहा कि मासाहार और पशु-वलि के लिए जिन पशुओं का वह पालन करते रहे हैं, उन्हे मुक्त कर दे।

उसी दिन अपराह्न मे वुद्ध काश्यप और उनके दस वरिष्ठ शिष्यो से मिले और उन्हें आत्म- चेतना जागृत करने की मूलभूत वाते समझायीं और वताया कि सघ का सगठन एव व्यवस्था केसे करनी है। काश्यप वहुत ही प्रतिभावान सगठन-कर्त्ता थे। वुद्ध के साथ वैठकर उन्होने युवा भिक्खुओ को प्रशिक्षण देने का कार्य अपने दस वरिष्ठ शिष्यो को सौंपा, ठीक वैसे ही जैसे वुद्ध ने ऋषिपत्तन मे किया था।

अगले दिन उरुवेला काश्यप के अनुज नादि काश्यप अपने शिष्यो समेत हडवडाए हुए वहा आये। एक दिन पहले उरुवेला नदी मे जटाए और यज्ञ-पात्रादि वस्तुए उन्होंने वहकर आती हुई देखी थीं। उन्हे भय हुआ कि कहीं कोई भयकर आपदा तो उनके वड़े भाई के शिष्य समुदाय पर नहीं आ पडी। जव नादि काश्यप वहा पहुचे तो वह भिक्षाटन का समय था, अतः वहा उन्हे कोई नहीं मिला। उनकी आशका सत्य सिद्ध प्रतीत हुई। किन्तु धीरे-धीरे भिक्खु भिक्षाटन से लौटकर आने शुरू हो गये तो उन्होने वताया कि किस प्रकार हम सभी ने गौतम नामक सन्यासी के अनुयायी वनने का निश्चय किया है। उरुवेला काश्यप भी वुद्ध के साथ भिक्षाटन करके लौट आये थे और अपने अनुज को देखकर वड़े प्रसन्न हुए। उन्होने अपने अनुज को वन भ्रमण के लिए आमंत्रित किया। वहुत देर वाद वे लौटे तो नादि काश्यप

ने घोषणा की कि वह भी अपने तीन सौ शिष्यो के साथ वुद्ध की शरण लेगे। दोनो भाइयो ने अपने भाई गया काश्यप को बुला लाने हेतु व्यवस्था की। इस प्रकार सात दिनो के अदर गया काश्यप और उनके दो सौ शिष्यो ने भी प्रवृज्या ग्रहण कर ली। काश्यप वधुओ मे परस्पर अपार स्नेह था और उनके आदर्श भी समान थे। तीनो मिलकर वुद्ध के परम निष्ठावान शिष्य वन गये थे।

एक दिन भिक्षाटन से लौटने पर वुद्ध ने उनको गया शीर्ष के ढलान पर बुलाया। नौ सौ भिक्खुओ ने वुद्ध और तीनो काश्यप वधुओ के साथ मौन-भाव से भोजन किया। भोजन करने के उपरान्त सभी की दृष्टि बुद्ध पर केन्द्रित हो गयी।

एक वड़ी चट्टान पर सौम्य स्थिर भाव से वैठकर बुद्ध ने देशना देनी आरंभ की। "भिक्खुओ, सभी धर्म दग्ध है। जल क्या रहा है ? छः ज्ञानेन्द्रिया—नेत्र, कर्ण, नासिका, जिह्वा, शरीर और चित्त—सभी दग्ध है। इन इन्द्रियो के विषय-रूप, ध्वनि, गंध, स्वाद, स्पर्श और मन के सकल्प-विकल्प-सभी दग्ध हैं। इनके छहो गुण-धर्म—दृष्टि, श्रवण, गध, स्वाद, भावनाए और विचार भी दग्ध हो रहे हैं। ये सव ऐषणाओ, घृणा और भ्रम की लपटो के कारण दग्ध हो रहे है। सव जन्म, जरा, रोग एव मरण और कष्टो, उद्वेगो, हताशा, चिन्ता, भय और निराशा की ज्वाला से दग्ध हैं।

"भिक्खुगण प्रत्येक भाव-वोध चाहे वह दुखद हो, सुखद हो अथवा तटस्थातापूर्ण हो, दग्ध है। हमारा वोध-भाव इंद्रियो, उनके विषयो तथा बोध-चेतना के कारण जागृत होता है और इन्हीं के अनुरूप बनता है। अतः भिक्खुओ अपने को ऐषणाओ, घृणा और भ्रातियो मे भस्मीभूत मत होने दीजिए। सभी गुण-धर्म अनित्य हैं और ये परस्परावलम्वी प्रकृति वाले है। इनका ज्ञान प्राप्त करके स्वय को जन्म-मरण के चक्रो मे मत फसने दीजिए। ये चक्र इद्रियो, इन्द्रियो के विपयो और उनके चेतना-बोध के कारण सृजित होते है।"

नौ सौ भिक्खु बुद्ध की देशना दत्तचित्त होकर सुन रहे थे। प्रत्येक व्यक्ति इससे अत्यधिक प्रभावित हुआ। उन्हे यह जानकर प्रसन्नता हो रही थी कि उन्हे ऐसा सद्धर्म-पथ मिल गया जो ध्यान-साधना के द्वारा मुक्ति-प्राप्ति का मार्ग दिखाता था, प्रत्येक भिक्खु के हृदय मे यह दृढ़ विश्वास हो गया था।

नव-भिक्खुओ को शिक्षा देने के लिए बुद्ध गया शीर्ष पर तीन मास तक रहे। इस दौरान इन भिक्खुओ ने साधना-मार्ग पर बहुत प्रगति की। काश्यप वधु वहुत प्रतिभाशाली थे और उन्होने सघ के मार्ग-निर्देशन एव प्रशिक्षण मे बुद्ध की बड़ी सहायता की।

अध्याय अट्ठाईस

ताड़वन में

वह प्रभात वेला भी आयी जब बुद्ध गया शीर्ष पर्वत छोड़कर राजगृह के लिए चल पड़े। उरुवेला काश्यप ने बुद्ध से अनुमति मागी कि समस्त सघ को अपने साथ लिये चलिए। बुद्ध इसके पक्ष मे नहीं थे किन्तु काश्यप ने समझाया कि नौ सौ भिक्खु आराम से साथ-साथ यात्रा कर लेगे। राजगृह के आस-पास बहुत से वन है, उन्हीं मे ये सब भिक्खु रह सकेगे। वे वहा के अनेक गावो मे और राजधानी मे भी भिक्षाटन कर लिया करेगे और बहुत से स्थानीय लोगो से सपर्क कर सकेगे। काश्यप ने कहा कि यही नहीं, गया मे भिक्खु समुदाय बहुत बड़ा है जिसे गया की जनता सहायता भी कब तक दे सकेगी। राजगृह मे सभी कुछ आसान होगा। मगध की स्थिति के विषय मे उरुवेला काश्यप कितने जानकार है, इसे स्वीकारते हुए बुद्ध ने नौ सौ भिक्खुओ को अपने साथ चलने की अनुमति दे दी।

काश्यप बधुओ ने पचीस-पचीस भिक्खुओ की छत्तीस टोलियो मे समस्त सघ को विभाजित कर दिया। प्रत्येक टोली का नेतृत्व एक वरिष्ठ भिक्खु को सौप दिया। इस व्यवस्था के कारण भिक्खु अधिक शीघ्रता से मार्ग तय कर सके।

भिक्खु समुदाय को राजगृह पहुचने मे दस दिन लगे। प्रतिदिन प्रात: भिक्खु छोटे गांवो मे भिक्षाटन करने जाते और वन या खेतो मे बैठकर मौन साधकर भोजन करते। भोजन करने के उपरान्त वे अपनी छोटी-छोटी टोलियो मे आगे की यात्रा करते। भिक्खुओ को चुपचाप सधे कदमो से चलते देख सभी दर्शको पर गहरा प्रभाव पडता।

जब वे लोग राजगृह के समीप पहुचे तो उरुवेला काश्यप उन्हे ताड़वन मे ले गये जहा सप्ततीर्थ मदिर था। ताडवन राजधानी से दो मील दक्षिण

मे था। अगले दिन प्रातः भिक्खु नगर मे भिक्षाटन के लिए गये। वे एक पंक्ति मे, भिक्षा-पात्र लिए शात भाव से मद-मद पग रखते हुए चल रहे थे। बुद्ध के निर्देश के अनुसार, वे धनी-निर्धन सभी के घरो के आगे रुकते। यदि कुछ क्षणो मे कोई बाहर न आये तो वे अगले द्वार की ओर बढ़ जाते। भिक्षा की मौन प्रतीक्षा करते हुए वे अपना चित्त श्वसन-क्रिया पर केन्द्रित करते। भिक्षा मिलने पर वे दाता को नमन करते। भोजन अच्छा है या बुरा इसका वे न कोई भेद करते, न कोई प्रतिक्रिया। दान देते समय कुछ लोग धर्म के विषय मे कुछ जानना चाहते तो भिक्खु अपनी योग्यता के अनुसार विचारपूर्वक उत्तर देते। भिक्खु बताते कि वह गौतम बुद्ध के सघ का भिक्खु है। वे चार आर्य सत्यो, पचशीलो और अष्टागिक मार्ग की चर्चा भी करते।

दोपहर होते-होते भिक्खु ताड़वन मे वापस आ जाते जिससे वे मौन साधकर भोजन करे और तत्पश्चात् धर्म सबधी बुद्ध की देशना सुन सके। अपराह्ण और सध्या का समय ध्यान-साधना के लिए निर्धारित था। इस प्रकार दोपहर के बाद किसी ने गैरिक चीवर धारी भिक्खुओ को नगर मे नहीं देखा।

दो सप्ताह समाप्त होते-होते नगर के अधिकाश लोग बुद्ध के सघ के विषय मे जान चुके थे। अपराह्ण की शीतल वेला मे बहुत से साधारण जन बुद्ध के दर्शन करने और सद्धर्म मार्ग के विषय मे ज्ञान प्राप्त करने ताड़ वन आ जाया करते। इससे पहले कि बुद्ध अपने मित्र से मिलने जा पाते, युवा राजा बिम्बिसार को बुद्ध के वहा पधारने का समाचार मिल गया था। यह नया आचार्य वही युवा सन्यासी है जिससे वह पहाड़ पर मिल चुके थे, इतना सुनिश्चित करके वह अपने रथ पर बैठकर ताड़वन के लिए रवाना हो गये। उनके रथ के साथ बहुत से अन्य रथ भी थे क्योकि उन्होने सौ से अधिक अत्यन्त पूज्य ब्राह्मण आचार्यों और बुद्धिजीवियो को भी अपने साथ आने के लिए निमन्त्रित किया था। जब वे ताड़वन के समीप पहुचे तो रथ से उतर पड़े। उनके साथ रानी और उनका पुत्र राजकुमार अजातशत्रु भी था।

जब बुद्ध को राजा के आगमन की सूचना मिली तो वह स्वय और उरुबेला काश्यप राजा तथा उनके साथ आये लोगो की अगवानी करने आये। सभी भिक्खु बड़े-बड़े घेरे बनाकर बुद्ध की देशना सुनने के लिए पृथ्वी पर ही बैठ गये। बुद्ध ने राजा रानी, राजकुमार तथा अन्य संभ्रात अतिथियो को भी विराजने को आमत्रित किया। राजा बिम्बिसार ने अतिथियो का परिचय स्वय दिया या करवाया। इन अतिथियो मे बहुत से वेदो के ज्ञाता थे और विभिन्न दर्शनो के अनुयायी थे।

इनमे से अधिकाश ने उरुवेला काश्यप का नाम सुन रखा था किन्तु किसी ने भी वुद्ध का नाम नहीं सुना था। वे यह देखकर आश्चर्य चकित थे कि आचार्य काश्यप वुद्ध को इतना सम्मान क्यो देते हैं जवकि गौतम शाक्य, उनसे आयु मे काफी छोटे थे। वे एक-दूसरे से कान मे वात करके यह निश्चय कर लेना चाहते थे कि वुद्ध काश्यप के शिष्य हैं या काश्यप वुद्ध के। इस भ्रमपूर्ण स्थिति को समझ कर उरुवेला काश्यप उठकर वुद्ध के समीप आये और हाथ जोड़कर स्पष्ट किन्तु सम्मानपूर्ण वाणी में वोले-"गौतम वुद्ध, मेरे इस जीवन के सवसे मूल्यवान गुरु, मैं उरुवेला काश्यप आपका शिष्य हू। कृपया मुझे आपके प्रति सम्मान प्रकट करने की अनुमति दीजिए।" इसके वाद उन्होने तीन वार वुद्ध के समक्ष नमन किया। वुद्ध ने काश्यप को अपने समीप ही वैठने को कहा। ब्राह्मणो की खुस-फुस समाप्त हो गयी थी। वास्तव मे गैरिक वस्त्रधारी नौ सौ भिक्खुओ को सौम्यता के साथ वैठे देखकर उनके मन मे सम्मान-भाव वहुत वढ चुका था।

वुद्ध ने आत्मा-जागृति कराने वाले सद्धर्म मार्ग के विषय मे अपनी देशना आरम्भ की। उन्होने जीवन के सभी तत्त्वो की अनित्यता और परस्परावलवन के विषय मे वताया। उन्होने कहा कि सद्धर्म का यह मार्ग भ्रामक विचारो और जागतिक जजालो को पार कर जाने मे सहायक होता है। उन्होने कहा कि भाव-वोध की धारणा करने से व्यक्ति को ध्यान लगाने और ज्ञान-प्राप्ति मे सहायता मिलती है। उनकी वाणी घटानाद के समान सर्वत्र गुजायमान हो रही थी। वसन्त की कुनकुनी धूप मे एक हजार से अधिक लोग उनकी देशना सुन रहे थे। कोई भी जोर से न तो श्वास लेने का साहस कर रहा था और न वस्त्र सरकाने का, क्योकि उन्हे भय था कि इससे वुद्ध की अद्भुत वाणी की ध्वनि मे व्याघात पडेगा।

उस समय तक राजा विम्विसार की आखे चमकने लगी थीं। वे जितनी देशना सुनते जाते थे, उतने ही, उनके हृदय के द्वार उन्मुक्त होते जाते थे। उनकी वहुत-सी शकाए और परेशानिया स्वत ही निर्मूल हो गयी थीं। उनके चेहरे पर प्रभापूर्ण मुस्कान आ गयी थी। जव वुद्ध ने अपनी देशना समाप्त की, राजा विम्विसार ने खडे होकर हाथ जोडे और कहा-"प्रभु, युवावस्था से ही मेरी पाच इच्छाए थीं। आज वे सभी पूरी हो गयीं। मेरी पहली इच्छा थी कि मेरा राज्याभिषेक हो और मै राजा वनू। दूसरी इच्छा थी कि इसी जीवन मे सवोधि प्राप्त गुरु मिले। तीसरी इच्छा थी कि में उस गुरु का सम्मान कर सकू। चौथी इच्छा थी कि मेरा गुरु मुझे सत्य मार्ग दिखा सके

और पांचवीं इच्छा थी कि आत्म जागृत संबुद्ध की शिक्षाओ को समझ सकू। मेरी यह इच्छा अभी पूरी हुई है। आपकी अद्‌भुत देशना से मुझे ज्ञान प्राप्त हुआ है। प्रभुवर मुझे अपना एक सामान्य शिष्य या उपासक बनाना स्वीकार कर लीजिए।"

बुद्ध ने स्वीकृति मे सिर हिलाया।

राजा ने बुद्ध और उनके समस्त नौ सौ शिष्यो को पूर्णिमा के दिन महल मे भोजन करने के लिए आमन्त्रित किया। बुद्ध ने इसे भी सहर्ष स्वीकार कर लिया।

अन्य सभी अतिथि बुद्ध को धन्यवाद देने के लिए उठ खड़े हुए। उनमे से बीस ने बुद्ध का शिष्य बनने की इच्छा प्रकट की। बुद्ध और उरुवेला काश्यप राजा, रानी और छोटे से राजकुमार अजातशत्रु को ताड़वन की सीमा तक छोड़ने उनके साथ-साथ गये।

बुद्ध जानते थे कि महीने भर से पहले ही वर्षा ऋतु आरभ हो जाएगी और उनके लिए स्वदेश लौट जाना असभव हो जाएगा। इसलिए उन्होने निश्चय किया कि वह तीन महीनो तक ताडवन मे ही नौ सौ भिक्खुओ के साथ वर्षा प्रवास करेगे। वह समझते थे कि तीन महीनो के साधना-अभ्यास से संघ सुदृढ़ हो जाएगा। और वहां की व्यवस्था इतनी स्थिर हो जाएगी कि वे वहा से जा सके।

राजा बिम्बिसार ने तुरन्त ही बुद्ध और उनके भिक्खुओ के अभ्यर्थना-समारोह का आयोजन आरभ कर दिया। उन्होने राजमहल के विशाल प्रागण मे भोजन की व्यवस्था करने की सोची। इसीलिए उस प्रागण को बढिया ईंटो से सजाया। उन्होने अपने प्रजाजनो से अनुरोध किया कि मार्गों पर प्रकाश की सुदर व्यवस्था की जाए तथा बुद्ध और उनके सघ के स्वागतार्थ पुष्प- वर्षा की जाए। उन्होने इस समारोह मे अन्य लोगो को भी भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया जिनमे उनकी सरकार के सभी सदस्य और परिवार जन भी सम्मिलित थे। बारह वर्षीय राजकुमार अजातशत्रु के मित्रो को भी इसमे आमंत्रित किया गया। राजा जानते थे कि बुद्ध और भिक्खुगण अहिसा व्रत का पालन करते है, अतः सारा भोजन स्वाद पूर्ण शाकाहारी ही हो। उन्हे इस अभ्यर्थना-समारोह की तैयारी मे दस दिन लगे।

अध्याय उनतीस

परस्परावलम्बी सह-वर्द्धन

उसके वाद के सप्ताहो मे वहुत से जिज्ञासु बुद्ध के पास आये और भिक्खु की प्रवृज्या दिये जाने का अनुरोध किया। उनमे से वहुत से धनी परिवारों के उच्च शिक्षा प्राप्त युवक भी थे। बुद्ध के वरिष्ठ शिष्यो ने इनको प्रवृज्या दिलायी और नये भिक्खुओ को अभ्यास के आरभिक निर्देश दिये। और भी स्त्री-पुरुष ताड़वन आये और 'वुद्ध शरण गच्छामि,' 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' के व्रत लिये।

एक दिन कौंडन्न ने लगभग तीन सौ युवको को प्रवृज्या दी और त्रिरत्नो का उच्चारण कराया और प्रवृज्या सस्कार के पश्चात् बुद्ध, धर्म और सघ के विपय मे उनको समझाया।

"वुद्ध सवुद्ध वोधिसत्व है। सवुद्ध व्यक्ति जीवन और ब्रह्माण्ड के स्वरूप को देख सकता है। प्रज्ञा चक्षु होने के कारण वह भ्रम-जाल, भय, क्रोध अथवा कामनाओ के वधन मे नहीं वधता। सवुद्ध व्यक्ति मुक्त प्राणी होता है जो शांति और आनद, प्रेम तथा ज्ञान से भरपूर होता है। हमारे गुरु गौतम 'सर्वधर्माभिसमयरूप' और सर्वकारक प्रज्ञावान हैं। वह हमे इस जीवन मे ऐसा मार्ग दिखाते हैं, जिसमे हम अपने अविस्मरणशीलता को जीतकर स्वय ही जागृत चेतना वाले व्यक्ति वन सके। हम सव मे 'वुद्ध-प्रकृति' विद्यमान है। हम सभी वुद्ध वनने मे सक्षम हैं। वुद्ध-प्रकृति चेतना के जागरण और समस्त अज्ञान को निर्मूल करना है। यदि हम आत्म-चेतना के मार्ग का अभ्यास करेंगे तो हमारी वुद्ध-प्रकृति दिन प्रतिदिन निखरती जाएगी और एक दिन ऐसा आएगा कि हम भी पूर्ण मुक्ति, शाति और आनद की स्थिति प्राप्त कर सकेंगे। हम मे से प्रत्येक को अपने हृदय मे वुद्ध को विराजमान समझना चाहिए। त्रिरत्नो मे वुद्ध प्रथम रत्न हैं।

"धर्म वह मार्ग है जिससे आत्म-चेतना की जागृति होती है। इस मार्ग का निर्देश बुद्ध ने किया है। इस मार्ग के द्वारा अज्ञान, क्रोध, भय और कामनाओ के पार जाया जा सकता है। इससे मुक्ति, शाति और आनद की प्राप्ति होती है। यह हमे दूसरो को प्रेम करने और उन्हे समझने मे समर्थ बनाता है। आत्म-जागृति के पथ के दो सुन्दर फल हैं, प्रेम और ज्ञान। इस प्रकार धर्म दूसरा मूल्यवान रत्न है।"

"संघ लोगो का वह समुदाय है जो आत्म-जागृति के मार्ग की साधना सबके साथ मिलकर कराता है। यदि आप मुक्ति-मार्ग की साधना करना चाहते हैं तो साथ-साथ मिलकर साधना करना अधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि आप अकेले ही हैं तो आपके आत्म-जागृति के मार्ग मे लक्ष्य तक पहुचने में बाधाए आ सकती हैं। चाहे आप प्रवृज्या प्राप्त भिक्खु है चाहे साधारण जन, सघ की शरण मे आना महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार सघ तीसरा मूल्यवान रत्न है।

"आज आप लोग बुद्ध, धर्म और सघ की शरण मे आये है तो इन त्रिरत्नो के कारण, उद्देश्यहीन होकर नहीं भटकोगे वरन् जागृति के पथ पर वास्तविक प्रगति कर पाओगे। दो वर्ष पूर्व ही मैने इन त्रिरत्नों की शरण ली थी और आज आप लोग भी उसी पथ के पथिक है। हमे इन त्रिरत्नो की शरण मे आकर आनदित होना चाहिए। ये त्रिरत्न हमारे हृदयो मे अनत काल से विद्यमान रहे है। हम मिलकर साथ-साथ साधना के अभ्यास द्वारा इन त्रिरत्नो की ज्योति से अपने हृदयो को आलोकित करेगे।" ये युवक कौंडन्न के इन वचनो से बहुत प्रेरित हुए।

इन्हीं दिनो बुद्ध को दो असाधारण नये शिष्य मिले जिनके नाम थे सारिपुत्त और मौद्गल्यायन। इन्हे भी भिक्खु सघ मे सम्मिलित कर लिया गया। ये दोनो ही राजगृह के विख्यात सन्यासी सजय के शिष्य थे। सजय के भक्त 'परिव्राजक' कहलाते थे। सारिपुत्त और मौद्गल्यायन घनिष्ठ मित्र थे और कुशाग्र बुद्धि एवं मुक्त दृष्टि के कारण इनका सम्मान किया जाता था। उन्होने एक-दूसरे को वचन दिया कि जो भी पहले सद्धर्म मार्ग की सबोधि प्राप्त कर लेगा, वह तुरन्त दूसरे को सूचित करेगा।

एक दिन सारिपुत्त ने अस्सजि को राजगृह मे भिक्षाटन करते देखा। अस्सजि की सौम्य प्रशान्त मुद्रा ने उन्हे तुरन्त आकृष्ट किया। सारिपुत्त ने मन मे सोचा, ऐसा प्रतीत होता है कि इस व्यक्ति को आत्म-मुक्ति प्राप्त हो गयी है। मैं जानता हू कि ऐसे मुक्तजन पाये जाते है। मैं इनसे पूछू कि इनके गुरु कौन है और उनकी शिक्षा क्या है ?"

सारिपुत्त अस्सजि के निकट पहुचने के लिए पहले तो झपटे किन्तु फिर यह सोचकर रुक गये कि जव यह भिक्खु शात भाव से द्वार-द्वार से भिक्षा माग रहा है तो मै इसमे क्यो विघ्न वनू। सारिपुत्त ने तव तक प्रतीक्षा करने का निश्चय किया जव तक कि अस्सजि भिक्षाटन समाप्त न कर ले। सारिपुत्त उनका इस प्रकार अनुसरण करते रहे जिससे अस्सजि को पता ही न चले। जव अस्सजि का भिक्षा-पात्र भर गया और वह नगर से बाहर जाने को मुडे तो सारिपुत्त ने हाथ जोड़कर उनका सादर नमन किया और कहा कि "आपका मुखमडल शान्ति और सौम्यता से दमक रहा है। आपके चलने और आपकी सभी मुद्राओ से ही आपकी निर्मलता और ज्ञान का दर्शन हो जाता है। कृपया यह वताइए कि आपके गुरु कौन हैं और आपका शिक्षा-केन्द्र कहा है। आपके गुरु आपको किन पद्धतियो की शिक्षा देते हैं ?"

अस्सजि ने एक क्षण सारिपुत्त की ओर देखा और मैत्रीपूर्ण मुस्कान से उत्तर दिया, "मैं शाक्य वश के गौतम, जिन्हे बुद्ध कहते हैं, के मार्ग-निर्देशन में अध्ययन और अभ्यास कर रहा हू। इस समय उनका निवास सप्ततीर्थ मंदिर के समीप ताडवन मे है।"

सारिपुत्त की आखे चमक उठीं। "उनकी शिक्षा क्या है ? क्या आप वे शिक्षाए मुझे वताना चाहेगे ?"

"बुद्ध की शिक्षाए वहुत गूढ़ और ज्ञानपूर्ण हैं। मैं भी अभी उन्हे पूर्ण रूप से हृदयगम नहीं कर पाया हू। आप चलकर स्वय बुद्ध से ही वे शिक्षाए ग्रहण करे तो उचित रहेगा।"

सारिपुत्त ने अस्सजि को और टटोला। 'क्या आप बुद्ध की शिक्षा के कुछ शब्द भी मुझे नहीं वताएगे ? वे शब्द ही मेरे लिए अत्यन्त मूल्यवान होंगे। उनसे आगे की शिक्षा प्राप्त करने वाद मे आऊगा।"

अस्सजि मुस्कराये और फिर एक गाथा सुनायी :

"परस्परावलम्वी स्रोत से
सभी पदार्थो का सृजन होता है।
और सभी पदार्थ उसी मे परिसमाप्त होते हैं।
वोधिसत्व सवुद्ध की
यही शिक्षा है।"

सारिपुत्त को अनुभव हुआ जैसे उनके हृदय-कपाट खुल गये हो और उसमे दिव्य प्रकाश पूर्णत· भर गया हो। सत्य धर्म की निर्भ्रान्त झाकी जैसे उनके समक्ष साकार हो गयी हो। उन्होने अस्सजि को नमन किया और अपने मित्र मौद्गल्यायन को खोजने दौड़ पडे।

जब मौद्गल्यायन ने सारिपुत्त का दमकता मुखमडल देखा तो पूछा, "बधुवर किस कारण से आप इतने आनदित हो रहे हैं ? क्या आपने सत्यधर्म का मार्ग प्राप्त कर लिया है ? मुझे भी कुछ बताइए।"

सारिपुत्त ने अपने साथ बीती घटना सुनाई। जब उन्होने वह 'गाथा' उन्हे सुनाई तो मौद्गल्यायन को भी प्रतीत हुआ कि उनका हृदय और चित्त दिव्य प्रकाश की छटा से भर गया है। उन्हे लगा कि समस्त ब्रह्माण्ड एक सुग्रथित जाल है। वह इस कारण विद्यमान था क्योंकि उसका अस्तित्व था, उसका विकास हुआ क्योंकि इसका विकास हुआ और यह इसलिए तिरोहित हो गया क्योकि वह भी तिरोहित हो गया था। सभी पदार्थों या प्राणियो का सर्जक एक ब्रह्म है, यह विचार, इस तथ्य का ज्ञान होते ही, तिरोहित हो गया कि परस्परावलम्वी सह-विकास से ही सब जागतिक प्रपच सभव है। अब वह समझ गये कि जन्म-मरण के अनत चक्र से कैसे छुटकारा पाया जा सकता है। उनके सामने मुक्ति का द्वार खुल गया था।

मौद्गल्यायन ने कहा कि "बधुवर, हमे तुरन्त बुद्ध के पास चलना चाहिए। यही वह गुरु है जिनकी हम अब तक प्रतीक्षा करते रहे हैं।"

सारिपुत्त ने सहमति व्यक्त करते हुए कहा-"उन ढाई सौ 'परिव्राजक' वधुओ का क्या होगा जो हमे वरिष्ठ मानकर हमारे ऊपर विश्वास एव श्रद्धा रखते आये है। हम उनको यो अचानक त्याग तो नहीं सकते। पहले हमे उनसे मिलना चाहिए और उन्हे अपने निर्णय से अवगत कराना चाहिए।"

दोनो मित्र परिव्राजको के प्रमुख शिक्षा कक्ष मे गये और साथी साधको को अपना यह निर्णय बताया कि हम इस भक्त समुदाय को छोड़ रहे हैं और बुद्ध के शिष्य बनने जा रहे है। जब परिव्राजको ने सुना कि सारिपुत्त और मौद्गल्यायन उन्हे छोड़कर जा रहे हैं तो वे अत्यन्त दुखी हुए। इन दोनो वरिष्ठ बधुओ के बिना भक्त समुदाय वैसा नहीं रह जाएगा, जैसा अब तक था। अतः उन सभी ने अपनी यह इच्छा प्रकट की कि वे सब भी उनका अनुसरण करेगे और बुद्ध के अनुयायी बन जाएगे।

सारिपुत्त और मौद्गल्यायन अपने गुरु आचार्य सजय के पास गये और भक्त समुदाय का निश्चय बताया। उन्होने सभी भक्तो को वहीं ठहरने का अनुरोध करते हुए समझाया कि "यदि तुम लोग यहा रहते हो तो मैं भक्त समुदाय का नेतृत्व तुम दोनो को सौपने को तैयार हू।" उन्होने अपने कथन की पुष्टि मे त्रिवाचा भरा किन्तु सारिपुत्त और मौद्गल्यायन तो अपना पक्का मन बना चुके थे।

उन्होने कहा, "गुरुवर, हम तो मुक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से आध्यात्मिक मार्ग पर आरूढ़ हुए थे न कि आध्यात्मिक नेता बनने के लिए। जब हम ही मुक्ति का सच्चा मार्ग नहीं जानते तो औरो का क्या नेतृत्व करेगे ? हमें गौतम बुद्ध के पास जाना चाहिए क्योकि उन्होने सद्धर्म का वह मार्ग प्राप्त कर लिया है जो हम इतने समय से खोज रहे थे।"

सारिपुत्त और मौद्गल्यायन आचार्य सजय के समक्ष प्रणत हुए और वहा से चल दिये। अन्य परिव्राजक भी उनके पीछे-पीछे चल पड़े। वहा से चलकर वे ताडवन पहुचे जहा उन्होने बुद्ध को नमन किया और उनसे आग्रह किया कि हमे भी प्रवृज्या देकर भिक्खु सघ मे सम्मिलित कर लिया जाए। बुद्ध ने उनके समक्ष चार आर्य सत्यो की देशना की और उन्हे प्रवृज्या देकर भिक्खु सघ में मिला लिया। इनके प्रवृज्या ले लेने से ताड़वन मे भिक्खुओ की सख्या साढे बारह सौ हो गई।

।। इति प्रथम भाग ।।

भाग दो

अध्याय तीस

वेणुवन का दान

पूर्णिमा का दिन था। बुद्ध अपना भिक्षा-पात्र हाथ मे लिये साढ़े वारह सौ भिक्खुओ के साथ राजगृह नगर मे प्रविष्ट हुए। वे सभी मन्द शात पग रखते हुए मौन रूप से चल रहे थे। राजधानी की सड़के दीपो और ताजे फूलो से सजी हुई थीं। वुद्ध और उनके सघ का अभिनन्दन करने के लिए मार्गों के दोनो ओर भीड़ उमड़ रही थी। भिक्खु दल जव चौराहो पर आता तो भीड़ वहुत अधिक हो जाती और वुद्ध तथा भिक्खुओ को आगे वढ़ना असंभव हो जाता।

उरुवेला काश्यप की समझ मे नहीं आ रहा था कि क्या किया जाए। तभी एक सुकुमार युवक हाथ मे वीणा लिए गाता हुआ आया। उसके गायन का स्वर वहुत मधुर था। जव वह गाता एव वीणा वजाता हुआ आगे वढ़ता तो लोग एक ओर को हो जाते। इससे वुद्ध को आगे वढ़ने का मार्ग मिल जाता। काश्यप पहचान गये कि इस व्यक्ति ने करीब एक महीने पहले ही उनसे प्रवृज्या ग्रहण की थी।

उसका गायन भावपूर्ण था और सम्मोहित हुए लोग उसके गान को श्रवण कर रहे थे। गायक को देखने के वाद लोग अपने सामने से निकलते हुए वुद्ध को भी देखते। गायक मुस्कराता जाता और अपना गायन जारी रखे हुए था:

"आभारी हू इनका शिष्य वनने का अवसर पाकर,
अब इनके अनत प्रेम और ज्ञान का करता आदर,
धर्म इनका देता चेतना को परम तुष्टि,
चेतना-जागृति का सत्य-पथ खोलता इनका सघ।"

वह युवा गाता रहा और बुद्ध के लिए भीड़ मे से रास्ता निकालता रहा

और बुद्ध एव सभी भिक्खु राज द्वार तक जा पहुचे। उसके बाद गायक ने बुद्ध को नमन किया और उसी प्रकार भीड मे अदृश्य हो गया जैसे अकस्मात् प्रकट हुआ था।

राजा बिम्बिसार छ· हजार आमन्त्रित अतिथियो एव अनुचरो के साथ बुद्ध का स्वागत करने द्वार तक आये और बुद्ध एव भिक्खु दल को राजमहल के प्रागण मे ले गये, जहा अतिथियो की धूप से रक्षा करने के लिए विशाल शामियाना तना हुआ था। प्रागण के मध्य मे बुद्ध को परम आदर सहित बैठाया गया। भिक्खुओ के लिए भी स्थान सावधानीपूर्वक बनाया गया था। जब बुद्ध अपने स्थान पर आसीन हुए तो राजा ने अन्य सभी को अपने-अपने आसनो पर विराजमान होने का निवेदन किया। राजा और उरुबेला काश्यप बुद्ध की अगल-बगल बैठ गये।

राजकुमार अजातशत्रु एक पात्र मे जल और तौलिया लेकर बुद्ध के समक्ष उपस्थित हुए जिससे बुद्ध अपने हाथ-पाव धो डाले। अन्य परिचारक जल-पात्र और तौलिए लेकर अन्य भिक्खुओ के पास गये। कर-पद प्रक्षालन कार्य सम्पन्न होने पर मेजो पर शाकाहारी भोजन लगा दिया गया। राजा ने स्वय बुद्ध के भिक्षा-पात्र मे भोजन परोसा और रानी विदेही अनुचरो को निर्देश देकर भिक्खुओ को भोजन परोसवा रही थीं। भोजन के पूर्व बुद्ध और भिक्खुओ ने विशेष गाथाओ का उच्चारण किया। राजा बिम्बिसार और समस्त राजकीय अतिथि उस समय पूर्णत· मौन रहे जब तक बुद्ध और भिक्खुओ ने भोजन ग्रहण किया। उनकी शात तथा आनदपूर्ण मुद्रा से समस्त राजकीय अतिथि अत्यधिक प्रभावित हुए।

जब बुद्ध और 1250 भिक्खु भोजन कर चुके तो उनके भिक्षा-पात्र ले लिए गये और साफ करके उन्हे लौटा दिये गये। राजा बिम्बिसार ने बुद्ध की ओर अभिमुख होकर हाथ जोड़े। राजा की इच्छा समझते हुए बुद्ध ने धर्म की देशना आरभ की। उन्होने पचशीलो की चर्चा की और कहा कि इनमे व्यक्ति के परिवार एव राज्य मे शाति एव प्रसन्नता का मार्ग प्रशस्त होता है।

"पहला शील है—जीव-हिसा से विरत रहना। इस शील से करुणाभाव जागृत होता है। सभी प्राणियों को मृत्यु का भय होता है। जैसे हमे अपने प्राणो का मोह होता है, उसी तरह हमे अन्य प्राणियो के प्राणो को समझना चाहिए। हमे केवल मानव-हिसा ही नहीं करनी चाहिए, वरन् अन्य प्राणियो की हत्या करने मे भी बचना चाहिए। हमे मानवो, पशुओ और वनस्पतियो
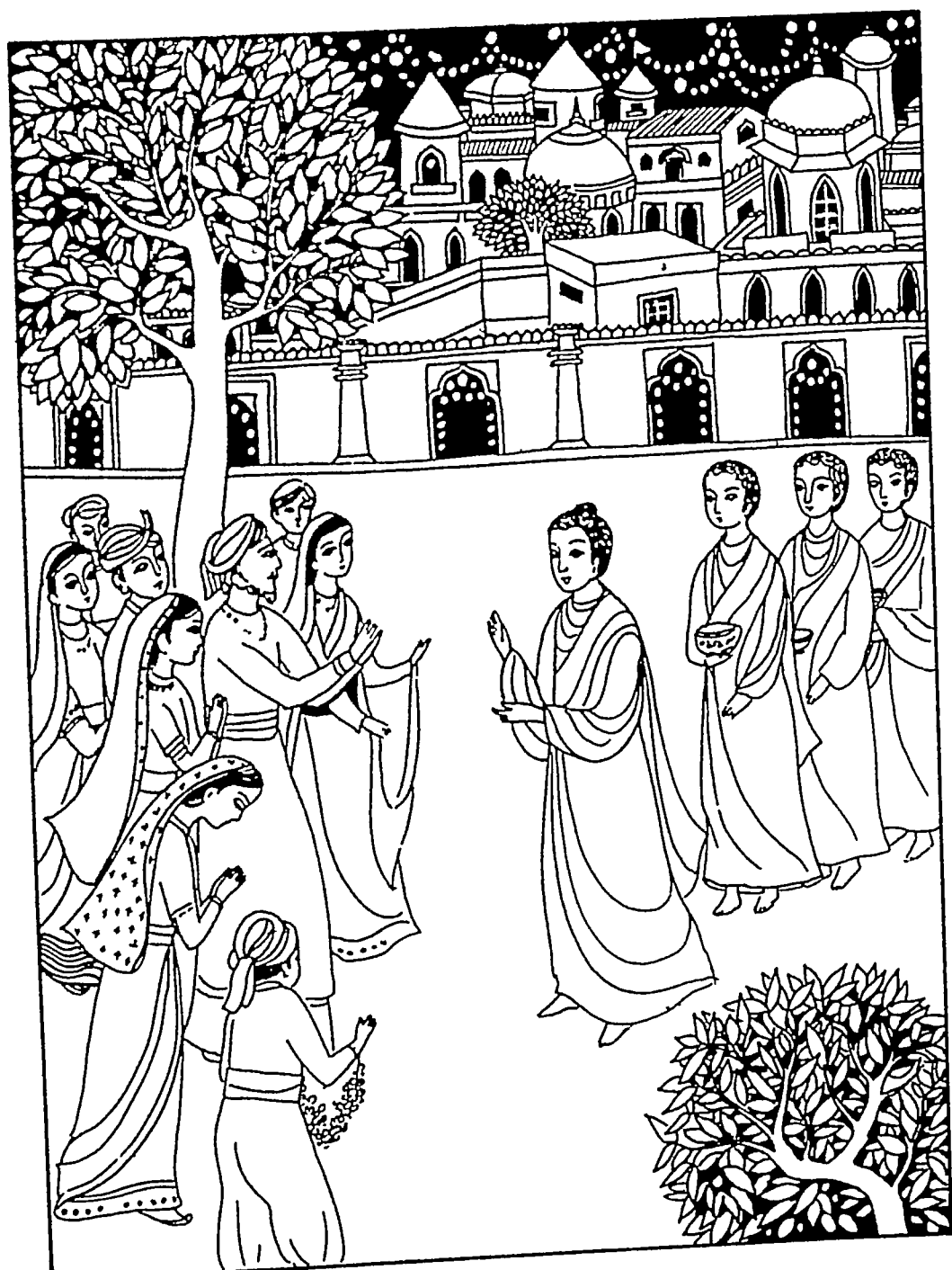
छः हजार परिचरों के साथ राजा बिम्बिसार द्वारा बुद्ध का स्वागत

के साथ भी सौमनस्य से रहना चाहिए। यदि हम अपने हृदय मे प्रेम का भाव रखे तो हम कष्टो को कम करके जीवन आनदपूर्ण बना सकते हैं। यदि प्रत्येक नागरिक अहिसा का व्रत ले ले तो राज्य मे शाति रहेगी। जब लोग एक-दूसरे के जीवन का आदर करेगे तो देश समृद्ध एवं शक्तिशाली होगा और वह अन्य देशों के आक्रमण से सुरक्षित रहेगा। राज्य की सैन्य शक्ति प्रबल भी हो तो उसे प्रयोग करने की आवश्यकता ही न पड़ेगी। सैनिको को सडके, पुल, व्यवसाय स्थान और बाधो के निर्माण सरीखे सद्कार्यों मे प्रयोग किया जा सकेगा।

"दूसरा शील है—चोरी से विरत रहना। किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं कि वह दूसरे की श्रम से अर्जित धन-सपदा हस्तगत कर ले। दूसरे की वस्तुओ को हथियाने का प्रयास करना दूसरे शील का उल्लघन है। दूसरो को धोखा मत दो या अपने प्रभाव एव सत्ता के प्रभाव का प्रयोग करके अन्य व्यक्तियो की वस्तुए मत छीनो। इसी प्रकार दूसरे के श्रम और गाढे पसीने की कमाई से स्वय लाभ उठाना भी इस शील के प्रतिकूल है। यदि नागरिक इस शील के अनुरूप आचरण करेगे तो सामाजिक समानता का विकास होगा और लूट तथा हत्याओ की घटनाए भी शीघ्र ही समाप्त हो जाएगी।

"तीसरा शील है—व्यभिचार से विरत रहना। शरीर-सबध केवल पति-पत्नी के बीच रहने चाहिए। इस शील का पालन करने से परिवार मे विश्वास और हर्ष बढता है और दूसरे लोगो को अनावश्यक कष्ट से बचाया जा सकता है। यदि आप प्रसन्नता चाहते है और अपने देश एव जनता की सहायता करने की इच्छा एव समय प्राप्त करना चाहते है तो बहुत सी रखैलो को मत रखिए।

"चौथा शील है—असत्य भाषण से दूर रहना। ऐसे वचन मत बोलिए जिससे विभाजन हो या घृणा बढे। आपके वचन सत्य पर आधारित होने चाहिए। हा कहने का अर्थ 'हां' हो और 'नहीं' कहने का अर्थ नहीं। शब्दो मे विश्वास और प्रसन्नता जगाने की शक्ति होती है। शब्द ही गलतफहमी और घृणा भी पैदा कर सकते है—यहा तक कि उनके कारण हत्या और युद्ध होना भी सभव होता है। इसलिए कृपया शब्दो का प्रयोग अधिकतम सावधानी से करे।

"पाचवा शील है—मद्यपान या नशीले पदार्थों से दूर रहना। मद्यपान और उत्तेजक पदार्थों के सेवन से चित्त की स्पष्टता समाप्त हो जाती है। जब कोई नशे मे होता है तो वह स्वय अपने लिए, अपने परिवार तथा अन्य

लोगो के लिए अकथनीय कठिनाइया उत्पन्न करता है। इस शील पर आचरण करने से शरीर और मन स्वस्थ रहता है। इस शील का पालन सभी कालो मे किया जाना चाहिए।

"यदि महामहिम और सभी उच्चपदस्थ अधिकारी इन पचशीलो का अध्ययन और पालन करे तो इससे आपका राज्य वहुत लाभान्वित होगा। महामहिम, राजा देश का प्रमुख होता है। उसे सतत् जागरूक रहना चाहिए और यह ज्ञात होना चाहिए कि उसके राज्य मे प्रत्येक क्षण कहा क्या हो रहा है ? यदि आप सुनिश्चित करेगे कि आपके अधीनस्थ लोग इन पचशीलो को ममझे और शान्ति एव सौमनस्य के साथ रहने के सिद्धातो के अनुकूल आचरण करे तो मगध देश सुख-समृद्धि प्राप्त कर सकेगा।"

प्रसन्नता से आनदित राजा विम्विसार उठकर खड़े हो गये और बुद्ध के समक्ष प्रणत हो गये। रानी विदेही कुमार अजातशत्रु का हाथ पकड़े हुए बुद्ध के समक्ष गयीं। उन्होने कुमार को वताया कि किस प्रकार हाथ जोड़कर बुद्ध का सादर अभिनदन करना है। रानी ने कहा, "बुद्ध देव, अजातशत्रु और चार सौ अन्य वच्चे आज यहां उपस्थित है। क्या आप इन्हे चेतना के मार्ग एव प्रेम के सवध मे कुछ वताने की कृपा करेगे ?"

रानी ने वुद्ध को नमन किया। वुद्ध ने मुस्कराकर कुमार अजातशत्रु का हाथ पकड लिया। रानी ने मुडकर अन्य वच्चो को भी पास आने का सकेत किया। वच्चे वड़े तथा धनी घरानो के थे। अतः अच्छे-अच्छे वस्त्र-आभूषण पहने हुए थे। अजातशत्रु वुद्ध के चरणो मे वैठ गये। बुद्ध को देहात के उन वच्चो का स्मरण आ गया जिनके साथ उन्होने वहुत समय पहले कपिलवस्तु मे उद्यान समारोह मे जम्वू वृक्ष के वीच वैठकर आनद मनाया था। उन्होने मौन भाव से व्रत लिया कि जव वह स्वदेश जाएगे तो उन वच्चो को खोजकर उन्हे भी सद्धर्म की शिक्षा देगे।

वुद्ध ने सामने वैठे वच्चो को सवोधित किया, "वच्चो, मानव जीवन प्राप्त करने के पहले मै पृथ्वी, पत्थर, पौधो, पक्षियो और अन्य अनेक प्रकार के पशुओ की योनि मे रह चुका हू। तुम्हारी भी हालत यही रही थी। आज तुम लोग मेरे सामने इसलिए वैठे हो कि पिछले जन्मो मे हमारा कुछ-न-कुछ सवध सपर्क रहा होगा। सभव है कि किसी अन्य जीवन मे हम एक- दूसरे के जीवन मे हर्ष या दुख के कारण रहे हो।

"आज मैं आपको वह कहानी सुनाऊगा जो हमारी हजारो योनियो पहले की है। यह कथा एक बगुले, केकड़े, वृक्ष और मछलियो की है। सभव है कि तुममे से कोई वगुला, केकड़ा या मछलियो मे से कोई रहा हो। मै

उस समय वृक्ष था। वगुला बहुत धोखेवाज था और उसके कारण मुझे बहुत कष्ट सहना पड़ा। लेकिन उस कष्ट से मैने यह सबक अवश्य पाया कि जो दूसरो को धोखा देता या कष्ट पहुचाता है, वह किसी-न-किसी दिन स्वय भी कष्ट पाता और धोखा खाता है।

"वृक्ष के रूप मे मैं एक मनोरम एवं शीलन कमल सरोवर के किनारे खडा था। सरोवर मे मछलिया नही थीं किन्तु पास ही में एक उथला तालाव था जिसमे वहुत-सी मछलिया, झींगा मछलिया और एक केकड़ा रहता था। ऊपर उड़ते वगुले ने उस तालाव को देखा और मछलिया खाने की योजना वनायी। वह उसके किनारे वहुत ही उदास होकर मुह लटकाए जा खड़ा हुआ।

"मछलियो ने जव उससे परेशानी का कारण पूछा तो उसने कहा कि मैं तो तुम्हारी दुरवस्था के कारण परेशान हू। यहा न साफ पानी है न पर्याप्त खाना।"

"मछलियो ने पूछा कि क्या आप हमारी परेशानी दूर करने का कोई रास्ता जानते है, तो उसने कहा कि, अगर तुम चाहोगी तो मै तुम्हे एक-एक करके यहा से ले जाकर उस सरोवर मे छोड आऊगा वहा साफ सा बहुत पानी है ओर खाने के लिए भी वहुत है।"

"मछलियो को वगुले पर विश्वास नहीं हो रहा था तो वगुले ने कहा कि यदि तुम्हे सदेह हो रहा है तो मैं पहले एक मछली को वहा जाकर दिखा लाता हू। तव तो तुम्हे भरोसा होगा ? बहुत सोच-विचार कर मछलियो मे एक वडी मछली जाने को तैयार हुई। मछली तेजी से तैर लेती थी और वालू पर भी अपना वचाव कर सकती थी। वगुले ने उस मछली को ले जाकर सरोवर दिखाया और वापस ले आया।"

"वगुले की नेकनीयती से सतुष्ट होकर मछलियो ने उससे प्रार्थना की हमें एक-एक करके उस सरोवर तक छोड आओ। वह चालाक वगुला अपनी चोच मे मछली को ले आता और मेरे ऊपर वैठकर खाता। आखिर मे उसकी हड्डिया मेरे तने के पास गिर जाता। ऐसा ही सिलसिला चलता रहा।

"मै तो वृक्ष था और यह सब घटित होते देखता। मुझे वहुत क्रोध भी आता किन्तु मैं कुछ कर नहीं सकता था। पेड तो जड से वधा होता है। शाखाएं बढाने के अलावा कुछ नही कर सकता था। मै न तो मछलियो को चेतावनी दे सकता था और न किसी शाखा की मदद से वगुले को उसकी करतूत से रोक सकता था। मैं वह भयानक दृश्य देखने के लिए

लाचार था। जब भी वह किसी मछली को लाता, उसे फाड़कर खाता और उसकी हड्डिया नीचे गिराता तो मुझे बहुत तकलीफ होती। मेरे तने पर मेरे आसू निकलकर जैसे जम जाते। इस तरह वह सारी मछलियो को खा गया।"

"वृक्ष होने के कारण मै जगल की शोभा ही बढ़ा सकता था। यदि मैं हिरन या मनुष्य होता तो मछलियो के लिए कुछ करता। मैने प्रण किया कि यदि कभी मुझे मनुष्य का जन्म मिला तो मै शक्तिशाली लोगो से कमजोर लोगो की रक्षा के लिए भरपूर प्रयास करूगा।"

"आखिर जब सब मछलिया और झीगा मछलिया खत्म हो गईं तो एक केकड़ा बचा। बगुले ने उसे भी ले जाने के लिए कहा तो केकड़े ने कहा कि आप मुझे ले कैसे जाएगे ? आपकी चोच तो पतली है, अगर मुझे न सभाल पाये तो मै जमीन पर गिरकर मर जाऊगा। इसलिए अगर मुझे ले चलना है तो अपने दोनो पजो से मै आपका गला पकड़ लेता हू। सरोवर मे पहुंचकर मै आपका गला छोड़ दूगा। बगुला इस पर सहमत हो गया।"

"बगुला केकड़े को लिए मेरे ऊपर ही आ बैठा तो केकड़े ने कहा कि आप मुझे [illegible] सरोवर न ले जाकर यहा क्यो ले आये। तो बगुले ने कहा कि कोई भी बगुला इ[illegible]ना मूर्ख नहीं हो सकता [illegible] मछलियो को एक तालाब से दूसरे सरोवर तक ले जा[illegible]कर छोड़ता फिरे। क्या तुम नीचे मछलियो की पड़ी हड्डिया नहीं देख रहे। अब तुम्हा[illegible]री जिन्दगी भी इसी प्रकार समाप्त होनी है।"

"यह सुनते ही केकड़े ने अपने पजे बगुले की गर्दन मे गड़ाने शुरू कर दिये। कष्ट से वह तड़प उठा और केकड़े को सरोवर तक ले जाने को तैयार हो गया। वह उसे लेकर सरोवर तक गया और केकड़े से कहा कि मेरी गर्दन छोड़कर पानी मे उतर जाओ। लेकिन उस तालाब की अपने साथ की सभी मछलियो की मृत्यु को याद करके उसने बगुले की गर्दन दबा ही डाली। इससे बगुला मर गया और केकड़ा उसे छोड़कर पानी मे चला गया।"

"बच्चो, उस समय मैं एक वृक्ष था। मै इस समूचे दृश्य का साक्षी था। इस घटना से मैने सीखा कि यदि हम दूसरो के साथ सद्व्यवहार करेगे तो दूसरे भी हमारे साथ वैसा ही सद्व्यवहार करेगे। लेकिन अगर हम दूसरो के साथ निर्दयता का व्यवहार करेगे तो हमे भी जल्दी या देर से, वही स्थिति भोगनी पड़ेगी। मैने व्रत लिया कि अपने अगले जन्मो मे मै अन्य प्राणियो की सहायता करने का प्रयास करूगा।"

"वच्चे वुद्ध की कहानी वड़े ध्यान से सुनते रहे। वृक्ष के कष्ट से वे दुखी हुए और असहाय मछलियो तथा झींगा मछलियो के दुर्भाग्य पर दया आई। उन्होने वगुले की धोखेवाज़ी की निन्दा की और केकड़े की होशियारी पर खुश हुए।"

"राजा विम्बिसार ने उठकर हाथ जोडे और नमन करते हुए कहा, "आचार्य, आपने वच्चो तथा वड़ो को एक महत्त्वपूर्ण शिक्षा दी है। मेरी प्रार्थना है कि कुमार अजातशत्रु आपके शब्दो को सदा स्मरण रखे। हमारे साम्राज्य का यह सौभाग्य है कि आप हमारे वीच हैं। अव यदि आप आज्ञा दे तो मैं आपको और आपके सघ को एक उपहार देना चाहता हू।"

वुद्ध ने मौन रूप से राजा की ओर उस आशय से देखा कि वह वताये कि क्या उपहार देने के इच्छुक है। इस पर राजा वोले, "राजगृह से दो मील उत्तर मे वड़ा और सुदर वेणुवन है। वह वहुत शात, ठडा और ताजगी देने वाला है। वहुत से अच्छे पक्षी वहा निवास करते हैं। मैं आपको तथा सघ को वह वेणुवन दान मे देना चाहता हू जहां आप सद्धर्म मार्ग की शिक्षा दे सके और साधना का अभ्यास स्वय कर सके तथा शिष्यो को करा सके। हे करुणावतार, हृदय से दिये हुए मेरे इस दान को स्वीकार कीजिए।"

वुद्ध ने एक क्षण के लिए विचार किया। यह पहला अवसर है, जव सघ को एक विहार के लिए भूमि दी जा रही है। वर्षा ऋतु मे रहने के लिए भिक्खुओ को जगह चाहिए भी थी। वुद्ध ने गहरा निश्वास लिया और मुस्कराकर राजा के उस उदारतापूर्ण किये दान को स्वीकारने की अनुमति दे दी। राजा विम्विसार इस पर फूले नहीं समाये। वह जानते थे कि यदि वहा विहार वन जाएगा तो वुद्ध मगध मे अधिक समय व्यतीत करेगे।

राजमहल मे आये अभ्यागतों मे उस दिन अनेक व्राह्मण धर्म के नेता भी उपस्थित थे। राजा के इस निर्णय से वहुत से व्राह्मण आचार्य प्रसन्न नहीं हुए किन्तु राजा से कुछ भी कहने का उनमे साहस नहीं था।

राजा ने जल का एक स्वर्ण-पात्र मगाया। उन्होंने वुद्ध के हाथ पर पात्र मे जल डालना आरभ किया और शुद्ध हृदय से घोषणा की, "वोधिसत्व, ज्यो-ज्यो जल आपके हाथ पर गिरता जा रहा है, त्यो-त्यो वेणुवन आपको तथा आपके सघ को हस्तातरित होता जा रहा है।"

इस दक्षिणा समारोह के साथ वेणुवन राजा के अधिकार से निकलकर वुद्ध के अधिकार मे आ गया। भोज-समारोह समाप्त हुआ और वुद्ध अपने साथ 1250 भिक्खुओ को लेकर राजमहल मे चल पड़े।

अध्याय इकतीस

वसन्त ऋतु में लौटूंगा

अगले ही दिन बुद्ध अपने अनेक वरिष्ठ शिष्यो के साथ वेणुवन देखने गए। लगभग सौ एकड़ जमीन मे लगे बास के झाड़ो से भरा वेणुवन सघ के लिए आदर्श स्थान था। वहा अनेक प्रजातियो के बास उगे हुए थे। वेणुवन के बीच मे स्थित्त कलन्दक सरोवर भिक्खुओ के स्नान करने, वस्त्र धोने और किनारे-किनारे चलित ध्यान करने के लिए सर्वोत्तम स्थान था। वेणुवन मे बास ही बास थे इसलिए ज्येष्ठ भिक्खुओ के रहने के लिए कुटीरो का सहज ही निर्माण किया जा सकता था। बुद्ध के वरिष्ठ शिष्य और कौडन्न, काश्यप और सारिपुत्त सभी वेणुवन देखकर प्रसन्न थे। वे तुरन्त वेणुवन मे विहार की स्थापना की योजना बनाने मे जुट गए।

बुद्ध ने कहा कि, "वर्षा ऋतु आवागमन के लिए अच्छा समय नहीं होता। भिक्खुओ को ऐसे स्थान की आवश्यकता है जहा वे वर्षाकाल मे अध्ययन और अभ्यास कर सके। ऐसा स्थान सुलभ हो जाने पर सघ-समुदाय वर्षा या धूप के कारण रोगग्रस्त नहीं होगे और अकस्मात् कीड़े-मकोड़ो के पैरो के नीचे आने से बचा जा सकेगा जो वर्षा काल मे पृथ्वी पर आ जाते हैं। अब आगे से, मैं वर्षा आने से पूर्व सभी भिक्खुओ को एक स्थान पर आने के लिए कहा करूगा। तीन महीनो के इस प्रवास काल मे क्षेत्र के उपासको से कह देगे कि वे तीन महीने के इस प्रवास मे भिक्खुओ के लिए भोजन की व्यवस्था किया करे। इस सदर्भ मे भिक्खु उन्हे जो शिक्षा देगे, उनसे उपासको को भी लाभ होगा। इस प्रकार वर्षा काल मे प्रवास की परपरा आरभ हुई।

मौद्गल्यायन के नेतृत्व मे युवा भिक्खुओ ने बास, फूस और सनी हुई मिट्टी से बुद्ध तथा वरिष्ठ भिक्खुओ के लिए कुटीर बना दिए। बुद्ध की

कुटिया छोटी किन्तु वडी आकर्षक थी। उसके पीछे पीले वास के गाछ थे और एक ओर को हरित वासो के झाड़ थे जिससे कुटिया पर छाया रहती थी। भिक्खु नागसमल ने वासो की ही एक नीची चारपाई वुद्ध के शयन के लिए वना दी थी। वुद्ध की कुटिया के पीछे मिट्टी के वड़े पात्र मे जल भर कर रख दिया गया था। काश्यप ने अपने पूर्व शिष्य नागसमाल से कहा था कि तुम गौतम वुद्ध की सेवा मे रहोगे।

सारिपुत्त ने वेणुवन विहार के लिए, राजधानी से दान मे एक घटा मगवा लिया था। उस घटे को कलन्दक सरोवर के किनारे एक वड़े वृक्ष मे वाध दिया गया था। इस घटे को वजाकर अध्ययन और साधना के समय की घोषणा की जाती। इस प्रकार सचेतनावस्था के अभ्यास मे इस घटे का वडा योगदान रहा। वुद्ध ने शिक्षा दी कि घटा-ध्वनि सुनकर भिक्खुओ को किस प्रकार रुक जाना और श्वसन-क्रिया पर ध्यान केन्द्रित करना है।

उपासक भी अनेक प्रकार से सघ के लिए सहायक सिद्ध हो रहे थे। उरुवेला काश्यप ने वर्षा-प्रवास के विषय मे समझाया कि "इस समय के दौरान सभी भिक्खुओ को वुद्ध के प्रत्यक्ष मार्ग-निर्देशन मे सद्धर्म मार्ग का अभ्यास-आचरण करने का सुअवसर प्राप्त होगा। उन्हे गहन अध्ययन और अभ्यास का पर्याप्त समय मिलेगा। वे वर्षा काल की आकस्मिक जीव-हिंसा मे भी वचेगे। आप लोग वर्षा-प्रवास काल मे भिक्खुओ के लिए भोजन जुटाकर सघ की सहायता कर सकते हो। सभव हो तो ऐसा समन्वय कीजिए कि भोजन की मात्रा न अधिक हो, न कम। निर्धनतम व्यक्ति जो एक या दो रोटी भी देगा, उसे वुद्ध या उनके किसी वरिष्ठ शिष्य की धर्म-देशना सुनने का अवसर दिया जाएगा। इस प्रकार इस प्रवास-काल मे भिक्खुओ और उपासको को समान रूप मे लाभ होगा।"

भिक्खुओ और व्यवसायहीन लोगो का कुशल सगठन करके काश्यप ने अपनी सगठन-प्रतिभा प्रदर्शित कर दी थी। उन्होने विहार के लिए आवश्यक वस्तुओ की भी व्यवस्था कर ली थी जिससे प्रत्येक भिक्खु के पास चीवर हो भिक्षा-पात्र हो, ध्यान-साधना का आसन हो, एक तोलिया और एक घडा (जल रखने के लिए) हो।

वर्षा-प्रवास का समय आ गया था और वुद्ध तथा उनके वरिष्ठ शिष्यो ने सघ के यहा आने का जो कार्यक्रम वनाया था, उसके अनुरूप सव कुछ हुआ। प्रात. जागने का घटा चार वजे वजना। नहाने के वाद भिक्खु अपने आप चलित ध्यान करते। सूर्योदय होने तक वे चलित ध्यान या वैठकर साधना

करते। सामान्यतः यह समय भिक्खुओ के भिक्षाटन का होता था किन्तु प्रवासकाल मे भिक्षाटन करने नहीं जाना होता था, अतः उस समय का उपयोग धर्म का गहन अध्ययन करने या वरिष्ठ भिक्खुओ से अपनी साधना मे आने वाली कठिनाइयो का निवारण करने मे करते। अध्यापन के लिए उन्हीं भिक्खुओ का चयन किया जाता जिन्होने धर्म के पथ को गहनता से समझ लिया था। कौंडन्न, अस्सजि, काश्यप, सारिपुत्त, मौद्गल्यायन, वप्प और महानाम को पचास या साठ भिक्खुओ को शिक्षा देने का भार सौपा गया था। अन्य अध्यापको के पास दस से लेकर तीस तक भिक्खु थे। नव भिक्खुओ को एक पृथक् अध्यापक के सुपुर्द कर दिया जाता जो बड़े भाई के समान उसकी देख-रेख करता। काश्यप और सारिपुत्त ने इस व्यवस्था का प्रणयन किया था।

दोपहर को भिक्खु सरोवर के समीप पक्तिबद्ध हो भिक्षा-पात्र हाथ मे लिए खड़े हो जाते। समस्त भोजन सब मे समान रूप से वितरित कर दिया जाता। भोजन लेकर सरोवर तट की घास पर बैठकर वे मौन रूप से भोजन करते और अपने पात्र साफ करके बुद्ध की ओर देखने लगते । कभी वह भिक्खुओ को सबोधित करते तो कभी अव्यवसायी उपासको को, किन्तु उनकी देशना का लाभ सभी प्राप्त कर पाते। कभी-कभी वह वहा उपस्थित बच्चो को ही सबोधित करते। इन धर्म-चर्चाओ मे वह प्रायः अपने विगत जीवनो की कथा सुनाते।

कभी-कभी बुद्ध किसी वरिष्ठ शिष्य को देशना करने के लिए कह देते और स्वय बैठकर सौम्य भाव से सुनते रहते और बीच-बीच मे प्रोत्साहन के कुछ वाक्य बोल देते। सद्धर्म-चर्चा के बाद श्रामणेर अपने-अपने घरो को लौट जाते और भिक्खु गण अपराह्न काल तक विश्राम करते। अपराह्न मे घटा बजने पर सभी भिक्खु बैठकर या चलते हुए ही ध्यान-साधना करते। सोने से पहले आधी रात तक भिक्खु अपनी साधना मे रत रहते।

बुद्ध रात मे काफी देर तक साधना करते रहते। वह अपनी बास की चारपाई अपनी कुटिया के आगे डलवा लेते और उस पर बैठकर रात्रि की शीतल वायु और चद्रमा के प्रकाश का आनद लेते। ब्रह्मवेला मे वे सरोवर के तट पर ध्यान युक्त भ्रमण करते। आनद से भरे, शात और सहज बुद्ध को उतने निद्रा-काल की आवश्यकता नहीं थी, जितनी युवा भिक्खुओ को होती थी। काश्यप भी रात्रि मे ही ध्यान करते।

राजा बिम्बिसार नियम से वेणुवन आते रहते। वह साथ मे बहुत से अभ्यागतो को नहीं लाते थे। कभी-कभी वह रानी विदेही और कुमार अजातशत्रु को ले आते। प्राय. वह अकेले ही आते। वह वन के बाहर ही रथ से

उतरकर पैदल बुद्ध की कुटी तक आते। एक दिन जब उन्होने देखा कि भिक्खुगण वर्षा मे भीगते हुए ही धर्म-देशना सुन रहे हैं तो उन्होने विशाल धर्म-कक्ष वनवा देने की अनुमति बुद्ध से मागी जिससे वर्षा होने की अवस्था मे भिक्खु भोजन भी कर सके और धर्म-देशना भी सुन सके। यह कक्ष इतना वडा वना था कि उसमे एक हजार भिक्खु और एक हजार उपासक आ सके। इस धर्म-कक्ष का निर्माण विहार के लिए वहुत सहायक सिद्ध हुआ।

परस्पर वार्तालाप करते समय बुद्ध और राजा प्रायः बुद्ध की चारपाई पर ही वैठ जाते। नागसमल ने वास की कुछ सादी कुर्सिया बना दीं जिससे बुद्ध को अपने अभ्यागतो को आसीन करने मे सुविधा हो। एक दिन जब बुद्ध और राजा अलग-अलग कुर्सियो पर वैठे हुए थे तो राजा ने कहा, "मेरा एक और पुत्र है जो आप से अभी नहीं मिला है। मेरी इच्छा है कि आप उस पुत्र और उसकी माता से अवश्य मिले। वह पुत्र विदेही रानी से नहीं जन्मा है। उसकी माता का नाम आम्रपाली है और पुत्र का नाम जीवक। वह शीघ्र ही सोलह वर्ष का हो जाएगा। आम्रपाली पाटलिपुत्र के उत्तर मे वैशाली में रहती है। उसे राजमहलो का वधन-ग्रस्त जीवन प्रिय नहीं है और पतिष्ठा या पद की ललक भी नहीं है। वह अपनी स्वतत्रता को सर्वाधिक मूल्यवान मानती है। मैने उसके जीवन-यापन मे सहायक होने वाली अनेक व्यवस्थाए की है जिनमे एक आम्रवन भी सम्मिलित है। जीवक बुद्धिमान और परिश्रमी युवक है। उसे सैनिक या राजनीतिक विषयो मे कोई रुचि नहीं है। राजधानी के समीप रहकर ही वह चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन कर रहा है। यदि आप अनुमति दे तो मैं जीवक और उसकी माता को निकट भविष्य मे वेणुवन आकर आपके दर्शन करने के लिए कह दूगा।"

बुद्ध शात भाव से स्वीकृति सूचक मुस्कराए। राजा करवद्ध प्रणाम करके आनंदित मन मे चल दिए।

इसी अवधि के दौरान, वेणुवन मे दो विशिष्ट अतिथि बुद्ध के गृह सुदूर कपिलवस्तु से पधारे। वह थे बुद्ध के पुराने मित्र कालुदयी और बुद्ध का सारथी चन्ना। उनके आगमन से वेणुवन विहार मे विशेष उत्साह भर उठा था।

बुद्ध को घर त्यागे सात वर्ष से भी अधिक हो गए थे। अतः वह घर के समाचार जानने के लिए बड़े उत्सुक थे। उन्होने कालुदयी से राजा, रानी यशोधरा, नंद, सुदरीनंदा, अपने मित्रो और अपने पुत्र राहुल के समाचार पूछे। यद्यपि कालुदयी का स्वास्थ्य अब भी ठीक था किन्तु उसकी मुखाकृति पर
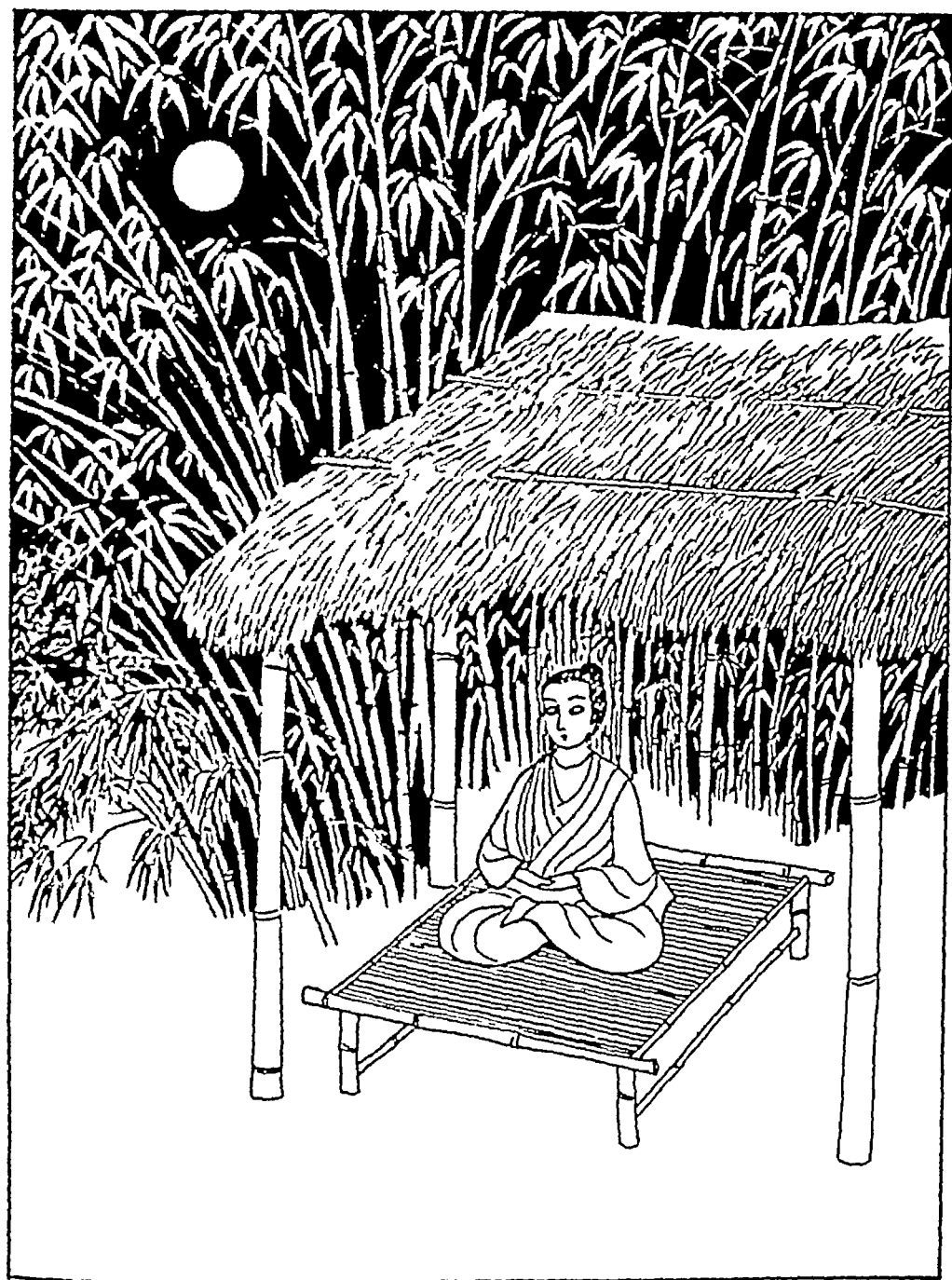
रात की चांदनी और शीतल रात्रि पवन में ध्यान साधना करते बुद्ध

आयु के चिह्न प्रकट होने लगे थे। चन्ना भी वृद्धता की ओर बढ़ रहा था। अपनी कुटिया के आगे बैठे हुए बुद्ध ने उनसे बड़ी देर तक चर्चा की। कालुदयी को राज दरबार मे उच्च पद प्राप्त हो चुका था और वह राजा शुद्धोधन के परम विश्वस्त परामर्शदाताओ मे गिना जाता था। बुद्ध ने सद्धर्म का मार्ग खोज लिया है और आजकल वह मगध मे धर्म देशना कर रहे हे, यह समाचार कपिलवस्तु मे दो मास पूर्व ही पहुचा था। सभी को विशेषत: राजा, रानी और यशोधरा को यह समाचार पाकर बहुत हर्ष हुआ था। राजा ने कालुदयी मे कहा कि वह जाकर बुद्ध को वापस ले आए। इस आदेश से कालुदयी को आतरिक हर्ष ही हुआ। यात्रा की तैयारी मे तीन दिन लगे और वह उन दिनो रात मे सो भी नहीं सका। यशोधरा ने सुझाव दिया कि साथ मे चन्ना को भी लिए जाओ तो चन्ना हर्ष के मारे रो पड़ा। दोनो व्यक्तियो को वेणुवन पहुचने मे एक महीने का समय लगा।

कालुदयी ने बताया कि राजा शुद्धोधन का शरीर-स्वास्थ्य पिछले कुछ वर्षों मे गिरा है, हालाकि मानसिक रूप से पूर्णतः सजग है। राज-काज सभालने के लिए राजा के पास अनेक प्रतिभावान मत्री है। गौतमी पहले की भांति पूर्ण स्वस्थ हैं। कुमार नद का कल्याणी के साथ विवाह किया जाना निश्चित हो गया है। नद एक सुन्दर सजीला नवयुवक था जिसे सुन्दर वस्त्र धारण करने का चाव था किन्तु राजा को यही चिन्ता थी कि अभी उसके व्यवहार मे स्थिरता और परिपक्वता नहीं आई है। बुद्ध की बहिन सुन्दरी नदा अब सुन्दर एव गरिमाशालिनी युवती बन गई है। जब से बुद्ध ने गृह-त्याग किया है, यशोधरा ने आभूषण पहनने बद कर दिए है और अत्यन्त सादगी से रहती है। उसने मूल्यवान सामान बेचकर उस धन से गरीबो की सेवा आरभ कर दी है। जब से यशोधरा को ज्ञात हुआ है कि बुद्ध दिन मे एक बार ही भोजन करते है, तो यशोधरा ने भी वैसा ही करना आरभ कर दिया है। वह रानी गौतमी के समर्थन से अपने समाज-सेवा कार्य को चलाए जा रही है। राहुल अब सात वर्ष का स्वस्थ एव सुदर बालक हो गया है। उसकी काली-काली आखो मे समझदारी और दृढ़-निश्चय झलकता है। उसके दादा-दादी उसे उतना ही प्यार-दुलार करते हैं, जितना बचपन मे सिद्धार्थ को करते थे।

कालुदयी ने जो कुछ बुद्ध को बताया, उसकी चन्ना ने पुष्टि की। अपने घर के ये सब समाचार सुनकर बुद्ध का हृदय प्रसन्न हुआ। अत मे कालुदयी ने बुद्ध से पूछा कि आप कपिलवस्तु कब लौटकर चल रहे हैं। बुद्ध ने कहा कि वर्षा ऋतु समाप्त होने पर मै लौटूगा। मैं नहीं चाहता कि जब

तक ये भिक्खु अपने साधना-अभ्यास मे और गहरे न उतर जाए, तब तक बीच मे ही छोड़ जाऊ। वर्षा-प्रवास के बाद मै आसानी से इन लोगो को छोड़कर जा सकूंगा। लेकिन कालुदयी और चन्ना, एक महीने के लिए तुम यहा रहकर इस जीवन का भी स्वाद क्यो नहीं लेते ? एक महीने के बाद कपिलवस्तु लौटने और राजा को यह सूचित करने का कि मैं वर्षा ऋतु के वाद लौटूगा, पर्याप्त समय रह जाएगा

वेणुवन विहार मे एक महीने तक अतिथि के रूप मे रहने की बात सुनकर कालुदयी और चन्ना बहुत हर्षित हुए। उन्होने कई भिक्खुओ को मित्र वना लिया और सद्धर्म के मार्ग खोजने हेतु गृह-त्याग करने वालो के बीच हर्ष और शातिपूर्ण जीवन बिताने का स्वाद लेने लगे। उन्हे ज्ञात हुआ कि दैनिक जीवन मे सचेतावस्था मे जीने का अभ्यास करने से मन और हृदय को कितना वल मिलता है। कालुदयी अधिकाश समय बुद्ध के साथ बिताता और उनके हर कार्य को ध्यान से देखता। बुद्ध की अद्भुत सहज-अवस्था से वह वहुत ही प्रभावित हुआ। यह स्पष्ट था कि उन्होने वह अवस्था प्राप्त कर ली थी जब वे किसी भी इच्छा के पीछे नहीं दौड़ते थे। बुद्ध की स्थिति मुक्त रूप से जल मे तैरती स्वच्छन्द मछली या आकाश मे शातिपूर्वक तैरते मेघ के समान थी। वे पूर्णतया वर्तमान क्षण मे जीते थे।

बुद्ध की आखे और उनकी मुस्कान उनकी आत्मा की अद्भुत मुक्ति के साक्षी थे। ससार की कोई वस्तु उनके लिए बधन नही थी किन्तु उनके समान इतना महान ज्ञान और प्रेम भी किसी के पास नहीं था। अकस्मात् कालुदयी के मन मे इच्छा जागी कि वह भिक्खु का सौम्य एव मुक्त जीवन व्यतीत करना आरभ कर दे। उसने अनुभव किया कि वह समस्त राजकीय पद, सपदा और प्रतिष्ठा तथा इस प्रकार के जीवन से जुड़ी चिन्ताए एव परेशानिया त्यागने को तैयार है। वेणुवन विहार मे सात दिन बिताने के बाद ही उसने अपनी यह इच्छा व्यक्त की कि वह प्रवृज्या लेकर भिक्खु बनना चाहता है। यह सुनकर बुद्ध ने तनिक आश्चर्य से उसकी ओर देखा और मुस्करा दिए और स्वीकृतिसूचक सिर हिला दिया।

चन्ना की इच्छा भी भिक्खु बन जाने की हो रही थी किन्तु राज-परिवार के प्रति अपने दायित्वो के प्रति सचेत चन्ना ने सोचा कि मुझे यशोधरा से पूछे बिना भिक्खु नहीं बनना चाहिए। उसने निश्चय किया कि भिक्खु बनने की प्रार्थना करने से पूर्व उसे बुद्ध के कपिलवस्तु लौटने की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

अध्याय बत्तीस

तर्जनी चन्द्रमा नहीं होती

एक दिन अपराह्न मे सारिपुत्त और मौद्गल्यायन अपने एक मित्र सन्यासी दीर्घनख को बुद्ध से मिलाने लाए। दीर्घनख ही सजय नाम से विख्यात थे और सारिपुत्त के चाचा थे। जब उनको विदित हुआ कि उनका भतीजा सारिपुत्त बुद्ध का शिष्य बन गया है तो उन्हे बुद्ध की शिक्षाओ के विषय मे जानने की उत्कठा हुई। जब उन्होने सारिपुत्त और मौद्गल्यायन से इस विषय मे जिज्ञासा की तो उन्होने कहा आप स्वय ही बुद्ध देव से क्यो नहीं मिल लेते।

दीर्घनख ने बुद्ध से पूछा, "गौतम, आपकी शिक्षाए क्या हैं ? आपके सिद्धान्त क्या हैं ? मै तो स्वय किन्हीं सिद्धान्तो या मान्यताओ को तनिक भी नहीं स्वीकारता।"

बुद्ध ने मुस्कराकर पूछा, "क्या आप अपने इस सिद्धान्त को मानते हैं कि मैं किसी भी सिद्धान्त को अपनाकर नहीं चलता ? क्या आप सभी सिद्धान्तो की अवमानना पर विश्वास करते हैं ?"

प्रश्न सुनकर अचकचाए दीर्घनख ने कहा, "गौतम, मै विश्वास करता हू अथवा नहीं करता, इसका कोई महत्त्व नहीं।"

बुद्ध ने कोमलता से उत्तर दिया, "यदि कोई व्यक्ति सिद्धान्त के विश्वास का वशी बन जाता है तो उसकी स्वतत्रता समाप्त हो जाती है। जब कोई दुराग्रही बन जाता है तो वह मानता है कि उसका सिद्धान्त ही एकमात्र सत्य है और अन्य सिद्धान्त सुनी-सुनाई बाते। समस्त झगडे और सघर्ष विचारों की सकीर्णता से उत्पन्न होते हैं और वे अनत रूप से चलते रहते हैं जिससे मूल्यवान समय ही नष्ट नहीं होता, अपितु युद्ध तक हो जाते हैं। किन्हीं मान्यताओ मे बध जाना आध्यात्मिक मार्ग की सबसे बडी बाधा बन जाता

है। सकीर्ण विचारो से वधा व्यक्ति उनकी कैद मे फस जाता है और सत्य के द्वार खुलना असभव हो जाता है।

"मै आपको एक विधुर की कथा सुनाता हू जो अपने पाच वर्ष के बालक के साथ रहता था। वह अपने पुत्र को अपने प्राणो से अधिक प्यार करता था। एक दिन वह अपने पुत्र को घर छोडकर अपने कामकाज के सिलसिले मे वाहर गया। उसके जाने पर लुटेरो ने उसका घर लूट लिया और घर को आग लगा दी। वे उसके पुत्र का अपहरण कर ले गए। जब व्यापारी वापस आया तो घर जला हुआ था और एक छोटे वच्चे की बुरी तरह जली लाश पड़ी थी। उसने समझा कि यह उसके पुत्र का शव है। वह अत्यधिक दुःख-ग्रस्त हो गया। जले शव का संस्कार करके उसने उसकी अस्थिया एवं भस्म एक थैले मे रख ली। वह जहा भी जाता, थैला साथ ले जाता। कई महीनो के वाद उसका वेटा उन लुटेरो के चगुल से निकल भागा और आधी रात को अपने घर पहुचकर घर का द्वार खटखटाया। कोई उत्तर न आने पर उसने वार-वार द्वार खटखटाया और चिल्लाकर कहा भी कि मै आपका वेटा हू। किन्तु उस व्यापारी ने समझा कि पड़ोस का कोई बच्चा उसके पुत्र-प्रेम का मखौल उड़ा रहा है। अतः उसने दरवाजा खोला ही नही। हारकर उसका पुत्र वहां से चला गया और पिता-पुत्र सदा के लिए बिछुड़ गए।

"यदि मित्रवर, किसी मान्यता को ध्रुव सत्य मानकर उससे चिपटे रहते हैं तो एक दिन अपने को उसी विधुर की स्थिति मे पाते है। हमे तो सत्य का ज्ञान हो चुका है, इस विश्वास के कारण वह अपने मन के द्वार सत्य सामने होने पर भी नहीं खोलते, भले ही सत्य स्वय द्वार पर दस्तक क्यो न दे रहा हो।"

दीर्घनख ने प्रश्न किया कि, "आपकी अपनी शिक्षाए क्या है ? यदि कोई आपकी शिक्षाओ का अनुसरण करे तो क्या वह भी सकीर्ण विचारो का वदी नहीं हो जाएगा ?"

"मेरी शिक्षाए न तो कोई सिद्धान्त है और न कोई दर्शन। यह न तो किसी वाद-विवाद के निष्कर्ष है और न विभिन्न दर्शनो के समान मानसिक मान्यताए, जिनके अनुसार हम दावा करते हैं कि अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी और आत्मा से सृष्टि का सृजन ही आधारभूत सत्य है, अथवा सृष्टि का अत होता है या वह अनत है अथवा सृष्टि नित्य है या अनित्य है। इस प्रकार की ध्रुव सत्य सवधी मानसिक मान्यताए और विचार-विमर्श जन्य विचार-धाराए उन चीटियो के समान हैं जो कटोरी के किनारे की ही सतत्

परिक्रमा करती रहती हैं किन्तु पहुचती कहीं नहीं है। मेरी शिक्षाए कोई दर्शन नहीं हैं। ये तो प्रत्यक्ष अनुभूतियो के परिणाम है। आप मेरे कथन की अपनी अनुभूतियो द्वारा पुष्टि कर सकते है। मैं शिक्षा देता हू कि सभी वस्तुए अनित्य हैं प्रतीत्य समुत्पाद हैं और उनकी कोई पृथक् सत्ता नहीं होती। मेरी शिक्षा है कि प्रत्येक पदार्थ सृजन, वर्द्धन और मरण के लिए सभी पदार्थों पर निर्भर है। कोई भी पदार्थ किसी एक मूल स्रोत से उत्पन्न नहीं होता। मैंने इस सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव किया है जिसे आप भी अनुभव कर सकते हैं। मेरा उद्देश्य सृष्टि-रचना के विषय मे बताना नहीं है, वरन् अन्य लोगो को प्रत्यक्ष अनुभूति करने मे सहायता करना है। शब्दो से उस परम सत्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। केवल प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा ही हम उस परम सत्य का साक्षात्कार कर सकते हैं।"

दीर्घनख हर्ष-विभोर होकर कह उठे, "अद्भुत, अद्भुत, गौतम। किन्तु उस समय क्या होगा जब आपकी शिक्षाओ को भी अंध श्रद्धायुक्त सप्रदाय बना दिया जाए ?"

बुद्ध एक क्षण के लिए मौन रहे और सिर हिलाकर कहा-"दीर्घनख जी, आपका यह बहुत ही गहन प्रश्न है। मेरी शिक्षाए न तो कोई सिद्धान्त है और न दर्शन, किन्तु कुछ लोग इसे साप्रदायिक स्वरूप दे सकते है। मै स्पष्ट कहना चाहता हू कि मेरी शिक्षाए, ध्रुव सत्य की अनुभूति करने की एक पद्धति है, न कि स्वय मे एक ध्रुव सत्य। ठीक उसी प्रकार जैसे चद्रमा की ओर इगित करने वाली तर्जनी चद्रमा नहीं हो जाती। समझदार व्यक्ति चद्रमा को देखने के लिए तर्जनी का प्रयोग करता है। यदि कोई व्यक्ति केवल तर्जनी को देखता है और उसे ही भ्रमवश चद्रमा मान लेता है, तो वह चन्द्रमा को कभी नहीं देख सकता। मेरी शिक्षा तो साधना-अभ्यास का एक साधन मात्र है, न कि सदैव उसे पकडे बैठे रहने या पूजा का साध्य। मेरी शिक्षा तो नदी पार जाने के लिए नौका के समान है। नदी के दूसरे छोर-मुक्ति के तट-पर पहुचकर नाव को कोई मूर्ख ही साथ-साथ लिए फिरता होगा।"

दीर्घनख ने हाथ जोड़कर कहा-"बुद्धदेव, कृपया मुझे वह मार्ग बताइए, जिससे कष्टपूर्ण भावनाओ से मुक्ति मिल सके।"

बुद्ध ने कहा कि "भावनाए तीन प्रकार की होती है—सुखद, दुखद और तटस्थ। तीनो प्रकार की भावनाओ का मूल है—शरीर और चित्त के सकल्प-विकल्प। मानसिक तरगो या पदार्थगत प्रपचो के समान ही भावनाए जागृत होती और तिरोहित होती हैं। मै वह पद्धति बताता हू कि गहराई

से देखकर भावनाओ की प्रकृति एव स्रोत को पहचाना जा सके, फिर चाहे वे भावनाए सुखद, दुखद या तटस्थ भाव की ही क्यो न हो। जब आप भावनाओ के स्रोत को देखेगे, तो पाएगे कि भावनाए शाश्वत नहीं है और धीरे-धीरे आप भावनाओ के उठने और तिरोहित होने की प्रक्रिया के दृष्टा बन सकते हैं। समस्त दुखद भाव-बोध का स्रोत वास्तविक सत्य को भ्रमित दृष्टि से देखना है। जब आप भ्रात विचारो को समाप्त कर देगे तो विषमताओ का भी अन्त हो जाएगा। भ्रान्त विचारो के कारण लोग अनित्य पदार्थों को नित्य समझते हैं। इस प्रकार अज्ञान समस्त दुःखो का कारण है। हम सचेतनता के मार्ग का अभ्यास करते हैं जिससे हम अज्ञान को समाप्त कर सके। व्यक्ति को सभी पदार्थों (तत्त्वों) को गहराई से देखना-समझना चाहिए जिससे उनकी सत्य स्थिति मे प्रवेश किया जा सके। प्रार्थनाओ और यज्ञादि से अज्ञान पर विजय नहीं पाई जा सकती।"

जब बुद्ध ये सारी बाते दीर्घनख को समझा रहे थे तो सारिपुत्त, मौद्गल्यायन, कालुदयी, नागसमल और चन्ना भी सुन रहे थे। बुद्ध की देशना को सारिपुत्त सर्वाधिक गहनता से समझने मे सक्षम थे। उन्हे लगा जैसे उनका चित्त सूर्य के प्रकाश की तरह जगमगाने लगा। अपने आनद को छिपा न पाने पर वे हाथ जोड़कर बुद्ध के चरणो पर प्रणत हो गए। साथ ही मौद्गल्यायन भी प्रणत हो गए। इसके बाद बुद्ध की देशना से अत्यधिक प्रभावित दीर्घनख भी बुद्ध के समक्ष प्रणत हो गए। कालुदयी और चन्ना इस दृश्य से आतरिक रूप से प्रभावित हुए। उन्हे इस बात का गौरव अनुभव हो रहा था कि वह बुद्ध के जीवन से जुड़े रहे है। बुद्ध के सद्धर्म मार्ग के प्रति उनका विश्वास एव श्रद्धा और भी दृढ़ हो गई थी।

इसके कुछ दिनो बाद रानी विदेही और उनका एक अनुचर विहार मे आया और सघ को भोजन भेट किया। वह प्लुमेरिया वृक्ष की पौध भी लाईं जिसे उन्होने बुद्ध के पूर्व जन्म की उस कथा की स्मृति मे रोप दिया जो बुद्ध ने राजमहल के प्रागण मे बच्चो को सुनाई थी।

बुद्ध के मार्ग-निर्देश मे भिक्खु समुदाय ने सद्धर्म के मार्ग पर सतत् अधिकाधिक प्रगति की। अपनी बुद्धिमत्ता, परिश्रम और नेतृत्व के गुणो के कारण सारिपुत्त और मौद्गल्यायन सर्वश्रेष्ठ रत्न थे। ये लोग काश्यप और कौडन्न के साथ मिलकर सघ के सगठन को दृढ़ करने और सद्धर्म मार्ग पर बढने का दिशा-निर्देश दिया करते थे।

यद्यपि सघ की प्रतिष्ठा बढ़ रही थी, किन्तु कुछ लोग बुद्ध और उनके

भिक्खु समुदाय की निन्दा भी करने लगे थे। इनमे से कुछ अफवाहे तो उन धार्मिक समुदायो के सदस्य फैला रहे थे जो राजा द्वारा संघ को दी जा रही सहायता से अप्रसन्न थे। जो उपासक प्रायः वेणुवन आया करते थे, वे इन अफवाहो को सुनकर चिन्तित हो उठते। राजगृह मे वहुत से लोग स्पष्टत. इस वात से चिन्तित थे कि धनी तथा श्रेष्ठ घरानो के वहुत से नवयुवक भिक्खु वन गए थे। उन्हे भय था कि शीघ्र ही सभी युवक अपने घर छोड़कर भिक्खु वन जाएगे तो राजगृह मे गुणवती श्रेष्ठ कुमारियो के लिए वर ही नहीं रह जाएगे। इस प्रकार इन परिवारो का वश-क्रम ही समाप्त हो जाएगा, ऐसी चेतावनिया वह दिया करते थे।

जव उन्होने इस तरह की अफवाहे सुनीं तो वहुत से भिक्खु अप्रसन्न हुए। किन्तु इस समस्त घटनाक्रम की सूचना वुद्ध को दी गई तो उन्होने अव्यवसायी लोगो और भिक्खुओ को शान्त किया और कहा–"ऐसी वातो की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। देर-सवेर ये सारी वाते अपने-आप ही समाप्त हो जाएगी।" और अन्त मे हुआ भी ऐसा ही। एक महीने से भी कम समय मे इस प्रकार के निराधार भयो की चर्चा समाप्त हो गई थी।

अध्याय तैंतीस

शाश्वत सौन्दर्य

वर्षा-प्रवास समाप्त होने के दो सप्ताह पूर्व एक असाधारण सुदर महिला बुद्ध से मिलने आई। वह दो श्वेत अश्वो वाले एक श्वेत रथ मे आयी थी और उसके साथ, सोलह वर्ष के आयु के आसपास का एक युवक भी था। उसकी वेश-भूषा तथा चाल-ढाल सर्वथा सुरुचिपूर्ण और गरिमापूर्ण थी। उसने आकर एक युवा-भिक्खु से अनुरोध किया कि मुझे बुद्ध की कुटिया तक ले चलिए। जब वे कुटिया पर पहुचे तो बुद्ध चलित ध्यान करके लौटे नहीं थे। भिक्खु ने उन लोगो को बुद्ध की कुटिया के आगे रखी दो कुर्सियो पर बैठा दिया।

थोड़ी देर बाद ही बुद्ध वापस आ गए। उनके साथ कालुदयी, सारिपुत्त और नागसमल भी थे। वह महिला एव युवक सम्मानपूर्वक उठे और बुद्ध को सादर नमन किया। बुद्ध उन्हे बैठने का अनुरोध करते हुए स्वय तीसरी कुर्सी पर बैठ गए। वह समझ गए कि आने वाली महिला आम्रपाली और युवक राजा बिम्बिसार का पुत्र जीवक है।

कालुदयी ने अपने जीवन मे इतनी सुदर महिला नही देखी थी। उसने अभी एक महीने पहले ही भिक्खु की प्रवृज्या ली है और उसे समझ नहीं आ रहा था कि किसी भिक्खु को ऐसी परम सुदरी की ओर देखना भी चाहिए या नहीं। आखिर उन्होने अपनी आखे नीची कर लीं। नागसमल की भी यही स्थिति हुई। केवल बुद्ध और सारिपुत्त ही उस सुन्दरी से आखे मिला सके।

सारिपुत्त कभी आम्रपाली को देखते तो कभी बुद्ध को। वह देख रहे थे कि बुद्ध की दृष्टि कितनी सहज और सौम्य है। उनका मुख-मडल चन्द्रमा की भाति शात और सुदर था। उनकी दृष्टि कृपापूर्ण और स्पष्ट थी। सारिपुत्त

को प्रतीत हुआ कि बुद्ध की सतुष्टि, सहज और आनद-भावना उनके अपने हृदय मे सीधी प्रवेश हो गई है।

आम्रपाली भी बुद्ध की आखो मे आखे डाले देख रही थी। जिस प्रकार बुद्ध उसे निर्विकार भाव से देख रहे थे, उस दृष्टि से उसे आज तक किसी ने नहीं देखा था। जहा तक उसे स्मरण है, लोग उसे देखकर उलझन मे पड़ जाते थे या फिर उनकी आखो मे इच्छा झाक रही होती। बुद्ध तो उसे इस प्रकार देख रहे थे जैसे किसी मेघ या सरिता या पुष्प को देखते थे। आम्रपाली को लग रहा था कि वह गहरे झाककर उसके हृदय के विचारो को भी समझ लेगे। उसने हाथ जोड़कर अपना और अपने पुत्र का परिचय दिया। "मै आम्रपाली हू और यह मेरा पुत्र जीवक है जो चिकित्सक बनने के लिए अध्ययनरत है। हमने आपके विपय मे वहुत कुछ सुना था और आपसे मिलना चाहते थे जो आज सभव हुआ है।"

बुद्ध ने जीवक से पूछा कि उसका अध्ययन और दैनिक जीवन-चर्या कैसी चल रही है। जीवक ने नम्रता के साथ इन प्रश्नो के उत्तर दिए। बुद्ध समझ गए कि यह युवक दयालु प्रकृति का है और प्रतिभाशाली है। यद्यपि उसके पिता वही थे, जो कुमार अजातशत्रु के थे किन्तु स्पष्ट था कि उसका चरित्र वाल कुमार से अधिक विचार-विमर्श पूर्ण था। जीवक के हृदय मे बुद्ध के प्रति सम्मान और प्रेम का भाव था। उसने कहा कि जब मैं अपनी चिकित्सा विषयक शिक्षा पूर्ण कर लूगा तो वेणुवन मे बुद्ध के पास ही रहूगा।

बुद्ध से मिलने से पहले आम्रपाली यह मानकर चल रही थी कि वह वहुत से उन अन्य विख्यात गुरुओ के समान ही होगे, जिनसे वह मिल चुकी थी। लेकिन वह इससे पूर्व बुद्ध सरीखे किसी गुरु से नहीं मिली थी। उनकी दृष्टि निश्चय ही कोमल और करुणापूर्ण थी। उसने सोचा कि ये ही मेरे उन दुःखो को समझ सकेगे जो उसके हृदय मे पल रहे हैं। उनकी करुणापूर्ण दृष्टि से ही उसके बहुत से दुःख दूर हो गए थे। जब उसने वोलना आरभ किया तो उसकी आखे छलछला आई थीं। "गुरुवर, मेरा जीवन दुःखो का आगार है। यद्यपि मेरे पास धन-सपदा की कोई कमी नहीं है और अभी तक किसी वस्तु की आकाक्षा अतृप्त नहीं रही है। फिर भी, आज का दिन मेरे जीवन का सर्वाधिक उल्लास का दिन है।"

आम्रपाली विख्यात गायिका और नर्तकी थी लेकिन किसी भी व्यक्ति के कहने भर से अपनी कला का प्रदर्शन नहीं करती थी। यदि किसी के तौर-तरीके या व्यवहार उसे अच्छा नहीं लगे, तो वह अपनी कला का प्रदर्शन करने

से इनकार कर देती, चाहे फिर वह व्यक्ति उसे कितना ही स्वर्ण देने का प्रस्ताव क्यो न रखे। जव वह सोलह वर्प की थी, तो किसी से प्रेम करने लगी थी। किन्तु उस प्रेम-प्रसग ने उसका हृदय ही तोड़ा। कुछ समय बाद उसकी भेट युवा राजकुमार विम्विसार से हुई और उन दोनो मे प्रेम हो गया। उसी से विम्विसार के पुत्र जीवक का जन्म हुआ। किन्तु राजमहल मे कोई भी उसे और उसके पुत्र को स्वीकार करने के लिए तैयार नही था। महल के लोगो ने यह अफवाह उड़ा दी कि वह परित्यक्त अनाथ है जिसे राजकुमार सडक के कूड़े के ढेर से उठाकर लाए थे। इन आरोपो से आम्रपाली के हृदय को आघात लगा। राजमहल मे उसे द्वेष और घृणा से भरे अपमान के कडुए घूट पीने पड़े। शीघ्र ही उसने समझ लिया कि उसे स्वतत्र रहना है और अपनी स्वतत्रता की पूर्ण शक्ति से रक्षा करनी है। उसने महल मे रहना अस्वीकार कर दिया और प्रण किया कि वह अपनी व्यक्तिगत स्वतत्रता किसी भी कीमत पर नहीं खोएगी।

वुद्ध ने सहजता से उससे कहा–"किसी अन्य वस्तु के समान सुदरता आती है और चली जाती हैं। ख्याति और धन-संपदा भी इसी प्रकार आनी-जानी हैं। ध्यान-साधना करने से जो शांति, हर्ष और स्वतत्रता प्राप्त होती है, उसी से सच्चा आनद प्राप्त होता है। आम्रपाली इस जीवन के जो क्षण शेष रह गये हैं, उनको जियो और उनका पूरा ख्याल रखो। अपने व्यक्तित्व को भुलावे मे अथवा निरर्थक आमोद-प्रमोद मे नष्ट मत करो। यह बात सबसे महत्त्वपूर्ण है।"

वुद्ध ने आम्रपाली को वताया कि उसे अपना नित्य नैमित्तिक जीवन नई विधि के अनुसार कैसे व्यवस्थित करना है। प्राणायाम करो, ध्यान मे बैठो, सचेतनता की भावना से कार्य करो और 'पचशीलो' के पालन का अभ्यास करो। इन मूल्यवान शिक्षाओ को पाकर वह हर्षोन्मत्त हो उठी। वहा से विदा होने के पूर्व उसने कहा, "वैशाली नगर के बाहर मेरे अधिकार मे एक आम्रवन है जो शीतल भी है और शातिपूर्ण भी है। मै आशा करती हू कि आप और आपके भिक्खु वहा कभी पधारने की कृपा करेगे। यदि ऐसा हो सका तो यह मेरे लिए और मेरे पुत्र के लिए बहुत ही सम्मान की बात होगी। वुद्ध देव, कृपया मेरे इस निमत्रण पर विचार कीजिए।"

वुद्ध ने मुस्कराकर स्वीकृति दे दी।

जव आम्रपाली चली गई तो कालुदयी ने बुद्ध के पास बैठने की अनुमति मागी। नागसमल ने सारिपुत्त को दूसरी कुर्सी पर बैठने को कहा और वह

आम्रपाली ने जान लिया कि बुद्ध को उसके मनोभाव पढ़ लेने की अन्तर्दृष्टि प्राप्त है

स्वय खड़ा ही रहा। अन्य अनेक भिक्खु जो बुद्ध की कुटीर के पास से गुजर रहे थे, वहा रुक गए। सारिपुत्त ने कालुदयी की ओर देखा और मुस्कराए। उन्होने नागसमल की ओर भी देखा और मुस्करा दिए। तव उन्होने बुद्ध से प्रश्न किया, "वोधिसत्व, एक भिक्खु को किसी स्त्री की सुदरता को किस दृष्टि से देखना चाहिए, विशेषत: उस स्त्री को जो आध्यात्मिक साधना मे अवरोधक हो ?"

बुद्ध मुस्कराए। वह समझ गए कि सारिपुत्त यह प्रश्न अपनी खातिर नहीं, अन्य भिक्खुओ की तरफ से पूछ रहे हैं। उन्होने कहा–"भिक्खुओ, सभी धर्म वस्तुत: सुदरता और कुरूपता का विचार नही करते – वे उनसे परे होते हैं। सुन्दरता या कुरूपता का भाव-वोध तो हमारे चित्त को प्रतिबिम्बित करता है। सुन्दरता और कुरूपता दोनो का सृजन पाच तत्त्वो से होता है। कलाकार की दृष्टि मे कुछ भी सुदर हो सकता है और किसी वस्तु को वह कुरूप वना सकता है। सरिता, वादल, पत्ता, फूल, सूर्य की एक किरण या दोपहर वाद की धूप सभी मे सौदर्य होता है। हमारे पास मे उगे हुए पीले वास भी सुंदर है। किन्तु कोई भी अन्य सौंदर्य स्त्री के सौदर्य से अधिक चित्त मे विघ्न नहीं डालता। यदि कोई स्त्री के सौदर्य से अभिभूत हो जाता है तो वह सद्धर्म के मार्ग से भटक सकता है।

"भिक्खुओ, जव आपने चित्त की गहराई मे वैठकर देख लिया है और सद्धर्म की गति प्राप्त कर ली है तो सुन्दर, सुन्दर लग सकता है और कुरूप, कुरूप। किन्तु आपने भाव-वोध से मुक्ति प्राप्त कर ली है तो आप इनमे से किसी से वधे हुए नहीं हो। जव कोई मुक्त व्यक्ति सौन्दर्य की किसी देवी को देखता है तो वह यह भी देख सकता है कि वह सौन्दर्य प्रतिमा कितने कुरूप पदार्थों से निर्मित हुई है। मुक्त पुरुष सभी वस्तुओ की अनित्यता और अस्तित्वहीनता को भी समझ पाता है, जिनमे सुन्दर और कुरूप दोनो प्रकार की वस्तुए सम्मिलित है। इसलिए वह न तो सुदर वस्तु से सम्मोहित होता है और न कुरूप से विरक्त।

"एक ही सौदर्य शाश्वत है–कभी फीका नहीं पड़ता–वह है करुणामय मुक्त हृदय जिससे किसी को दुख नही होता। करुणा का अर्थ है—अहैतुक प्रेम और उसके बदले मे किसी प्रकार की अपेक्षा नहीं करना। मुक्त हृदय किसी प्रकार की शर्तों से बधा नहीं होता। करुणापूरित मुक्त हृदय ही सच्चा सौंदर्य है। उस सौदर्य की शांति और हर्ष ही सच्ची शाति और सच्चा हर्ष है। भिक्खुओ, परिश्रिमपूर्वक अभ्यास करो तो आपको सच्चे सौदर्य की अनुभूति हो जाएगी।"

कालुदयी और अन्य भिक्खुओ को बुद्ध के शब्दो से सत्य समझने मे वहुत सहायता मिली।

वर्षा-प्रवास समाप्त होने को आया। बुद्ध ने कालुदयी और चन्ना को वुलवाया और कहा कि आप लोग कपिलवस्तु के लिए रवाना हो जाइए जिससे मेरे सुनिश्चित आगमन की पूर्व सूचना दे सके। कालुदयी और चन्ना ने यात्रा के लिए अविलम्ब तैयारी आरभ कर दी। कालुदयी अब एक भिक्खु वन गया था जिसका स्वभाव शात एव सौम्य वन गया था। वह समझता था कि जब सव लोग राजधानी मे उसे इस रूप मे देखेगे तो आश्चर्यचकित होगे। उसे इस वात की तो प्रसन्नता हो रही थी कि वह बुद्ध के पुनरागमन की घोषणा करने का हर्षदायी कार्य करने जा रहा है, साथ ही, उसे यह भी दु:ख हो रहा था कि वेणुवन मे इतने अल्पकाल तक रहने के वाद ही उसे जाना पड़ रहा है।

अध्याय चौंतीस

पुनर्मिलन

कालुदयी ने राजा, रानी और यशोधरा को बुद्ध के सुनिश्चित आगमन की सूचना प्रदान की और अपना भिक्षा-पात्र लेकर कपिलवस्तु से अकेला चल पड़ा, जिससे वह बुद्ध को मार्ग मे ही मिल सके। वह दिन मे यात्रा करता और रात को विश्राम करता और भोजन के लिए रास्ते के छोटे-छोटे गावो मे भिक्षाटन कर लेता। जहा भी जाता, वह इस बात की घोषणा कर देता कि राजकुमार ने सद्धर्म का मार्ग खोज लिया है और वह स्वदेश लौट रहे है। कपिलवस्तु से रवाना होने के बाद नवे दिन कालुदयी को बुद्ध अपने तीन सौ भिक्खुओ के साथ आते हुए मिले। मौद्गल्यायन, कौंडन्न और काश्यप-बंधु शेष शिष्यो के साथ वेणुवन मे रह गए थे।

कालुदयी के कहने पर बुद्ध और उनके साथ आये भिक्खु रात मे न्यग्रोधा उद्यान मे ठहरे जो कपिलवस्तु के दक्षिण मे तीन मील पर था। अगले दिन, भिक्षाटन के लिए कपिलवस्तु मे उन्होने प्रवेश किया।

गैरिक चीवरधारी तीन सौ भिक्खुओ को शातिपूर्वक मौन साधे भिक्षा पात्र पकड़े, भिक्षा मागने के दृश्य ने नगर निवासियो पर गहरा प्रभाव छोड़ा। उनके आगमन का समाचार राजमहल पहुचने मे विलम्ब नहीं लगा। राजा शुद्धोधन ने तुरन्त अपना रथ तैयार किए जाने का आदेश दिया जिससे वे अपने पुत्र से मिल सके। रानी महाप्रजापति और यशोधरा महल मे ही उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करती रहीं।

जब राजा का रथ नगर के पूर्वी भाग मे पहुचा तो उन्हे भिक्खु दिखे। सारथी ने सिद्धार्थ को सबसे पहले पहचाना और कहा–"स्वामी, वह रहे । वह सबसे आगे चल रहे है और उनका चीवर अन्य भिक्खुओ के चीवर से कुछ अधिक लम्बा है।"

आश्चर्यचकित राजा ने पहचाना कि गैरिक चीवरधारी भिक्खु ही उनका पुत्र है। बुद्ध का मुख प्रभा-मडल और तेज से दमक रहा था। वह हाथ मे भिक्षा-पात्र पकड़े हुए एक निर्धन के द्वार पर खड़े भिक्षा माग रहे थे। राजा ने देखा कि उस निर्धन घर मे से चिथड़े-चिथड़े वस्त्र पहने एक स्त्री द्वार पर आयी और बुद्ध के भिक्षा-पात्र मे एक आलू डाल दिया। उस महिला के समक्ष बुद्ध ने सादर नमन किया और भिक्षा मागने के लिए अगले द्वार की ओर बढ़ गए।

राजा का रथ उस स्थान से अभी कुछ दूर ही था जहा बुद्ध भिक्षाटन कर रहे थे। राजा ने सारथी से रथ रोकने के लिए कहा और बुद्ध की ओर पैदल चल पड़े। उधर बुद्ध ने भी अपने पिता को आते हुए देखा। दोनो एक-दूसरे की ओर बढ रहे थे। राजा जल्दी-जल्दी चल रहे थे और बुद्ध शान्त और सहज रूप से पग रखते हुए।

"सिद्धार्थ।"

"जी, पिताजी।"

नागरमल ने आगे वढ़कर बुद्ध के हाथ का भिक्षा-पात्र पकड़ लिया जिससे बुद्ध अपने पिता का हाथ दोनो हाथो से पकड सके। राजा के झुर्रिया पड़े चेहरे पर आसुओ की धार बह रही थी। बुद्ध प्रेमभरी दृष्टि से पिता को एकटक देख रहे थे। राजा समझ चुके थे कि सिद्धार्थ अव युवराज नहीं हैं वरन् एक सम्मानित आध्यात्मिक गुरु है। वह सिद्धार्थ को भुज-पाश मे वाध लेना चाहते किन्तु वैसा करना उनको उपयुक्त नहीं लगा। इसके स्थान पर उन्होने हाथ जोड़कर अपने पुत्र के समक्ष उसी प्रकार नमन किया जिस प्रकार राजा किसी उच्च धर्माचार्य का अभिनन्दन करता है।

वुद्ध ने पास ही खडे सारिपुत्त से कहा कि "भिक्खुओ ने भिक्षाटन समाप्त कर लिया है। कृपया इनको न्यग्रोधा उद्यान ले जाओ। नागसमल मेरे साथ राजमहल तक जाएगा, वहीं हम लोग भोजन करेगे। हम तीसरे पहर सघ मे लौट आएगे।" सारिपुत्त सादर नमन करके भिक्खुओ को उद्यान ले गए।

राजा कुछ वोलने से पहले, बुद्ध को बड़ी देर तक ध्यान से देखते रहे और वोले कि "मैने सोचा था कि तुम अपने परिवार से मिलने राजमहल आओगे। कौन यह अनुमान लगा सकता था कि महल मे आने के स्थान पर तुम नगर मे भिक्षाटन करने आओगे ? तुम राजमहल मे भोजन करने क्यो नहीं आए ?"

बुद्ध अपने पिता की ओर देखकर मुस्कराए और वोले-"मै अकेला नहीं

यशोधरा ने राहुल से कहा, "प्रिय पुत्र, वह भिक्खु आपके पिताश्री है "

हू। मैंने अपने भिक्खु समुदाय के साथ यात्रा की है। मैं भी भिक्खु हू और अन्य भिक्खुओ की भाति मुझे भी भिक्षाटन करना चाहिए।"

"लेकिन क्या यह आवश्यक था कि इस निर्धन क्षेत्र मे ही भिक्षा मागो ? शाक्यवश के इतिहास मे किसी ने ऐसा नहीं किया है।"

बुद्ध फिर मुस्कराए। "शाक्य वश के राज पुरुषो ने पहले भले ही ऐसा न किया हो किन्तु सभी भिक्खु भिक्षाटन करते हैं। पिताजी, भिक्षाटन भी आध्यात्मिक साधना है। इससे भिक्खु को विनम्रता अपनाने मे और सभी व्यक्तियो को समान दृष्टि से देखने में सहायता मिलती है। जब मुझे किसी निर्धन परिवार से एक आलू मिलता है तो वह आलू और राजा द्वारा दी गई उत्तम खाद्यो की भिक्षा, दोनो समान हैं। इस प्रकार भिक्खु धनी और निर्धन के भेद से ऊपर उठ जाता है। मेरे सद्धर्म मार्ग मे सभी समान हैं। चाहे कोई कितना ही निर्धन क्यो न हो, वह आत्म-जागृति और मुक्ति पाने का अधिकारी है। भिक्षाटन से मेरी प्रतिष्ठा कम नहीं होती। इससे सभी व्यक्तियो के आत्माभिमान की स्वीकृति ही ध्वनित होती है।"

राजा शुद्धोधन बुद्ध की वाणी को मुह बाये सुनते रहे। तो वे भविष्यवाणिया सत्य ही सिद्ध हुईं कि सिद्धार्थ आध्यात्मिक गुरु बनेगे और उनका प्रभाव विश्व भर मे फैलेगा। राजा का हाथ पकड़े हुए बुद्ध राजमहल की ओर चल पड़े। नागसमल भी उनके पीछे-पीछे चल रहा था।

सौभाग्य से, राजमहल के एक परिचर ने भिक्खुओ को देख लिया था और रानी गौतमी, यशोधरा, सुदरी नदा और बालक राहुल राजमहल के गवाक्ष से राजा और बुद्ध को बाते करते देख सकें। उन्होने देखा कि राजा ने बुद्ध को नमन किया। जब राजा और बुद्ध महल के समीप आ गए तो यशोधरा ने राहुल से कहा, "पुत्र, क्या तुम राजा के साथ आ रहे सन्यासी को देख रहे हो जो राजद्वार से महल मे प्रवेश कर रहे हैं ?"

राहुल ने सिर हिलाया।

"वह सन्यासी तुम्हारे पिताजी है। दौडकर नीचे जाओ और उनको प्रणाम करो। उनके पास एक विशिष्ट उत्तराधिकार है जो वह तुम्हे प्रदान करेगे। उनसे इस उत्तराधिकार के विषय मे पूछना।"

राहुल नीचे दौड गया और पलक झपकते ही महल के प्रागण मे जा पहुचा। वह बुद्ध के समीप दौड गया। बुद्ध तुरन्त समझ गए कि जो बालक दौड़ता आ रहा है, वह राहुल ही है। उन्होने अपनी बाहे फैलाकर उसको अपने अग मे भर लिया। चढ़ी हुई सास से राहुल ने पूछा-"माननीय सन्यासी,

मेरी माताजी ने मुझसे कहा है कि मै अपने विशिष्ट उत्तराधिकार के विषय मे आपसे पूछू। वह क्या है ? क्या आप उसे दिखा सकते है ?"

बुद्ध ने राहुल के गाल थपथपाये और मुस्कराकर कहा–"तुम अपने विशिष्ट उत्तराधिकार के विषय मे पूछ रहे हो ? उपयुक्त समय आने पर मै वह उत्तरदायित्व तुम्हे सौंप दूगा।"

बुद्ध ने बालक का हाथ पकड़ लिया जबकि वह एक हाथ से राजा का हाथ भी पकड़े हुए थे। तीनों साथ-साथ महल मे प्रविष्ट हुए। रानी गौतमी, यशोधरा और सुदरी नदा सीढियो से उतर आई और उन्होने राजा, बुद्ध एव राहुल को उद्यान मे प्रवेश करते देखा। वासन्ती धूप कुनकुनी लग रही थी। सर्वत्र फूल खिले हुए थे और पक्षी कल-गान कर रहे थे। बुद्ध राजा और राहुल के साथ उद्यान मे रखी सगमरमर की पीठिका पर बैठ गए। उन्होने नागसमल को भी बुलाकर उसी पीठिका पर बैठा लिया। उसी समय रानी गौतमी, यशोधरा और सुदरी नदा ने उद्यान मे प्रवेश किया।

बुद्ध तुरन्त उठ खडे हुए और तीनो महिलाओ की ओर बढ़े। रानी गौतमी पूर्णतः स्वस्थ थीं और हरे धासी रंग की साडी पहने हुई थी। गोपा भी सदा की भाति सुदर थी किन्तु कुछ पीली पड़ गई थी। वह बर्फ-सी सफेद साड़ी पहने थी और कोई भी रत्न या आभूषण धारण किए हुए नहीं थी। बुद्ध की छोटी बहिन सुदरी नदा अब सोलह वर्ष की हो गई थी। वह सुनहरी साड़ी पहने थी जिसमे से उसकी काली-काली आंखे दमक रही थी। तीनो महिलाओ ने हाथ जोड़कर बुद्ध को नमन किया। प्रत्युत्तर मे बुद्ध ने भी हाथ जोड़कर नमन किया और बोले–"माताजी ! गोपा !" यह सुनकर दोनो महिलाए रोने लगीं।

बुद्ध ने रानी को हाथ पकड़कर पीठिका पर बैठाया और पूछा–"मेरा भाई नद कहा है ?"

रानी ने उत्तर मे कहा–"वह युद्ध-विद्या का अभ्यास करने गया है, जल्दी ही लौट आएगा। क्या तुम अपनी छोटी बहिन को पहचानते हो। तुम्हारी अनुपस्थिति मे वह बहुत बड़ी हो गई है। है न ?"

बुद्ध ने अपनी बहिन को ध्यान से देखा जिसे उन्होने विगत सात वर्षों से नहीं देखा था। "सुदरी नदा तुम तो अब युवती हो गई हो।"

उसके बाद वह यशोधरा के समीप गए और सस्नेह उसका हाथ पकड़ा। वह इतनी द्रवित हो गई कि बुद्ध के हाथ मे उसका हाथ काप उठा था। उन्होने यशोधरा को रानी गौतमी के समीप बैठा दिया और स्वय अपनी पीठिका

पर वैठ गए। राजमहल आते समय राजा ने वुद्ध से अनेक प्रश्न किए थे लेकिन इस समय कोई नहीं वोला, राहुल तक नहीं। बुद्ध ने देखा कि राजा-रानी, यशोधरा और सुदरी नदा--सभी के चेहरो पर पुनर्मिलन की प्रसन्नता झलक रही थी। वहुत देर के मौन को बुद्ध ने तोड़ा, "पिताजी, मै वापस आ गया हू। माताजी, मैं वापस आ गया हू। देखो गोपा, मैं तुम्हारे पास लौट आया हू।"

दोनो महिलाओ ने फिर रोना आरभ किर दिया किन्तु ये प्रसन्नता के आसू थे। वुद्ध ने उन्हे चुपचाप रोने दिया और राहुल को अपने समीप वैठा लिया और वच्चे के सिर पर स्नेह से हाथ फेरा।

गौतमी ने साडी के पल्लू से आखे पोछी और वुद्ध की ओर मुस्कराकर वोलीं-"वहुत दिनो पहले तुम घर से निकले थे। सात लम्वे वरस वीत गए। क्या तुम जानते हो कि गोपा कितनी साहसी महिला है ?"

"माताजी, मैंने उसके साहस की गुरु गभीरता को वहुत पहले से ही जान लिया था। आप और गोपा, दोनो ही मेरी जानकारी के अनुसार, सर्वाधिक साहसवाली महिलाए हैं। आपने न केवल अपने पति को समझाया-बुझाया और समर्थन दिया, अपितु आप सभी के लिए शक्ति और दृढ़ निश्चय का आदर्श रही है। मेरा सौभाग्य है कि आप दोनो का मेरे जीवन मे गौरवपूर्ण स्थान रहा है। इससे सद्धर्म मार्ग पर चलने का मेरा कार्य सुगम हुआ है।"

यशोधरा ने केवल मुस्करा दिया किन्तु वोली कुछ नहीं।

राजा ने कहा कि "सद्धर्म का मार्ग खोजने के लिए तुमने जो शरीर-पीडन तप किया था, उसका कुछ वर्णन मुझसे किया था। जो कुछ तुमने मुझसे कहा था क्या उसे दोहराओगे जिससे अन्य लोग भी जान-सुन सके और उसके आगे का हाल वताओगे ?"

वुद्ध ने सक्षेप मे सद्धर्म मार्ग की अपनी यात्रा का वर्णन किया। उन्होने वताया कि पहाड पर उनकी भेट राजा विम्विसार से हुई थी। फिर उन्होने उरुवेला गाव के निर्धन वच्चो की वाते वताईं। उन्होने अपने उन पाच मित्रो की भी वात वताई जिन्होने उनके साथ शरीर-पीड़न तप किया था। साथ ही यह भी वताया कि राजगृह मे भिक्खुओ का कैसा शानदार स्वागत किया गया। सभी लोग वड़े ध्यान से वुद्ध की वाते सुन रहे थे। राहुल तक हिला नहीं था।

वुद्ध की वाणी उत्साह एव प्रेम भरी थी। उन्होंने घटनाओ को विस्तारपूर्वक नहीं वताया और शरीर-पीड़न तप के समय की चलतू चर्चा ही की। उन्होने

अपने निकटतम संबंधियो के समक्ष ऐसी बाते ही कीं, जिनसे उनके हृदयो मे आत्म-जागृति के बीज बोये जाने मे सहायता मिले।

उद्यान से एक अनुचर ने गौतमी के कान मे कुछ कहा जिसका उन्होने भी फुसफुसाकर उत्तर दिया। शीघ्र ही अनुचरो ने उद्यान मे एक बड़ी मेज लगा दी। जब मेज पर भोज्य सामग्री लाकर रखी जा रही थी, तभी नन्द आ गया। बुद्ध ने प्रसन्नता से उसका अभिनदन किया।

"नन्द, जब मै गया था, तो तुम केवल पन्द्रह वर्ष के थे किन्तु अब तो तुम सजीले युवक बन गए हो।"

नन्द मुस्करा दिया। इस पर रानी ने उसे डांटा, "नद, अपने बड़े भाई को समुचित रूप से प्रणाम करो। अब वह भिक्खु बन गए है। उन्हे हाथ जोड़कर नमन करो।"

नन्द ने बुद्ध को नमन किया और प्रत्युचर मे बुद्ध ने नन्द को नमन किया।

इसके अनतर, सभी भोजन की मेज की ओर बढ़े। बुद्ध ने नागसमल को अपने साथ बैठाया। एक सेविका ने जल लाकर सबके हाथ पैर धुलाये।

राजा ने बुद्ध से पूछा-"तुम्हारे भिक्षा-पात्र मे क्या भिक्षा मिली ?"

"मुझे तो एक आलू मिला था किन्तु नागसमल को कुछ भी नहीं मिला।"

राजा शुद्धोधन ने खड़े होकर कहा-"कृपया मुझे इसमे से कुछ भोजन देने की अनुमति प्रदान कीजिए।" यशोधरा ने थाली पकड़ी और राजा ने दोनो भिक्खुओ को भोजन परोसा। उन्होने भिक्खुओ के भिक्षा-पात्र मे सफेद चावल और स्वादिष्ट कढ़ी परोसी। बुद्ध और नागसमल ने मौन सजगता के साथ भोजन किया। अन्य भिक्खुओ ने भी ऐसे ही मौन रहकर भोजन किया।

भोजन के उपरान्त रानी गौतमी ने बुद्ध को सगमरमर की शिला पर बैठने के लिए फिर कहा। सभी लोग बुद्ध के अनुभव सुनने लगे। रानी गौतमी ने उनसे सबसे अधिक प्रश्न किए। राजा ने जब सुना कि बुद्ध वेणुवन मे एक कुटिया मे निवास करते हैं तो उन्होने प्रण किया कि वह भी न्यग्रोधा उद्यान मे उसी प्रकार कुटिया अपने लिए बनवाएगे। उन्होने आशा प्रकट की कि वह सद्धर्म मार्ग की शिक्षा देने के लिए यहा कुछ महीने रुके। रानी गौतमी, यशोधरा, नद और सुदरी नदा सभी ने राजा के सुझाव का स्वागत किया।

अन्त मे बुद्ध ने कहा कि अब उन्हे न्यग्रोधा उद्यान मे अपने भिक्खुओ के पास लौट जाना चाहिए। राजा ने डरकर कहा कि मैं उसी प्रकार आपको

तथा आपके भिक्खुओ को भोजन के लिए आमत्रित करता हू जिस प्रकार मगध के राजमहल मे आप गए थे। इस अवसर पर मैं सभी राज परिवारो और सरकार के उच्च अधिकारियों को भी आमंत्रित करूगा, जिससे वे भी आपकी सद्धर्म मार्ग की शिक्षाए सुन सके।

बुद्ध ने कहा कि मैं प्रसन्नतापूर्वक यह निमत्रण स्वीकार करता हू। उन्होने तय किया कि यह सहभोज सात दिन वाद होगा। यशोधरा ने बुद्ध और कालुदयी को राजमहल के पूर्वी भाग मे भोजन के लिए आमत्रित किया। बुद्ध ने यह निमत्रण भी स्वीकार कर लिया किन्तु कहा कि यदि यह निजी भोज राजा शुद्धोधन के सह-भोज के वाद हो तो अच्छा होगा।

राजा चाहते थे कि बुद्ध और नागसमल को एक वाहन मे वैठाकर न्याग्रोधा उद्यान तक भेजा जाए किन्तु इस प्रस्ताव को बुद्ध ने अस्वीकार करते हुए कहा कि मुझे पद-यात्रा ही अधिक अच्छी लगती है। समूचा राज परिवार दोनो भिक्खुओ को राजद्वार के वाहर तक छोड़ने आए। उन्होने उनके सम्मान मे हाथ जोड़े और दोनो भिक्खुओ को विदा किया।

अध्याय पैंतीस

अरुणोदय

समूचे कपिलवस्तु नगर मे सिद्धार्थ के पुनरागमन का समाचार शीघ्र ही फैल गया और नगर मे प्रतिदिन भिक्खुओ के मर्यादापूर्ण भिक्षाटन से उसकी पुष्टि होती थी। बहुत से परिवार भिक्खुओ को भोजन-दान करते और इस बात के लिए उत्सुक रहते कि भिक्खु उन्हे कुछ धर्म-शिक्षा दे।

बुद्ध और भिक्खु दल को जिस दिन राजमहल मे भोजन करने को आमन्त्रित किया गया था, उस दिन मार्गों पर फूल-पत्तियो और झडियो से सजावट करने के लिए राजा शुद्धोधन ने नगरवासियो से अनुरोध किया था। उन्होने बुद्ध और उनके वरिष्ठ शिष्यो के लिए न्यग्रोधा उद्यान मे छोटी-छोटी कुटिया अविलम्ब बनवायी थीं। बहुत से लोग बुद्ध और भिक्खुओ के दर्शन करने उद्यान मे आया करते। लोग इस बात से बहुत प्रभावित थे कि भूतपूर्व युवराज नगर मे शातिपूर्वक भिक्षाटन करते है। समस्त नगर-वासियो के लिए बुद्ध की वापसी चर्चा का प्रमुख विषय बना हुआ था।

गौतमी और यशोधरा न्यग्रोधा उद्यान मे बुद्ध से मिलने जाने हेतु बहुत ही उत्कठित थीं किन्तु वे उस सप्ताह भिक्खु सघ के स्वागत-समारोह की तैयारियो मे बेहद व्यस्त थीं। राजा अपनी सरकार के सभी सदस्यो और नगर के अन्य राजनीतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक नेताओ समेत हजारो अतिथियो को आमन्त्रित करना चाहते थे। उन्होने कहा कि सारा भोजन शाकाहारी होना चाहिए।

किन्तु नन्द समय निकालकर उस सप्ताह मे दो दिन बुद्ध के पास हो आया था। जब बुद्ध ने चेतना-जागृति के मार्ग का वर्णन किया तो वह ध्यान से सुनता रहा। वह अपने बड़े भाई को प्रेम भी करता था और आदर भी। उसका मन भी भिक्खु बनने के लिए आकर्षित होता। उसने बुद्ध से पूछा

भी कि क्या वह समझते है कि मैं अच्छा भिक्खु सिद्ध होऊगा ? किन्तु बुद्ध ने उसकी भावना सुनकर मुस्करा दिया। वह देख रहे थे कि नद अच्छी भावनाओ वाला नेकनीयत युवक है किन्तु अभी उसमे उद्देश्यपरक दृढ विवेक की कमी है। जब वह बुद्ध के पास बैठता है तो वह भिक्खु बनने का इच्छुक होता है किन्तु राजमहल लौट जाने पर उसकी आखे और विचार अपनी सुदर प्रेमिका कल्याणी पर केन्द्रित हो जाते हैं।

स्वागत भोज के दिन राजमहल समेत समूचा नगर बुद्ध और उनके सघ के स्वागत मे झडियो एव फूलो से सजाया गया था। नगरवासी सड़को के किनारो पर पक्तिबद्ध खडे थे। सगीतकार अपनी श्रेष्ठ कला का प्रदर्शन कर रहे थे। हर व्यक्ति अपने देशवासी नायक बुद्ध की एक झलक पाने के लिए ललक रहा था। राजा ने जिन अतिथियो को आमत्रित किया था, उनकी अगवानी रानी गौतमी और यशोधरा कर रही थी। रानी की इच्छा मानकर यशोधरा ने शानदार साडी पहन रखी थी और आभूषण भी धारण कर रखे थे।

नगर-वासियो की भीड मे से बुद्ध और भिक्खु मद एव शान्त पग रखते हुए चल रहे थे। जब बुद्ध निकलते तो बहुत से लोग उन्हे हाथ जोड़कर नमन करते। बच्चो को उनके माता-पिता ने कधो पर उठा रखा था जिससे वे भी बुद्ध के दर्शन कर सके।

राजा शुद्धोधन ने बुद्ध और सघ की अगवानी महल के बाहरी प्रवेश-द्वार पर की और उनको भीतरी प्रागण मे ले गए। सभी अतिथियो ने, राजा के व्यवहारानुसार, हाथ जोडकर बुद्ध को प्रणत होकर नमन किया। उनमे से कुछ इस बात से आश्चर्य कर रहे थे कि इतने युवा भिक्खु का इतना सम्मान करने की क्या आवश्यकता थी, भले ही, वह पूर्व राजकुमार ही क्यो न हो।

जब बुद्ध और भिक्खु गण बैठ गए तो राजा ने भोजन लाये जाने का सकेत किया। राजा ने बुद्ध को स्वय भोजन परोसा। गौतमी और यशोधरा ने राजसेवको को अतिथियो को भोजन परोसने का आदेश दिया। इन अतिथियो मे ब्राह्मण, साधु-सन्यासी सभी थे। बुद्ध और भिक्खुओ का अनुकरण करते हुए सभी ने मौन रहकर भोजन किया। सभी के भोजन कर लेने के उपरान्त, बुद्ध और भिक्खुओ के भिक्षा-पात्र साफ करके उनको दे दिए गए तो राजा ने हाथ जोड़कर बुद्ध से निवेदन किया कि वह उपस्थित अतिथियो के समक्ष सद्धर्म मार्ग की शिक्षाए दे।

बुद्ध एक क्षण तक मौन रहे और देखा कि सामने कैसे-कैसे लोग बैठे है। उन्होने पहले तो सद्धर्म मार्ग की खोज के अपने अनुभव बताए जिससे

लोगो की यह उत्कठा शात हो सके कि पिछले सात वर्षों में क्या कुछ घटित हुआ। इसके बाद उन्होने अनित्यता, अनात्म और परस्परावलम्बी-सहवर्द्धन के सिद्धान्तो के विषय मे बताया। उन्होने कहा कि दैनिक जीवन मे सचेतावस्था का अभ्यास करने और गहराई से यथार्थ-बोध करने से दुःख और विषमताए समाप्त हो जाती हैं और शांति एव सौख्य की प्राप्ति सभव होती है। दान देने और भक्ति करने भर से मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती।

बुद्ध ने चार आर्य सत्यो की शिक्षा दी और दुःखो की विद्यमानता, दुःखो के कारक तत्त्वो और दुःखो के तिरोहित होने का मार्ग बताया और कहा, "जन्म, जरा, रोग और मृत्यु के अतिरिक्त और भी दुःख है जिनका सर्जक मनुष्य स्वय होता है। अज्ञान और भ्रात धारणाओ के वश मे होकर लोग जो करते या कहते है, उनसे लोग स्वयं भी कष्टो मे फसते और दूसरो को कष्ट पहुचाते हैं। क्रोध, घृणा, सदेह, द्वेष और निराशा कष्टो के कारक बनते हैं। ये सभी बाते प्रज्ञाहीनता के कारण हृदयो मे आती है। लोग इन कष्टो में इस प्रकार फसे रहते हैं जिस प्रकार आग लगे घर के निवासी। आप किसी देवता या ईश्वर की प्रार्थना या भक्ति करके मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते। आप गहराई से अपने चित्त और स्थितियो को देखे-समझे, जिससे उन भ्रान्त धारणाओ का उच्छेदन कर सके, जो सभी दुःखो के मूल मे होती हैं। दुःखो की प्रकृति का ज्ञान करने के लिए, आपको अपने कष्टो के स्रोत को समझना होगा। दुःखो की प्रकृति समझ लेने पर वे दुःख आपके लिए बधन नहीं बन सकते।

"यदि कोई आप पर क्रोध करता है और पलटकर आप भी उस पर क्रोध करते है तो इससे दुःखो मे वृद्धि ही होगी। यदि आप प्रज्ञा का मार्ग अपनाएगे तो आप पलटकर क्रोध नही करेगे बल्कि आप यह जानने के लिए अपने चित्त को शात रखेगे कि वह व्यक्ति आप पर क्रुद्ध क्यो हुआ। गहनता से विचार करने पर आप उन कारणो को जान सकेगे कि उसे क्रोध क्यो आया। अगर आप पाएगे कि उस व्यक्ति के क्रोध का दायित्व आप पर है तो आप क्रोध नहीं करेगे वरन् यह स्वीकार करेगे कि आपके दुर्व्यवहार से उसे क्रोध आया। यदि उसके क्रोध आने के लिए आप दोषी नहीं है तो आप यह खोजने का प्रयास करेगे कि आखिर उसे आपके प्रति गलतफहमी हुई तो क्यो हुई। उसके बाद आप उसे यह समझा सकते है कि आपके इरादे नेक और सत्य पर आधारित हैं। इस प्रकार आप स्वय भी दुःख से बच सकते है और उसे भी बचा सकते है।

"महामहिम एव आदरणीय अतिथियो । समस्त विपय-वस्तुओ पर गहन दृक्पात करके सभी दुःखो से निस्तार पाया जा सकता है। प्रज्ञा के पथ पर चलते हुए हम अपनी सचेतनता वनाए रखने के लिए अपनी श्वसन-क्रिया पर नियत्रण रखते है। ध्यान-साधना करने और ज्ञान-प्राप्ति के लिए हम पचशीलो का पालन करते है। ये पचशील[1] वे सिद्धान्त है, जिनसे हम शांति और आनद का वर्द्धन कर सकते हैं। शील-पालन से हमारी ध्यान-साधना की शक्ति वढ़ती है और हम चित्त को अधिकाधिक ध्यानावस्था एव सचेतावस्था मे लाने मे सक्षम होते हैं। सचेतनता से अपने चित्त और अपने पर्यावरण की सच्ची प्रकृति जानने की हमारी क्षमता का विकास होता है। इस ज्ञान के प्रकाश से प्रज्ञा विकसित होती है।

"ज्ञान होने पर ही हम प्रेम कर सकते है। जब हमे ज्ञान की उपलब्धि हो जाती है तो सभी दु·खो से उवर सकते हैं। मुक्ति का सच्चा मार्ग प्रज्ञा का मार्ग है। इस प्रज्ञा का विकास तभी हो पाता है जब तक समस्त सृष्टि प्रसार के वास्तविक स्वरूप को गहन दर्शन के द्वारा जान पाते है। शीलो का आचरण, ध्यान-साधना और पारमिताए[2] ही वह मार्ग है जिससे मुक्ति सभव है।"

वुद्ध एक क्षण रुककर मुस्कराकर आगे वोले—"दुःख तो जीवन का एक पक्ष है। जीवन का दूसरा पक्ष है जागतिक अद्भुतता। यदि हम जीवन का यह पक्ष देख सके तो हमे हर्ष, शाति, आनद का अनुभव होगा। जव हमारे हृदय वधनहीन होते है तो हम जीवन की अद्भुतताओ के प्रत्यक्ष सपर्क मे आ पाते हैं। जव हम अनित्यता, अनात्मता और परस्परावलम्बी सहवर्द्धन के सत्यो को वस्तुतः हृदयगम कर लेते हैं तो पाते है कि हमारा हृदय और चित्त कितने अद्भुत हैं। हमारा शरीर कितना अद्भुत है, हरे वास की पत्तिया,

---

1 शुद्धाचरण ही शील है। पूर्ववर्णित पचशीलो के अतिरिक्त अन्य पाच शील हैं (1) नृत्य गान मे विरति, (2) माला आदि गध से विरति, (3) उच्चशैया-महाशैया से विरति, (4) असमय भोजन मे विरति, (5) मोना-चादी से विरति।

2 ईश्वरवादी दर्शन मे जो स्थान ईश्वर का है वौद्ध दर्शन मे वही स्थान कर्म का है। पारमिताए वोधिमत्व के कर्म हैं। प्रमुख पारमिताए हैं · (1) दान पारमिता (प्रतिफल की इच्छा के विना दान), (2) शील-पारमिता (सद् आचरण), (3) प्रज्ञा-पारमिता (वुद्धि द्वारा निरहकार ज्ञान की खोज), (4) क्षाति पारमिता (क्षमा-भाव), (5) वीर्य पारमिता (मम्यक् प्रयत्न)। इनके अतिरिक्त अन्य पारमिताए है—नैप्क्रम्य पारमिता, मत्य पारमिता, अधिप्ठान पारमिता, और मैत्री पारमिता।

—सम्पादक।

पीत गुलदाऊदी, स्वच्छ सरिताए और चद्रिका विकीर्ण करता चद्रमा कितना अद्भुत है।

"कष्टो के वधनो से ही हम स्वय को जकड़े रखते है, इस कारण हम जीवन के इन अद्भुत दृश्यो की अनुभूति की क्षमता ही खो बैठते है। जब हम अज्ञान के अधकार का भेदन कर पाते है तो हमारे सामने शाति, आनद, मुक्ति और निर्वाण के विराट से साक्षात्कार का क्षेत्र उन्मुक्त होता है। निर्वाण से अज्ञान, लोभ और क्रोध का समूल नाश हो जाता है। माननीय अतिथियो, समय निकालकर कभी स्वच्छ झरने को अथवा अरुणोदय की प्रथम किरण को देखिए और विचारिए कि क्या आप शाति, आनद और उन्मुक्तता का अनुभव कर सकते है। यदि आप अव भी दुःखो और चिन्ताओ के वधन मे जकड़े हुए है तो आप सृष्टि से इन अद्भुत अनुभवो से वचित ही रहेगे। सृष्टि की अद्भुतताओ मे आपकी श्वास-प्रश्वास, शरीर एवं चित्त भी सम्मिलित है। मैने सद्धर्म का जो मार्ग खोजा है, वह दु·खो और चिन्ताओ, उनकी मूल प्रकृति को भली-भाति समझकर उनके पार जाने का मार्ग है। मैने इस सद्धर्म मार्ग की देशना औरो को भी की है और वे स्वय ही इस मार्ग को खोज पाने मे सफल हुए है।"

वुद्ध की इस देशना से प्रत्येक व्यक्ति गहराई तक प्रभावित हुआ। राजा का हृदय आनद से गद्गद हो गया। यही स्थिति रानी गौतमी और यशोधरा की हुई थी। सभी लोग प्राणियो एव पदार्थों की मूल प्रकृति के अन्तःर्दशन की विधियो के विषय मे अधिकाधिक जानने के इच्छुक थे जिससे मुक्ति और चेतन-प्रकाश की अनुभूति सभव हो। वुद्ध की देशना के उपरान्त राजा वुद्ध और भिक्खुओ को महल के बाहरी द्वार तक विदा करने आए। सभी अतिथियो ने राजा शुद्धोधन को उनके पुत्र की महान सफलता पर बधाई दी।

न्यग्रोधा उद्यान शीघ्र ही एक विहार मे परिणत हो गया। अजीर के बड़े-बड़े वृक्षो की शीतल छाया वहा होती थी। बहुत से नए भिक्खुओ को प्रवृज्या दी गई। वहुत से श्रामणेरो ने, जिनमे शाक्य वश के युवक भी सम्मिलित थे, पचशीलो को अपनाने का व्रत लिया।

यशोधरा रानी गौतमी और राहुल के साथ प्रायः न्यग्रोधा उद्यान मे बुद्ध के दर्शनार्थ जाती। वह उनकी देशना को श्रवण करती और जब कभी बुद्ध अकेले होते तो उनसे यह ज्ञान प्राप्त करती कि सद्धर्म मार्ग अपनाने और समाज-सेवा के बीच क्या सवध सभव है। बुद्ध ने व्यावहारिक रूप से बताया

कि किस प्रकार वह प्राणायाम करे और कैसे ध्यान-साधना करे जिससे उसके अपने हृदय की शाति और आनद मे वृद्धि हो। वह समझ गई कि शाति और आनद की प्राप्ति के बिना वह वास्तविक रूप मे दूसरे लोगो की सहायता नहीं कर सकती। उसने जान लिया था कि गहन प्रज्ञा के विकास के बिना वह प्रगाढ़ प्रेम की क्षमता भी विकसित नहीं कर सकती। उसे इस बात से प्रसन्नता हुई कि आत्म-चेतना के मार्ग पर चलते हुए भी वह अपनी समाज-सेवा की गतिविधिया चला सकती है। जब वह कार्यरत हो, उन क्षणो मे भी शाति और आनद की अनुभूति करना सभव होता है। सद्धर्म मार्ग के अनुसार साधन और साध्य दो भिन्न-भिन्न बाते नहीं है।

रानी गौतमी भी सद्धर्म मार्ग के अभ्यास मे बहुत प्रगति कर पा रही थीं।

अध्याय छत्तीस

कमल लेकर प्रतिज्ञा

राज-वधू यशोधरा ने अपने महल मे बुद्ध, कालुदयी, नागसमल और रानी गौतमी को भोजन पर आमत्रित किया। भोजन के पश्चात् वह इन लोगो को उस निर्धन ग्राम मे ले गई, जहा वह बच्चो की सहायतार्थ समाज-सेवा करती थी। राहुल भी साथ मे था। यशोधरा उन्हे उस जम्बू वृक्ष के नीचे ले गई जहा बचपन मे बुद्ध ने ध्यान-साधना का प्रथम अनुभव प्राप्त किया था। बुद्ध को लगा जैसे वह कल की ही बात हो, यद्यपि उसे बीते सत्ताईस वर्ष हो चुके थे। इन वर्षों मे जम्बू वृक्ष बढ़कर और फैल गया था।

यशोधरा के अनुरोध पर बहुत से निर्धन बच्चे उस वृक्ष के नीचे एकत्र हो गए थे। यशोधरा ने बताया कि इतने वर्षों पहले जो निर्धन बच्चे यहा आए थे, उनके विवाह हो गए हैं और बहुतो के अपने परिवार भी है। वृक्ष के नीचे बैठे बच्चे सात से बारह वर्ष की आयु वर्ग के थे। जब उन्होने बुद्ध को आते देखा तो खेलना बद करके दो पक्तिया बनाकर खड़े हो गए, जिससे बुद्ध बीच के मार्ग से निकल सके। यशोधरा ने जैसे पहले बताया था, उसी प्रकार बच्चो ने बुद्ध का अभिवादन किया। उन्होने बुद्ध के लिए वास की कुर्सी रख दी और गौतमी, यशोधरा तथा अन्य भिक्खुओ के बैठने के लिए चटाई बिछा दी।

बुद्ध को वहा बैठकर अच्छा लगा। उन्हे उरुबेला ग्राम के बच्चो के साथ बिताए दिनो का स्मरण हो आया। उन्होने भैसो के चरवाहे बालक स्वास्ति और उस किशोरी सुजाता के विषय मे बताया, जिसने उन्हे दूध पिलाया था। उन्होने अपनी प्रज्ञा को प्रगाढ़ करके अपने प्रेमपूर्ण हृदय को सबल बनाने की बात समझाई और बताया कि उन्होने उस हस के प्राणो की रक्षा कैसे

की जव कि उनके चचेरे भाई ने तीर से उसे घायल कर दिया था। वह जो कुछ भी कह रहे थे, उसे बच्चे वड़े ध्यान से सुन रहे थे।

वुद्ध ने राहुल को सकेत किया कि वह आकर उनके सामने वैठ जाए। इसके वाद उन्होने अपने एक पिछले जन्म की कथा सभी वच्चो को सुनाई।

"वहुत पहले की वात है। हिमालय की तराई मे मेघ नामक एक व्यक्ति रहता था। वह दयालु और परिश्रमी था। उसके पास धन नहीं था। फिर भी, वह राजधानी जाने के लिए चल पड़ा जहा वह अध्ययन करना चाहता था। उसने अपनी लाठी, टोपी, जल-पात्र, जो कपड़े पहने था, वे और एक कोट लिया। रास्ते मे वह रुक-रुककर मेहनत करता जिससे उसे कभी चावल और कभी धन मिल जाता था। जव वह 'दिवापति' की राजधानी पहुचा, तव तक उसके पास पाच सौ रुपए एकत्र हो गए थे।

"जव वह नगर मे प्रविष्ट हुआ तो लगा जैसे कोई समारोह होने वाला हो। क्या होने जा रहा है, इसकी उत्सुकता शात करने के लिए वह किसी को तलाशने लगा। उसी समय उसके पास से एक सुदर युवती गुज़री। उसके हाथ मे अधखिले कमलो का गुच्छा था।

"मेघ ने उससे पूछा, आज क्या उत्सव-समारोह है ?"

युवती ने उत्तर दिया, 'तुम दीवापति मे नए आए हो, वरना तुम्हे यह अवश्य ज्ञात होता कि आज सिद्ध आचार्य दीपाकर पधार रहे है। वह प्राणी-मात्र को दिव्य प्रकाश दिखाने वाले सत है। वह राजा अरकिमत के पुत्र हैं और सद्धर्म के सत्य मार्ग की खोज मे गृह-त्याग गए थे। उन्होने वह सन्मार्ग प्राप्त कर लिया है। उनके सन्मार्ग से विश्व को आत्म-प्रकाश प्राप्त हो रहा है। इसीलिए लोगो ने उनका स्वागत-सत्कार करने के लिए यह समारोह आयोजित किया गया है।

"मेघ को दिव्य-ज्ञान प्राप्त आचार्य के आने की वात सुनकर वहुत प्रसन्नता हुई। उसकी प्रवल इच्छा थी कि वह भी आचार्य की सेवा मे कुछ भेट अर्पित कर सके और उनसे प्रार्थना करे कि मुझे भी अपना शिष्य बना लीजिए। उसने युवती से पूछा कि उसने इन कमल-पुष्पो के कितने दाम चुकाए हैं।

"युवती ने मेघ को देखा कि वह कितना प्रतिभावान और समझदार व्यक्ति है। उसने कहा, 'मैंने पाच कमल-पुष्पो की कीमत दी है और दो कमल तो मैं अपने घर के तालाव से ही लेती आई हू।'

"मेघ ने पूछा, खरीदे हुए पाच कमल-पुष्पो की कितनी कीमत दी है?"

"पाच सौ रुपए।"

"मेघ ने कहा कि 'मै पाच सौ रुपए मे पाच कमल-पुष्प खरीदना चाहता हू जिससे ये पुष्प मै आचार्य दीपाकर को अर्पित कर सकू।' किन्तु युवती ने इसका प्रस्ताव अस्वीकार करते हुए कहा, मै स्वय आचार्य को पुष्प-भेट देने के लिए इन्हे लायी हू। मै इन्हे किसी और के हाथो बेचने को तैयार नहीं हू।"

"मेघ ने उसे राजी करने के प्रयास मे कहा, 'लेकिन तुम उन दो पुष्पो को आचार्य को भेट कर सकती हो जो अपने तालाब से तोड़कर लाई हो। कृपया वे पाच पुष्प मुझे बेच दीजिए। ऐसे महान गुरु के दर्शन करने का मेरे जीवन का एक दुर्लभ एव मूल्यवान अवसर है। मै उनसे मिलना चाहता हू और उनका शिष्य बनना चाहता हू। यदि तुम ये पाच पुष्प मुझे बेच दो तो मे आजीवन आपका कृतज्ञ रहूगा।"

"युवती नीचे की तरफ देखती रही और कुछ उत्तर नही दिया।"

"मेघ ने चिरौरी करते हुए कहा, यदि आप मुझे ये पुष्प खरीद लेने देगी तो म आपकी खातिर कुछ भी कर सकता हू।"

"युवती कुछ उलझन मे पड़ी दिखी। वह बडी देर तक पृथ्वी की ओर ताकती रही। फिर बोली, 'पता नहीं पिछले जन्म मे हमारा क्या सबध रहा था, किन्तु इस समय मै आपके प्रेम-पाश मे बध गई हू। मै बहुत से युवको से मिली हू किन्तु कभी मेरा हृदय इस प्रकार कपित नहीं हुआ जैसा आपको देखने के बाद हुआ है। मै ये कमल-पुष्प आपको दिव्य-ज्ञान-सम्पन्न आचार्य को अर्पित करने हेतु दे दूगी बशर्ते कि आप प्रतिज्ञा करे कि इस जीवन मे ओर अगले जन्मो मे भी आप मुझे अपनी पत्नी बनाएंगे।"

"उसने ये शब्द जल्दी-जल्दी कहे और अपनी बात समाप्त करते-करते उसकी सास तेजी से चलने लगी। मेघ को समझ मे ही नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे। उसने एक क्षण के बाद कहा, 'आप एक विशिष्ट और ईमानदार युवती हैं। जब मैंने आपको देखा था, तभी मुझे कुछ विशिष्ट-सा अनुभव हुआ था। मै मुक्ति का मार्ग खोज रहा हू। यदि मै तुमसे विवाह करता हू तो मै, उस अवसर पर स्वय को मुक्त नहीं पाऊगा, जब मुझे सद्धर्म-मार्ग पर गमन करना वाछित हो।"

"युवती ने उत्तर दिया, यह प्रतिज्ञा करो कि आप मुझे पत्नी बनाएगे तो मै भी यह वचन देती हू कि जब आपको सद्धर्म का मार्ग खोजने के लिए निकलने का समय आएगा तो मै आपको जाने से रोकूगी नहीं। इसके विपरीत आपको अपना मुक्ति-मार्ग खोजने के कार्य मे जो भी सभव सहायता होगी, वह करूगी।"

मेघ ने सुंदर युवती से अनुरोध किया कि वह अपने पांच कमल पुष्प उसे बेच दे, ताकि वह आचार्य दीपंकर को उपहार स्वरूप भेंट कर सके।

"मेघ ने प्रसन्नतापूर्वक उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया; और, वे साथ ही साथ आचार्य दीपाकर के दर्शनो के लिए चल पड़े। वहा बेहद भीड़ थी और वे मुश्किल से ही उनकी मुखाकृति के दर्शन कर पाए। किन्तु इस मुखदर्शन से ही मेघ सतुष्ट हो गया कि वह दिव्य- ज्ञान-सपन्न आचार्य है। मेघ को बड़ी प्रसन्नता हुई और प्रतिज्ञा की कि मै भी एक दिन ऐसा ही दिव्य ज्ञान प्राप्त करके रहूगा। वह आचार्य के समीप तक पहुचना चाहता था, जिससे वह पुष्प-गुच्छ उनकी सेवा मे समर्पित कर सके लेकिन भीड़ मे से गुजरकर वहा तक पहुचना असभव था। जब कुछ समझ मे नही आया तो उसने आचार्य दीपाकर की ओर वह पुष्प-गुच्छ ऊपर से ही फेक दिया। अजूबा ही था कि वे पुष्प आचार्य के हाथो मे ही जाकर गिरे। मेघ को इस बात से आश्चर्य हो रहा था कि हृदय की निष्ठा किस प्रकार अभिव्यक्ति पाती है। युवती ने मेघ से कहा कि उसके दो पुष्प भी वह आचार्य की ओर फेक दे। वे पुष्प भी आचार्य की गोद मे जाकर गिरे। आचार्य दीपाकर ने कहा कि जिन लोगो ने ये कमल पुष्प फेके है, वे मेरे सामने आए। भीड़ ने मेघ और उस युवती को मार्ग दे दिया। मेघ उस युवती का हाथ पकड़े हुए था। दोनो आचार्य दीपाकर के समक्ष प्रणत हुए। आचार्य ने मेघ को देखकर कहा–'मै तुम्हारे हृदय की निष्ठा को जानता हू। मै तुम्हारे मन के इस सकल्प को समझ रहा हू कि तुम भी पूर्ण मुक्ति का मार्ग खोजना चाहते हो जिससे प्राणीमात्र की रक्षा हो सके। धैर्य रखो। किसी अगले जन्म मे तुम अपना यह व्रत पूरा कर सकोगे।"

"फिर दीपाकर ने उस युवती को देखा जो मेघ के साथ ही प्रणाम कर रही थी और बोले, तुम इस जीवन मे और अगले जन्मो मे भी मेघ के सर्वाधिक निकट होगी। अपनी प्रतिज्ञा-पालन करने का स्मरण रखना। तुम्हे अपने पति को अपने व्रत-पालन मे सहायता करनी होगी।"

"मेघ और वह युवती आचार्य के इन शब्दो से बहुत प्रभावित हुए। उन लोगो ने दिव्य ज्ञान प्राप्त आचार्य दीपाकर के यहा मुक्ति-मार्ग का अध्ययन करने हेतु स्वय को समर्पित कर दिया।

"बच्चो, उस जन्म मे और उसके बाद के अनेक जन्मो मे मेघ और वह युवती पति-पत्नी के रूप मे रहे। जब उसके पति को अपने सद्धर्म-प्राप्ति के मार्ग की खोज मे गृह-त्याग की आवश्यकता पड़ी तो उसकी पत्नी ने हर सभव तरीके से उसकी सहायता की। उसने अपने पति को कभी रोका नहीं। आखिर उसने सद्धर्म की सबोधि प्राप्त कर ली और स्वय बोधिसत्व

वन गया, ठीक वैसा ही जैसे आचार्य दीपाकर ने अनेक जन्मो पूर्व भविष्यवाणी की थी।

"वच्चो, धन और यश-कीर्ति जीवन मे सर्वाधिक मूल्यवान वस्तुए नहीं होती। धन-सपदा और यश-कीर्ति वहुत शीघ्र ही फीकी पड़ जाती हैं। जीवन मे ज्ञान और प्रेम ही सवसे मूल्यवान है। यदि तुममे ज्ञान और प्रेम होगा तो तुम आनंद की अनुभूति कर सकोगे। मेघ और उसकी पत्नी ने अनेक जन्मो तक सुख और आनद का अनुभव किया। यदि तुममे ज्ञान और प्रेम हो तो ससार मे ऐसा कुछ भी नहीं है, जिसे तुम प्राप्त न कर सको।"

यशोधरा ने हाथ जोड़े और प्रणत होकर वदना की। उसकी आखो से अविरल अश्रुधारा वह रही थी। वह समझ रही थी कि यद्यपि वुद्ध यह कहानी वच्चो को सुना रहे थे किन्तु वास्तव मे वह उसी को सवोधित कर रहे थे। उसे धन्यवाद देने का उनका यह अपना ही तरीका था। रानी प्रजापति ने उसकी ओर देखा। वह भी समझ रही थीं कि वुद्ध ने यह कहानी क्यो सुनाई है।

रानी ने यशोधरा के कधे पर हाथ रखा और वच्चो से कहा, "जानते हो कि वह मेघ इस जीवन मे कौन है ? वह स्वय वुद्ध हैं। वह इसी जीवन मे सवोधि प्राप्त करके वोधिसत्व हो गए हैं। और, जानते हो कि उसकी पत्नी इस जन्म मे कौन है ? वह और कोई नहीं, आपकी यशोधरा ही है। उसकी समझदारी का ही परिणाम है कि राजकुमार सिद्धार्थ सद्धर्म-मार्ग पर चल सके और वोधिसत्व वन सके। हमे इसके लिए यशोधरा का आभार-व्यक्त करना चाहिए।"

वच्चे यशोधरा को वहुत प्रेम करते थे। वे सव उसकी ओर मुड़े और उसको नमन किया जिससे अपने हृदयो का प्रेम प्रदर्शित कर सके। वुद्ध यह दृश्य देखकर द्रवित हो गए। उसके वाद वह उठे और धीरे-धीरे चलते हुए भिक्खु कालुदयी और नागसमल के साथ विहार की ओर वढ गए।

अध्याय सैंतीस

धर्म-शासन उचित

दो सप्ताह बाद राजा शुद्धोधन ने बुद्ध को पारिवारिक भोज पर राजमहल मे आमंत्रित किया। सारिपुत्त को भी निमन्त्रित किया गया था। रानी गोतमी, यशोधरा, नद, सुदरी नदा और राहुल भी उपस्थित थे। घनिष्ठ पारिवारिक वातावरण मे बुद्ध ने प्रदर्शन करके दिखाया कि किस प्रकार प्राणायाम करे, किस तरह अपने सकल्प-विकल्पो का गहन दर्शन करे और किस प्रकार चलित ध्यान तथा बैठकर ध्यान-साधना करे। उन्होने इस बात पर जोर दिया कि अपने दैनिक जीवन मे सचेतनावस्था का अभ्यास करके अपनी चिन्ताओ, निराशाओ और अमर्षों से कैसे ऊपर उठा जा सकता है।

राहुल सारिपुत्त के समीप बैठा था और अपना छोटा हाथ वरिष्ठ भिक्खु के हाथ मे दिए हुए था। राहुल को सारिपुत्त अच्छे लगते थे।

बुद्ध और सारिपुत्त जब विहार जाने लगे तो सभी उन्हे द्वार तक विदा देने आए। नद ने बुद्ध का भिक्षा-पात्र पकड़ा हुआ था जिससे वह हाथ जोड़कर विदा ले सके। बुद्ध ने नद से अपना भिक्षा-पात्र वापस नहीं लिया। बिना कुछ समझे, नद बुद्ध के पीछे-पीछे इस आशा से चलता गया कि अब बुद्ध उससे भिक्षा-पात्र लेगे। जब वे लोग विहार मे आ गए तो बुद्ध ने नद से पूछा कि क्या तुम भिक्खु जीवन का गूढ़ स्वाद लेने के लिए एक सप्ताह तक विहार मे रहना चाहोगे ? बड़े भाई के प्रति प्रेम और सम्मान के कारण नद सहमत हो गया। यह भी सच था कि नद को भिक्खुओ का शात और सहज जीवन आकर्षित कर रहा था। एक सप्ताह के बाद, जब बुद्ध ने पूछा कि क्या तुम प्रवृज्या लेकर भिक्खु बनोगे और कुछ महीने तक स्वय उन्हीं के मार्ग-दर्शन मे भिक्खु का जीवन बिताओगे तो नन्द सहर्ष सहमत हो गया। बुद्ध ने सारिपुत्त से कहा कि नद को प्रवृज्या देकर मूलभूत निर्देश दे दे।

वुद्ध ने अपने पिता से पहले ही परामर्श कर लिया था कि वह नंद को कुछ समय के लिए भिक्खु-जीवन व्यतीत करने की अनुमति प्रदान करे। राजा ने वुद्ध के मत से सहमति व्यक्ति की कि नद भला युवक है किन्तु इसमे चरित्र की वह शक्ति और दृढ़ सकल्प का अभाव है जो भावी राजा के लिए आवश्यक होता है। वुद्ध ने कहा कि मै इसे शिक्षा देकर इसके विचारो में स्पष्टता लाकर और सकल्प-शक्ति विकसित कर पाऊगा। इस पर राजा सहमत हो गए थे।

किन्तु एक महीना भी नहीं वीता था कि नद अपनी प्रेयसी सुदरी जनपद कल्याणी से मिलने के लिए उतावला हो उठा। उसने वुद्ध को अपनी इच्छा वताई नहीं, किन्तु वह तो उसकी भावनाओ को देख-समझ रहे थे। एक दिन वुद्ध ने नद से कहा कि "यदि तुम अपना लक्ष्य प्राप्त करना चाहते हो तो सामान्य भाव-वोधो से चिपके रहना उचित नहीं। अपनी सपूर्ण सामर्थ्य से अपना साधना-अभ्यास करो और चित्त-निरोध का शिक्षण अपनाओ। तभी तुम प्रभावशाली नेता वन सकते हो जो अन्य लोगो की भली प्रकार सेवा कर सके।"

वुद्ध ने सारिपुत्त को कहा कि नद कल्याणी के घर के आस-पास भिक्षा मागने के लिए न जाने पाए। जव नद को इस वात का पता चला तो वह वुद्ध पर झल्लाया भी और स्वय को आभारी भी अनुभव किया। वह समझ गया कि वुद्ध उसके आतरिक भावो और आवश्यकताओ को भली-भाति जानते हैं।

राहुल को अपने चाचा से ईर्ष्या हो रही थी कि वह विहार में रहने का अवसर पा रहे हैं। वह भी वहां रहना चाहता था। जव उसने इसकी इच्छा अपनी माता जी के समक्ष प्रकट की तो यशोधरा ने उसका सिर थपथपाकर कहा कि भिक्खु वनने से पहले तुम्हे वहुत वड़ा होना होगा। राहुल ने पूछा कि मैं कैसे जल्दी वडा हो सकता हू तो उसने वताया कि खूव अच्छा खाना खाओ और नित्य व्यायाम करो।

एक दिन जव यशोधरा ने भिक्खुओ को महल के पास ही भिक्षाटन करते देखा तो उसने राहुल से कहा कि "तुम क्यो न नीचे जाकर, वुद्ध से अपने उत्तराधिकार की वात पूछते ?"

राहुल नीचे आया। वह अपनी मा से वहुत प्यार करता था और अपने पिता को भी। उसने अपनी माता के साथ तो इतने दिन विताए थे किन्तु पिता के साथ पूरा एक दिन भी विताने को नहीं मिला था। उसकी मनोकाक्षा

थी कि वह नन्द के समान ही बुद्ध के पास रहे। उसने जल्दी-जल्दी जाकर बुद्ध को पकड़ ही लिया। बुद्ध ने मुस्कराकर अपना हाथ बढ़ा दिया। हालांकि सूर्य चढ़ आने से काफी गरमी थी, किन्तु राहुल अपने पिता की छाया और प्रेम के कारण स्वय को सुरक्षित अनुभव कर रहा था। उसने पिता की ओर देखकर कहा, "आपके साथ तो सब कुछ बहुत शीतल और ताज़गी युक्त लगता है।"

यशोधरा महल की बालकनी से देख रही थी। उसने जान लिया कि बुद्ध ने उसे अपने साथ विहार मे एक दिन रहने की अनुमति दे दी है।

राहुल ने बुद्ध से पूछा : "मेरा उत्तराधिकार क्या है ?"

बुद्ध ने कहा-"विहार तक आओ मै तुम्हे वह उत्तराधिकार प्रदान कर दूगा।"

विहार आकर राहुल ने बुद्ध और सारिपुत्त के बीच बैठकर सारिपुत्त के साथ मौन साधकर भोजन किया। वह अपने चाचा नद को भी वहा देखकर प्रसन्न हुआ। बुद्ध ने राहुल से कहा कि आज की रात तुम सारिपुत्त की कुटिया मे ही सोओगे। सभी भिक्खु राहुल को चाहते थे और राहुल के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करते थे। राहुल की इच्छा हो रही थी कि वह सदा के लिए ही विहार मे रहने लगे। सारिपुत्त ने कहा कि विहार मे रहने के लिए भिक्खु बनना होगा तो राहुल ने पूछा कि क्या मै बुद्ध से प्रवृज्या देने की प्रार्थना करू। राहुल ने जब पूछा तो बुद्ध ने स्वीकृति दे दी और उन्होने कहा कि 'इस बालक को प्रवृज्या दे दे।'

पहले तो सारिपुत्त ने समझा कि बुद्ध ठिठोली कर रहे हैं किन्तु जब उन्होने देखा कि इस प्रश्न पर बुद्ध गभीर है तो पूछा, "किन्तु आचार्य, इतनी कम वय के बालक को कैसे प्रवृज्या दी जा सकती है ?"

बुद्ध ने उत्तर दिया कि "हम इसे भविष्य मे पूर्ण प्रणिधान के लिए तैयार होने का अभ्यास कराएगे। अभी तो इसको श्रामणेर का व्रत दिलाइए। इसे यह काम सौंप दो कि यह उन गायो को दूर भगा दिया करे जो भिक्खुओ की साधना के समय विघ्न बनती हैं।"

सारिपुत्त ने राहुल के सिर के बाल उतारे और त्रिरत्नो-'बुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरणं गच्छामि- का उच्चारण कराया। उन्होने राहुल को चार आर्य सत्यो-अहिंसा, अचौर्य्य, सत्य भाषण करने एव मादक द्रव्यो के सेवन विरति से परिचय कराया। उन्होने अपना चीवर काटकर ऐसा छोटा कर दिया, जिसे राहुल धारण कर सके। उन्होने सिखाया कि चीवर

कैसे धारण करना है और भिक्षाटन के लिए भिक्षा-पात्र कैसे पकड़ना है। राहुल देखने मे लघु भिक्खु लग रहा था। राहुल सारिपुत्त की कुटिया मे सोता और नित्य भिक्षाटन के लिए विहार के आस-पास के छोटे गावो मे जाता। यद्यपि अन्य भिक्खु दिन मे केवल एक बार भोजन करते किन्तु सारिपुत्त ने राहुल की वृद्धिमान आयु को देखते हुए, उसे सायकालीन भोजन करने की भी अनुमति दे दी थी। उपासक, उसके लिए दूध और अतिरिक्त भोजन लाना न भूलते थे।

राहुल ने सिर मुडवा लिया है और भिक्खु का चीवर धारण कर लिया है, यह समाचार जब राजमहल मे पहुचा तो राजा शुद्धोधन बहुत उद्विग्न हुए। राजा और रानी को राहुल की वहुत याद आती। उन्हे आशा थी कि राहुल विहार मे कुछ दिन विताकर वापस आ जाएगा। उन्हे स्वप्न मे भी ख्याल नहीं था कि वह श्रामणेर वनकर विहार-वासी ही हो जाएगा। अपने पौत्र के विना उन्हे अकेलापन काट रहा था। यशोधरा के मन मे विषाद और हर्ष के मिश्रित भाव थे। यद्यपि उसे अपने इकलौते बेटे की बेहद याद आती थी किन्तु उसे इस बात का हर्ष भी था कि इतने वर्षों से पिता को न देख पाने के बाद वह पिता के इतने समीप रहेगा।

एक दिन राजा रानी गौतमी और यशोधरा के साथ राजकीय वाहन पर विहार गए। वहा उन्हे बुद्ध मिले। नद और राहुल भी उन्हे अभिवादन करने आए। राहुल दौड़कर अपनी मा के पास जा पहुचा और यशोधरा ने उसे अपनी वाहो मे भर लिया। वाद मे वह अपने दादा जी और दादी जी से भी गले मिला।

राजा ने वुद्ध को नमन किया और दुखभरी वाणी मे कहा, "जव तुम गृह त्यागकर सन्यासी बनने निकल पड़े तो मुझे कितना दुःख हुआ, इसका तुमको विश्वास नहीं हो सकता। कुछ दिन पहले नद भी मुझे छोड़ आया। अव राहुल को त्यागना हमारी सहनशीलता को पार कर गया है। मेरे जैसे गृहस्थ के लिए वाप-वेटे और दादा-पोते के बीच की निकटता बहुत महत्त्व रखती है। तुम्हारे जाने पर तो चाकू से मेरी त्वचा मे घाव हुआ था, उसके वाद उस चाकू ने मेरा मास काट दिया और अव उसने मेरी हड्डिया ही काट दी है। मै प्रार्थना करता हू कि अपने कार्यों पर पुनर्विचार करो। भविष्य मे किसी भी वच्चे को उसके माता-पिता की अनुमति के बिना प्रवृज्या मत देना।"

वुद्ध ने अनित्यता और अस्तित्व की पृथक् सन्तान न होने के सत्यो के

विषय मे देशना देकर राजा को सतुष्ट करने का प्रयास किया। उन्होने स्मरण दिलाया कि सचेतावस्था का नित्य अभ्यास करने से ही दुःखो से पार जाने का द्वार खुलता है। नद और राहुल को यह जीवन पूर्ण गहनता के साथ जीने का अवसर मिला है। वुद्ध ने अपने पिता से कहा कि आपको तो उनके सौभाग्य पर प्रसन्न होना चाहिए और नित्य नैमित्तिक जीवन मे सचेतनता के मार्ग का अभ्यास जारी रखना चाहिए जिससे आप सच्चा आनद प्राप्त कर सके।

राजा को लगा, जैसे उनका दुःख-भार कुछ हल्का हुआ है। गौतमी और यशोधरा भी वुद्ध के वचनो से आश्वस्त हुईं और राहत अनुभव की।

उस दिन वाद मे वुद्ध ने सारिपुत्त को निर्देश दिया कि "अबसे आगे, वच्चो को भिक्खु सघ मे सम्मिलित करने से पूर्व उनके माता-पिता की अनुमति लेनी सर्वथा आवश्यक होगी। इसे हमारे विहार की आचार-सहिता का अग वना लिया जाए।"

समय वीतता रहा और वुद्ध तथा उनके सघ को शाक्य राज्य मे रहते हुए छः महीने वीत गए। नए भिक्खुओ द्वारा प्रवृज्या ग्रहण करने के कारण सघ मे भिक्खुओ की सख्या पाच सौ से अधिक हो गई। साधारण उपासको की तो गिनती ही करना कठिन था। राजा शुद्धोधन ने राजकुमार सिद्धार्थ के ग्रीष्मकालीन महल (राजधानी से उत्तर मे स्थित) सघ को दे दिया था जिसमे ठडा विशाल उद्यान वना हुआ था। आदरणीय सारिपुत्त ने वहा भिक्खुओ के लिए विहार मे रहने सरीखी व्यवस्थाए करा दी थी। इस नए विहार की स्थापना से शाक्य राज्य मे सद्धर्म के मार्ग की साधना करने की दृढ़ नींव रख गई थी।

अपने वायदे के अनुसार वर्पा-प्रवास के दौरान बुद्ध वेणुवन मे रहने के लिए प्रस्थान करना चाहते थे। मगध के लिए रवाना होने से पूर्व बुद्ध को राजा शुद्धोधन ने महल मे भोजन करने और राजपरिवार तथा शाक्य वश के लोगो को धर्म की देशना करने का अनुरोध किया। बुद्ध ने इस अवसर पर सद्धर्म के मार्ग का राजनीतिक क्षेत्र मे प्रयोग करने के विषय मे देशना की जिससे राज्य के शासन-कार्यों मे व्यस्त लोग किस प्रकार सामाजिक समानता ला सकते है और सभी वर्गों को न्याय प्रदान कर सकते हैं। यदि आप सद्धर्म मार्ग का आचरण करेगे तो इससे आपकी प्रज्ञा और करुणा के भावो मे वृद्धि हो सकेगी और लोक-सेवा श्रेष्ठतम रूप से सभव हो सकेगी। आप हिंसा का सहारा लिए बिना शाति और सुख-समृद्धि लाने के उपाय खोज निकालेगे।

आपको मृत्यु-दड देने, शारीरिक यातनाए देने, कारावास मे डालने अथवा उनकी सपत्ति को जब्त करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी। यह कोई असभव आदर्श नहीं है। ऐसी अवस्था लाई जा सकती है।

"जव राजनीतिज्ञ पर्याप्त प्रज्ञा-सपन्न और प्रेम-भाव से युक्त होगा तो वह निर्धनता, कष्टो और उत्पीड़न विषयक सत्य स्थिति को समझ सकेगा। ऐसा व्यक्ति शासन-व्यवस्था मे ऐसे सुधार कर सकता है, जिससे अमीरी और गरीवी के वीच की खाई कम हो सके और अन्य लोगो के साथ वल-प्रयोग की आवश्यकता ही समाप्त हो जाए। मेरे मित्रो, राजनीतिज्ञो और शासको को स्वय एक उदाहरण वन जाना चाहिए। विलासितापूर्ण जीवन की गोद मे मत पड़े रहो क्योकि धन ही आप लोगो एव प्रजाजनो के वीच सर्वाधिक वाधाए वनकर उपस्थित होता है। सादा और सर्वांग जीवन जियो, अपना समय लोगो की सेवा मे लगाओ, न कि भोग-विलास मे। यदि नेता स्वय अच्छा उदाहरण प्रस्तुत नहीं करता तो वह लोगो का प्रेम और सम्मान कैसे अर्जित कर सकता है। सदाशयता का' शासन कानून और व्यवस्था के नियमो से सर्वथा भिन्न होता है। सदाशयता का शासन दण्ड पर आधारित नहीं होता। चेतना-जागृति के मार्ग के अनुसार सच्ची प्रसन्नता या आनद सदाशयता अथवा दया-भाव से ही प्राप्त किया जा सकता है।"

राजा शुद्धोधन और अन्य उपस्थित गण्यमान्य अतिथियो ने वुद्ध की देशना वहुत ध्यान से सुनी। वुद्ध के चाचा और देवदत्त के पिता राजकुमार द्रोणधनराज तथा आनद ने कहा, "सदाशयता से शासन करने की जो वात आपने कही है, वह वहुत ही सुन्दर हे, किन्तु मेरा विश्वास है कि आप ही मे वह दृढचरित्र और सदाशयता है जो इस मार्ग को सफलता तक पहुचा सकती है। आप कपिलवस्तु मे ही क्यो नहीं रुक जाते और शाक्य शासन की नई व्यवस्था कर देते जिससे ममस्त प्रजाजनो को शाति, सुख और आनद की प्राप्ति हो सके ?"

राजा शुद्धोधन ने कहा-"मैं वृद्ध हो चुका हू। अगर तुम यहा रुकना स्वीकार कर लो तो मैं आपके लिए सिंहासन खाली करने के लिए तैयार हू। अपनी सदाशयता, निष्ठा और प्रज्ञा से प्रभावित सभी लोग तुम्हारे साथ खडे होगे, ऐसा मेरा विश्वास है। इससे शीघ्र ही हमारा देश सम्पन्न और ममृद्ध हो जाएगा, जितना पहले कभी नहीं हुआ था।"

वुद्ध ने इसका तुरन्त उत्तर नहीं दिया। अपने पिता की ओर दयापूर्ण दृष्टि मे देखते हुए उन्होने कहा-"पिताजी, अव मै किसी एक परिवार,'वश अथवा

किसी एक देश का ही पुत्र नहीं रह गया हू। समस्त प्राणी मेरे परिवारजन है और समस्त पृथ्वी मेरा घर। मेरी अपनी स्थिति एक भिक्खु की है जो दूसरो की उदारता पर निर्भर है। मैने अपने लिए सद्धर्म का मार्ग चुना है, न कि राजनीति का। मुझे भरोसा है कि इस प्रकार मैं समस्त प्राणियो की सेवा कर सकूगा।"

यद्यपि रानी गौतमी और यशोधरा ने इस अवसर पर कुछ बोलना उचित नहीं समझा, किन्तु बुद्ध के शब्दो से प्रभावित होकर उनके आसू झरने लगे। वह समझती थीं कि जो कुछ बुद्ध ने कहा है, वह ठीक है।

बुद्ध ने राजा और उपस्थित अतिथियो के समक्ष अपनी देशना जारी रखी और बताया कि पचशीलो का पारिवारिक जीवन तथा समाज मे कैसे प्रयोग किया जा सकता है। ये पाचो शील सुखी परिवार और शातिपूर्ण समाज की आधारशिला हैं। उन्होंने प्रत्येक शील की सावधानीपूर्वक व्याख्या की और अन्त मे कहा, "यदि आप चाहते है कि लोग सगठित रहे तो पहले आपको लोगो की श्रद्धा और उनका विश्वास अर्जित करना होगा। यदि राजनीतिक नेता पचशीलो का आचरण करेगे तो लोगो के मन मे उनके प्रति श्रद्धा-विश्वास बढेगा। यह श्रद्धा-विश्वास जागृत हो जाने पर ऐसा कुछ शेष नहीं रहता जो देश प्राप्त न कर ले। इससे शांति, सुख-सतोष और सामाजिक समानता स्थापित होना सुनिश्चित हो सकेगा। सचेतनता पर आधारित जीवन स्थापित कीजिए। पुरानी लकीर के फकीर बने रहने से न तो श्रद्धा और विश्वास जागृत होता है और न इनसे लोगो मे समता-भाव को प्रोत्साहन मिलता है। आत्म-जागृति के मार्ग को एक नया मार्ग और एक नया विश्वास-भाव बनने दीजिए।"

बुद्ध ने उन्हे आश्वासन दिया कि यद्यपि मै शीघ्र ही मगध के लिए रवाना हो जाऊगा किन्तु भविष्य मे कपिलवस्तु वापस आऊगा। यह सुनकर राजा और वहा उपस्थित सभी गण्यमान्य व्यक्ति प्रसन्न हुए।

अध्याय अड़तीस

आनंद ही आनंद

शाक्य राज्य से निकलकर बुद्ध ने एक सौ बीस भिक्खुओ के साथ उत्तरी कौशल के क्षेत्र मे प्रवेश किया। वह अनुप्रिया नगर के समीप एक उद्यान मे ठहरे। बुद्ध के साथ सारिपुत्त, कालुदयी, नद और श्रामणेर राहुल के अलावा उच्च घरानो के अनेक युवा भिक्खु भी थे।

कपिलवस्तु से रवाना होने के एक महीने बाद, महानाम और अनिरुद्ध नाम के, शाक्य वश के दो युवकों के मन मे आया कि वह भी गृह त्यागकर भिक्खु की प्रवृज्या ले ले। उनके परिवार के तीनो ऋतुओ के लिए अलग-अलग महल थे। महानाम के अनेक मित्र जब भिक्खु बन गए तो उसके मन मे भी आया कि वह भी भिक्खु बन जाए। किन्तु जब उसे ज्ञात हुआ कि उसका भाई भी भिक्खु बनने की इच्छा रखता है तो उसने अपना विचार बदल दिया। उसके परिवार मे दो ही पुत्र थे। यदि दोनो भिक्खु बन जाएगे तो परिवार के लिए ठीक नहीं रहेगा। इसलिए महानाम ने अपने छोटे भाई को भिक्खु बन जाने की अनुमति दे दी।

जब अनिरुद्ध ने अपनी माता से भिक्खु बनने की अनुमति चाही तो उसने विरोध किया। अनिरुद्ध ने बताया कि बहुत से अन्य उच्च घरानो के युवक भिक्खु बन गए हैं। फिर सद्धर्म के मार्ग पर चलने से न केवल भिक्खु को, वरन् समूचे परिवार को शाति और सुख-समृद्धि प्राप्त होती है। न्यग्रोधा उद्यान मे बुद्ध की देशना सुनने के बाद उसने अपनी माताजी को और समझाया। इस पर उन्होने उसे भिक्खु बनने की अनुमति दे दी बशर्ते कि उसका मित्र भद्दिय भी भिक्खु बन जाए।

उसकी माता को पता था कि भद्दिय राजघराने का सदस्य है और सरकार मे उच्च पद पर आसीन है, अतः अपने उत्तरदायित्वो और उच्च प्रतिष्ठा

को त्यागकर वह कभी भिक्खु नहीं बनेगा। भद्दिय उत्तरी राज्यो का शासक था। उसके पास बहुत से सैनिक थे और महल के चारो ओर दिन-रात पहरा रहता है।

अनिरुद्ध शीघ्र ही भद्दिय के पास गया और कहा, "मै बुद्ध का शिष्य बनने के लिए गृह-त्यागकर भिक्खु बनना चाहता हू किन्तु तुम्हारे कारण नहीं बन पा रहा।"

भद्दिय ने हसकर कहा, "मै कैसे कारण हू। मै तुम्हारी इच्छा पूर्ण करने के लिए सब कुछ करने को तैयार हू।"

अनिरुद्ध ने सब घटनाक्रम सुनाकर कहा, "मै तभी भिक्खु बन सकता हू जब तुम भी मेरे साथ भिक्खु बनो। अभी आपने कहा है कि आप मेरे लिए कुछ भी कर सकते है।"

भद्दिय जाल मे फस गया। यह नही कि वह स्वय भिक्खु बनना नहीं चाहता था किन्तु गुप्तरूप से उसने सोच रखा था वह बाद मे भिक्खु बनेगा, अभी नहीं। भद्दिय ने भिक्खु बनने के लिए पहले सात साल का, फिर तीन साल का, फिर सात महीने का समय मागा जिससे वह अपने राजकीय दायित्वो को निबटा सके।

अनिरुद्ध ने कहा कि "सद्धर्म का मार्ग अपनाने के लिए इतने समय की क्या आवश्यकता। भिक्खु तो स्वतत्रता और मुक्ति पाने के लिए सब कुछ छोड़ जाता है। यदि तुम अधिक समय लोगे, तो हो सकता है कि अपना मत ही बदल लो।"

"ठीक है, ठीक है, मेरे मित्र। अच्छा सात दिनो का समय दो, मैं तुम्हारे साथ चलूगा।"

इस पर उत्साहित होकर अनिरुद्ध ने अपनी माताजी को सूचना दी। उन्होने स्वप्न मे भी नहीं सोचा था कि राज्यपाल भद्दिय इतनी आसानी से अपनी राजकीय स्थिति और प्रतिष्ठा को त्याग देगा। अकस्मात्, उन्हे मुक्ति-पथ का आभास हुआ और उसने सोचा कि पुत्र को भिक्खु बनने के लिए जाने दे।

अनिरुद्ध ने अपने अन्य मित्रो-भृगु, किम्बिल, देवदत्त और आनद को भी अपने साथ जाने के लिए तैयार कर लिया। ये सभी राजपरिवार के कुमार थे। निर्धारित समय पर सभी देवदत्त के घर एकत्र हुए और बुद्ध को खोजने के लिए चल पड़े। आनद की आयु अठारह वर्ष की थी, अतः उसने अपने पिता से, बड़े भाई देवदत्त के साथ जाने की अनुमति प्राप्त कर ली थी। सभी राजकुमार कौशल राज्य की सीमा तक अपने राजकीय वाहन पर गए। उन्होने सुना था कि बुद्ध अनुप्रिया नगर के समीप ठहरे हैं।

अनिरुद्ध ने सुझाव दिया कि हम लोगो को अपने रत्न जटित राजकीय वस्त्र, कंठ-मालाएं, अगूठिया और चूड़े उतार देने चाहिए और खोजकर किसी निर्धन व्यक्ति को दे देने चाहिए। उन्होंने देखा कि पास मे नाई की दुकान है जिसमें काम कर रहा युवक अत्यन्त साधारण से कपड़े पहने हुए है। अनिरुद्ध उसकी दुकान मे गया और उससे उसका नाम पूछा और यह भी जानना चाहा कि क्या वह उन लोगों को सीमा-पार करा देगा। उपालि नामक वह युवक सहर्ष उनके साथ रास्ता वताते हुए गया। उपालि को छोड़ने से पहले राजकुमारो ने मूल्यवान रत्न-खचित वस्त्र और आभूषण उसे दिए। "हम लोग वुद्ध के अनुयायी वनकर भिक्खु वन रहे हैं, इसलिए इन मूल्यवान वस्त्रो की अव कोई आवश्यकता नहीं। इन वस्त्रों को हम तुम्हे देते हैं। इन्हे बेचकर तुम आराम का जीवन सदैव व्यतीत कर सकोगे।"

राजकुमारो को सीमा पार कराने के वाद जव उपालि ने वस्त्रो की गठरी खोली तो रत्नो और सोने की चमक से उसकी आखे चुंधिया गईं। वह नीच जाति और गरीव परिवार का था और उसने एक अंगूठी तक नहीं देखी थी। और, अव इतने वस्त्र-आभूषण पाकर वह प्रसन्न होने के वजाय आतक से भर गया कि लोग इन्हे प्राप्त करने के लिए उसे ही मार डालेगे। उसने सारे वस्त्राभूपण पोटली में कसकर वांध दिए।

वह सोचने लगा कि ये राजपुरुप जव अपनी धन-संपदा और सत्ता त्यागकर भिक्खु वनना चाहते हैं तो वह भी क्यो न उनका अनुसरण करे। उसने वस्त्र आभूपणो की पोटली को एक पेड़ पर टाग दिया ताकि जो भी इसे देखे ले जाए और वह स्वयं भी सीमा पार चल दिया। जल्दी ही वह राजकुमारो के पास पहुच गया।

उपालि के आने पर आश्चर्यचकित देवदत्त ने पूछा, "उपालि, हमारे पीछे क्यो भागते आए हो ? हमने जो वस्त्राभूपण दिए थे, वे कहा हैं ?" उपालि ने अपने मन मे घटित भावो से परिचित कराते हुए कहा कि वस्त्राभूषण मैंने पोटली वाधकर पेड पर टाग दिए। इतनी धन-संपदा पाकर वह असहज हो गया था और अव वुद्ध के शिष्य के रूप मे भिक्खु वनना चाहता है।

देवदत्त ने हसकर उपहास के तौर पर कुछ कहना चाहा तो अनिरुद्ध ने वीच मे टोककर कहा—'अद्भुत वात है। तुम्हें साथ ले चलने मे हमे प्रसन्नता ही होगी। वुद्ध की देशना है कि संघ तो सागर के समान है, जिसमे भिक्खुओ की सरिताए आ-आकर अस्तित्वहीन वन जाती हैं। भले हम भिन्न जातियो मे जन्मे हों, किन्तु सव मे सम्मिलित होने पर हमारे वीच किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रह जाता।'

भद्दिय ने उपालि को पहले अपना परिचय दिया और फिर अन्य सभी कुमारो का परिचय कराया जिन्होने उसको नमन किया। सातो युवको ने अपनी आगे की यात्रा जारी रखी।

वे लोग अगले दिन ही अनुप्रिया पहुच गए जहा उन्हे पता चला कि बुद्ध तो नगर के उत्तर पूर्व मे दो मील दूर वन मे रहते है। वहा पहुचकर वे बुद्ध से मिले। भद्दिय ने सव लोगो की इच्छा उन्हे बताई और बुद्ध ने सवको प्रवृज्या देना स्वीकार कर लिया। इस पर भद्दिय ने अनुरोध किया कि "कृपया उपालि को पहले प्रवृज्या दे। इससे हम सद्धर्म मार्ग पर उसे अपना वड़ा भाई मान सके। इस प्रकार हम उस झूठी प्रतिष्ठा और भेद-भाव के विचारो से मुक्त हो सकेगे।"

बुद्ध ने उपालि को पहले प्रवृज्या दी। आनद अभी अठारह वर्ष का ही था। अतः उसे श्रामणेर की प्रवृज्या दी गई। राहुल के बाद वह सघ का सवसे कम आयु का सदस्य था। राहुल आनद को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ।

प्रवृज्या-प्राप्ति के बाद तीन दिन तक वहा रहकर वे सब बुद्ध और अन्य भिक्खुओ के साथ वैशाली गए। वहा तीन दिनो तक महावन मे रहकर वे राजगृह के वेणुवन के लिए चल दिए जहा पहुचने मे सघ को दस दिन लगे। वेणुवन मे रह रहे छः सौ भिक्खुओ सहित मान्य काश्यप, मौद्गल्यायन और कौंडन्न बुद्ध के वापस आने पर अत्यन्त प्रसन्न हुए। बुद्ध के आगमन का समाचार पाते ही राजा बिम्बिसार अविलम्ब उनसे मिलने आए।

वर्षा ऋतु आने ही वाली थी, अतः इस काल के लिए कौंडन्न और काश्यप पूरी तरह तैयार थे। बुद्ध द्वारा सवोधि प्राप्ति के बाद यह तीसरा वर्षा-प्रवास था। उन्होने पहला वर्षा-प्रवास मृगदाय मे किया था और दूसरा वेणुवन मे।

राज्यपाल का पद स्वीकार करने से पूर्व भद्दिय ने आध्यात्मिक अध्ययन किया था। अब वेणुवन मे मान्य काश्यप के मार्ग-निर्देशन मे उन्होने अपने हृदय और चित्त से ध्यान-साधना मे पूरा समय देना आरभ कर दिया। कुटी मे रहने की अपेक्षा वृक्षो के नीचे सोना उन्होने पसद किया। एक रात ध्यान-साधना करते-करते उन्हे इतने आनद का अनुभव हुआ कि चिल्लाने लगे, 'आनंद ही आनद।'

समीप बैठे साधनारत भिक्खु ने सवेरे बुद्ध को बताया कि रात को साधना करते हुए भद्दियं 'आनद ही आनद' चिल्ला रहे थे। प्रतीत होता है कि भद्दिय को यहा रहकर प्रतिष्ठा और धन-सपदा का अभाव खल रहा है। बुद्ध ने सुनकर केवल सिर हिला दिया।

दोपहर के भोजनोपरान्त बुद्ध ने धर्म की देशना के बाद भद्दिय को समस्त सघ के समक्ष बुलाकर पूछा–"कल रात, ध्यान साधना करते समय तुम चिल्लाए थे–'आनद ही आनद', भद्दिय ने हाथ जोड़कर स्वीकार किया कि "मै ये शब्द चिल्ला रहा था।"

"क्या बता सकते हो, क्यो ?"

"बुद्ध देव, जब मैं राज्यपाल था तो मैंने प्रसिद्धि, सत्ता और धन-सम्पन्न जीवन जिया। जहा भी जाता, सैनिक मेरी रक्षा के लिए साथ रहते। मेरे महल के चारो ओर दिन-रात पहरा रहता था। तब भी एक क्षण के लिए भी मैं भय-मुक्त नहीं रहता था। यहा घने जगल मे मै कहीं भी आ-जा सकता हू, बैठकर ध्यान कर सकता हू। यहा न मुझे कोई भय है और न कोई चिन्ता। इसके विपरीत, मैं यहा सहज, शात और आनद अनुभव करता हू जैसा कि पहले कभी अनुभव नही किया। गुरुदेव, भिक्खु का जीवन व्यतीत करने मे मुझे इतनी महान शाति और सतुष्टि की अनुभूति होती है कि मुझे अब किसी से डर नहीं और न कुछ खोने का भय है। मैं यहा किरण की भांति स्वच्छन्द विचरता हू। कल रात, अपनी ध्यान-साधना के समय यह तथ्य इतनी स्पष्टता से सामने आया कि मै चिल्ला उठा–'आनद ही आनद।' इससे यदि आपकी या किसी भिक्खु की साधना मे विघ्न पड़ा हो तो कृपया क्षमा कर दीजिए।"

बुद्ध ने प्रशसा करते हुए कहा, "भद्दिय, यह तो अद्भुत है। तुमने आत्म-सतोष और ममत्व-त्याग की दिशा मे बहुत प्रगति की है। तुम्हें जो शाति और आनद की प्राप्ति हुई है, वह देव-दुर्लभ है।"

वर्षा-प्रवास मे बुद्ध ने बहुत से नए भिक्खुओ की प्रवृज्या दी जिनमे मगध के सबसे धनी श्रेष्ठि का प्रतिभावान पुत्र महाकाश्यप भी था। इसकी पत्नी वैशाली की भद्र कापिलानी थी। दोनो पति-पत्नी वैवाहिक जीवन के बारह वर्षों से धर्म के मार्ग पर अग्रसर होने के परम इच्छुक थे।

एक दिन महाकाश्यप अपनी पत्नी से पहले जग गया तो उसने देखा कि एक विषधर सर्प उसकी पत्नी की बाह के पास से रेग रहा है। भय के मारे महाकाश्यप सास रोके रहा जिससे सर्प को कोई खड़का न हो। साप धीरे-धीरे उसकी पत्नी के पास से गुजरता हुआ, कमरे से बाहर चला। महाकाश्यप ने अपनी पत्नी को जगाकर सारी घटना बताई तो दोनो सोचने लगे कि जीवन कितना क्षण-भगुर और अनिश्चित है। कापिलानी ने अपने पति से कहा कि अविलम्ब ऐसे गुरु की खोज करो जो सद्धर्म के मार्ग

पर अग्रसर होने का दिशा-निर्देश कर सके। उसने बुद्ध के विषय मे सुन ही रखा था, अतः वह वेणुवन गया। बुद्ध को देखते ही वह समझ गया कि वे ही सच्चे गुरु सिद्ध हो सकते है। बुद्ध ने भी देखा कि महाकाश्यप दुर्लभ साधना-शक्ति-सम्पन्न व्यक्ति है, अतः उसे प्रवृज्या प्रदान कर दी। महाकाश्यप ने बुद्ध से अनुरोध किया कि उसकी पत्नी भी सद्धर्म मार्ग पर अग्रसर होने के लिए भिक्खुनी बनने की इच्छुक है। बुद्ध ने कहा कि सघ मे भिक्खुनियो को प्रवेश देने का उपयुक्त समय अभी नहीं आया है। उसे सघ की सदस्या बनने हेतु अभी कुछ समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

अध्याय उन्तालीस

उषःकाल की प्रतीक्षा

व र्षा-प्रवास की समाप्ति के तीन दिन बाद सुदत्त नामक युवक ने बुद्ध से भेट करके उनसे अनुरोध किया कि वह कौशल आकर सद्धर्म मार्ग की शिक्षा वहा के लोगो को दे। सुदत्त कौशल की राजधानी श्रावस्ती मे रहता था। वह बहुत धनवान था और निर्धन लोगो के लिए धर्मार्थ कार्य रुचिपूर्वक करता रहता था। वह अपनी आय का एक बड़ा भाग निर्धनो और बेसहारा लोगो के लिए अलग रख देता था। धर्मार्थ कार्यों से उसे बहुत ही सतुष्टि मिलती थी और लोग उसे 'अनाथपिंडिक' कहते थे।

सुदत्त पण्यो के क्रय-विक्रय हेतु मगध आता-जाता रहता था। राजगृह मे वह अपने बड़े साले के यहा ठहरता था जहा उसकी सभी प्रकार से आवभगत होती थी। वर्षा-प्रवास की समाप्ति पर वह राजगृह आया हुआ था। उस दिन उसके साले ने उसकी देख-रेख पहले की भाति नहीं की वरन् वह घर के सदस्यो को किसी बड़ी दावत के लिए तैयारिया करने का निर्देश दे रहा था मानो घर मे कोई उत्सव हो।

सुदत्त के पूछने पर उसके साले ने बताया कि "कल मैंने बुद्ध और सघ के भिक्खुओ को भोजन पर आमत्रित किया है।" सुदत्त ने पूछा कि क्या 'बुद्ध' का अर्थ सबोधि प्राप्त व्यक्ति है ?

"बिलकुल ठीक कहा। बुद्ध सबोधि-प्राप्त गुरु हैं। उनका व्यक्तित्व तेजोमय और अद्भुत है। कल तुम्हे उनके दर्शन का अवसर प्राप्त हो जाएगा।"

बुद्ध का नाम सुनते ही सुदत्त का हृदय, अकारण ही, प्रसन्नता और प्रेरणा से भर उठा। उसने अपने साले से और जानने की जिज्ञासा दिखाई तो उसने बताया कि सौम्य भिक्खुओ को नगर मे भिक्षाटन करते देख वह बुद्ध की देशना सुनने वेणुवन भी गया था और उपासक बन गया था। उसने अपनी

ओर से उपहार के रूप मे विहार मे भिक्खुओ के लिए एक ही दिन मे साठ कुटिया वनवा दी थीं।

सभव है कि पिछले जन्म का कोई सम्बन्ध हो, किन्तु सुदत्त के हृदय मे बुद्ध के प्रति तीव्र अनुराग और श्रद्धा-भाव जागृत हुआ। वह अगले दिन दोपहर तक बुद्ध से मिलने की प्रतीक्षा न कर सका। उस रात तीन बार जागकर देखने पर भी सवेरा हुआ नहीं देखा तो वह रात मे ही उठकर वस्त्र और जूते पहन वेणुवन के लिए चल पडा। हवा ठडी थी और कुहासा भी था। जव वह वेणुवन पहुचा तो ऊषाकालीन सूर्य की पहली किरण वास के पत्तो पर पड़ रही थी। वह वुद्ध के दर्शन करने ही आया था किन्तु फिर भी घवराहट हो रही थी। उसी समय चलित-ध्यान करते हुए बुद्ध वहा आ गए।

सुदत्त ने हाथ जोडकर प्रणाम किया और उनके साथ ही बुद्ध की कुटिया तक गया। उसने वुद्ध को वताया कि कितनी वेसब्री से उसने रात बिताई। 'मैं आपसे सद्धर्म मार्ग की शिक्षा प्राप्त करना चाहता हू।' यह इच्छा जानकर वुद्ध ने उसे सदाशयता और प्रेम की देशना की। सुदत्त वहुत प्रसन्न हुआ और वुद्ध के समक्ष प्रणत हुआ और उनसे प्रार्थना की कि उसे भी उपासक वना लिया जाए। वुद्ध सहमत हो गए। सुदत्त ने वुद्ध को अपने साले के निवास पर ही उन्हे तथा उनके सघ को अगले दिन ही भोजन पर आमन्त्रित किया।

वुद्ध ने सहज हसकर कहा, "जहा हम आज भोजन करने जा रहे हैं, वहीं कल भी भोजन करने का मुझे कोई कारण नहीं दिखता।"

सुदत्त ने कहा, "आज आप मेरे साले के मेहमान होगे, और कल मेरे। मुझे दुख है कि राजगृह मे मेरा अपना कोई निवास स्थान नहीं है। मै आपसे अपना निमत्रण स्वीकार करने का आग्रह कर रहा हू।" जब वुद्ध ने स्वीकृति दे दी तो वह खुशी से पागल हुआ घर आया और उस दिन के सघ के भोजन की व्यवस्था मे हाथ वटाने लगा।

अपने साले के निवास पर सुदत्त ने बुद्ध की देशना सुनी तो उसे अपार हर्ष हुआ। वह वुद्ध और भिक्खुओ को द्वार तक छोड़कर अगले दिन की तैयारी मे जुट गया। साले ने वहुत कहा किन्तु सुदत्त ने अगले दिन के भोज पर अपना ही धन व्यय किया। साले को तो केवल घर मे भोजन पकाने और खिलाने की व्यवस्था ही करने दी।

जब सुदत्त ने अगले दिन बुद्ध की देशना सुनी तो उसका हृदय कमल

खिल गया। उसने बुद्ध के समक्ष प्रणत होकर कहा-"आचार्यवर, अभी तक कौशल के लोगो को आपका तथा आपके सघ का स्वागत करने तथा सद्धर्म की शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला है। मै आपको कौशल आकर कुछ समय रहने का निमत्रण देता हू। कृपया कौशल के लोगो पर दया कीजिए।" बुद्ध ने अपने वरिष्ठ शिष्यो से परामर्श करने की बात कही।

कुछ दिन बाद सुदत्त जब वेणुवन आया तो उसे यह सुखद समाचार मिला कि बुद्ध ने उसका निमत्रण स्वीकार करने का निश्चय किया है। बुद्ध ने पूछा कि क्या श्रावस्ती के पास भिक्खु सघ के ठहरने का भी स्थान होगा। सुदत्त ने कहा कि वहा भिक्खुओ के लिए सारी व्यवस्था मेरी रहेगी। सुदत्त ने यह भी सुझाव दिया कि मान्य सारिपुत्त को भी मेरे साथ जाने की अनुमति प्रदान की जाए जिससे बुद्ध के आगमन की तैयारी की जा सके।

सारिपुत्त से पूछकर, बुद्ध ने उन्हे साथ ले जाने पर सहमति प्रकट की।

एक सप्ताह बाद सुदत्त वेणुवन आकर सारिपुत्त से मिला। वहा से वे साथ-साथ निकले और गगा पार जाकर वैशाली की ओर यात्रा करने लगे। वैशाली मे वह आम्रपाली से मिले और उसके आम्रवन मे रात्रि-विश्राम किया। सारिपुत्त ने आम्रपाली को बताया कि बुद्ध देव, अपने भिक्खु सघ के साथ कौशल जाते हुए वैशाली से छ. महीनो मे गुजरेगे। आम्रपाली ने कहा कि वह सघ को भोजन और रात्रि-विश्राम की व्यवस्था करके अत्यन्त प्रसन्न होगी। आप जैसे अतिथियो का स्वागत करके मैं धन्य हो जाऊगी।

आम्रपाली से विदा लेकर वे अचिरावती (राप्ती) नदी के किनारे-किनारे उत्तर पश्चिम दिशा मे चले। सुदत्त पहले कभी इतना पैदल नहीं चला था। रास्ते मे वह जहा-जहा रुकते, बुद्ध के आगमन की घोषणा करते जाते और लोगो से अनुरोध करते कि बुद्ध और सघ का स्वागत सत्कार करे। "बुद्ध सबोधि प्राप्त गुरु हैं। उनका तथा सघ का स्वागत हर्षोल्लास से कीजिए।"

कौशल बड़ा तथा समृद्ध राज्य था और मगध के समान शक्तिशाली था। जहा भी जाते लोग सुदत्त या 'अनाथपिंडिक' को भलीभाति जानते थे। उसने लोगो से जो कुछ कहा, उस पर उन्हे पूर्ण विश्वास था। सभी लोग बुद्ध और सघ का उत्साहपूर्वक स्वागत करने की प्रतीक्षा करने लगे। प्रतिदिन जब भी सारिपुत्त भिक्षाटन के लिए जाते तो सुदत्त अधिक-से-अधिक लोगो को बुद्ध और सघ के आगमन की सूचना देता रहता।

एक महीने मे वे लोग श्रावस्ती पहुचे। सुदत्त ने सारिपुत्त को अपने निवास पर भोजन करने के लिए आमत्रित किया। सुदत्त ने अपने माता-पिता और

अध्याय चालीस

स्वर्ण-मुद्राएं बिछाकर खरीदा जेतवन

सुदत्त ने विहार बनाने के लिए जो भी स्थान देखे, उनमे से कोई भी उतना सुदर और शातिपूर्ण नहीं था जितना कुमार जेत का उद्यान। सुदत्त ने सोचा कि यदि वह उद्यान उसे मिल जाए तो यहा से समूचे राज्य मे बुद्ध का सद्धर्म-सदेश प्रचारित हो सकता है। सुदत्त राजकुमार जेत से मिलने गया तो वह एक मत्री का स्वागत-सत्कार कर रहे थे। सुदत्त ने दोनो को सादर प्रणाम किया और सीधा प्रश्न किया कि क्या कुमार बुद्ध के धर्म-केन्द्र हेतु अपना उद्यान वेचना चाहेगे। जेत केवल बीस वर्ष का ही हुआ था और पिछले वर्ष ही वह उद्यान उसके पिता राजा प्रसेनजित ने उपहार मे दिया था। उसने उत्तर मे कहा कि "यह उद्यान मुझे बहुत प्रिय है। मै इसे इस शर्त पर वेच सकता हू, यदि आप उद्यान को स्वर्ण मुद्राओ से बिछा दे।"

सुदत्त ने कहा कि "यह कीमत मुझे स्वीकार है। कल मै इसमे स्वर्ण मुद्राए विछवा दूगा।"

राजकुमार जेत ने आश्चर्यचकित होकर कहा, "मैं तो मज़ाक कर रहा था। मैं इस उद्यान को वेचना नहीं चाहता। कल स्वर्ण लाने का कष्ट मत उठाइए।"

सुदत्त ने सकल्पपूर्वक कहा, "आप राजकुमार हैं, आपको अपने वचन का पालन करना चाहिए।" उसने साथ बैठे मत्री से कहा, "मान्यवर मैंने ठीक कहा न ?"

मत्री ने सिर हिलाकर कहा, "श्रेष्ठि, अनाथपिंडिक सत्य ही कह रहे

हैं। यदि आपने उद्यान का मूल्य न वताया होता तो दूसरी वात थी। अब आप अपने वचन से मुकर नहीं सकते।"

राजकुमार जेत मान गया किन्तु उसे आशा थी कि श्रेष्ठि इतना मूल्य चुका नहीं पाएगा। अगले दिन सवेरे ही सुदत्त ने छकड़ो मे लादकर स्वर्ण मुद्राए भेज दीं और अपने सेवको से कहा कि स्वर्ण मुद्राए समूचे उद्यान मे विछाए।

राजकुमार जेत मनो सोना देखकर सन्नाटे मे आ गया। वह समझ गया कि यह कोई मामूली श्रेष्ठि नहीं है। उसने मन ही मन सोचा, कोई व्यक्ति एक उद्यान के लिए इतना सोना क्यो देगा ? जब श्रेष्ठि इस सीमा तक जा रहा है तो वुद्ध और उनके सघ मे कुछ तो असाधारणता होगी। राजकुमार ने कहा कि मुझे वुद्ध के विपय मे कुछ वताओ। जव सुदत्त वुद्ध, धर्म और सघ के विपय मे वता रहा था तो उसकी आखो मे विशेष चमक थी। उसने कहा कि कल मैं मान्य सारिपुत्त से आपकी भेट कराऊगा। सुदत्त ने जो कुछ कहा उससे राजकुमार वहुत प्रभावित हुआ। उस समय तक श्रेष्ठि के सेवक दो-तिहाई उद्यान मे स्वर्ण मुद्राएं विछा चुके थे और चौथा छकड़ा आ गया था। राजकुमार ने आगे स्वर्ण मुद्राए विछाने से सेवको को रोककर सुदत्त से कहा, "इतना स्वर्ण पर्याप्त है। शेष भूमि मेरी ओर से उपहार समझो।"

सुदत्त यह सुनकर प्रसन्न हुआ और अगले दिन वह जब सारिपुत्त को लेकर आया तो राजकुमार भिक्खु की शात मुद्रा देखकर वहुत प्रभावित हुआ। सभी मिलकर उद्यान मे गए और सुदत्त ने उसका नाम 'जेतवन' रख दिया। सुदत्त ने सारिपुत्त से अनुरोध किया कि वह जेतवन मे रहकर विहार के निर्माण का निरीक्षण करते रहे। उसका परिवार सारिपुत्त के लिए प्रतिदिन भोजन दिलाने की व्यवस्था करेगा।

सुदत्त, सारिपुत्त तथा राजकुमार ने मिलकर विहार मे कुटिया, धर्म-सभागार, ध्यान-साधना कक्ष और स्नानगृह आदि बनाने का विचार किया। सुदत्त ने यह इच्छा व्यक्त की कि विहार के प्रवेश द्वार पर तिमजिला तोरण बनवाया जाए। सारिपुत्त ने अपने अनुभव के आधार पर विहार की स्थापना के लिए अनेक सुझाव दिए। उन्होने बुद्ध की कुटिया के लिए शीतल शांतिपूर्ण स्थल चुना। उन्होने वहा पैदल मार्ग भी वनाए और कुए भी खुदवाए।

नगर के लोगो ने सुदत्त द्वारा स्वर्ण मुद्राए बिछाकर राजकुमार से उद्यान खरीदने की खवर सुनी। उन्हे यह भी पता चला कि मगध से चलकर शीघ्र ही आने वाले बुद्ध और उनके सघ के स्वागतार्थ एक विहार बनाया जा

रहा है। सारिपुत्त ने जेतवन मे सद्धर्म विषयक प्रवचन देने आरभ कर दिए जिनमे आने वालो की सख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। श्रोतागण इन प्रवचनो के कारण बुद्ध के प्रति आकृष्ट होने लगे थे।

चार महीने के बाद विहार बनकर लगभग तैयार हो गया था। सारिपुत्त राजगृह के लिए रवाना हो गए जिससे बुद्ध और सघ को जेतवन ला सके। वैशाली के मार्गों पर जब भिक्खु भिक्षाटन कर रहे थे तो सारिपुत्त उनसे मिले। बुद्ध और भिक्खु वहा कुछ दिन पहले ही आ गए थे और महावन मे ठहरे हुए थे। बुद्ध के पूछने पर सारिपुत्त ने बताया कि श्रावस्ती मे सभी तैयारिया ठीक से चल रही हैं।

बुद्ध ने सारिपुत्त को बताया कि वेणुवन मे कौडन्न और उरुबेला काश्यप के नेतृत्व मे सघ छोड़ा है। बुद्ध के साथ आए पाच सौ भिक्खुओ मे से दो सौ भिक्खु यहीं धर्म-साधना करेगे और शेष तीन सौ भिक्खु उनके साथ कौशल जाएगे। बुद्ध ने सारिपुत्त को बताया कि आम्रपाली ने समूचे सघ को कल भोजन करने के लिए आमत्रित किया है और उसके अगले ही दिन वे श्रावस्ती के लिए चल पड़ेगे।

आम्रपाली अपने आम्रवन मे बुद्ध और संघ को भोजन कराने से अति प्रसन्न थी। उसे यही दुख था कि उसका पुत्र जीवक इस अवसर पर यहा नहीं है। जिस दिन वह बुद्ध एव सघ को भोजन कराने वाली थी, उसी दिन एक अजीव घटना घटी। जव वह बुद्ध से मिलकर लौट रही थी तो लिच्छिवि गणराज्य के अनेक राजकुमारो ने उसे रोक लिया। वैशाली के इन सर्वाधिक धन-सपन्न और शक्तिशाली राजकुमारो ने आम्रपाली से कहा कि "बुद्ध और भिक्खुओ को आमंत्रित करने के बजाय हमे बुलाओ। हम तुम्हे करोडो स्वर्ण मुद्राए देगे।"

आम्रपाली ने कहा, "इससे स्पष्ट है कि आप लोग बुद्ध से परिचित नहीं हैं अन्यथा आप इस प्रकार न कहते। मैंने बुद्ध और सघ को भोजन पर आमंत्रित किया है जिसकी तैयारिया चल रही हैं। अब यदि मुझे वैशाली की समस्त भूमि भी दी जाए तो मैं उसे भी अस्वीकार कर दूगी। अव आप कृपया मुझे जाने दे। मुझे कल के लिए वहुत तैयारिया करनी है।"

आश्चर्यचकित लिच्छिवि सामतो ने उसे जाने दिया। इन सामन्तो ने निश्चय किया कि जिस बुद्ध को आम्रपाली इतना सम्मान देती है, उनको चलकर देखा तो जाए। वे अपने वाहनो से उतरकर महावन मे बुद्ध के पास जा पहुंचे।

बुद्ध ने देखा कि इन युवको मे दया-भाव और सूझ-बूझ के बीज विद्यमान हैं तो उन्होने इन युवको को पास बैठा लिया। बुद्ध ने उन्हे अपने जीवन और सद्धर्म मार्ग की खोज के विषय मे भी बताया। उन्होने दुःखो से निस्तार पाने और मुक्ति प्राप्त करने के मार्ग की भी चर्चा की। वह जानते थे कि वे लोग उसी क्षत्रिय वर्ण के थे जिसके स्वय बुद्ध थे। वे उनके साथ सदाशयता से परिपूर्ण भाव से बातचीत कर रहे थे।

बुद्ध के वचनो से उनके हृदय-कपाट खुल गए। उन्होने पहली बार अपने आपको पहचाना। वे समझ गए कि सच्चा सुख पाने के लिए धन-संपदा और सत्ता का होना ही पर्याप्त नही है। उन्हे जैसे अपने जीवन का मार्ग मिल गया था। उन्होने अनुरोध किया कि हमे भी उपासक बना लेने की कृपा करे। उन्होने अगले दिन बुद्ध और सघ को भोजन पर आमत्रित करने का प्रस्ताव रखा।

बुद्ध ने कहा कि हमे कल आम्रपाली ने आमत्रित किया हुआ है। युवा सामतो को आम्रपाली से हुई बातचीत का स्मरण हो आया।

"तब हमे परसो आमत्रित करने की अनुमति दीजिए।" इस बात पर बुद्ध सहमत हो गए।

अगले दिन आम्रपाली ने सभी सबधियो और मित्रो को आम्रवन मे आमत्रित कर रखा था। बुद्ध और भिक्खुओ को स्वादिष्ट शाकाहारी भोजन कराया गया। उन सामतो ने भी भिक्खुओ को कटहल, आम, केला और जामुन के फल दिए जो पेड़ से ताजे तोड़कर लाए गए थे। भोजन की समाप्ति के बाद बुद्ध ने देशना करते हुए परस्परावलम्बी सह-वर्द्धन तथा अष्टागिक मार्ग की व्याख्या की। उनकी देशना ने सभी के हृदयो को छू लिया। बारह युवा सामतो ने भिक्खु की प्रवृज्या ग्रहण की। इनमे लिच्छिवि वश के दो राजकुमार भी सम्मिलित थे जो बहुत ही सत्ता-शक्ति सम्पन्न थे।

जब भोजन और देशना समाप्त हो गई तो लिच्छिवि सामतो ने अगले वर्ष वैशाली मे निवास करने का अनुरोध बुद्ध से किया। उन्होने वचन दिया कि वह महावन मे सैकड़ो भिक्खुओ के निवास की व्यवस्था कर देगे। उनके इस प्रस्ताव को बुद्ध ने स्वीकार कर लिया।

आम्रपाली अगले दिन सबेरे बुद्ध के दर्शनार्थ गई। उसने अपनी इच्छा व्यक्त की कि वह बुद्ध और सघ को आम्रवन उपहार मे देना चाहती है। बुद्ध ने उसका उपहार स्वीकार कर लिया। उसके बाद शीघ्र ही बुद्ध, सारिपुत्त और तीन सौ भिक्खु उत्तर की ओर श्रावस्ती के मार्ग पर चल पड़े।

अध्याय इकतालीस

प्रेम दुखदायी है

वैशाली जाने का मार्ग सारिपुत्त के लिए परिचित था। उन्होने और अनाथपिंडिक ने बुद्ध और सघ के प्रति जो जिज्ञासा लोगो मे जागृत कर दी थी, इसके कारण वे जहा भी जाते, उनका उत्साहपूर्वक स्वागत होता। रात को भिक्खु अचिरावती नदी के तट पर विश्राम करते। भिक्खु दल वहा तीन वर्गों मे आया था। पहले दल के नेता बुद्ध एव सारिपुत्त थे, दूसरे के अस्सजि (अश्वजित) और तीसरे के मौद्गल्यायन। कभी-कभी वन मे या नदी तट पर स्थानीय लोग बुद्ध की देशना सुनने आ जाते।

श्रावस्ती आने पर सुदत्त और राजकुमार जेत ने उनका स्वागत किया और उन्हे नए विहार मे ले गए। जेतवन की सुव्यवस्था देखकर बुद्ध ने सुदत्त की प्रशसा की तो सुदत्त ने कहा कि यह तो मान्य सारिपुत्त और राजकुमार जेत के परिश्रम का फल है।

श्रामणेर राहुल बारह वर्ष का हो गया था। यद्यपि वह सारिपुत्त के मार्ग-निर्देश मे धर्म- शिक्षा प्राप्त कर रहा था, किन्तु सारिपुत्त के छः महीनो तक बाहर रहने पर मान्य मौद्गल्यायन ही उसके शिक्षक थे। जेतवन आकर वह फिर सारिपुत्त से शिक्षा प्राप्त करने लगा।

बुद्ध के आगमन पर राजकुमार जेत और सुदत्त ने स्वागत-समारोह का आयोजन किया। सारिपुत्त के साथ रहकर सुदत्त को बुद्ध और उनकी शिक्षाओ के विपय मे ज्ञान होने से वह बुद्ध का भक्त हो गया था। बुद्ध की धर्म देशना सुनने के लिए सुदत्त ने सभी स्थानीय लोगो को आमन्त्रित किया था। आगन्तुको मे राजकुमार जेत की माताजी रानी मल्लिका और उनकी सोलह वर्षीया राजकुमारी भी थी। लोगो की जिज्ञासा शात करने के लिए बुद्ध ने

अपनी देशना मे 'चार आर्य सत्यो' और 'अष्टागिक मार्ग' पर प्रकाश डाला।

धर्म-देशना सुनकर रानी और राजकुमारी के हृदय-कपाट खुल गए। दोनो ही उनकी शिष्या बनना चाहती थी किन्तु इसके पूर्व रानी राजा प्रसेनजित से अनुमति ले लेना चाहती थीं। उन्हे पक्का भरोसा था कि निकट भविष्य मे राजा बुद्ध से मिलेगे। राजा प्रसेनजित की बहन राजा बिम्बिसार की पत्नी थी जो तीन वर्ष पूर्व बुद्ध के त्रिरत्नो का उच्चार कर चुकी थी।

श्रावस्ती के बहुत से महत्त्वपूर्ण धार्मिक नेता जिज्ञासावश बुद्ध की देशना सुनने आए थे। उनमे से कइयो ने अपने हृदयो को प्रकाशित अनुभव किया। अन्य धर्म-नेताओ की दृष्टि मे बुद्ध सुयोग्य विरोधी थे जिन्होने उनके विश्वासो को चुनौती दी थी। किन्तु सभी मानते थे कि उनका आगमन श्रावस्ती के धार्मिक जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। स्वागत-समारोह और बुद्ध की देशना के बाद सुदत्त ने जेतवन विहार बुद्ध और सघ को उपहार मे दे दिया। बुद्ध ने सुदत्त की प्रशसा करते हुए कहा–"इस विहार मे भिक्खुओ की जगली जानवरो, सर्पों, मच्छरो और वर्षा से रक्षा हो सकेगी। इस विहार मे चारो दिशाओ से भिक्खु आएगे। मुझे विश्वास है कि तुम इसी प्रकार स्वय भी सद्धर्म-मार्ग को जीवन मे अपनाओगे।"

अगले दिन बुद्ध और भिक्खु, पन्द्रह-पन्द्रह के बारह दलो मे विभक्त होकर नगर मे भिक्षाटन के लिए गए। गैरिक चीवरधारी भिक्खुओ को शात और मौन भाव से भिक्षा मागते देख लोगो को बहुत भला लगा और जेतवन विहार मे लोगो की दिलचस्पी बढ़ी। बुद्ध जेतवन मे प्रति सप्ताह देशना करते जिसे सुनने काफी लोग आते। राजा को बुद्ध की उपस्थिति का प्रभाव ज्ञात हुआ किन्तु वह राज-काज मे व्यस्त होने के कारण जेतवन नहीं जा सके।

एक दिन घर मे परिवार के साथ भोजन करते हुए राजा प्रसेनजित ने बुद्ध की चर्चा छेड़ी तो रानी मल्लिका ने बताया कि राजकुमार जेत ने विहार के निर्माण मे कितना योगदान किया है। राजा ने राजकुमार से बुद्ध के विषय मे बताने के लिए कहा तो राजकुमार ने जो कुछ देखा-सुना था, वह सब राजा को बता दिया। साथ ही उसने बुद्ध का सामान्य उपासक बनने की भी अनुमति राजा से चाही।

राजा प्रसेनजित को विश्वास ही नही हो रहा था कि बुद्ध को इतनी कम आयु मे सबोधि प्राप्त हो गई थी। बुद्ध उस समय उनतालीस वर्ष की आयु के थे जिस आयु के राजा स्वय ही थे। पुराण काश्यप, मास्करी गोसालिपुत्र, निर्ग्रंथ, ज्ञातिपुत्र, सजय वैरातिपुत्र सरीखे धर्माचार्य जिस मुक्ति मार्ग को अब

तक प्राप्त नहीं कर सके हैं, उससे आगे तक के ज्ञान और साधना स्तर तक वुद्ध कैसे पहुच सकते हैं। राजा ने निश्चय किया कि अवकाश मिलते ही वह स्वय वुद्ध से भेट करने जाएगे।

वर्षा ऋतु आने वाली थी। वुद्ध ने जेतवन विहार मे ही वर्षा-प्रवास करने का निश्चय किया। वेणुवन विहार के पूर्व अनुभव के फलस्वरूप जेतवन मे इस प्रवास की समुचित व्यवस्था हो गई। श्रावस्ती मे साठ नए भिक्खुओ ने सघ मे प्रवेश किया। सुदत्त ने अपने अनेक मित्रो का परिचय कराया जो सघ मे उपासक वन गए और विहार के कार्यों मे सहायता देने लगे।

एक दिन एक व्यक्ति वुद्ध के पास आया जिसके चेहरे पर दुःख-दर्दों के मारे झुर्रिया पड़ गई थीं। उसके एक मात्र पुत्र की मृत्यु हो गई थी और वह कई दिनो तक खड़े होकर अपने पुत्र को पुकारता रहा। वह न खा सकता था न पी सकता था और न सो सकता था।

वुद्ध ने कहा कि 'प्रेम से दुख तो होता ही है।'

उस व्यक्ति ने आपत्ति की, "आप गलत कह रहे हैं। प्रेम से कष्ट नहीं होता। प्रेम तो प्रसन्नता और आनददायक होता है।" वुद्ध कुछ आगे कह पाते, वह दुखी व्यक्ति झपाटे मे बाहर चला गया। निरुद्देश्य घूमने के वाद वह रास्ते पर जुआ खेलने वालों के पास रुका और वुद्ध से हुई बातचीत वताई। सभी उससे सहमत थे कि वुद्ध गलत कह रहे थे।

शीघ्र ही यह खवर श्रावस्ती भर मे घूम गई और इस पर गर्मागर्म बहसे होने लगीं। आखिर यह बात राजा प्रसेनजित के पास भी पहुची और एक दिन घर पर भोजन के समय राजा ने कहा कि वह वुद्ध भिक्खु उतना महान गुरु नहीं, जितना तुम लोग समझते हो। रानी सारी वात सुनकर बोली-"यदि वुद्ध ने ऐसा कहा है तो निस्सदेह सत्य ही होगा।"

राजा ने कहा, "तुम्हे ऐसा नहीं कहना चाहिए। पहले प्रश्न पर स्वय गभीरता से विचार कर लो। वच्चो की तरह वाते नहीं करते।"

रानी चुप रहीं क्योंकि उसे विदित था कि राजा अभी वुद्ध से मिले नहीं है। अगले दिन उसने एक पंडित को वुद्ध के पास यह जानने को भेजा कि वुद्ध ने वैसा कहा या नहीं। यदि कहा है तो इसका स्पष्टीकरण कर दीजिए। वह जो भी कहे उसे ध्यान से सुनकर मुझे आकर वताना।

पडित जाकर वुद्ध से मिला और रानी का प्रश्न पूछा। वुद्ध ने कहा-"हाल ही मे मैंने सुना कि श्रावस्ती मे एक महिला की मा मर गई। उसे इससे इतना धक्का लगा कि वह पागल हो गई और हर एक से पूछती फिर रही

अध्याय बयालीस

उदात्तता ही प्रेम

रा जा प्रसेनजित, अगरक्षक रहित, सर्वथा अकेले बुद्ध से मिलने आये। अपना वाहन और सारथी भी विहार के बाहरी द्वार पर छोड़ आये। बुद्ध ने अपनी कुटिया के सामने राजा का स्वागत किया। औपचारिकताओ के बाद राजा ने बुद्ध से सीधा प्रश्न किया, "गुरु गौतम, लोग आपको सबोधि प्राप्त बुद्ध कहते है। मै स्वय से प्रश्न करता हू कि कोई इतनी कम आयु मे कैसे मुक्ति-मार्ग खोज सकता है ? हमारे यहा के वयो-वृद्ध आचार्य अभी तक पूर्ण सबोधि का दावा नहीं करते। काकुद कात्यायन और अजित केसकामबल तक यह दावा नहीं करते। क्या आपने इन आचार्यों का नाम सुना है ?"

बुद्ध ने प्रत्युत्तर मे कहा, "महामहिम, मैने इन आचार्यों के नाम सुने हैं और बहुत से आचार्यों से मिला भी हू। आध्यात्मिक अनुभूति आयु पर आधारित नहीं होती। महीने या वर्षों से इनको मापा नहीं जा सकता। युवा राजकुमार, छोटे साप, आग की चिनगारी और युवा सन्यासी को कम नही आकना चाहिए। राजकुमार युवा हो सकता है किन्तु उसमे एक राजा जैसे गुण और भाग्य हो सकता है। छोटा-सा विषधर साप भी बड़े-से-बड़े को मार सकता है। आग की एक चिनगारी पूरे जगल या एक नगर को भस्म कर सकती है। एक युवा सन्यासी भी पूर्ण सबोधि प्राप्त कर सकता है। मान्यवर, बुद्धिमान व्यक्ति इनमे से किसी को भी तुच्छ नही समझता।"

बुद्ध ने यह सब बाते शान्त और सुस्पष्ट वाणी मे और सीधी-सादी भाषा मे कहीं जिससे राजा प्रसेनजित बहुत प्रभावित हुए और बुद्ध की बातो पर विश्वास कर सके। फिर उन्होने अपने हृदय को दग्ध करने वाला प्रश्न किया।

"गुरुवर गौतम, लोग कहते हैं कि आपने लोगो को प्रेम न करने का

परामर्श दिया है। वे कहते हैं कि आप जितना अधिक प्रेम करेंगे, उतना ही दुःख और निराशा होगी। इस कथन मे कुछ सत्य तो है लेकिन इससे मुझे शाति नहीं मिलती। प्रेम के विना जीवन अर्थहीन लगेगा। कृपया इस समस्या का हल वताइए।"

वुद्ध ने राजा की ओर सप्रेम देखकर कहा, "महामहिम, आपके इस प्रश्न से वहुतो को लाभ पहुचेगा। प्रेम कई प्रकार के होते है। प्रेम की प्रकृति पर ध्यान दीजिए। जीवन को प्रेम की वहुत आवश्यकता है किन्तु कामाधता, वासना, आकर्पण, भेद-भाव और पूर्वाग्रहो पर आधारित प्रेम की नहीं। जिस प्रेम की आवश्यकता है, वह मैत्री और करुणा पर आधारित होना चाहिए।

"सामान्य रूप से जव हम प्रेम की वात कहते है तो वह पिता और संतान, पति-पत्नी, परिवार के सदस्यो, जाति या देश के सदस्यो के वीच विद्यमान प्रेम की वात करते हैं। यह प्रेम 'मैं' और 'मेरा' की धारणा पर आधारित होता है, अतः यह या तो लगाव के कारण या पूर्वाग्रह के कारण होता है। लोग अपने माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री या प्रपौत्रो, अपने सवधियो या देशवासियो से प्रेम करते हैं। इनके प्रति लगाव के कारण उन्हे दुर्घटना या गभीर रोग की आशकाए, उसके वस्तुतः घटित होने से पहले ही घेरे रहती है और जव वैसा वास्तविकता मे हो जाता है तो उन्हे असह्य वेदना होती है। भेद-भाव पर आधारित प्रेम से पूर्वाग्रह जनम लेते है। लोग अपने प्रियजनो के अलावा अन्य लोगो के प्रति या तो उपेक्षा बरतने लगते है या विरोधी वन जाते है। इस लगाव या पूर्वाग्रह के कारण ही लोग स्वय भी दुखी होते हैं तथा दूसरो को भी दुखी करते हैं। महामहिम, सभी लोग जिस प्रेम के भूखे होते है, वह है मैत्री और करुणा। मैत्री ऐसा प्रेम है जो दूसरो को भी हर्षित कर सकता है। करुणा ऐसा प्रेम है जिससे दूसरो के दुख दूर करना सभव होता है। मैत्री और करुणा को किसी प्रतिफल की अपेक्षा नहीं होती। प्रेमपूर्ण मैत्री और करुणा अपने माता-पिता, पति या पत्नी, बच्चो, सवधियो, जाति के सदस्यो या देश के लोगो तक ही सीमित नहीं होती। इसमे 'मै' और 'मेरे' का कोई भेद नहीं होता। जब किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं होता तो तदनुरूप कोई लगाव भी नहीं होता। इससे कोई दुख या निराशा नहीं होती। मैत्री और करुणा के बिना जीवन अर्थहीन और खोखला होता है। मैत्री और करुणा से जीवन शाति, उल्लास और सतोष से भर जाता है। आप एक देश के राजा हैं, यदि आप प्रेमपूर्ण मैत्री और करुणा का भाव अपनाएगे तो आपके समस्त प्रजाजनो को लाभ होर्गा।"

विचारपूर्ण मुद्रा मे महाराज ने सिर झुका लिया। फिर बुद्ध से पूछा कि "मेरे लिए परिवार लालन-पालन हेतु है और प्रजा शासन करने के लिए। यदि मैं अपने परिवार और प्रजाजनो को प्रेम नहीं करूगा तो मै उनका पोषण कैसे कर सकूगा ? कृपया इस पक्ष पर प्रकाश डालिए।"

"आपको स्वाभाविक रूप से अपने परिवार और अपनी प्रजा को प्रेम करना चाहिए। किन्तु आपके प्रेम का विस्तार इससे आगे भी हो सकता है। आप राजकुमार और राजकुमारी को प्रेम करते हैं किन्तु वह प्रेम आपको अपने राज्य के समस्त युवाओ से प्रेम करने के आड़े नहीं आता। यदि आप सभी युवको से प्रेम कर सके तो आपका प्रेम सीमित से असीम हो जाएगा। आपकी प्रजा के सभी युवक और युवतिया आपके बच्चे बन जाएगे। यही करुण हृदय होना है। यह मात्र आदर्श नहीं है, इसे व्यावहारिक रूप दिया जा सकता है विशेपतः आपके लिए जिसके पास इतने सारे साधन हैं।"

"किन्तु अन्य राज्य के युवजनो का क्या होगा ?"

"अन्य राज्यो के युवजनो को अपने पुत्र-पुत्रियो के समान प्रेम करने से आपको कौन रोकता है, भले ही वे आपके राज्य की सीमाओ मे निवास न करते हो। एक राजा अपने प्रजाजनो को प्रेम करता है, इसका अर्थ यह तो नहीं कि वह अन्य राज्यो के युवजनो को प्रेम नहीं कर सकता।"

"जव वे लोग मेरे राज्य की सीमा मे न हो तो मैं अन्य राज्यो के युवजनो के प्रति अपने प्रेम का प्रदर्शन कैसे कर सकता हू ?"

बुद्ध ने राजा की ओर देखकर कहा-"एक राष्ट्र की समृद्धि और सुरक्षा दूसरे राष्ट्रो की निर्धनता और असुरक्षा पर आधारित नहीं होनी चाहिए। महामहिम, स्थायी शाति और समृद्धि तभी सभव है, जब राष्ट्र सभी के कल्याणार्थ एकजुट होकर निष्ठापूर्वक कार्य करे। यदि आप वास्तव मे चाहते है कि आपके राज्य मे शाति हो और युद्ध मे आपके राज्य के युवक न मारे जाए तो आप अन्य राज्यो को भी शाति प्राप्त करने मे सहायता कीजिए। विदेश नीति और आर्थिक नीतियो मे भी यदि करुणा का मार्ग अपनाए तो सच्ची शाति होनी सभव होगी। इसके साथ ही आप अपने राज्य के युवजनो को प्रेम करते हुए अन्य राज्यो यथा मगध, काशी, विदेह, शाक्य और कौलिय के प्रति भी प्रेम रख सकेगे।

"महामहिम, गत वर्प मैं शाक्य राज्य मे अपने परिवारजनों से मिलने गया था तो हिमालय की तराई मे कुछ दिनो तक विश्राम किया था। उस ममय मैंने अहिसा पर आधारित राजनीति पर वहुत गभीर चिन्तन किया। उससे

मै इस निष्कर्ष पर पहुचा कि कारावास या मृत्यु-दड सरीखे हिसक उपाय अपनाये विना भी राष्ट्रो की शाति और सुरक्षा सभव है। मैंने इन निष्कर्षों की चर्चा अपने पिता राजा शुद्धोधन से भी की। आज मैं ये ही विचार आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हू। जो शासक करुणा पर आधारित शासन करता है, उसे हिसक साधनो पर निर्भर नहीं रहना पडता।"

राजा ने हर्ष से उल्लसित होकर कहा, "अद्‌भुत! सत्यतः अद्‌भुत!! आपका कथन अत्यधिक प्रेरक है। आप सचमुच सबोधि प्राप्त है। आपने जो विचार प्रकट किये है, उन पर मै गभीरता से मनन करूगा। आपके कथन के गूढ़ार्थों को समझने का प्रयास करूगा क्योकि ये बुद्धिमत्तापूर्ण बाते है। अब मै आपसे एक साधारण प्रश्न करना चाहता हूं। सामान्यतः प्रेम मे भेद-भाव, अपेक्षाओ और लगाव के सूत्र जुड़े होते है। आप कहते है कि इन्हीं के कारण चिन्ता, दुःख और निराशा होती है। तब मैं अपने बच्चो के प्रति प्रेम होने की अवस्था मे चिन्ता और दुःखो से कैसे बच सकता हू ?"

बुद्ध ने कहा, "इसके लिए हमे अपने प्रेम की वास्तविक प्रकृति पहचाननी होगी। यदि हमारा प्रेम दूसरो पर मात्र अपना हक जताने के स्वार्थ पर आधारित होगा तो हम उन्हे सुख-शाति नही दे सकेगे। इसके विपरीत उन्हे हमारा प्रेम जजाल लगेगा। ऐसा प्रेम कारागार के अतिरिक्त क्या है ? यदि व्यक्ति हमारे प्रेम के कारण हर्षित अनुभव नही करेगे तो वे उस प्रेम से मुक्ति पाना चाहेगे और धीरे-धीरे हमारा प्रेम क्रोध और घृणा मे बदल जाएगा।

"मान्यवर, क्या आप जानते है कि दस दिन पहले श्रावस्ती मे एक युवक ने अपनी प्रेमिका से विवाह कर लिया तो उसकी मा ने समझा कि पुत्र ने मुझे त्याग दिया। इस विवाह से उसे एक पुत्री मिल गयी, यह समझने के स्थान पर उसने माना कि उसके पुत्र ने मा से विश्वासघात किया है। उसका प्रेम घृणा मे बदल गया और उसने पुत्र एव पुत्रवधू को विष देकर मार दिया।

"महामहिम, सद्धर्म के मार्ग के अनुसार, उदात्तता (सदाशयता) के बिना प्रेम विद्यमान ही नहीं रह सकता। उदात्तता ही प्रेम है। यदि आप मे प्रज्ञा का अभाव है तो परस्पर प्रेम सभव ही नहीं है। जो बहिन-भाई एक-दूसरे को समझते ही नहीं, वे एक-दूसरे को कैसे प्रेम कर सकते हैं। माता-पिता और बच्चे एक-दूसरे को समझे बिना प्रेम कर ही नहीं सकते। यदि आप चाहते है कि आपका प्रिय पात्र प्रसन्न रहे तो आपको उसके दुःखो और आकाक्षाओ को समझना चाहिए। जब इन्हे समझेगे तो वे उपाय भी सूझ

जाएगे जिससे उसका कष्ट दूर किया जा सके और आकाक्षाओ की पूर्ति की जा सके। यह सच्चा प्रेम है। यदि आप चाहते हैं कि आपका प्रिय-पात्र आपके विचारो के अनुसार आचरण करे और आप उसकी आवश्यकताओ के प्रति अनजान बने रहे तो यह प्रेम नहीं है। यह तो आपका दूसरे पर अधिकार बनाये रखना और अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति मात्र है जो उस प्रकार पूर्ण होना सभव नहीं।

"महामहिम, कौशल के लोगो को कष्ट भी हैं और उनकी आकाक्षाए भी हैं। यदि आप उन्हे समझ सकते हैं तो प्रजाजनो से सच्चा प्रेम भी कर सकेगे। आपके दरवार के अधिकारियो को भी कष्ट हैं और आकाक्षाए भी हैं। उन्हे समझिए तो आप जान जाएगे कि प्रसन्नता कैसे लायी जा सकती है। प्रसन्न रहने पर वे आपके प्रति आजीवन निष्ठावान बने रहेगे। रानी, राजकुमार और राजकुमारी के अपने दु.ख हैं और आकाक्षाए हैं। यदि आप इनको समझेगे तो उन्हे प्रसन्न रख सकेगे। जब प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्नता, शाति और सुख का अनुभव करेगा तो आप स्वय भी उस प्रसन्नता, शाति और सुख की अनुभूति कर सकेगे। सद्धर्म मार्ग के अनुसार प्रेम का यही अर्थ होता है।"

महाराज प्रसेनजित इससे अत्यधिक प्रभावित हुए। अभी तक किसी आध्यात्मिक गुरु या ब्राह्मण ने इस प्रकार उनके हृदय-कपाट नहीं खोले थे और इन वातो को इतनी गहराई से भी किसी ने न समझाया था। उन्होने सोचा कि ऐसे गुरु का इस देश मे रहना बहुत मूल्यवान है। वह बुद्ध के शिष्य वनना चाहते थे। क्षणभर मौन रहने के वाद उन्होने बुद्ध से कहा—"इन प्रश्नो पर आपने जो प्रकाश डाला, उसके लिए धन्यवाद! किन्तु एक प्रश्न मेरे मन मे अभी भी अनसुलझा है। आपने कहा कि अपेक्षाओ और ममत्व पर आधारित प्रेम से दुख और निराशा प्राप्त होती है और सदाशयता पर आधारित उदात्त प्रेम से शाति और प्रसन्ता प्राप्त होती है। किन्तु करुणा पर आधारित निस्वार्थ तथा अहैतुक प्रेम से भी तो दुख और कष्ट हो सकता है। अपने प्रजाजनो को मै प्रेम करता हू किन्तु किसी प्राकृतिक आपदा जैसे तूफान और वाढ से हुए लोगो के कष्टो से मुझे दुख पहुचेगा। मै समझता हू कि आपको भी पहुचेगा। जव आप किसी को रोगी या मृत्यु-शैया पर देखते होगे तो आपको दुख होता होगा।"

"इस प्रश्न से प्रकट है कि आपने करुणा भाव को भली-भांति समझ लिया है। पहले तो आपको यह समझ लेना चाहिए कि इच्छा, अपेक्षाओ

और ममत्व से उत्पन्न प्रेम के कारण होने वाले दु:ख, करुणामय प्रेम के दुखो से हजार गुना तीव्र होते है। इस सदर्भ मे दुखो के दो प्रकार समझना भी आवश्यक है—एक प्रकार के दुख वे होते है, जो व्यर्थ होते है और आपके चित्त और शरीर को अशात कर देते है। दूसरे प्रकार के दु:ख हमारे ख्याल रखने तथा उत्तरदायित्व के भावो का पोषण करते है। करुणा आधारित प्रेम से वह शक्ति प्राप्त होती है, जिससे आप दूसरो के कष्ट निवारणार्थ प्रेरित हो सके। आत्मीय भाव और अपेक्षाओ पर आधारित प्रेम से केवल चिन्ताए बढ़ती है और अधिक दु:ख होता है। करुणा से अत्यधिक सहृदयतापूर्ण कार्य करने और सेवा करने की ऊर्जा प्राप्त होती है। अत: महाराज । करुणा सर्वाधिक आवश्यक है। करुणामय प्रेम-जनित दु:ख तो सहायता न कर पाने का दु:ख होता है। यदि आप अन्य व्यक्ति का दुख नहीं समझ सकते, तो आप मानव ही नहीं है।

"करुणा सदाशयता (उदात्तता) का परिणाम होती है। सद्धर्म का मार्ग अपनाने से जीवन के सच्चे स्वरूप का दर्शन होता है। उसका सच्चा स्वरूप है अनित्यता। ससार मे प्रत्येक वस्तु अनित्य है और उसकी पृथक् सत्ता नहीं है (अनात्म है)। एक न एक दिन हर वस्तु अस्तित्वहीन हो जाएगी। एक दिन आपका शरीर भी नही रहेगा। जब व्यक्ति प्रत्येक वस्तु की अनित्यता पर दृक्पात करता है तो उसकी दृष्टि शान्त और सौम्य हो जाती है। अनित्यता के कारण उसका हृदय और चित्त विचलित नहीं होता। इस प्रकार करुणाजन्य दु:खद भावो मे अन्य प्रकार के दुखो के समान कटुता तथा बोझ नही होता। इसके विपरीत, करुणा व्यक्ति को अधिकाधिक शक्ति देती है। महाराज, आज आपने सद्धर्म मार्ग के आधारभूत तत्त्वो से साक्षात्कार किया है। किसी अन्य दिन हम लोग सद्धर्म मार्ग की और अधिक चर्चा करेगे।"

महाराज प्रसेनजित का हृदय आभार से गद्गद हो गया। उन्होने खड़े होकर बुद्ध को नमन किया। वह समझ गये कि शीघ्र ही किसी दिन उन्हे बुद्ध का उपासक बनना होगा। वह जानते थे कि महारानी मल्लिका, राजकुमार जेत और राजकुमारी वज्री के हृदय मे भी बुद्ध के लिए बहुत सम्मान है। वह चाहते थे कि समूचा परिवार एक साथ ही बुद्ध की शरण मे जाए। उन्हे ज्ञात था कि उनकी छोटी बहन कौशला देवी और उसके पति राजा बिम्बिसार ने बुद्ध की शरण ले ली है।

उस दिन शाम को महारानी मल्लिका और राजकुमारी वज्री ने महाराज के व्यवहार मे बड़ा परिवर्तन देखा। वह असाधारण रूप से शान्त और सतुष्ट

दिख रहे थे। वे समझ गये कि बुद्ध से हुई बातचीत का ही यह सारा परिणाम है। वे सब जानना चाहते थे कि महाराज की बुद्ध से क्या बातचीत हुई किन्तु उन्होने प्रतीक्षा करना ही उचित समझा जिससे महाराज अपनी इच्छा से जब चाहे, तब वह सब कुछ बताये जिसकी बुद्ध से चर्चा हुई है।

अध्याय तैंतालीस

सभी के आंसू खारे

राजा प्रसेनजित के जेतवन जाने से सभी लोगो की बुद्ध की शिक्षाओ मे रुचि और सघ का सम्मान बढ़ गया। राजा को प्रति सप्ताह बुद्ध की धर्म देशना सुनने जाते देख बहुत से अधिकारी भी वहा जाने लगे—कुछ बुद्ध के उपदेशो को पसद करने के कारण और कुछ इसके माध्यम से महाराज के कृपा-पात्र बनने की इच्छा से। जेतवन जाने वाले बुद्धिजीवियो और युवको की सख्या भी लगातार बढ़ती जाती थी। तीन महीने के 'वर्षा-प्रवास' मे सारिपुत्त ने एक सौ पचास युवको को भिक्खु की प्रवृज्या दी थी।

बहुत से सम्प्रदायो के राजाश्रय प्राप्त धार्मिक नेताओ मे इससे भय व्याप्त हो गया। बहुतो को तो जेतवन विहार के प्रति सहानुभूति ही नहीं रह गयी। वर्षा-प्रवास की समाप्ति पर हुए समारोह मे राजा ने सभी भिक्खुओ को वस्त्र और निर्धन लोगो को भोजन तथा आवश्यकता की अन्य वस्तुए भेट की। इस समारोह मे राजा और परिवार के अन्य सदस्यो ने त्रिरत्नो-'बुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' का उच्चार किया।

वर्षा-प्रवास के बाद बुद्ध और भिक्खुओ ने आस-पास के क्षेत्रो मे अधिकाधिक लोगो तक धर्म का सदेश पहुचाने के लिए यात्रा आरभ की। एक दिन बुद्ध और भिक्खु गगा तट पर स्थित एक गाव मे भिक्षा मागने जा रहे थे तो बुद्ध ने एक व्यक्ति को मल-मूत्र ले जाते देखा जिसका नाम सुनीत था। उसने बुद्ध का नाम तो सुना था लेकिन देखा पहली बार था। उसके कपड़े बेहद गदे थे और उनसे मल-मूत्र की गध आ रही थी। वह रास्ते से हटकर गगा के किनारे की ओर बढ़ गया। किन्तु बुद्ध तो सुनीत को धर्म की देशना देने पर तुले हुए थे। सुनीत के रास्ता बदलने पर बुद्ध

भी उसी ओर बढ गये। बुद्ध की इच्छा समझकर सरिपुत्त और मेघीय नामक भिक्खु भी उनके पीछे चल पड़े। अन्य भिक्खुओ ने चलना बद कर दिया और वहीं रुक गये।

सुनीत घबरा गया। उसने मैले की बाल्टिया एक तरफ डाली और कहीं भी छिपने का प्रयत्न करने लगा। कुछ समझ मे न आने पर वह घुटनो पानी मे नदी मे उतर गया और हाथ जोड़कर खडा हो गया। सुनीत ने रास्ता इसलिए छोड़ा था जिससे बुद्ध और भिक्खु अपवित्र न हो जाए। उसे पता था कि वह अछूत है और भिक्खुओ में उच्च वर्ण के बहुत से लोग हैं। इन्हे अपवित्र करना तो अक्षम्य अपराध होगा। उसे आशा थी कि नदी मे घुस आने पर, बुद्ध उसे छोड़कर अपनी राह पर चल पड़ेगे। किन्तु बुद्ध कहा छोड़ने वाले थे। वह पानी के किनारे तक गये और कहा—"मित्र मेरे समीप आओ, ताकि हम एक-दूसरे से बात कर सके।"

सुनीत ने हाथ जोड़े ही कहा, "प्रभु, मै ऐसा करने का साहस कैसे कर सकता हू ?"

"क्यो नहीं ?" बुद्ध ने पूछा।

"मै एक अस्पृश्य हू और आपको तथा भिक्खुओ को अपवित्र करना नही चाहता।"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "हमारे सद्धर्म मार्ग मे जाति-पाति का कोई भेद-भाव नहीं है। तुम भी हमारी भाति एक मानव हो। हमे अपवित्र होने का भय नहीं है। केवल लोभ, घृणा और अमर्ष ही हमे अपवित्र कर सकते हैं। तुम जैसा वढ़िया व्यक्ति तो हमारे लिए आनद के अतिरिक्त किसी बात का कारण वन ही नहीं सकता। तुम्हारा नाम क्या है ?"

"प्रभु, मेरा नाम सुनीत है।"

"सुनीत, क्या तुम औरो के समान भिक्खु वनना चाहोगे ?"

"मै नहीं वन सकता।"

"क्यो नहीं ?"

"क्योकि मै अस्पृश्य हू।"

"सुनीत, मै तुम्हे वता चुका हू कि सबोधि के मार्ग मे जाति का कोई स्थान नहीं। जिस प्रकार गगा, यमुना, अचिरावती, माही और रोहिणी नदिया समुद्र मे मिल जाने पर अपना पृथक् अस्तित्व खो देती हैं, ऐसे ही जो व्यक्ति गृह-त्यागकर सद्धर्म का मार्ग अपना लेता है, उसकी जन्म-जात जाति छूट जाती है, भले ही वह व्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा अस्पृश्य जाति
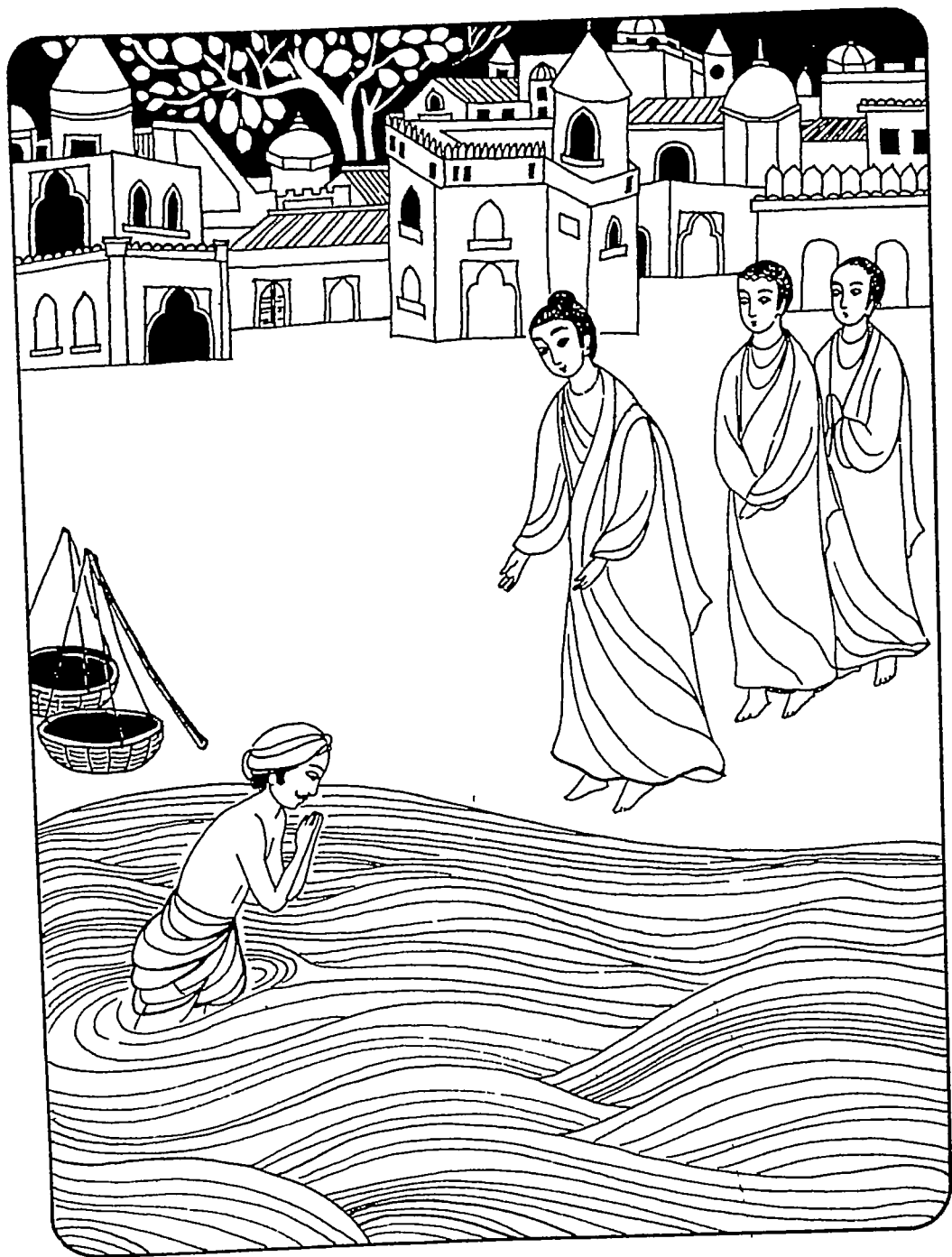
सुनीत ने विरोध करते हुए कहा, 'प्रभु, मैं आपके समीप आने की हिम्मत नहीं कर सकता, क्योकि मै एक अस्पृश्य हूं'

मे ही क्यो न जन्मा हो। सुनीत, यदि तुम चाहो तो शेष लोगो की भाति तुम भी भिक्खु वन सकते हो।"

सुनीत को अपने कानो पर विश्वास नहीं हुआ। उसने अपने जुड़े हाथ माथे से लगाये और कहा, "अव तक किसी ने इतनी दयापूर्वक मुझसे वात नहीं की है। आज का दिन मेरे लिए सर्वाधिक प्रसन्नता का दिन है। यदि आप मुझे अपना शिष्य वना लेते है तो मैं अपनी समस्त चेतना के साथ आपकी शिक्षाओ के अनुरूप चलूगा।"

वुद्ध ने अपना भिक्षा-पात्र मेघीय के हाथ मे पकडाया और वढ़कर सुनीत का हाथ पकड़ लिया और सारिपुत्त से कहा-"सारिपुत्त, सुनीत को नहलाने मे मेरी सहायता करो। हम इसे नदी तट पर ही भिक्खु की प्रवृज्या देगे।"

मान्य सारिपुत्त मुस्कराये और अपना भिक्षा-पात्र जमीन पर रखकर बुद्ध की सहायता के लिए वढ़ गये। जव सारिपुत्त और बुद्ध उसे रगड़-रगड़कर नहला रहे थे तो वह भीतर से कसमसा तो रहा था किन्तु वोलने की हिम्मत नहीं हुई। वुद्ध ने मेघीय से ऊपर जाकर आनद से एक चीवर ले आने के लिए कहा। सुनीत को प्रवृज्या देने के वाद उसे सारिपुत्त की देख-रेख मे शिक्षा पाने की व्यवस्था कर दी। सारिपुत्त उसे लेकर जेतवन चले गये और भिक्खुओ के साथ, बुद्ध भिक्षाटन के लिए वढ गये।

स्थानीय लोगो ने यह सव घटित होते स्वय देखा था। शीघ्र ही यह समाचार फैल गया कि वुद्ध ने एक अस्पृश्य को सघ मे सम्मिलित कर लिया है। इससे राजधानी मे उच्च वर्ण के लोगो मे खलवली मच गयी। कौशल के इतिहास मे अव तक किसी अस्पृश्य को धार्मिक सप्रदाय मे सम्मिलित नहीं किया गया था। वहुत से लोगो ने पवित्र परम्पराओ का वुद्ध द्वारा उल्लघन किये जाने की निन्दा की। अन्य लोगो ने तो यहा तक कहा कि बुद्ध वर्तमान व्यवस्था को उखाड़ फेकने और देश को आपदा मे डालने का षड्यन्त्र कर रहे हैं।

इन आरोपो के समाचार उपासको तथा भिक्खुओ के द्वारा विहार तक पहुचे। वुद्ध के वरिष्ठ शिष्यो सारिपुत्त, महाकाश्यप महामौद्गल्यायन और अनिरुद्ध ने वुद्ध के साथ इस विपय पर गहन विचार-विमर्श किया। वुद्ध ने कहा कि "सघ मे अस्पृश्य को सम्मिलित करना तो मात्र समय की वात थी। हमारे सद्धर्म मार्ग मे सभी समान हैं और किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं वरता जाता। सुनीत को प्रवृज्या देने से हमे आज भले ही कुछ कठिनाइयो का सामना करना पडे, किन्तु हमने इतिहास मे पहली वार अस्पृश्यो के लिए

द्वार खोले हैं और भावी पीढ़िया हमे इसके लिए धन्यवाद देगी। हमे साहस रखना चाहिए।"

मौद्गल्यायन ने कहा कि "हममे साहस और सहनशीलता की कमी नहीं है। लेकिन हम भिक्खुओ के साधना-मार्ग को सुगम वनाने के लिए जनमत के विरोध को किस प्रकार कम कर सकते है ?"

सारिपुत्त ने कहा, "महत्त्वपूर्ण वात यह है कि हम अपनी साधना पर विश्वास रखे। मै पूरा प्रयास करूगा कि सुनीत साधना मे अच्छी प्रगति करे। उसकी सफलता ही हमारे पक्ष मे सवसे वड़ी दलील होगी। हमे समता का सिद्धान्त लोगो को समझाने के मार्ग खोजने पड़ेगे। आपका क्या विचार है वोधिसत्व ?"

वुद्ध ने सारिपुत्त के कधे पर हाथ रखकर कहा–"आपने मेरे ही विचार व्यक्त किये है।"

शीघ्र ही सुनीत को प्रवृज्या देने का समाचार राजा प्रसेनजित के कानो तक भी पहुचा। धार्मिक नेताओ ने राजा से भेट करके इस प्रश्न को लेकर गहरी चिन्ता व्यक्त की। उनकी तर्कपूर्ण दलीलो से राजा भी विचलित हो गये और वुद्ध के प्रति भक्ति-भाव रखने के वाद भी उन्होने कहा कि वह धार्मिक नेताओ की आपत्तियो पर विचार करेगे। कुछ दिन बाद वह स्वय ही जेतवन जाकर वुद्ध से मिले।

विहार के वाहर ही अपना रथ रुकवाकर वह पैदल ही बुद्ध की कुटिया की ओर चल दिये। वह प्रत्येक भिक्खु को नमन करते गये और भिक्खुओ की शान्त सौम्य मुद्रा से उनमे वुद्ध के प्रति विश्वास-भाव दृढ़ हुआ। बुद्ध की कुटी से पहले ही एक भिक्खु वड़ी चट्टान पर भिक्खुओ के छोटे दल और उपासको के समक्ष प्रवचन कर रहा था। वह वहुत ही मनोहारी दृश्य था। प्रवचन करने वाले भिक्खु की आयु चालीस से कुछ कम ही थी किन्तु उसके मुख पर शाति और विद्वत्ता की झलक साफ दिख रही थी। सभी श्रोता ध्यान से उसका प्रवचन सुन रहे थे। राजा जरा ठिठके और सोचा कि यह भिक्खु क्या कह रहा है, उसे ध्यान से सुने तो। किन्तु जब उन्हे अपने आने का उद्देश्य याद आया तो वह आगे बढ़ गये और सोचा कि मैं यह प्रवचन वापसी मे सुनूगा।

वुद्ध ने महाराज का अपनी कुटिया के वाहर स्वागत किया। आरभिक शिष्टाचार के वाद, राजा को उन्होने कुर्सी पर वैठाया। राजा ने पूछा कि चट्टान पर वैठा, प्रवचन करने वाला भिक्खु कौन है ? वुद्ध प्रश्न सुनकर

मुस्कराकर वोले, "वह भिक्खु सुनीत था। कभी वह अस्पृश्य था और मल-मूत्र ढोता था। आपको उसका प्रवचन कैसा लगा ?"

महाराज उलझन मे पड़ गये। इतना प्रभावशाली भिक्खु सुनीत था। उन्होने कभी अनुमान भी न लगाया था कि ऐसा होना सभव हो सकता है। महाराज कुछ कहे, उससे पहले ही वुद्ध ने कहा, "प्रवृज्या लेने के दिन से ही सुनीत समर्पित भाव से साधना-अभ्यास मे जुटा हुआ है। वह वहुत ही निष्ठावान, समझदार और दृढ सकल्प का धनी व्यक्ति है। यद्यपि उसे प्रवृज्या ग्रहण किये, अभी तीन ही महीने हुए हैं। किन्तु इस समय मे उसने श्रेष्ठता और शुद्ध-हृदयता का परिचय दिया है। क्या आप उससे मिलना चाहेगे और इस योग्य भिक्खु को कुछ उपहार देना चाहेगे ?"

महाराज ने साफ-साफ कहा, "मैं उससे मिलना भी चाहूगा और उपहार भी देना चाहूगा। गुरुवर, आपकी शिक्षाए बडी गूढ और अद्‌भुत हैं। मै अव तक आप जैसे आध्यात्मिक नेता से नहीं मिला, जिसका हृदय और चित्त इतना उन्मुक्त हो। मैं नहीं समझता कि कोई व्यक्ति, पशु या वृक्ष-पौधा ऐसा नही जो आपकी सदाशयतापूर्ण उपस्थिति से प्रभावित न हो। सच तो यह है कि मैं आज इस इरादे से आया था कि आपसे पूछू कि आपने एक अस्पृश्य को सघ मे कैसे सम्मिलित कर लिया। लेकिन उस क्यो का उत्तर मैने अपनी आखो से देख, कानो से सुन और समझ लिया है। अव मैं आप से यह प्रश्न करने का साहस नहीं कर सकता। मैं आपके समक्ष प्रणत हू।"

राजा उठने लगे तो वुद्ध ने उनको वैठा लिया और राजा का हाथ अपने हाथ मे ले लिया और उन्हे वैठाकर वुद्ध ने कहा, "महामहिम, आत्म-मुक्ति के मार्ग मे जाति का कोई भेद नही। चेतनावस्था प्राप्त करने वाले व्यक्ति के समक्ष सभी समान होते है। हर व्यक्ति का खून लाल होता है और हर व्यक्ति के आसू खारे। हम सभी मानव हैं। हमे ऐसा मार्ग खोजना होगा, जिससे प्रत्येक व्यक्ति अपने सम्मान और सभावनाओ की पूर्ण प्राप्ति कर सके। इसीलिए मैंने मुनीत को भिक्खु सघ मे सम्मिलित कर लिया है।"

राजा ने हाथ जोडकर कहा, "मै समझता हू। मै यह भी जानता हू कि आपने जो मार्ग चुना है, उसमे वाधाए और कठिनाइया तो अवश्य आएगी। किन्तु मै यह भी देख रहा हू कि आपमे उन सभी वाधाओ का सामना करने की शक्ति और साहस है। मै अपनी ओर से, आपकी सत्य शिक्षाओ का समर्थन करने के लिए अपनी शक्ति भर पूर्ण प्रयत्न करूगा।

बुद्ध से विदा लेकर महाराज उस चट्टान की ओर गये जहा वह भिक्खु प्रवचन कर रहा था जिससे उसका प्रवचन सुन सके। किन्तु भिक्खु सुनीत और उसके श्रोतागण जा चुके थे। राजा ने थोड़े से भिक्खुओ को देखा जो धीरे-धीरे सचेतनता के साथ मार्ग पर विचरण कर रहे थे।

अध्याय चवालीस

तत्त्व तत्त्वों में जा मिलेंगे

एक दिन मेघीय ने बुद्ध को बताया कि नद अप्रसन्न भिक्खु है और उसे अपनी प्रेयसी की याद बहुत सताती है। नद ने मेघीय से कहा था कि "मुझे वह दिन अच्छी तरह से याद है जब वह बुद्ध का भिक्षा-पात्र पकड़े हुए बुद्ध के पीछे न्यग्रोधा उद्यान गया था तो जनपद कल्याणी ने मेरी आखो मे आखे डालकर कहा था, 'जल्दी लौटना। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करुगी।" मुझे अब भी उसकी लट कधे पर पड़ी साफ दिखती है। ध्यान-साधना करते समय उसका चित्र प्रायः मेरी आखो मे तैर जाता है और फिर मेरी उसके प्रति लालसा बढ जाती है। मै सतुष्ट भिक्खु नहीं हू।"

अगले दिन दोपहर बाद बुद्ध ने नद को बुलाया और अपने साथ भ्रमण को ले गये। जेतवन से निकलकर वह एक सरोवर के किनारे बसे गाव की तरफ बढ़ गये। सरोवर के स्वच्छ जल के किनारे वह एक पत्थर पर बैठ गये। सरोवर मे बतखे मौज से तैर रही थीं और वृक्षो पर पक्षियो का कलगान चल रहा था।

बुद्ध ने कहा, "सुना है कि भिक्खु का जीवन व्यतीत करके तुम यहा प्रसन्न नहीं हो। क्या यह सत्य है ?"

नन्द मौन रहा। एक क्षण के बाद बुद्ध ने पूछा, "क्या तुम कपिलवस्तु लौटकर राज सिहासन पर बैठने को तैयार हो ?"

नन्द ने तुरन्त उत्तर दिया, "नहीं, नहीं। मैं सबसे कह चुका हू कि राजनीति मुझे पसद नहीं। मैं जानता हू कि राज्य का शासन सभालने की मुझमे क्षमता नहीं है। में अगला राजा बनना नहीं चाहता।"

"तब तुम भिक्खु बनकर अप्रसन्न क्यो हो ?" नद चुप रहा तो बुद्ध

ने पूछा, "क्या तुम्हे कल्याणी की वहुत याद आती है ?" नद शरमाया किन्तु चुप ही रहा।

बुद्ध ने कहा, "नद कौशल मे अनेक युवतिया कल्याणी के समान सुदर हैं। महाराज प्रसेनजित के महल मे आयोजित समारोह की तुम्हे याद है ? क्या तुमने वहा देखा कि कोई युवती कल्याणी जैसी सुदर है ?"

नन्द ने स्वीकार किया, "यहा कल्याणी सरीखी युवतिया हो सकती है। लेकिन मैं तो कल्याणी को ही चाहता हू। इस जीवन मे वस एक ही कल्याणी है।"

"नन्द, अध्यात्म साधना मे मोह एक वडी वाधा होती है। स्त्री का शारीरिक सोदर्य उसी तरह समाप्त हो जाता है जैसे गुलाव के फूल का सौन्दर्य। तुम जानते हो सभी पदार्थ अनित्य हे। तुम सवकी अनित्य प्रकृति को समझो। उधर देखो।" कहकर वुद्ध ने एक वुढ़िया की ओर सकेत किया जो लाठी के सहारे झुकी कमर से वास का पुल पार कर रही थी। उसका चेहरा झुर्रियो से भरा हुआ था।

"वह वृद्ध महिला कभी सुदरी रही होगी। समय बीतने के साथ कल्याणी का सौन्दर्य भी क्षीण हो जाएगा। इस समय तुम आत्म-जागृति के मार्ग पर चलकर इस जन्म और आने वाले जन्मो के लिए शाति और आनद की प्राप्ति कर सकते हो।"

नद ने वीच मे ही वुद्ध को रोककर कहा, "अब कृपया आगे कुछ मत कहिए। मै समझ गया कि आप क्या कहने का प्रयास कर रहे है। मै पूर्ण मनोयोग के साथ अव अपनी साधना मे लगूगा।"

छोटे भाई को देखकर वुद्ध मुस्कराये और वोले, "प्राणायाम की ओर विशेष ध्यान दो। अपने शरीर, भावनाओ, मन की प्रवृत्तियो, चेतना और चेतना के विपयो पर अपने चित्त का ध्यान केन्द्रित करो। अन्तर्मुखी होकर जगत के समस्त प्रसार की, जन्म, वृद्धि और धीरे-धीरे क्षरण की प्रक्रिया का मनन करो और अपने शरीर, आशा-अपेक्षाओ, चित्त और चित्त के विषयो को समझो। यदि कोई वात समझ मे न आये तो मेरे पास या सारिपुत्त के पास आकर उनका निराकरण कर लो। नन्द, स्मरण रखो कि आत्म-मुक्ति से जो आनद प्राप्त होता है, वह सच्चा अखड आनद है। वह आनद कभी नष्ट नहीं होता। उस आनद की प्राप्ति की आकाक्षा करो।" अधेरा हो चला था। नन्द और बुद्ध उठकर विहार की ओर चल पड़े।

जेतवन मे सुदृढ़ और स्थायी विहार बन गया था और वहा भिक्खुओ

की सख्या पाच सौ हो गयी थी। आगामी वर्षा-प्रवास बुद्ध ने वैशाली मे विताया जहा लिच्छवि राजकुमारो ने महावन को विहार मे परिवर्तित कर दिया था। वहा दो मंजिला धर्म-कक्ष बना दिया गया था जिसका नाम उन्होने 'कूटागार' रखा था। साल वृक्षो के वन मे चारो ओर छोटे-छोटे आवास बना दिये गये थे। ये राजकुमार, बुद्ध के वर्षा-प्रवास के आतिथेय थे जिसमे आम्रपाली ने भी मुक्तहस्त से सहयोग दिया था।

मगध और शाक्य राज्यो के भिक्खु बड़ी सख्या मे यहा बुद्ध के साथ वर्षा-प्रवास बिताने आये थे जिनकी सख्या छः सौ थी। बुद्ध की देशना प्राप्त करने के लिए उपासक भी आये थे जो भिक्खुओ के लिए भोजन जुटाते और बुद्ध की देशना सुना करते थे।

वर्षा-प्रवास की समाप्ति पर एक दिन बुद्ध को सूचना मिली कि राजा शुद्धोधन कपिलवस्तु मे मृत्यु शैया पर हैं। राजा ने कुमार महानाम को बुद्ध को बुला लाने के लिए भेजा था ताकि वे अपने पुत्र को अतिम समय मे देख सके। महानाम के विशेष अनुरोध पर बुद्ध रथ पर सवार होकर चलने के लिए तैयार हो गये जिससे यात्रा मे समय बचाया जा सके। अनिरुद्ध, नद, आनद और राहुल भी साथ गये। वे लोग इतनी शीघ्रता मे रवाना हुए कि लिच्छवि राजकुमार और आम्रपाली भी उन्हे विदा न कर सके। उनके जाने के वाद शाक्य वश के चार राजकुमार दो सौ भिक्खुओ के साथ कपिलवस्तु के लिए पैदल चल पडे। वे बुद्ध के पिता के सस्कार मे सम्मिलित होना चाहते थे।

राज-परिवार बुद्ध को महल के बाहर ही मिला। महाप्रजापति उन्हे तुरन्त राजा के कक्ष मे ले गयीं। जब राजा ने बुद्ध को देखा तो उनके पीले, जरा-जीर्ण चेहरे पर चमक आ गई। बुद्ध राजा के समीप बैठ गये और राजा का हाथ अपने हाथ मे ले लिया। राजा की आयु बयासी वर्ष की हो गयी थी और कृशकाय हो चुके थे।

बुद्ध ने कहा-"पिता जी आराम से धीरे-धीरे श्वास लीजिए, मुस्कराइए। इस समय आपकी श्वास से मूल्यवान कुछ भी नहीं है। नद, आनद, राहुल, अनिरुद्ध और मैं स्वय आपकी श्वास के साथ श्वास लेगे।" राजा ने उन सभी की ओर देखा और मुस्कराकर श्वसन-प्रक्रिया पर चित्त केन्द्रित किया। कोई भी रोने की हिम्मत नहीं कर सका। एक क्षण वाद राजा ने बुद्ध की ओर देखकर कहा, "मैंने स्पष्ट रूप से जीवन की अनित्यता देख ली है। यदि व्यक्ति को आनद चाहिए तो उसे इच्छाओ भरा जीवन त्याग देना चाहिए। सादगी और मुक्त जीवन जीने से ही आनद पाना सभव है।"

रानी गौतमी ने वताया कि "पिछले महीनो से राजा सादगी भरा जीवन विता रहे थे। उन्होने आपकी शिक्षाओ को पूर्णतः अपना लिया था। तुम्हारी देशना से हम सब के जीवन मे आमूल परिवर्तन आ गया है।"

राजा का हाथ थामे-थामे ही बुद्ध ने कहा, "आप मुझ पर, नद और राहुल पर गहरी दृष्टि डालिए। गवाक्ष के वाहर हिलती शाखाओ को देखिए। जीवन-चक्र चलता ही रहता है। इसी प्रकार आप भी मेरे, नद, राहुल और सभी प्राणियो के माध्यम से जीवित रहेगे। शरीर तो चार तत्त्वो से मिलकर वनता है, ये तत्त्व अतत: विशृखल हो जाते है और फिर सम्मिलित होते हैं। पिताजी यह मत सोचिए कि शरीर के न रहने से जीवन और मरण हमे वाध सकेगे। राहुल का शरीर भी आपका ही है।"

उन्होने राहुल को सकेत किया कि वह राजा का दूसरा हाथ पकड़ ले। मृत्यु-शैया पर लेटे राजा के मुख पर प्रेममयी मुस्कान उभर आयी। वह बुद्ध के शब्दो का अर्थ समझ गये थे और मृत्यु से तनिक भी भयभीत नहीं थे।

राजा के मंत्री और परामर्शदाता सभी उपस्थित थे। उनको अपने पास आने का सकेत करते राजा ने मद स्वर मे कहा, "अपने शासन काल मे मैंने निश्चय ही आप लोगो को कष्ट दिये हैं और त्रुटिया भी की हैं। मरने से पूर्व मैं आपसे क्षमा चाहता हू।" मत्री और परामर्शदाता अपने आसू रोक नहीं सके। महानाम ने राजा की शैया के समीप घुटनो के बल बैठकर कहा, "महामहिम, आप तो दयावान और न्यायप्रिय शासक रहे है। यहा कोई भी आपके व्यवहार मे त्रुटि नहीं निकाल सकता। मेरी विनम्र इच्छा है कि नद भिक्खु जीवन त्यागकर कपिलवस्तु आ जाएं और सिहासन पर बैठे। आपके पुत्र को राजसिंहासन पर बैठा देखकर सभी प्रजाजन प्रसन्न होगे।"

नद ने अपनी रक्षा की दृष्टि से बुद्ध की ओर देखा। गौतमी भी बुद्ध की ओर देखने लगीं। वुद्ध शात भाव से बोले, "पिताजी और मत्रिवर्ग। कृपया मुझे अपने विचार प्रकट करने का अवसर प्रदान करे। राजनीतिक शासक वनने की न तो नद मे इच्छा है और न योग्यता। इसके लिए उसे अभी अनेक वर्षों तक अध्यात्म-साधना करने की आवश्यकता है। मेरे विचार से राजकुमार महानाम राजा वनने के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं। वह बुद्धिमान है, प्रतिभाशाली है और गत छः वर्षों से राज्य के प्रमुख परामर्शदाता रहे हैं। राजपरिवार और प्रजा जनो की ओर से मै राजकुमार महानाम को यह कठिन उत्तरदायित्व सभालने का अनुरोध करता हू।"

महानाम ने हाथ जोड़े और कहा कि "मुझमे राजा बनने की प्रतिभा

नही है। महामहिम, वुद्ध देव और मत्रिगण किसी अन्य सुयोग्य व्यक्ति को यह भार सौपे।" अन्य मत्रियो ने वुद्ध के सुझाव का समर्थन किया। राजा ने भी स्वीकृति दे दी और महानाम को अपने समीप वुलाया। महानाम का हाथ पकड़कर वोले, "सभी को तुम पर भरोसा है, वुद्ध तक को। तुम मेरे भतीजे हो और मैं शासन की वागडोर तुम्हे सौपने मे गौरव अनुभव करूगा। तुम सौ पीढियो तक हमारा वश चलाओगे।"

राजा की इच्छा के आगे महानाम नतमस्तक हो गये। राजा को इससे वड़ी प्रसन्नता हुई और वोले, "अव मै शाति से अपनी आखे मूद सकता हू। यह ससार छोड़ने से पहले वुद्ध को भी देख लिया। मेरे मन मे न किसी के लिए मोह है, न खेद और न अमर्ष। मुझे आशा है कि वुद्ध कुछ दिनो कपिलवस्तु मे ही रुकेगे जिससे महानाम को अपने शासन के आरम्भिक काल मे सहायता मिले। वुद्ध की कृपा से तुम्हारा वश सौ पीढ़ियो तक चलेगा।" राजा का स्वर मद पड़ता चला गया।

वुद्ध ने कहा, "महानाम को जितने समय मेरी आवश्यकता होगी, मै यहा रुकूगा।"

राजा के होठो पर क्षीण मुस्कान आयी किन्तु उनकी आखे प्रकाश से जगमगा रही थीं। उन्होने अपनी आखे वद कीं और ससार से विदा ली। रानी गौतमी और यशोधरा रोने लगी। मत्री भी दुख से सुवक रहे थे। वुद्ध ने राजा का हाथ मोड़कर छाती पर रख दिया और सभी को चुप होने का सकेत किया। उन्होने कहा कि आप लोग प्राणायाम करो। कुछ क्षण के वाद, उन्होने सभी को वाहरी कक्ष मे आने और अत्येष्टि की व्यवस्था पर विचार करने को आमत्रित किया।

शव-सस्कार सात दिन वाद किया गया। एक हजार से अधिक व्राह्मण आचार्य इस अवसर पर उपस्थित थे। पाच सौ वौद्ध भिक्खुओ की उपस्थिति ने शव-सस्कार को विशिष्ट वना दिया। पारस्परिक वैदिक मत्रोच्चार के साथ सद्धर्म के सूत्रो का भी पाठ हुआ। भिक्खुओ ने चार आर्य सत्यो, प्रतीत्यसमुत्पाद सूत्रो, अग्नि सूत्रो और परस्परावलम्वी सहवर्द्धन के सूत्रो तथा अत मे त्रिरत्नो का उच्चारण किया। भिक्खुओ ने अपने सूत्र मागधी मे उच्चारित किये।

वुद्ध ने धीरे-धीरे चलकर चिता की तीन परिक्रमा की और कहा, "जन्म, जरा, रोग और मरण सभी व्यक्तियो के जीवन मे होता है। हमे प्रतिदिन जन्म, जरा, रोग और मरण पर गहन दृष्टि से विचार करना चाहिए जिससे इच्छा-आकाक्षाओ का तिरोभाव कर सके और शाति, आनन्द और सतोष भरे

जीवन को प्राप्त हो सके। जिसने सद्‌धर्म मार्ग मे गति प्राप्त कर ली है, वे जन्म, जरा, रोग और मृत्यु को समभाव से देख पाते है। सभी धर्मों का सत्य मार यही है कि न तो जन्म है, न मरण है, न उत्पत्ति है और न विनाश, न वृद्धि और न तिरोभाव।"

मुखाग्नि देते ही चिता धू-धू करके जल उठी। उस समय भिक्खुओ के वाद्ययंत्र और नक्कारो की ध्वनि के बीच मन्त्रोच्चार और सूत्र-पाठ चल रहा था। बुद्ध ने राजा की चिता को मुखाग्नि दी, यह देखने के लिए कपिलवस्तु के लोग बड़ी सख्या मे उपस्थित थे।

महानाम के सिंहासन पर बैठने के बाद बुद्ध तीन महीनो तक कपिलवस्तु मे रहे। एक दिन महाप्रजापति गौतमी न्यग्रोधा उद्यान गयीं। उन्होने भिक्खुओ के लिए बहुत से चीवर उपहार मे दिये और अनुरोध किया कि मुझे भी भिक्खुनी के रूप मे प्रवृज्या दे दी जाए। उन्होने कहा कि यदि आप महिलाओ को प्रवृज्या देने की अनुमति दे दे तो बहुतो को लाभ होगा। हमारे वश के बहुत से युवक भिक्खु बन गये है, जिनकी पत्निया थीं। अब वे पत्निया भिक्खुनियो के रूप मे सद्‌धर्म का पालन करना चाहती है। मै भी भिक्खुनी बनना चाहती हू। महाराजा की मृत्यु के उपरान्त मेरी एक मात्र इच्छा यही है। इससे मुझे बेहद प्रसन्नता होगी।"

बड़ी देर तक मौन रहने के बाद बुद्ध ने कहा, "यह सभव नहीं है।"

रानी महाप्रजापति ने कहा, "में जानती हू कि यह तुम्हारे लिए कठिन समस्या है। सघ मे भिक्खुनियो को स्वीकार कर लेने से तुम्हे समाज का विरोध और प्रतिरोध सहना पड़ेगा। लेकिन मै यह भी जानती हू कि तुम इस प्रकार की प्रतिक्रियाओ से डरोगे नहीं।"

बुद्ध फिर चुप रहे और बोले–"राजगृह मे बहुत-सी महिलाए प्रवृज्या लेने को तैयार है, किन्तु मे समझता हू कि इसका उपयुक्त समय नहीं आया है। सघ मे महिलाओ को स्वीकार करने की स्थितिया अभी अनुकूल नही हैं।"

गौतमी ने तीन बार जिद की किन्तु बुद्ध का उत्तर वही रहा। अत्यधिक निराश होकर गौतमी चली गईं। महल मे आकर वह यशोधरा के पास गईं और बुद्ध की प्रतिक्रिया उसे बताई।

कुछ दिनो बाद, बुद्ध वैशाली चले गये। उनके जाने के बाद गौतमी ने उन सभी महिलाओ को बुलाया जो प्रवृज्या ग्रहण करना चाहती थीं। सभी महिलाए शाक्य वश की ही थीं जिनमे बहुत-सी अविवाहित भी थीं। उन्होने

कहा कि सद्धर्म-मार्ग मे सभी समान होते हैं। चेतना- जागृति और प्रज्ञा-प्राप्ति की क्षमता सबमे होती है। उन्होने अस्पृश्य को भिक्खु की प्रव्रज्या दे दी तव कोई कारण नहीं कि वह महिलाओ को न स्वीकारे। महिलाए पुरुषो से किसी रूप मे कम नहीं है।

"मेरा तो कहना है कि हम लोग सिर मुडा ले, अपने श्रेष्ठ वस्त्र और आभूषण त्याग दे और भिक्खुओ का गौरिक चीवर धारण कर ले। हम लोग नगे पैरो ही वैशाली चले जहा हम प्रव्रज्या लेने का अनुरोध करेगे। इस प्रकार हम सिद्ध कर देगे कि हम भी सादगी से रहने और सद्धर्म पालन मे सक्षम हैं। हम भी सैकड़ो मील पैदल चलेगे और भिक्षा मागते हुए रास्ता तय कर लेगे। सघ मे प्रवेश पाने का यही एकमात्र उपाय बचा है।"

सभी महिलाए गौतमी के विचारो से सहमत हो गईं। गौतमी के रूप मे उन्हे सच्चा नेता मिल गया था। यशोधरा यह देख-सुनकर मुस्करा दी। वह गौतमी की दृढ इच्छा-शक्ति की आरभ से ही प्रशसक थी। गौतमी ऐसी महिला थीं, जो किसी वाधा के आने पर मार्ग से हट नहीं सकती थीं। महिलाओ ने रवाना होने की तिथि भी तय कर ली।

गौतमी ने यशोधरा से कहा-"यशोधरा, सर्वोत्तम तो यही होगा कि तुम अभी हमारे साथ न चलो। स्थिति जब सामान्य हो जाएगी और हमे अपने प्रयास मे सफलता मिल जाएगी तो तुम कभी भी आ सकती हो।"

सभी कुछ समझकर यशोधरा मुस्करा दी।

अध्याय पैंतालीस

संघ के द्वार खोलो

एक दिन सवेरे जल लेने के लिए सरोवर जाते हुए आनद ने देखा कि गौतमी और पचास अन्य महिलाए बुद्ध की कुटिया के पास खड़ी थीं। सभी महिलाए मुंडित मस्तक और गौरिक वस्त्र धारण किये हुए थीं। उनके पैर सूजे हुए थे और खून बह रहा था। आनद ने पहले तो समझा कि कुछ भिक्खु मिलने आये है किन्तु उसने रानी गौतमी को पहचान लिया और बुदबुदाया, "हे भगवान ! रानी गौतमी आप कहा से आयीं ? आपके पावो से खून क्यो बह रहा है ? आप और ये महिलाए यहा इस प्रकार क्यो कर पहुचीं ?"

गौतमी ने उत्तर दिया, "मान्य आनद, हमने अपने सिर मुडा लिये और वस्त्राभूषण त्याग दिये। अब इस ससार मे हमारे पास कुछ नहीं है। हम कपिलवस्तु से चलकर यहा पन्द्रह दिनो मे पहुची है, सड़को पर सोयी और छोटे गावो मे भिक्षा मागती हुई आयी है। हम यह दिखाना चाहते हैं कि हम भी भिक्खु का जीवन बिताने मे समर्थ हैं। आनद कृपा करके बुद्ध से हमारी ओर से बात करो। हम प्रवृज्या ग्रहण करना चाहती है।"

आनद ने कहा, "यहीं रुकिए। मै अभी बुद्ध से बात करता हू और वायदा करता हूं कि जो भी मुझसे बन पड़ेगा, अवश्य करूगा।"

आनद बुद्ध की कुटी मे घुस गया। वह उस समय चीवर धारण कर रहे थे। आनद ने जो कुछ देखा था, बुद्ध को सब बता दिया। बुद्ध ने कुछ नहीं कहा।

आनद ने कहा, "गुरुदेव, क्या यह सभव है कि महिलाए धर्म-मार्ग मे प्रवेश करे जहा एक बार प्रवेश करके वापस नहीं आया जाता और अन्ततः अर्हत्व प्राप्त हो जाता है।"

बुद्ध ने कहा–"निस्सदेह।"

"तव आप महिलाओ को सघ मे प्रवेश क्यो प्रदान नहीं करते ? गौतमी ने आपको वाल्यावस्था से पाल-पोस कर वड़ा किया है। उन्होने आपको पुत्रवत् स्नेह दिया है। अव उन्होने अपना सिर मुडा लिया है और सब कुछ त्याग दिया है। वह कपिलवस्तु से पैदल चलकर यहा आई है और यह सिद्ध कर दिया है कि महिलाओ मे भी पुरुषो के समान सहनशीलता होती है। कृपया दया कीजिए और उन्हे प्रवृज्या ग्रहण करने की अनुमति दे दीजिए।"

कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात् अपने सहायक के माध्यम से मान्य सारिपुत्त, मौद्गल्यायन, भद्दिय, किम्बिल और महाकाश्यप को बुलाया। उनके आने पर लम्बा-चौड़ा विचार-विमर्श हुआ। बुद्ध ने कहा कि किसी भेद-भाव के कारण मैं महिलाओ से नहीं हिचकिचा रहा। मुझे यह भरोसा नही कि महिलाओ को सघ मे प्रवेश करने की अनुमति देने से सघ के भीतर और वाहर कुछ हानिकर सघर्ष न होगा।

लम्वे विचार-विमर्श के दौरान सारिपुत्त ने कहा, "समझदारी की बात यह होगी कि हम सघ मे भिक्खुनियो की भूमिका के विषय मे कुछ निश्चित निर्णय कर ले। इन आचार-सहिताओ से हम विरोधी लोगो का विरोध शात कर सकेगे। हजारो वर्षों से महिलाओ के प्रति भेद-भाव बरता गया है। कृपया निम्न आठ नियमो पर विचार करे :

"पहले भिक्खुनी को प्रत्येक भिक्खु का सम्मान करना होगा चाहे वह भिक्खुनी से उम्र मे भले ही कम हो या भिक्खुनी ने अधिक समय तक साधना क्यो न की हो।

"दूसरा, वर्षा-प्रवास के दौरान भिक्खुनियो का केन्द्र इतना समीप होना चाहिए जिससे उन्हे भिक्खुओ से आध्यात्मिक समर्थन मिल सके और आगे अध्ययन किया जा सके।

"तीसरा, महीने मे दो वार भिक्खुनिया किसी को भेजकर भिक्खुओ को आमत्रित करे जिससे 'उपोसाथ' का दिन निश्चित किया जा सके। एक भिक्खु भिक्खुनियो को शिक्षा देने, साधना सिखाने और सद्धर्म मार्ग के अभ्यास मे प्रोत्साहन देने जाया करेगा।

"चौथा, वर्षा-प्रवास की समाप्ति पर भिक्खुनिया 'प्रवर्ण' समारोह मे भाग ले और अपने साधना-प्रयासो का विवरण भिक्खुनियो के ही नहीं, भिक्खुओ के समक्ष भी प्रस्तुत करे।

"पाचवा, यदि कोई भिक्खुनी किसी शील का उल्लघन करे तो उसे अपना दोप भिक्खुनियो और भिक्खुओ के समक्ष वताना होगा।

"छठा, श्रामणेर के रूप मे रहने की निर्धारित समयावधि के वाद भिक्खुनियो को सपूर्ण व्रतो के पालन की प्रतिज्ञा भिक्खुओ और भिक्खुनियो के समक्ष लेनी होगी।

"सातवा, भिक्खुनी किसी भी भिक्खु की आलोचना या निन्दा नही करेगी।

"आठवा, भिक्खुनी भिक्खुओ को धर्म-देशना नहीं करेगी।"

मौद्गल्यायन ने हसकर कहा–"ये आठ नियम तो सर्वथा भेद-भावपूर्ण हैं। इस वात को आप अन्यथा कैसे सिद्ध कर सकेगे ?"

सारिपुत्त ने उत्तर दिया कि "ये नियम तो भिक्खुनियो के लिए सघ का द्वार खोलने के लिए हे। इन नियमो को उद्देश्य भेद-भाव वनाये रखना नहीं, वरन् भेद-भाव समाप्त करना है। क्या आप ऐसा नहीं समझते ?"

मौद्गल्यायन ने नियमो को ठीक मानते हुए सिर हिलाया।

भद्दिय ने कहा, "ये आठ नियम वनाना आवश्यक था। मान्य गौतमी बहुत अधिकार सम्पन्न हे। वह गुरुवर की माताजी है। इन नियमो के विना, बुद्ध के अतिरिक्त किसी को भी उनके साधना-अभ्यास मे मार्ग-दर्शन करना सभव नहीं होगा।"

वुद्ध ने आनद से कहा–"कृपया जाकर मान्य महाप्रजापति को बताइए कि यदि उन्हे ये आठ विशेप नियम स्वीकार हो तो उन्हे तथा अन्य महिलाओ को प्रवृज्या दी जा सकती है।"

सूर्य आकाश मे काफी चढ़ आया था। आनद ने देखा कि मान्य गौतमी और अन्य महिलाए धैर्य-पूर्वक प्रतीक्षा कर रही थीं। आठ नियम सुनकर गौतमी हर्प से फूली नहीं समायीं। उन्होने आनद से कहा–"आप जाकर बुद्ध को वता दीजिए कि जैसे सुगधित जल से केश धोने के बाद युवती कमल या गुलाव के फूलो का हार पहनना स्वीकार कर लेती है, उसी प्रकार मै इन नियमो को स्वीकार करती हू। यदि मुझे प्रवृज्या ग्रहण करने की अनुमति दे दी जाती है, तो मैं इन नियमो का आजीवन पालन करूगी।"

आनद ने वुद्ध की कुटी मे जाकर मान्य गौतमी का उत्तर सुना दिया।

अन्य महिलाओ ने चिन्तापूर्ण दृष्टि से गौतमी को देखा किन्तु उन्होने मुस्कराकर उन्हे आश्वस्त किया, "बहिनो, चिन्ता मत करो। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम लोगो ने प्रवृज्या ग्रहण करने का अधिकार अर्जित कर लिया है। ये आठ नियम हमारी धर्म-साधना मे बाधक नही होगे। ये नियम वह द्वार है, जिससे हम सघ मे प्रवेश कर सकेगी।"

सभी इक्यावन महिलाओ को उसी दिन प्रवृज्या दे दी गयी। मान्य सारिपुत्त

ने उन लोगो के लिए आम्रपाली के आम्रवन मे अस्थायी निवास की व्यवस्था कर दी। वुद्ध ने सारिपुत्त से कहा वह भिक्खुनियो को साधना की आधारभूत वातो का ज्ञान करा दे।

आठ दिन वाद भिक्खुनी गौतमी वुद्ध से मिलने आयीं। उन्होने कहा, "वुद्ध देव, हम पर कृपा करे और वताए कि हम मुक्ति के मार्ग पर कैसे शीघ्र प्रगति कर सकती हैं।"

वुद्ध ने कहा, "भिक्खुनी महाप्रजापति सवसे महत्त्वपूर्ण बात है अपने मन को वश मे करना। प्राणायाम कीजिए और अपने शरीर, भावनाओ, मन और मन के आश्रयो पर ध्यान कीजिए। इस प्रकार अभ्यास करने से प्रतिदिन आप विनम्रता, सहजता, अनासक्ति, शाति और आनद की वृद्धि होती पाएगी। जव ये गुण आ जाए तो समझिए कि आप सही मार्ग पर चल रही हैं। यही मार्ग चेतना-जागृति और मुक्ति का मार्ग है।"

भिक्खुनी महाप्रजापति की इच्छा थी कि वैशाली मे ही 'आगार' बनाया जाए, जिससे भिक्खुनिया वुद्ध और उनके वरिष्ठ शिष्यो के सामीप्य मे रह सके। वह यह भी चाहती थीं कि बाद मे वह वापस जाकर कपिलवस्तु मे एक 'आगार' स्थापित करे। उन्होने एक सदेशवाहक भेजकर यशोधरा को सूचित किया कि उन्हे प्रवृज्या मिल गयी है। भिक्खुनी गौतमी जानती थीं कि महिलाओ को सघ मे प्रवेश देने से लोगो मे तूफान उठेगा जिसका परिणाम होगा कडा विरोध और बहुत से लोग वुद्ध और सघ की निन्दा करेगे। इससे वुद्ध को वहुत-सी कठिनाइयो का सामना करना होगा। ये आठ विशेष नियम अस्थायी रूप से आवश्यक हैं, जिससे हानिकर विरोधो से सघ की रक्षा की जा सके। कुछ समय वाद, जव भिक्खुनियो को प्रवृज्या देना एक निश्चित सत्य वन जाएगा तो इन नियमो की आवश्यकता नहीं रहेगी।

अव वुद्ध के समुदाय मे भिक्खु और भिक्खुनिया भी थीं और उपासक तथा उपासिकाए भी थीं।

भिक्खुनी महाप्रजापति ने भिक्खुनियो के वस्त्र क्या हो, इस पर गहन विचार किया। इस सम्वन्ध मे उनके विचारो को वुद्ध ने स्वीकार कर लिया। भिक्खु-भिक्खुनियो को अपने वस्त्रो के अतिरिक्त एक भिक्षा-पात्र भी दिया जाता था। उन्हे अपने पास एक पखा, घड़ा, सुई, धागा, दात साफ करने के लिए दातुन और अपने सिर महीने मे दो वार मुडवाने के लिए उस्तरा रखने की भी अनुमति दे दी गयी थी।

अध्याय छियालीस

सौहार्द्र के सिद्धान्त

राजगृह का वेणुवन विहार वैशाली मे कूटागारशाला विहार और श्रावस्ती का जेतवन विहार सद्धर्म की शिक्षा पाने और तदनुसार साधना करने के वडे-वडे केन्द्र वन गए थे। मगध, कौशल तथा पड़ोस के अन्य राज्यो मे भी विहार स्थापित किए गए। सर्वत्र गैरिक चीवरधारी भिक्खु खूब पहचाने जाने लगे। वुद्ध की सवोधि-प्राप्ति के प्रथम छः वर्षों मे सद्धर्म मार्ग का व्यापक विस्तार हुआ।

वुद्ध ने छठा वर्षा-प्रवास मकुल पर्वत पर और सातवां शकास्य मे व्यतीत किया। आठवा वर्षा-प्रवास भग्ग मे सुसुमार गिरि पर और नवा कौशावी मे किया। एक महत्त्वपूर्ण विहार गोशिरा वन मे वनाया गया था। जब बुद्ध गोशिरा मे नवा वर्षा-प्रवास कर रहे थे तो उनके वरिष्ठ शिष्यो ने जिनमे महाकाश्यप, महामौद्गल्यायन, सारिपुत्त तथा महाकात्यायन भी थे, उनसे भेंट की। आनद और राहुल भी वहा उपस्थित थे।

गोशिरा मे शिंशप वृक्ष वड़ी सख्या मे थे और दोपहर की गर्मी मे वह इन्हीं वृक्षो के नीचे ध्यान-साधना करते थे। एक दिन वह साधना के बाद हाथ मे इन वृक्षो के पत्ते मुट्ठी मे दवाए हुए विहार मे लौटे। उन्होने मुट्ठी मे पकड़े पत्ते दिखाकर पूछा–"भिक्खुओ, मेरी मुट्ठी के पत्तो की सख्या अधिक है अथवा वन के वृक्षो पर लगे पत्तो की ?"

भिक्खुओ ने उत्तर दिया–"वन मे वृक्षो पर लगे पत्तो की।"

वुद्ध ने कहा, "उसी प्रकार जो मैं देखता हू, वह मेरी शिक्षाओ से कही अधिक वडा है। ऐसा इसलिए है कि मै केवल उन्हीं बातो की शिक्षा देता हू, जो सद्धर्म के मार्ग पर सफलता के लिए वास्तव मे आवश्यक तथा सहायक होती है।"

बुद्ध ने यह बात गोशिरा मे इसलिए कही थी क्योकि वहा 'बहुत से भिक्खु दार्शनिक चिंतन मे पड़ गए थे। भिक्खु मालुक्यपुत्त को बुद्ध ने विशेष परामर्श दिया था कि वे इस प्रकार के भ्रामक प्रश्नो मे न उलझे जो साधना-मार्ग के लिए आवश्यक नहीं। मालुक्यपुत्त ऐसे प्रश्न उठाते थे कि सृष्टि का अन्त होता है या वह अनन्त है, अथवा वह माया है या शाश्वत है। बुद्ध ने सदैव इन प्रश्नो के उत्तर नहीं दिए। एक दिन मालुक्यपुत्त को लगा कि वह बुद्ध के मौन को अधिक सहन नहीं कर सकते। उन्होने सकल्प किया कि अब आखिरी बार मैं उनसे प्रश्न करूगा और यदि उन्होने उत्तर नहीं दिया तो मै उनसे निवेदन करूगा कि वह मुझे त्रिरत्नो तथा अन्य प्रतिज्ञाओ से मुक्त कर दे।

बुद्ध मिले तो उसने कहा, "गुरुदेव, यदि आप मेरे प्रश्नो के उत्तर देने पर सहमत होते है तो मैं आपका अनुगमन करता रहूगा, किन्तु यदि आपने उत्तर नहीं दिए तो मैं सघ त्याग दूगा। बताइए कि क्या आप जानते हैं कि सृष्टि नित्य है या अनित्य। यदि आप इसका उत्तर नहीं जानते तो भी मुझे कह दीजिए।"

बुद्ध ने मालुक्यपुत्त की ओर देखकर कहा, "जब तुमने मुझसे प्रवृज्या देने को कहा था, उस समय क्या मैने तुम्हे ऐसे प्रश्नो के उत्तर देने का वचन दिया था ? क्या मैंने तुमसे कहा था कि तुम भिक्खु बन जाओ, मैं तुम्हारी अध्यात्म-विज्ञान की समस्याओ का निदान कर दूगा ?"

"नहीं, गुरुदेव, आपने ऐसा नहीं कहा था।"

"तब तुम अब मुझसे यह माग क्यो कर रहे हो ? मालुक्यपुत्त, तुम ऐसे व्यक्ति हो जिसको विषबुझा तीर लगा हो और परिवारजन चाहते हो कि तीर निकाल दिया जाए और विषमारक औषधि दे दी जाए। लेकिन वह व्यक्ति उस चिकित्सक को कुछ करने देने से पहले अपने कुछ प्रश्नो के उत्तर चाहता हो। घायल व्यक्ति जानना चाहता हो कि तीर किसने मारा, उसकी जाति क्या है, वह करता क्या है और उसने तुमको ही तीर का निशाना क्यो बनाया ? वह व्यक्ति यह भी जानना चाहता हो कि उसने कैसा धनुष प्रयोग किया और विषबुझा तीर किन विषो से बनाया गया था। ऐसा व्यक्ति अपने प्रश्नो के उत्तर पाने से पूर्व ही मर जाएगा। यही बात सद्धर्म मार्ग पर चलने वाले के विषय मे सत्य है। मै आत्म-मुक्ति के लिए आवश्यक बाते ही उन लोगो को बताता हू। जो बाते आत्म-मुक्ति मे सहायक न हो या आवश्यक न हो, वे मैं नहीं सिखाता।

"सृष्टि सान्त है अथवा अनत या नित्य है अथवा अनित्य, इसे छोड़कर तुम्हे जिस तथ्य को हृदयगम कर लेना चाहिए, वह है दुःखो की विद्यमानता। दुःखो के कारण है, और उन कारणो को समाप्त करने का मार्ग बताया जा सकता है। जो शिक्षा मै देता हू वह ममत्व भावहीनता, सुख-दुख निरपेक्षता, शाति और मुक्ति प्राप्त करने मे सहायक हैं। जो बाते सद्धर्म मार्ग द्वारा आत्म-मुक्ति मे सहायक न होने वाली हो, ऐसी किसी भी बात का मै उत्तर नहीं देता।"

मालुक्यपुत्त ने लज्जित होकर मूर्खतापूर्ण माग करने के लिए क्षमा-याचना की। बुद्ध ने सभी भिक्खुओ को साधना-अभ्यास पर ध्यान देने के लिए प्रेरित किया और अनुपयुक्त दार्शनिक विवादो मे उलझने से बचने को कहा।

गोशिरा मे जिस उपासक ने विहार के लिए भूमि दान मे दी थी, उसने कुक्कुटाराम और पवरिकाव वन मे दो विहार और बनाने का प्रस्ताव रखा। चौथा विहार भद्रिका मे भी बनाया गया।

अन्य विहारो के समान गोशिरा मे भी बुद्ध की देशना की बाते कठस्थ करने का कार्य आरभ हुआ। कठस्थ करने वाले भिक्खुओ को सूत्राचार्य कहा गया क्योकि बुद्ध के वचनो को सूत्र कहा जाता था। 'धर्म-चक्र प्रवर्त्तन सूत्र' मे उन वचनो का समावेश किया गया जो बुद्ध ने अपने प्रथम पाच शिष्यो के समक्ष मृगदाय (सारनाथ) मे अपनी देशना मे कहे थे। कुछ अन्य सूत्रो यथा 'अनात्म प्रकृति सूत्र', 'परस्परावलवी सह-वर्द्धन' सवधी सूत्र और 'अष्टागिक मार्ग सूत्र' का पाठ समस्त भिक्खु समुदाय महीने मे दो बार करते थे।

सूत्राचार्यों के अतिरिक्त शीलाचार्य भी थे जो श्रामणेरो तथा भिक्खुओ के लिए निर्धारित पचशीलो और दशशीलो के विशेषज्ञ थे। राहुल तथा अन्य श्रामणेर, जिनकी आयु बीस वर्ष की नहीं हुई थी, श्रामणेरो के लिए निर्धारित पचशीलो का आचरण करते थे।

गोशिरा मे सूत्राचार्यों तथा शीलाचार्यों मे मतभेद उठ खड़ा हुआ। छोटी-सी घटना को लेकर हुआ तर्क-वितर्क इस सीमा तक पहुच गया कि सघ मे तीव्र मतभेद उत्पन्न हो गए। एक सूत्राचार्य कर-प्रक्षालक पात्र साफ करना भूल गए जिस पर एक शीलाचार्य ने आपत्ति की। गर्वीले सूत्राचार्य ने कहा कि मैंने जानबूझ कर कर-प्रक्षालन पात्र गदा नहीं छोड़ा था, अतः वह दोषी नहीं है। प्रत्येक भिक्खु ने अपने-अपने अध्यापको का पक्ष लिया और वाद-विवाद बढ़ गया। एक पक्ष दूसरे पक्ष पर अपमानजनक बाते कहने का आरोप लगाता तो दूसरा पक्ष अपने विरोधियो को मूर्खतापूर्ण आचरण करने वाला कहता।

अन्त मे शीलाचार्य ने सार्वजनिक तौर पर घोषणा कर दी कि सूत्राचार्य सप्ताह मे दो वार होने वाले शील-पाठो मे तव तक सम्मिलित नहीं हो सकेगे जब तक वह सघ के समक्ष अपने दोष को औपचारिक रूप से स्वीकार न कर ले।

स्थिति विषम से विपमतर होती गई। दोनो पक्ष एक-दूसरे की निन्दा करने लगे। अधिकाश भिक्खु इस या उस पक्ष के समर्थक थे हालाकि कुछ ने निष्पक्ष रहना ही समीचीन समझा। वे कहते थे, "यह भयप्रद स्थिति है। इससे सघ मे हानिकर विभाजन हो जाएगा।"

यद्यपि वुद्ध विहार के समीप ही रहते थे। फिर भी, उनको इस सघर्ष की जानकारी तव तक नहीं हुई जब तक सबधित भिक्खु उनके पास नहीं पहुचे और जो कुछ सघ मे घटित हुआ, वह नहीं बताया। बुद्ध सीधे शीलाचार्यों से मिलने गए और उनसे कहा, "हमे अपने दृष्टिकोण से बहुत अधिक बधे नहीं रहना चाहिए। दूसरो के दृष्टिकोण को समझने के लिए हमे उनकी वात ध्यान से सुननी चाहिए। हमे वह सभी उपाय करने चाहिए, जिससे भिक्खु सप्रदाय मे दरार न पड़े।" इसके बाद वह सूत्राचार्यों के पास गए और उनसे भी यही वात कही। अपनी कुटिया मे आते समय उन्हे आशा थी कि दोनो पक्ष मान जाएगे।

किन्तु वुद्ध के हस्तक्षेप का वाछित प्रभाव नहीं हुआ। बहुत-सी निन्दापरक वाते की जा चुकी थीं। निष्पक्ष रहे भिक्खुओ का इतना प्रभाव नहीं था कि वे दोनो पक्षो को मिला सके। इस सघर्ष की वात उपासको के कानो मे भी पडी। शीघ्र ही अन्य धार्मिक सम्प्रदायो को भी बुद्ध के सघ मे होने वाली गडवड़ी की सूचना मिली। यह सघ की एकता पर गभीर चोट थी। वुद्ध के परिचर को भी जव स्थिति असहनीय लगने लगी तो उसने बुद्ध मे एक वार और हस्तक्षेप करने का अनुरोध किया।

वुद्ध ने अपना चीवर धारण किया और विहार के सभागार मे जा पहुचे। सभी भिक्खुओ को वुलाने के लिए घटा वजाया गया। जव सभी एकत्र हो गए तो वुद्ध ने कहा, "कृपया अपना वाद-विवाद समाप्त कर दीजिए। इससे सघ मे विभाजन उत्पन्न होता है। कृपया जाकर अपनी साधना कीजिए। यदि हम सत्य-निष्ठा पूर्वक अपनी साधना करेगे तो अहकार और क्रोध के शिकार नहीं वनेगे।"

एक भिक्खु ने उठकर कहा, "गुरुदेव, आप कृपया इस मामले मे स्वय को मत उलझाइए। अपने स्थान पर जाकर शातिपूर्वक साधना कीजिए। यह

प्रश्न आपसे सवधित नहीं है। हम प्रौढ़ लोग है और इस प्रश्न को अपने-आप निवटा लेगे।"

भिक्खु के शब्द सुनकर सभागार मे सन्नाटा छा गया। बुद्ध उठकर सभागार से निकल गए, अपनी कुटिया मे आए और भिक्षा-पात्र लेकर कौशाम्बी मे भिक्षाटन के लिए चले गए। भिक्षा लाकर वन मे अकेले ही भोजन किया और कौशाम्बी से निकलकर नदी की ओर चल पड़े। उन्होने अपने जाने की वात अपने अनुचर अथवा आनद को भी नहीं बताई।

बुद्ध चलते-चलते वालकलोणकर ग्राम पहुच गए जहा वह अपने शिष्य भृगु से मिले। भृगु ने उस वन मे चलने के लिए अनुरोध किया, जहा वह अकेले साधना करते थे। उन्होने बुद्ध को एक वस्त्रखड और कर-प्रक्षालन पात्र दिया जिससे वे अपने हाथ-पाव धो सके। बुद्ध ने भृगु से पूछा कि उनकी साधना कैसी चल रही है। भृगु ने वताया कि साधना मे मुझे सहजता और आनद प्राप्त होता है, हालांकि वह वहा अकेले ही निवास करते है। बुद्ध ने कहा कि "कभी-कभी वहुत से लोगो के वीच रहने की अपेक्षा एकातवास अच्छा होता है।"

भृगु से विदा लेकर वह वेणुवन की ओर चल पड़े जो वहा से बहुत दूर नहीं था। वहा पहुचकर द्वार-रक्षक ने उन्हे रोका तो अनिरुद्ध ने आकर प्रसन्नतापूर्वक बुद्ध को प्रणाम किया और द्वार-रक्षक को बताया कि "ये मेरे गुरुदेव है। इन्हे भीतर आने दीजिए।"

अनिरुद्ध बुद्ध को वहां ले गया जहा वह नदीय और किम्बिल नामक दो शिष्यो के साथ रहता था। वे शिष्य बुद्ध को देखकर प्रसन्न हुए और एक ने बुद्ध का भिक्षा-पात्र और दूसरे ने चीवर सभाल लिया। उन्होने बास की झाड़ू से सफाई करके उनके वैठने का स्थान बनाया। उन्होने बुद्ध के हाथ-पैर धुलाए और हाथ जोड़कर बुद्ध के समक्ष प्रणत हुए। बुद्ध ने उन्हे वैठने के लिए कहकर पूछा, "क्या आप लोग यहां सतुष्ट हैं ? तुम्हारी साधना कैसी चल रही है। यहा भिक्षाटन करने या धर्म-देशना के विषय मे परस्पर चर्चा मे तो कोई कठिनाई नहीं हो रही ?"

उत्तर मे अनिरुद्ध ने कहा, "गुरुदेव हम यहा बिलकुल सतुष्ट हैं। यह स्थान कोलाहल रहित एव शातिपूर्ण है। हमे यहा पर्याप्त शिक्षा मिलती है और हम अपनी साधना मे अच्छी प्रगति कर रहे हैं।"

बुद्ध ने पूछा, "क्या आप लोग एक-दूसरे से मिल-जुलकर रहते है ?"

अनिरुद्ध ने कहा, "हम यहा एक-दूसरे का पूरा ख्याल रखते है। हम

दूध और शहद की भाति मिलकर रह रहे हैं। नदीय और किम्बिल के साथ रहना बहुत ही श्रेयसपूर्ण है। इनकी मित्रता को मैं सहेजे रखता हू। मैं कुछ भी कहने या करने से पूर्व, ये हो या न हो, मैं यह विचार कर लेता हू कि इस बात पर इनकी क्या प्रतिक्रिया होगी। यदि मुझे कोई सदेह होता है तो मैं वैसा न कहता हू और न वैसा कोई कार्य करता हू। इस प्रकार हम तीन व्यक्ति होकर भी एक ही हैं।"

बुद्ध ने स्वीकृतिसूचक सिर हिलाया और दोनो अन्य भिक्खुओ की ओर देखा। किम्बिल ने कहा–"अनिरुद्ध सत्य कहते हैं। हम मिलकर रहते हैं और एक-दूसरे का पूरा ख्याल रखते हैं।"

नदीय ने कहा–"हम भोजन से लेकर अपनी मनोभावनाओ और साधनाभ्यास सभी मे सहभागी बनते हैं।"

बुद्ध ने उनकी प्रशसा करते हुए कहा, "बहुत अच्छा है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम लोग सौहार्द्रपूर्वक रहते हो। सघ तभी सच्चा सघ है, जब सघ मे पूर्ण सौहार्द्र हो। तुमने वास्तविक चेतनावस्था की अनुभूति कर ली है। इसी से सौहार्द्रपूर्वक रहते हो।"

बुद्ध ने इन तीनो भिक्खुओ के साथ एक मास व्यतीत किया। उन्होने देखा कि प्रातःकालीन साधना के बाद वे कैसे भिक्षाटन को जाते हैं। जो भी भिक्खु पहले भिक्षाटन से लौट आता है, वह शेष लोगो के लिए बैठने का स्थान साफ करता है। हाथ-पाव धोने के लिए जल लाता है और एक खाली पात्र रख देता है। भोजन से पहले वह खाली पात्र मे कुछ भोजन रख देता है, जिससे यदि किसी भिक्खु को भिक्षा मे कुछ भी न मिले तो वह खा सके। भोजन के उपरान्त यदि कुछ बचता है तो उसे ज़मीन पर रख देता है या झरने मे डाल देता है और यह सावधानी बरतता है कि वहा रहने वाले किसी प्राणी को कोई हानि न पहुचे। इसके बाद वे अपना भिक्षा-पात्र धो-साफ करके रख देते हैं।

जो भी देखता है कि शौचालय को साफ करने की आवश्यकता है तो वह यह कार्य स्वय तुरन्त कर देता है। जब किसी काम के करने के लिए एक से अधिक व्यक्तियो की आवश्यकता है तो वे तुरन्त जुट जाते है। वे नियमित रूप से साधना की अनुभूतियो के सहभागी बनते हैं।

तीनो भिक्खुओ के यहा से चलने से पहले बुद्ध ने उन्हे देशना की, "भिक्खुओ, संघ का मूलाधार ही सौहार्द्र है। सौहार्द्र-अर्जन के लिए मै इन सिद्धान्तो पर विश्वास करता हू :

1. चाहे धन हो या घर, स्थान का सहभागी होना।
2. दैनिक जीवन की आवश्यकताओ की मिल-जुलकर पूर्ति करना।
3. साथ-साथ शीलो का आचरण करना।
4. उन्हीं शब्दो का प्रयोग करना, जिनमे सौहार्द्र मे वृद्धि हो और ऐसे शब्दो के प्रयोग से बचना, जिनमे संघ मे बिखराव आ सकता है।
5. अन्तः अनुभूतियो और प्रज्ञा का परस्पर आदान-प्रदान करना।
6. दूसरे के दृष्टिकोण को सम्मान देना और दूसरो को अपना दृष्टिकोण हठात् न मनवाना।

"जिस संघ मे इन सिद्धातो पर आचरण किया जाएगा, वहा प्रसन्नता और सौहार्द्र होगा। भिक्षुओ, हमे सदैव इन सिद्धातो का पालन करना चाहिए।"

भिक्षु बुद्ध से यह देशना प्राप्त करके प्रसन्न हुए। बुद्ध उनसे विदा लेकर रक्षितवन की ओर चल दिए। विशाल साल वृक्ष के नीचे समाधि लगाने के बाद उन्होंने निश्चय किया कि वह अकेले ही इस वन मे वर्षा-प्रवास करेंगे।

अध्याय सैंतालीस

धर्म का अनुपालन करें

साल वृक्ष के नीचे वैठे वुद्ध सहजता, शाति और प्रसन्नता का आनद ले रहे थे। हरियाली भरे पहाड़ो, स्वच्छ निर्झरो और सरोवर से युक्त वह वन वहुत अच्छा था। वुद्ध एकान्त के आनद मे भी कौशावी मे सघर्षरत भिक्खुओ के विषय मे सोचने लगे। वहा के उपासक तक अशान्त हो गए थे। उन्हे इस वात से खिन्नता हुई कि भिक्खु उनके मार्ग-निर्देश मानने को भी तैयार नहीं थे किन्तु उन्होने समझ लिया था कि उनका मन क्रोध से भरा है।

रक्षितवन मे वहुत से पशु थे जिनमे हाथियो का एक परिवार भी था जिसमे सवसे वडी हथिनी थी। वह हथिनी छोटे हाथियो को नहलाने सरोवर ले जाती। वहा वह सिखाती कि शीतल जल कैसे पीना है। वुद्ध ने देखा कि हथिनी किस प्रकार कुमुदिनी पुष्पो का गुच्छा सूड मे लेकर पहले उन्हे पानी मे साफ करके वच्चे हाथियो को रगड-रगड़ कर नहलाती थी और उनके वदन पर चिपकी मिट्टी छुटाती थी। छोटे हाथी ठीक वैसा ही करते, जैसा वह करती।

वे हाथी वुद्ध के मित्र वन गए थे। कभी-कभी हथिनी वुद्ध के लिए उपहार मे फल लाती। वुद्ध हाथी के वच्चो के सिर थपथपाकर प्यार जताते और कभी-कभी उनके साथ सरोवर तक चले जाते। रानी हथिनी की राजसी पुकार सुनना उन्हे अच्छा लगता। उन्होने उसकी तुरही समान पुकार की नकल करना पूरी तरह सीख लिया। एक दिन हथिनी की आवाज के उत्तर मे उन्होने भी उसी के जैसी आवाज निकाली जिसे सुनकर हथिनी उनके पास आई और नमन की मुद्रा मे उनके सामने वैठ गई। वुद्ध ने उसका मस्तक ममता से थपथपाया।

रानी हस्तिनी द्वारा बुद्ध को फलो का उपहार भेंट

सबोधि की प्राप्ति के बाद यह बुद्ध का दसवा वर्षा-प्रवास था और वन मे किया गया दूसरा। वह पूरे प्रवास-काल मे वन की शीतलता का आनद लेते और सवेरे केवल भिक्षा के लिए जाते। वर्षा-प्रवास के वाद बुद्ध ने अपने हाथी मित्रो से विदा ली और उत्तर पश्चिम दिशा मे चल दिए। दो सप्ताह की पद-यात्रा के वाद वह श्रावस्ती मे जेतवन पहुच गए। सारिपुत्त और राहुल उनके आगमन पर अत्यन्त प्रसन्न हुए। महामौद्गल्यायन, महाकाश्यप, महाकात्यायन, उपालि, महाकोटितीर्थ, महाकप्पिन, महाकुड, रेवत और देवदत्त समेत अनेक वरिष्ठ शिष्य भी वहा थे। कारा ग्राम के वेणुवन से किम्विल और नन्दीय भी चलकर जेतवन आ गए। भिक्खुनी गौतमी भी उस समय श्रावस्ती मे ही थीं। सभी उनसे मिलकर प्रसन्न हुए।

जेतवन मे अपनी कुटिया मे पहुचने पर बुद्ध ने देखा कि आनन्द कुटी मे सफाई करके झाड़ू लगा रहा था। बुद्ध एक साल चार महीने वाद लौटे थे। आनद ने झाड़ू एक ओर रखकर उन्हे नमन किया। कौशाम्बी के समाचार पूछने पर आनद ने बुद्ध को वताया कि "आपके चले आने पर बहुत से भिक्खु वधुओ ने मुझसे कहा, 'भाई, गुरुदेव चले गए है। वे अकेले हैं। तुम उनके साथ क्यो नहीं गए ? यदि तुम नहीं जाते तो हम जाते है।' किन्तु मैंने कहा कि 'यदि वुद्ध किसी को बिना वताए चले गए हैं तो सभवत इसलिए कि वह एकान्तवास करना चाहेगे। हमे उनकी शाति भग नहीं करनी चाहिए। छः महीने वाद वही भिक्खु फिर आए और कहने लगे, दीर्घकाल से हमने वुद्धदेव की देशना नहीं सुनी है, उन्हे खोजना चाहिए।' इस वार मैं सहमत हो गया और हम आपको खोजने निकले किन्तु सब निष्फल रहा। कोई नहीं जानता था कि आप कहा हैं ? हमने यहीं रुककर आपकी प्रतीक्षा करने का निश्चय किया। क्योकि हमे विश्वास था कि अतत: आप यहा अवश्य आएगे। हमे भरोसा था कि आप अपने शिष्यो को त्याग नहीं सकते।"

"जव तुम कौशाम्वी से चले थे तो स्थिति क्या थी ? क्या भिक्खुओ मे मतभेद वने हुए थे ?"

"गुरुवर, सघर्ष और तीव्र हो गया था। दोनो पक्षो का एक-दूसरे से सम्वन्ध-विच्छेद-सा हो गया था। वातावरण तनावपूर्ण और चिन्तापूर्ण हो गया था। जव हम नगर मे भिक्षाटन के लिए जाते तो उपासकगण हम निष्पक्ष भिक्खुओ के प्रति भी भयभीत हो उठते थे। धीरे-धीरे उपासको ने स्थिति अपने हाथ मे लेनी आरम्भ कर दी। वे लोग विहार मे आए और विरोधी पक्ष के भिक्खुओ मे मिले और कहा, 'आप लोगो ने वुद्ध को इतना दुखित

कर दिया कि वह चले गए। अव आप लोगो पर गुरु दायित्व आ गया है। आपके कारण उपासको का सघ पर से भरोसा ही उठ गया है। कृपया अपने आचरणो पर नए सिरे से विचार कीजिए।' पहले तो सघर्षरत भिक्खुओ ने उपासको के अनुरोध पर ध्यान ही नहीं दिया किन्तु उपासको ने निश्चय किया कि सघर्षरत भिक्खुओ को भोजन ही नहीं देगे। उन्होने कहा कि 'आप लोग वुद्ध के शिष्य वनने योग्य नहीं हैं क्योकि आप लोग सौहार्द्र एव समरसता से रहने मे विफल रहे हैं। यदि आपने वुद्ध की शिक्षा को माना होता तो परस्पर मिल गए होते। अव वुद्ध देव को खोजो और उनके समक्ष अपना दोष स्वीकार करो।' गुरुदेव, उपासक अपनी वात पर अड़े रहे और जिस दिन मैं कौशाम्वी से चला हू, दोनो पक्ष आपस मे मिलने को सहमत हो गए थे। मुझे विश्वास है कि ये लोग शीघ्र ही अथवा दोष स्वीकार करने यहा आएगे।"

वुद्ध ने झाड़ू उठा ली और कहा कि "सफाई मै करता हू, तब तक तुम सारिपुत्त को खोजकर वता दो कि मैं उनसे बात करना चाहता हू।"

वुद्ध ने धीरे-धीरे सफाई की और वास की कुर्सी पर आराम से बैठ गए। जेतवन सचमुच सुदर लग रहा था। पूरे वन मे चिड़िया चहचहा रही थीं। तभी सारिपुत्त आकर वुद्ध के समीप वैठ गए और काफी देर तक बैठे रहे।

सारिपुत्त को वुद्ध ने अपने मन की वात वताई। "हमे हर प्रयास करके इस सुन्दर विहार मे ऐसे व्यर्थ के सघर्षो की जड़ ही नही पनपने देनी चाहिए।"

इस विषय पर उनकी वहुत देर तक चर्चा होती रही। उसके बाद शीघ्र ही सारिपुत्त को समाचार मिला कि कौशाम्बी के भिक्खु श्रावस्ती पहुच चुके हैं और वे इस विहार की ओर आ रहे हैं। सारिपुत्त ने वुद्ध के पास जाकर पूछा, "कौशाम्वी के भिक्खु वधु शीघ्र यहा पहुच जाएगे। हमे यह स्थिति कैसे सभालनी है ?"

वुद्ध ने कहा, "उनके प्रति धर्म के अनुसार आचरण करो।"

"क्या आप अपनी वात तनिक स्पष्टता से बताएगे।"

"सारिपुत्त, आप अभी तक ऐसे प्रश्न उठा रहे हैं ?"

सारिपुत्त चुप रह गए। तभी महामौद्‌गल्यायन, काश्यप, कच्चन, कोट्ठीय, कपिन और अनिरुद्ध आ गए। उन्होने भी यही प्रश्न किया कि कौशाबी से आने वाले इन भिक्खु बधुओ के साथ क्या व्यवहार किया जाए ?"

सभी ने सारिपुत्त की ओर देखा किन्तु वह मुस्करा दिए। वुद्ध ने वरिष्ठ शिष्यो की ओर देखकर कहा–"बिना किसी पूर्वाग्रह के दोनो पक्षो की वाते ध्यान से सुनना। जो वाते सुने, उन पर गभीरता से विचार करना कि किसके कौन से तर्क सद्धर्म की शिक्षाओ के अनुरूप है और कौन से प्रतिकूल। धर्म-शिक्षा के अनुरूप कार्यों से शाति, आनद और अर्हत होने की दिशा मे प्रगति होती है। ये वे कार्य है, जिनका साधना–अभ्यास मैं स्वय करता हू। जिन कार्यों के प्रति मैंने सावधान रहने को कहा है और जिन पर मैं स्वय आचरण नहीं करता, वे सद्धर्म की शिक्षाओ के अनुरूप नहीं हैं। जब आप समझ ले कि कौन–सी वाते धर्म–देशना के अनुरूप हैं और कौन–सी प्रतिकूल तो आप स्वय ही जान लेगे कि किस प्रकार दोनो पक्षो मे समझौता कराया जा सकता है।"

उसी समय अनाथपिंडिक (सघ का उपासक सरक्षक) बुद्ध की कुटिया पर आ गया और कहा, "गुरुदेव, कौशाम्वी से भिक्खु आ गए हैं। हम उनका किस रूप मे स्वागत करे। क्या हमे दोनो पक्षो को भोजन देना है ?"

वुद्ध ने मुस्कराकर कहा–"दोनो पक्षो को भोजन दो और सघ के प्रति अपना समर्थन व्यक्त करो। उनमे से यदि कोई भी सद्धर्म के अनुरूप वात करे तो उसकी प्रशसा करो।"

आनद ने वापस आकर सारिपुत्त को वताया कि कौशाम्वी के भिक्खु विहार के द्वार पर खड़े हे। सारिपुत्त ने वुद्ध से पूछा, क्या हम अब उन्हे अदर आने दे ?"

वुद्ध ने कहा कि "विहार के द्वार खोल दो। और उनका स्वागत करो।"

सारिपुत्त ने कहा, "मै उन सवके सोने के लिए स्थान की व्यवस्था कर दूगा।"

"फिलहाल दोनो पक्षो को रहने के लिए अलग–अलग ही स्थान दीजिए।"

"सभी को अलग–अलग सोने का स्थान देने मे पर्याप्त स्थान की समस्या हो सकती है।"

"हम अभी तो भीड़–भाड की स्थिति सहन कर लेगे किन्तु किसी भी वरिष्ठ भिक्खु को वाहर नहीं सोने दिया जाएगा। सभी को भोजन और दवाइया भी समान रूप से सुलभ रहे।"

सारिपुत्त ने विहार के द्वार खोलने का आदेश दे दिया। कौशाम्वी के भिक्खुओ को सोने का स्थान तथा आवश्यक वस्तुए प्रदान कर दी गईं।

अगले दिन सवेरे नवागंतुक भिक्खुओ को सामान्य रूप से भिक्षाटन करने

जाने के लिए कहा गया। बुद्ध के परामर्श के अनुसार सारिपुत्त ने इन भिक्खुओ को अलग-अलग दल बनाकर अलग-अलग क्षेत्रो मे भेज दिया। उसी दिन शाम को भिक्खुओ ने सारिपुत्त से कहा कि बुद्ध के समक्ष हमारी भेट कराई जाए जिससे हम अपना दोष स्वीकार कर सके। सारिपुत्त ने कहा कि "बुद्ध के समक्ष दोष स्वीकार करना महत्त्वपूर्ण नहीं है। पहले आप आपस मे सच्चा समझौता कर ले। समझौता हो जाने के बाद 'दोष स्वीकार समारोह' के आयोजन की कोई सार्थकता होगी।"

उस रात सूत्राचार्य, जिनके कारण सघर्ष आरभ हुआ था, शीलाचार्य से भेट करने गए। वहा उन्होने हाथ जोड़े और शीलाचार्य को नमन करके कहा, "मान्यवर, मैं स्वीकार करता हू कि मैंने एक शील का उल्लघन किया है। आपने मुझे सुधारने के लिए जो कुछ कहा था, वह ठीक था। मै सघ के समक्ष अपना दोष स्वीकार करने को तैयार हूं।"

सूत्राचार्य जानते थे कि सघर्ष को टालने का एकमात्र मार्ग है अपने अहकार को पी जाना। शीलाचार्य ने भी सूत्राचार्य को प्रत्युत्तर मे नमन किया और स्वीकार किया कि "मुझमे ही विनम्रता तथा चतुरता की कमी रही होगी। कृपया मेरा हार्दिक खेद स्वीकार कीजिए।"

उस दिन देर रात को सूत्राचार्य के लिए 'दोष स्वीकार समारोह' आयोजित किया गया। प्रत्येक ने इस पर राहत की सास ली, विशेषतः कौशाम्बी के उन भिक्खुओ ने जो इस झगड़े मे तटस्थ रहे थे। आधी रात के बाद, सारिपुत्त ने बुद्ध को सूचना दी कि अन्ततः दोनो पक्षो मे समझौता हो गया है। बुद्ध ने मौन भाव से स्वीकृतिसूचक सिर हिलाया। झगड़ा तो उस समय निपट गया था किन्तु वह जानते थे कि इस झगड़े के घाव भरने मे अभी कुछ समय लगेगा।

अध्याय अड़तालीस

संघ में विवाद निबटाने के सिद्धांत

मान्य मौद्गल्यायन ने सुझाव दिया कि जेतवन मे विद्यमान बुद्ध के वरिष्ठ शिष्यो और कौशाम्बी मे हुए सघर्ष के प्रमुख नेताओ की एक वैठक की जाए जिससे अनुभव के द्वारा, यह शिक्षा प्राप्त की जा सके कि दुबारा कहीं ऐसा संघर्ष होने से उसे कैसे रोका जाए। मान्य महाकाश्यप ने इस सभा की अध्यक्षता की।

वैठक के आरभ मे, महाकाश्यप ने अनिरुद्ध से कहा कि पूर्वी वेणुवन मे अपने प्रवास के दौरान बुद्ध ने सौहार्द्र पूर्वक रहने के जो छः नियम निर्धारित किए है, वे सुना दे। अनिरुद्ध द्वारा वे छः नियम बता दिए जाने के वाद महा मौद्गल्यायन ने सुझाव दिया कि सभी विहारो के निवासी भिक्खुओ एव भिक्खुनियो से कहा जाए कि वे इन नियमो को कठस्थ कर ले।

चार दिनो के विचार-विमर्श के वाद वे सात सिद्धान्त निर्धारित किए गए कि यदि कहीं झगडे के कारण किसी प्रकार के विवाद उठे तो इन सिद्धान्तो के अनुसार उनका निवारण किया जाए। उन्होने इनका नाम 'सप्ताधिकरण समता' रखा।

प्रथम सिद्धान्त था 'सम्मुख विनय'। इसके अनुसार समस्त भिक्खुओ के सम्मेलन के सामने विवाद को उपस्थित किया जाए। इससे विवाद पर आपस मे वातचीत न हो ताकि लोगो को इस पक्ष या उस पक्ष मे खड़ा होना पड़े जिससे और अधिक मतभेद और तनाव न वढ़ने पाए।

दूसरा सिद्धान्त था 'स्मृति विनय'। भिक्खु सम्मेलन मे प्रत्येक पक्ष यह स्मरण रखने का प्रयास करे कि वात कहा से शुरू हुई जिससे विवाद वढा।

विवादित घटना को विस्तार के साथ साफ-साफ शब्दो मे प्रकट किया जाए। उस घटना के साक्षियो को तथा उपलब्ध साक्ष्यो को भी प्रस्तुत किया जाए। सघ को शाति एव धैर्य के साथ सभी बाते सुननी चाहिए, जिससे विवाद पर विचार करने के लिए पर्याप्त जानकारी सबके सम्मुख उपस्थित हो।

तीसरा सिद्धान्त था 'अमुद विनय'। इसके अनुसार विवाद मे उलझे भिक्खुओ से अपेक्षा की जाए कि वे विवाद का निवारण हठ त्यागकर कर सके। संघ की अपेक्षा होगी कि दोनो पक्ष विवाद-निवारण की इच्छा प्रकट करे। हठवादिता को नकारात्मक और अर्थहीन समझा जाए। यदि एक पक्ष यह कहे कि अज्ञान अथवा अस्थिर मानसिकता के कारण शील का उल्लघन हो गया है जबकि वस्तुतः उसका वैसा इरादा नहीं था, तो सघ को इस तथ्य को ध्यान मे रखना चाहिए जिससे दोनो पक्षो को मान्य समझौते का मार्ग निकाला जा सके।

चौथा सिद्धान्त था 'तत्त्व भाइष्य विनय' अथवा स्वेच्छापूर्वक दोष की स्वीकृति। प्रत्येक पक्ष को अपनी अनधिकार चेष्टा या त्रुटि को स्वीकार कर लेने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए, जिसके लिए दूसरे पक्ष या सघ को दवाव डालने की आवश्यकता न पड़े। सघ प्रत्येक पक्ष को अपना दोष या कमी को स्वीकार करने के लिए पर्याप्त समय दे, भले ही वह कमी कितनी ही छोटी क्यो न हो। अपना दोष मान लेना, समझौते की एक प्रक्रिया होनी चाहिए और दूसरे पक्ष को भी इस दिशा मे प्रेरित करना चाहिए। इससे पूरी तरह समझौता होना सभव होता है—मन मे कोई गाठ नहीं रह जाती।

पाचवा सिद्धान्त था 'प्रतिज्ञाकारक विनय' अर्थात् निर्णय की स्वीकृति। इस प्रकार किया गया निर्णय 'ज्ञाप्ति चतुर्थिन-कर्म वचन' को तीन बार उच्च स्वर मे उच्चारित किया जाए। यदि उसके प्रति सघ मे किसी को आपत्ति न हो तो उसे अतिम रूप से स्वीकार माना जाए। इस अवस्था मे किसी भी पक्ष को उस निर्णय पर आपत्ति करने का अधिकार न होगा। वे उस वात पर सहमत होगे कि उन्हे सघ के निर्णय पर विश्वास है और सघ जो भी निर्णय देगा उस पर उन्हे आचरण करना होगा।

छठा सिद्धान्त था 'यदभूयासिकीय विनय' अर्थात् सर्वानुमति से निर्णय। दोनो पक्षो की वाते सुनकर और दोनो पक्षो के समझौता कर लेने के हार्दिक प्रयासो से आश्वस्त होकर सघ विवाद का सर्वानुमति से निर्णय करेगा।

सातवा सिद्धात था 'तृणस्तारक विनय' अर्थात् कीचड़ को घास-पात से ढकना। भिक्खु सम्मेलन मे प्रत्येक वादी-प्रतिवादी का पक्ष प्रस्तुत करने के लिए एक मान्य भिक्खु को नियुक्त किया जाएगा। ये ऐसे भिक्खु होगे जिनकी

बात ध्यान से सुनी जाती और सम्मानित की जाती है। वे बैठकर ध्यान से सब कुछ सुनेगे और बहुत थोडा बोलेगे। लेकिन वे जब भी बोलेगे तो उनके वचनो को विशेप महत्त्व दिया जाएगा। उनके वचन ऐसे होगे जिनसे सात्वना मिले, घावो को भरा जा सके और वह दोनो पक्षो मे समझौता करने और क्षमा करने का अनुरोध करेगे। उनके शब्द ऐसे होगे जैसे कीचड़ पर घास-पात डाल दिया जाए जिससे भिक्खु अपने वस्त्र गदे किए बिना उस कीचड़ से गुजर सके। इन वरिष्ठ भिक्खुओ की उपस्थिति से सघर्षरत पक्ष सहजता से अपनी छोटी-मोटी चिन्ताओ की अभिव्यक्ति करने मे सक्षम हो। इससे कटुता घटेगी और सघ दोनो पक्षो को स्वीकार्य निर्णय कर पाने की स्थिति मे आ सकेगा।

बुद्ध के वरिष्ठ शिष्यो ने समझौता कराने के इन सात सिद्धातो को बुद्ध के समक्ष उनकी स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया। उन्होने शिष्यो के कार्यों की प्रशसा की और इन्हे 'औपचारिक शीलो' मे सम्मिलित करने की सहमति दे दी।

राजगृह लौटने से पूर्व बुद्ध छः महीनो तक जेतवन मे रहे। मार्ग मे वोधि वृक्ष देखने के लिए वह रुके और उरुवेला मे स्वास्ति के परिवारजनो से मिलने जा पहुचे। स्वास्ति जव उपयुक्त आयु का हो जाएगा तो उसे सघ परिवार मे सम्मिलित कर लेने का अपना वायदा भी तो पूरा करना था। स्वास्ति को उन्होने प्रवृज्या दी और स्वास्ति शीघ्र ही राहुल का अभिन्न मित्र वन गया।

अध्याय उनचास

महातत्त्वों से शिक्षा

अस्सजि और आनद ने सद्धर्म द्वारा प्रचार-प्रसार के लिए वुद्ध के प्रयत्नो की कथा कही, उस को स्वास्ति वहुत ध्यान से सुनता रहा। भिक्खुनी गौतमी ओर राहुल भी सव कुछ ध्यान से सुनते रहे। आनद की स्मरण-शक्ति वास्तव मे अद्भुत थी और जहा-जहा कुछ अस्सजि से छूट जाता, उसे आनद वता देते। स्वास्ति दोनो भिक्खुओ और भिक्खुनी गौतमी एव श्रामणेर राहुल का भी अनुग्रहीत था क्योकि इनके विना वह वुद्ध के जीवन से सर्वथा अनभिज्ञ ही रहता। स्वास्ति को आशा थी कि वह अव वुद्ध के समीप रहकर उनकी जीवन-चर्या स्वय देख सकेगा और उनकी देशना स्वय उनके श्रीमुख से सुन सकेगा।

सुजाता की कृपा के कारण अस्पृश्य वालक होकर भी वह प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर सका किन्तु सुजाता के विवाह के वाद उसकी शिक्षा समाप्त हो गई थी। स्वास्ति जानता था कि वह राहुल से वहुत कुछ सीख सकेगा। राहुल मे श्रेष्ठ अभिजात-सस्कार थे। न केवल राहुल उच्च वर्ण मे जन्मा था अपितु वह विगत आठ वर्षों से सघ का जीवन विता रहा था जहा का वातावरण सौम्य एव साधनापूरित था। राहुल की तुलना मे स्वास्ति का स्वभाव रुक्ष और सस्कारहीन था। इसी कारण वह धर्म-साधना के प्रयासो मे पूर्ण मनोयोग से जुट सका था। सारिपुत्त ने राहुल से कहा कि वह स्वास्ति को आधारभूत आचरण सिखाए जैसे कि चीवर कैसे धारण करना है, भिक्षा-पात्र कैसे पकड़ना है, कैसे चलना या खड़े होना है, बैठना, खाना और सोना है तथा सफाई कैसे करनी है और धर्म देशना सचेतावस्था मे सुननी है। भिक्खु को साधना-अभ्यास के पैंतालीस नियमो को कठस्थ करना है और

उन्हे आचरण मे लाना है, जिससे उसकी धारणा दृढ़ हो और स्वभाव की सौम्यता वढे।

राहुल अभी भी श्रामणेर था। बीस वर्ष की आयु होने के उपरान्त ही उसे पूर्ण प्रवृज्या दी जा सकती थी। श्रामणेर को दश शीलो का आचरण करना होता था–जीव हिंसा से विरत रहना, चोरी से विरत रहना, व्यभिचार या अब्रह्मचर्य से विरत रहना, असत्य भाषण से दूर रहना, मद्यपान से दूर रहना, नृत्य-गान से विरति, माला आदि गध से विरति, उच्च शय्या-महाशय्या से विरति, असमय भोजन से विरति और सोना-चादी ग्रहण से विरति। प्रवृज्या प्राप्त भिक्खुओ को पैंतालीस नियमो का पालन करना होता है। वरिष्ठ भिक्खु को एक सौ वीस शीलो का पालन करना होता है जिनमे प्रवृज्या प्राप्त भिक्खुओ के पैंतालीस शील भी सम्मिलित होते हैं। राहुल ने स्वास्ति को बताया कि मैंने सुना है कि शीलो की सख्या और बढ़ सकती है और उनकी सख्या दो सौ से भी अधिक हो सकती है।

राहुल ने वताया कि सघ की स्थापना के पहले वर्ष मे किसी प्रकार का शील लागू नहीं होता था। प्रवृज्या-समारोह भी साधारण था। प्रवृज्या लेने वाले को वुद्ध या भिक्खु के समक्ष प्रणत होकर त्रिरत्नो–'वुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' का उच्चारण करना होता था। जैसे-जैसे सघ के सदस्यो की वृद्धि हुई, बड़े भिक्खु-समुदाय के लिए शील और नियम तथा मार्ग-निर्देश भी बनाने पड़े जिससे अनुशासन बनाए रखा जा सके।

राहुल ने स्वास्ति को वताया कि सघ की भावना का उल्लघन करने वाला प्रथम भिक्खु था सुदिन। उसी के कारण वुद्ध को पचशीलो का निर्धारण करना पड़ा। प्रवृज्या प्राप्त करने से पूर्व सुदिन विवाहित था और वैशाली के पास कलद गाव का निवासी था। उसने जब बुद्ध की देशना सुनी तो प्रवृज्या ग्रहण कर ली। कुछ दिनो वाद उसे अपने गाव जाने का अवसर मिला क्योकि परिवारजनो ने उसे भोजन के लिए आमंत्रित किया था। उसके परिवार वालो ने उसे गृहस्थ जीवन मे लौट आने और अपना कारोबार सभालने में मदद करने के लिए कहा जिसे उसने अस्वीकार कर दिया। उसके माता-पिता ने कहा कि तुम परिवार की इकलौती सतान हो और कोई व्यापार का उत्तराधिकारी नहीं है और परिवार की सपदा किसी और के हाथो मे पड़ेगी। सुदिन के दृढ-निश्चय को देखकर उसकी मा ने कहा कि कम-से-कम हमे एक वारिस तो दे दो। मा के अनुरोध और किसी शील के मार्ग-निर्देश के अभाव मे

वह अपनी पूर्व पत्नी से मिलने को सहमत हो गया। महावन मे वह पत्नी के साथ रहा जिससे गर्भवती होने पर उसका पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम वीजक रखा गया। सुदिन के मित्र उसे उपालभ देते हुए, 'बीज पिता' कहते। इससे सघ की प्रतिष्ठा को आघात पहुचा। वुद्ध ने सभी भिक्खुओ को बुलाकर उनके समक्ष सुदिन के कार्य को अनुचित वताया। इस घटना के कारण औपचारिक रूप से शीलो का निर्धारण हुआ। यह निश्चय किया गया कि जब भी कोई भिक्खु सद्धर्म-मार्ग और मुक्ति-मार्ग की भावना का उल्लघन करेगा तो सम्मेलन आयोजित किया जाएगा। इसके लिए नए 'प्रतिमोक्ष' सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया गया।

इनमे से चार सिद्धान्तो का पालन कठोरता से करना होता था। इनमे से किसी के उल्लंघन करने पर भिक्खु को समुदाय से निष्कासित किया जा सकता है। ये परमावश्यक शील थे—व्यभिचार (अब्रह्मचर्य) से विरति, चोरी से विरति, जीव-हिंसा से विरति और साधना-मार्ग मे जो प्राप्ति नहीं हुई है, उसे प्राप्त करने के दावे से विरति। इन चार शीलो को 'पराजिका' कहा गया।

राहुल ने स्वास्ति को वताया कि वुद्ध उसे पिता के रूप मे बहुत स्नेह करते थे किन्तु उसके प्रति किसी प्रकार की रियायत नहीं बरतते थे। उसे याद था कि एक वार जव वह ग्यारह वर्ष का था तो अपना काम छोड़कर वह भागकर खेलने चला गया और डाट पड़ने के डर से उसने सारिपुत्त से मामूली-सा झूठ वोल दिया। सारिपुत्त असलियत न जान पाए, इसके लिए उसने एक झूठ छिपाने के लिए चार झूठ और बोले। फिर भी सत्य सामने आ ही गया। वुद्ध ने राहुल को सिखाया कि सदैव सत्य कह देना कितना महत्त्वपूर्ण होता है।

उस समय सारिपुत्त वेणुवन के समीप अम्बलतिका उद्यान मे राहुल के साथ रहते थे। एक दिन बुद्ध वहा आए। राहुल उनके लिए कुर्सी लाया और कर-पद प्रक्षालन-पात्र भी सामने रखा। बुद्ध ने जब हाथ-पाव धो लिए तो वुद्ध ने अधिकाश पानी पात्र मे डाल दिया और राहुल से पूछा—"पात्र मे जल अधिक है या कम ?"

राहुल ने कहा—"मेरे पात्र मे थोड़ा-सा ही जल रह गया है।"

बुद्ध ने कहा—"राहुल तुमको समझना चाहिए कि जो व्यक्ति असत्य भाषण करता है, उसका विश्वास इसी प्रकार कम रह जाता है।"

राहुल चुप रहा। उन्होने कर-प्रक्षालन-पात्र उलट दिया और कहा, "जो

राहुल ने बुद्ध के लिए आसंदी निकाली और पैर धुलाने के लिए
कर-प्रक्षालन पात्र ले आया।

व्यक्ति झूठ बोलता ही जाता है, उसका भरोसा इसी प्रकार समाप्त हो जाता है। यदि हम सदैव सत्य नहीं बोलते तो इस पात्र की भाति हम रिक्त हो जाते है। मज़ाक मे भी झूठ का सहारा मत लो। राहुल, अपने कार्यों, विचारो और शब्दो को इसी प्रकार समझो जैसे अपना मुख दर्पण मे देखते हो।"

राहुल की यह आप-बीती सुनकर स्वास्ति सत्य-शुद्ध वचनो के महत्त्व के प्रति अत्यधिक सजग हो गया। उसे याद आया कि दो-एक बार वह भी अपने माता-पिता से झूठ बोला था और एक बार तो सुजाता से भी असत्य बोला। शुक्र है कि उसने बुद्ध के समक्ष कभी असत्य नहीं बोला। वास्तव मे ऐसा लगा जैसे बुद्ध के समक्ष असत्य बोलना सभव ही नहीं है। यदि कोई उनके सामने असत्य बोलेगा भी तो वह तुरत समझ जाएगे। स्वास्ति ने मन मे सकल्प किया, "जो भी मुझे मिलेगा, उससे मै सत्य ही बोलूंगा, चाहे वह छोटा बच्चा ही क्यो न हो। बुद्ध देव ने मेरे लिए जो कुछ किया है, उसका आभार-प्रदर्शन मै इसी प्रकार कर सकूगा। मै सभी शीलो का सहर्ष पालन करूगा।"

प्रति मास दो दिन—अमावस्या और पूर्णिमा को सभी भिक्खु एकत्र होकर शीलो का सामूहिक पाठ करते थे। प्रत्येक शील के पाठ के बाद पूछा जाता कि क्या किसी भिक्खु ने इसका उल्लघन किया है। यदि कोई नहीं बोलता तो आगामी शील का पाठ होता था। यदि किसी ने किसी शील का उल्लघन किया हो तो उसे सघ के समक्ष दोष-स्वीकार करना पड़ता। 'चार पराजिकाओ' के अतिरिक्त अन्य शीलो के उल्लघन को सघ के समक्ष दोष-स्वीकृति के पश्चात् क्षम्य मान लिया जाता था।

अनेक बार स्वास्ति उस दल मे भिक्षाटन के लिए जाता जिसमे बुद्ध के साथ सारिपुत्त और राहुल भी होते। उस बार का वर्षा-प्रवास राजगृह के दक्षिण मे स्थित इकानाल के समीपस्थ पर्वत के शिखर पर किया गया। एक दिन अपराह्न मे बुद्ध इकानाल के धान के खेतो से गुजर रहे थे, उन्हे उच्च वर्ण के एक धनी किसान भारद्वाज ने रोक लिया। उसके पास हजारो एकड़ जमीन थी। उन दिनो खेतो मे हल चल रहे थे और वह खेतो पर काम करने वाले सैकड़ो किसानो के काम की देखभाल कर रहा था। जब बुद्ध उसके पास से गुजरे तो वह उनके सामने खड़ा हो गया और निंदात्मक स्वर मे कहा, "हम किसान है। हम अपने खाने के लिए खेत जोतते, बीज बोते, खाद डालते, खेतो की देख-भाल करते है और फसल काटते हैं। तुम कुछ नही करते। तुम उगाते नही हो, केवल खाते हो। तुम लोग ठलुआ हो।"

बुद्ध ने कहा, "लेकिन हम भी हल जोतते, बीज बोते, खाद देते, फसल की देख-भाल करते और फसल काटते हैं।"

"तब तुम्हारे हल कहा हैं, भैंसे कहा है और बीज कहा है ? तुम किस फसल की देख-भाल करते हो और क्या फसल काटते हो ?"

बुद्ध ने कहा कि हम सच्चे हृदय की धरती मे विश्वास का बीज बोते हैं। हमारा हल है मानसिक चेतनावस्था और हमारे भैंसे हैं—परिश्रमपूर्वक साधना। हमारी फसल है—प्रेम और सौहार्द्र। मान्यवर! विश्वास, सौहार्द्र और प्रेम के बिना जीवन, दुःख की बजर भूमि के अलावा क्या रहेगा ?"

भारद्वाज बुद्ध के इन वचनो से असाधारण रूप से प्रभावित हुआ। उसने अपने नौकर से खीर लाने के लिए कहा किन्तु बुद्ध ने यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि "मैंने ये बाते आपसे इसलिए नहीं कही थी कि इसके लिए आप मुझे भोजन दे। यदि आप भोजन-दान करना चाहते हैं तो किसी अन्य अवसर पर कीजिए।"

भू-स्वामी इससे इतना प्रभावित हुआ कि वह बुद्ध के समक्ष प्रणत हुआ और उपासक के रूप मे प्रव्रज्या दिए जाने का अनुग्रह करने लगा। स्वास्ति ने यह सब कुछ अपने सामने घटित होते देखा था और वह समझ गया कि बुद्ध के समीप रहकर वह कितना कुछ सीख सकता है। सघ के हजारो भिक्खुओ को बुद्ध के निकट रहने का सौभाग्य कहा मिलता है, जो उसे प्राप्त था।

वर्षा-प्रवास के बाद बुद्ध उत्तर-पश्चिम की ओर सद्धर्म के प्रचार हेतु चले गए। एक दिन सवेरे भिक्षाटन के समय राहुल सचेतावस्था मे भटक गया। यद्यपि वह चल तो पक्ति मे रहा था किन्तु उसका मन भटक रहा था। अपने आगे चल रहे बुद्ध को देखकर वह सोचने लगा कि यदि बुद्ध ने अध्यात्म का पथ वरण न किया होता, यदि वह शक्तिशाली सम्राट बन गए होते तो वह क्या होते और मै क्या होता ? इन विचारो के कारण श्वसन-क्रिया और अपने पद-सचलन पर ध्यान केन्द्रित नहीं रख सका। यद्यपि बुद्ध राहुल को देख नहीं रहे थे, किन्तु वह समझ गए कि उनका पुत्र सचेतन अवस्था मे नहीं चल रहा। बुद्ध रुक गए और मुड़कर देखा। भिक्खु भी रुक गए थे। बुद्ध ने पूछा कि "क्या तुम अपने श्वसन-क्रिया पर ध्यान कर रहे हो और सचेतन अवस्था मे हो ?"

राहुल ने अपना सिर नीचा कर लिया।

बुद्ध ने कहा—"सचेतन अवस्था मे रहने के लिए तुम्हे अपनी श्वसन-क्रिया

पर ध्यान केन्द्रित रखना चाहिए। भिक्षाटन के समय भी हम ध्यान-साधना कर रहे होते हैं। सभी तत्त्वो एव प्राणी-रचना की अनित्यता और अनात्म अवस्था पर ध्यान करते रहो। ये पाच तत्त्व है-शरीर, भावनाए, सकल्पनाए, भाववोध और चेतना। अपनी श्वसन-क्रिया और विचारो पर ध्यान करो तो तुम्हारे चित्त मे विक्षेप उत्पन्न नहीं होगे।"

वुद्ध फिर घूमकर चलने लगे। उनके शब्दो ने भिक्खुओ को स्मरण करा दिया कि सचेतनावस्था कैसे वनाए रखनी आवश्यक है। उसके बाद कुछ पग चलकर राहुल पक्ति से निकलकर वन मे चला गया और वृक्ष के नीचे अकेला वैठ गया। स्वास्ति उसके पीछे-पीछे चला गया। स्वास्ति को देखकर राहुल ने कहा-"तुम कृपा करके औरो के साथ भिक्षाटन के लिए जाओ। अभी मेरा मन भिक्षाटन करने को नही कर रहा। समस्त सघ समुदाय के समक्ष वुद्ध ने मेरी त्रुटियो का मार्जन किया। मुझे इतनी लज्जा आ रही है कि मैं यहीं अकेले वैठकर ध्यान-साधना करूगा।" जब स्वास्ति ने देखा कि वह अपने मित्र की सहायता नही कर पा रहा तो वह जाकर अन्य भिक्खुओ के साथ हो लिया।

विहार लौटते समय मान्य सारिपुत्त और स्वास्ति वन मे रुके जिससे वे राहुल को वापस ले जा सके। विहार मे स्वास्ति ने अपना आधा भोजन राहुल को दे दिया। जव वे भोजन कर चुके तो सारिपुत्त ने राहुल से कहा कि वुद्ध उससे मिलना चाहते है। स्वास्ति को उसके साथ आने की अनुमति दे दी गई थी।

वुद्ध समझ चुके थे कि राहुल इतना परिपक्व हो चुका है कि उसे कुछ उच्च शिक्षाए दी जा सके। उन्होने कहा, "राहुल पृथ्वी से शिक्षा ग्रहण करो। चाहे लोग पृथ्वी पर सुगधित पुष्प विछाए, चाहे इत्र डाले या ताजा दूध डाले, और चाहे उस पर दुर्गंध युक्त विष्टा करे, मूत्र-विसर्जन करे, रक्त-मवाद डाले या थूक दे, पृथ्वी इन सबको समान भाव से स्वीकार कर लेती है, न उसे अच्छे की इच्छा और न वुरे का तिरस्कार। जब सुखद या दुखद विचार आये तो उन्हे अपने पर हावी मत होने दो। अपने को विचारो का दास मत बनने दो।

"जल से भी शिक्षा ग्रहण करो। जब लोग अपनी गदी वस्तुए जल से धोते हैं, तो जल को न दुख होता है, न अमर्ष। इसी प्रकार अग्नि से शिक्षा लो कि वह बिना किसी भेद-भाव के सबको जला डालती है। अशुद्ध वस्तुओ को जलाने मे भी उसे लज्जा नहीं आती। वायु से शिक्षा लो जो सब प्रकार की गध को अपने साथ ले जाती है-चाहे वह सुगध हो या दुर्गंध।

'राहुल, क्रोध पर विजय पाने के लिए प्रेमपूर्ण कृपाभाव अपनाओ। प्रेममय कृपालुता मे ही यह शक्ति है कि वह किसी प्रति-फल की अपेक्षा किए विना औरो को सुख पहुचा सके। क्रूरता को दयालुता से जीतो। फल की अपेक्षा से रहित दयालुता से औरो के कष्ट दूर करना सभव होता है। घृणा को सहानुभूतिपूर्ण आनद से जीता जा सकता। सहानुभूतिपूर्ण आनद तभी जागृत होता है, जव अन्य लोगो की खुशियो पर मन आनद से भर उठे और अन्य लोगो के कल्याण और सफलता की कामना से हृदय भर उठे। विद्वेष को जीतने के लिए ममत्व-त्याग का अभ्यास करो। ममत्व-भाव से ही सभी बातो को समानता और उन्मुक्त दृष्टि से देख सकते हो। एक की विद्यमानता दूसरे की विद्यमानता से तथा दूसरे की विद्यमानता प्रथम की विद्यमानता से सभव है (दोनो के वीच कार्य-कारण सबध है)। मैं और अन्य पृथक्-पृथक् नहीं है। द्वितीय वस्तु के पीछे भागने के लिए अन्य प्रथम वस्तु को अस्वीकार मत करो।

"राहुल प्रेमपूर्ण कृपालुता, दया-करुणा, सहानुभूतिपूर्ण आनंद और ममत्वहीनता चित्त की सुन्दर एव विशालता युक्त अवस्थाए हैं। मै इन्हे चार अनिर्वचनी आनद मानता हू। इनकी साधना करो तो तुम प्राणवत्ता के आनददायी स्रोत तथा औरो की प्रसन्नता के कारक बन सकोगे।"

"राहुल, अनित्यता पर ध्यान केन्द्रित करो जिससे तुम आत्म-भाव का उच्छेदन कर सको और अनात्म की स्थिति प्राप्त कर सको। शरीर के जन्म, विकास और मृत्यु पर ध्यान केन्द्रित करो जिससे स्वय को इच्छाओ से मुक्त कर सको। प्राणायाम करो। श्वसन-क्रिया मे सचेतनता लाने से तुम्हे महान आनद प्राप्त होगा।"

राहुल के समीप वैठकर वुद्ध की देशना सुनकर स्वास्ति वहुत प्रसन्न था। यद्यपि 'धर्म-चक्र प्रवर्त्तन सूत्र' और अनात्म अवस्था के सूत्र उसने कठस्थ कर रखे थे किन्तु उसने धर्म का यह सूक्ष्म आनद इतनी गहनता से कभी अनुभव नहीं किया था, जितना आज किया था। सभवत इसका कारण यही हो कि उसने अन्य सूत्र स्वय वुद्ध के श्रीमुख से नहीं सुने थे। उनके मुख मे उसने जो पहला सूत्र सुना था, वह था 'भैसो की देख-भाल' का सूत्र। किन्तु उस समय उसकी वुद्धि इतनी परिपक्व नहीं हुई थी कि उसके गूढ़ार्थ को हृदयगम कर सके। उसने मन मे निश्चय किया कि नव-प्राप्त अन्तर्दृष्टि के साथ सभी सूत्रो का खाली समय मे पाठ किया करेगा।

उस दिन वुद्ध ने दोनो युवको को प्राणायाम की अनेक विधिया भी सिखाई।

यद्यपि वे पहले भी इनकी शिक्षा प्राप्त कर चुके थे किन्तु उस दिन यह सब स्वय बुद्ध से सीखा। उन्होने कहा कि प्राणायाम का पहला फल तो यह होता है कि चित्त के विभ्रम और विकल्प एव विस्मरणीयता समाप्त हो जाती है।

'प्राणायाम की पूरक (श्वास खीचते समय) क्रिया मे आप जानते है कि श्वास भीतर खींच रहे है और रेचक अवस्था मे जानते हैं कि श्वास छोड़ रहे हैं। श्वसन-क्रिया के इस अभ्यास के समय अपना चित्त श्वास पर केन्द्रित करो। इससे निरर्थक और विशृखल विचार आने वद हो जाएगे और तुम्हारा चित्त सचेतनावस्था मे आ जाएगा। इस सचेतनावस्था मे आप किन्हीं अन्य विचारो के कारण भटकोगे नहीं। एक श्वास से ही आप आत्म-जागृति प्राप्त कर सकते हो। वह जागृत अवस्था ही सवुद्ध प्रकृति है जिसे प्राप्त करने मे प्रत्येक प्राणी सक्षम है।

अल्पपूरक श्वास लेते ममय आप जानते हैं कि अल्प श्वास खीच रहे हैं और दीर्घ रेचक श्वास से जानते है कि श्वास धीरे-धीरे देर मे निकाल रहे है। प्रत्येक श्वास के प्रति जागरूक रहो। सजगतापूर्ण प्राणायाम से आपका ध्यान केन्द्रित होने लगेगा। चित्त के उस केन्द्रीकरण से आप अपने शरीर, अपनी भावनाओ, चित्त और चित्त के आश्रयो को गहन दृष्टि से देख सकोगे जिन्हे 'सर्व धर्म' कहते हैं।

वुद्ध ने उनको मनोयोग पूर्वक शिक्षा दी थी। उनके शब्द तो सरल थे किन्तु उनके निगूढ़ार्थ बहुत गहन थे। स्वास्ति को विश्वास था कि बुद्ध के साथ इस विशेप शिक्षा-सत्र के माध्यम से प्राणायाम द्वारा श्वसन-क्रिया को अधिक ध्यान से समझ सकेगा जिससे साधना-अभ्यास मे तेजी से प्रगति करने मे उसको सक्षमता प्राप्त होगी। वुद्ध के समक्ष प्रणत होने के बाद, राहुल और स्वास्ति साथ-साथ सरोवर तक गए। वुद्ध ने उनको आज जो शिक्षाए दी थीं, उनको भली प्रकार स्मरण करने के लिए उन्होने एक-दूसरे के समक्ष उन्हे दोहराया।

अध्याय पचास

मुट्ठी भर चोकर

बुद्ध ने आगामी वर्षा-प्रवास बैजनारा मे पाच सौ भिक्खुओ के साथ विताया। सारिपुत्त और मौद्गल्यायन सहयोगी के रूप मे साथ थे। वर्षा-प्रवास के दौरान उस इलाके मे सूखा पड़ा और भिक्खुओ के लिए गर्मी असहनीय हो उठी। बुद्ध अपना समय नीम वृक्ष के नीचे बिताते। वह वहीं खाते, वहीं धर्म-देशना करते, ध्यान-साधना करते और वहीं सोते भी थे।

वर्षा-प्रवास का तीसरा मास आरभ होते-होते भिक्खुओ को ज्वर आदि रोग होने लगे और भिक्षाटन मे भिक्षा भी कम मिलने लगी। सूखे के कारण खाद्य पदार्थ मिलने दुर्लभ होते गए, यहा तक कि सरकार का सुरक्षित भडार भी खाली हो चला। बहुत से भिक्खु खाली भिक्षा-पात्र लिए वापस आने लगे। स्वय बुद्ध को भी भिक्षा नहीं मिलती और वह भूख मिटाने के लिए पानी पी लिया करते। भिक्खु क्षीण-काय एव दुर्बल होने लगे। मौद्गल्यायन ने सुझाव दिया कि हम लोग वर्षा-प्रवास के शेष समय के लिए उत्तर कुरु चले चले, जहा भोजन प्राप्त करना सरल होगा। किन्तु बुद्ध ने यह कहकर उनका सुझाव अस्वीकार कर दिया, "मौद्गल्यायन हम ही अकेले तो खाद्य सकट से नहीं गुजर रहे। चन्द धनी लोगो को छोड़कर शेष सभी लोग भी तो भूख से पीड़ित हैं। हमे इस समय लोगो को छोड़कर नहीं जाना चाहिए। हमे अपना पूरा वर्षा-प्रवास यहीं व्यतीत करना है।"

श्रेष्ठि अग्निदत्त ने बुद्ध और भिक्खुओ को बैजनारा मे प्रवास करने के लिए आमत्रित किया था। वह व्यापार के सिलसिले मे नगर से बाहर था और उसे यहा की स्थितियो का कोई ज्ञान नहीं था।

एक दिन मौद्गल्यायन ने विहार के समीप हरे वृक्षो और विहार के आस-पास की जमीन पर घास उगी देखी तो उन्होने कहा, "गुरुदेव, यहा

के वृक्ष हरे-भरे है जिसका कारण वहा की मिट्टी की उर्वरता है। हम वृक्षो के नीचे की मिट्टी खोदकर पानी मिलाकर पकाए तो उससे प्राप्त पोषक तत्त्व भिक्खुओ को दे सकते हैं।"

बुद्ध ने कहा–"ऐसा करना उचित नहीं होगा। दगश्री पर्वत पर जब मैं शरीर-पीड़न तप कर रहा था तो मैने भी ऐसा प्रयास किया था किन्तु पाया था कि इससे पोषक तत्त्व प्राप्त नहीं होते। मिट्टी के नीचे सूर्य के ताप से रक्षा पाने के लिए वहुत से जीव होते है। यदि हम मिट्टी खोदेगे तो इनमे से वहुत से जीव मर जाएगे और पौधे भी सूख जाएगे।" मौद्गल्यायन इसके आगे क्या कहते ?

विहार की यह परंपरा थी कि भिक्खुओ को जो भिक्षा मिलती थी, उसका एक भाग विहार मे रखे वड़े पात्र मे रख दिया जाता, जिससे उन भिक्खुओ को भोजन दिया जा सके, जिन्हे कोई भिक्षा न मिली हो। स्वास्ति ने देखा कि वह सग्रह-पात्र भी खाली पड़ा है। उसमे न तो एक भी दाना है और न एक भी चपाती। राहुल ने स्वास्ति से अकेले मे कहा, 'यद्यपि भिक्खुओ को पर्याप्त भिक्षा नहीं मिलती, फिर भी वरिष्ठ भिक्खुओ को तो भोजन पहले दे दिया जाता है किन्तु युवा भिक्खुओ को या तो वहुत थोड़ा भोजन मिलता है या मिलता ही नहीं है।' स्वास्ति ने भी यही स्थिति स्वय देखी थी। उसने कहा कि "जिन दिनो मुझे थोड़ा-सा भोजन मिलता है तो मुझे भूख लगी रहती है। क्या तुम्हारे साथ भी यही होता है ?"

राहुल ने सिर हिलाकर हामी भरी। भूखा होने के कारण नींद भी नहीं आती।

भिक्षाटन से लौटकर मान्य आनद ने तिपाहीनुमा चूल्हा जलाना आरभ किया। उन्होने लकड़िया जमा करके आग जलानी शुरू की। स्वास्ति को इसमे कुशलता हासिल थी, अत. उसने उनकी मदद करके आग जला दी। आनंद ने अपना भिक्षा-पात्र उठाकर आग पर रखे जल-युक्त पात्र मे बुरादे जैसा कुछ डाला। उन्होने कहा कि "यह चोकर है। इसे पकाकर बुद्ध देव को दे देगे।"

स्वास्ति उस चोकर को दो लकड़ियो से हिलाता रहा। इस बीच आनद ने वताया कि घोड़ो का एक व्यापारी पाच सौ घोड़े लेकर आया है। उसने जव भिक्खुओ की परेशानी सुनी तो आनद से कहा कि जब भी किसी भिक्खु को कुछ भी भिक्षा न मिले तो हमारी घुडसाल मे आ जाए वह घोड़ों को जो चोकर खिलाता है, उसमे से हर भिक्खु को एक मुट्ठी चोकर दे देगा।

उस दिन उसने दो मुट्ठी चोकर आनद को दे दिया था–एक उनके अपने लिए और दूसरी मुट्ठी बुद्ध देव के लिए। आनद ने वचन दिया कि वह अन्य भिक्खुओ को भी व्यापारी के इस उदार प्रस्ताव की सूचना दे देगे।

शीघ्र ही चोकर पक गया था। आनद ने उसे भिक्षा-पात्र मे डाला और स्वास्ति के साथ नीम वृक्ष की ओर चल पड़े। आनद ने वह भोजन बुद्ध को दे दिया। बुद्ध ने स्वास्ति से पूछा कि क्या उसे आज भिक्षा मे कुछ मिला। स्वास्ति ने भिक्षा मे मिली शकरकद बुद्ध को दिखा दी। उन्होने सबको साथ-साथ खाने को आमन्त्रित किया। उन्होने अपना पात्र सादर ऊपर उठाया। स्वास्ति ने सजगता से शकरकद हाथ मे ली। जब उसने देखा कि बुद्ध ने चोकर से वना भोजन साभार ग्रहण किया तो स्वास्ति को लगा कि वह रो पड़े।

उस दिन धर्म-देशना के उपरान्त आनद ने सघ को अश्व-व्यापारी के प्रस्ताव के विषय मे वताया और कहा कि जव भिक्खुओ को कुछ भी भिक्षा न मिले, तभी उस व्यापारी के पास जाए क्योकि वह भूसी घोड़ो के खिलाने के लिए है और मैं नहीं चाहता कि हमारे कारण अश्व भूखे रहे।

उस रात चादनी मे सारिपुत्त बुद्ध के पास गए जो नीम के वृक्ष के नीचे वैठे थे। उन्होने कहा, "सद्धर्म मार्ग अद्भुत है। जो कोई इसे सुने-समझे और अभ्यास करे, उसके जीवन को परिवर्तित करने की क्षमता इसमे है। गुरुदेव, जब आप नहीं रहेगे तो सद्धर्म के उपदेश ज़ारी रखना हम कैसे सुनिश्चित कर सकते है ?"

"सारिपुत्त, यदि भिक्खु सूत्रो का गूढार्थ समझ ले और उनके अनुसार आचरण करे, यदि वे निष्ठा के साथ शीलों का पालन करे तो सद्धर्म मार्ग सदियो तक चलता रह सकता है।"

गुरुदेव, वहुत से भिक्खु परिश्रमपूर्वक उन सूत्रो को कठस्थ कर रहे हैं और उनका पाठ भी करते हैं। यदि आने वाली पीढ़ियो के भिक्खु उनको कठस्थ करने और पाठ करना जारी रखे तो आपकी प्रेमपूर्ण कृपा और आपकी अन्तर्दृष्टि निश्चय ही भविष्य मे वहुत समय तक अमर रहेगी।

"सारिपुत्त, सूत्रो को एक से दूसरे तक पहुचाना ही पर्याप्त न होगा। उन सूत्रो मे जो वताया गया है, उनके निदिध्यासन की आवश्यकता है। इनमे शीलो पर आचरण करना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके विना सद्धर्म अधिक समय तक नहीं चल सकता। शीलो के विना सद्धर्म शीघ्र ही धूमिल पड जाएगा।"

"क्या ऐसा कोई मार्ग है, जिससे शीलो को ऐसा रूप दिया जा सके कि उन्हे हजारो वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सके।"

"यह अभी सभव नहीं है सारिपुत्त। सूत्रो को परिष्कृत रूप देने का काम एक दिन मे नहीं हो सकता और न इसे कोई एक व्यक्ति कर सकता है। संघ के आरंभिक वर्षो मे हमे किसी शील की आवश्यकता नहीं पड़ी। धीरे-धीरे भिक्खु वधुओ की कमियो और त्रुटियो के कारण हमे शीलो का निर्धारण करना पडा। इस समय एक सौ बीस शील एव अनुशासनात्मक नियम हैं। समय बीतने के साथ इनकी सख्या और भी बढ़ सकती है। सारिपुत्त, अभी शील और नियम पूरे नहीं हुए है। मैं समझता हू कि इनकी सख्या बढ़कर दो सौ तक या इससे भी अधिक हो सकती है।"

वर्षा-प्रवास का अतिम दिन आ गया था। श्रेष्ठि अग्निदत्त अपनी विदेश यात्रा से वापस आ गया था और उसे यह जानकर बहुत दुख हुआ कि भिक्खुओ को भूख के कष्ट सहने पडे। उसे बहुत लज्जा अनुभव हुई और उसने अपने निवास पर समस्त सघ के भोजन की व्यवस्था की। उसने प्रत्येक भिक्खु को नया चीवर भेट किया। प्रवास की अतिम देशना बुद्ध दे चुके तो भिक्खु समुदाय दक्षिण की ओर रवाना हो गया।

यह बहुत सुहावनी यात्रा थी। भिक्खु आराम-आराम से चल रहे थे। वे प्रातः भिक्षाटन करते और रात को विश्राम करते। भोजन के बाद वन मे विश्राम करके वे यात्रा करते। किसी-किसी ग्राम मे वे कई दिनो के लिए भी रुक जाते क्योकि ग्रामवासी धर्म-शिक्षा प्राप्त करके विशेष रूप से प्रसन्न होते थे। रात को भिक्खु ध्यान-साधना और शयन के पूर्व सूत्रों का पाठ करते थे।

एक दिन अपराह्न मे स्वास्ति ने वन मे चरवाहो का समूह देखा जो भैसो को वापस घर ले जा रहे थे। उसने उन्हे रोका और उनसे बातचीत की जिससे उसे अपनी किशोरावस्था के दिन याद आ गए। अकस्मात् उसके मन मे आया कि काश । वह अपने परिवार वालो के साथ होता। उसे रूपक और बाला की, विशेषतः भीमा की याद आई। वह समझ नही पा रहा था कि जब गृह-त्याग करके वह भिक्खु बन चुका है, तो क्या उसे अपने परिवारजनो की याद करनी भी चाहिए या नहीं। यह सच है कि राहुल ने कहा था कि उसे भी अपने परिवारजनो की बड़ी याद आती है।

उस समय स्वास्ति की आयु बाईस वर्ष की थी इसलिए उसे युवक जनो का साथ अच्छा लगता था। राहुल के साथ बिताया समय उसे सबसे

अधिक आनददायक लगता। वे अक्सर आपस मे अपने मन की बाते खुलकर कर लिया करते थे। स्वास्ति ने अपने चरवाहे-जीवन की बातें राहुल को वताईं। राहुल को कभी भैंसे की पीठ पर बैठने का अवसर नहीं मिला था। उसे विश्वास ही नहीं होता कि भैसा जैसा बडा पशु इतना सीधा हो सकता है, जितना स्वास्ति बताता है। स्वास्ति ने उसे विश्वास दिलाया कि भैंसा वहुत सीधा होता है और वह अगणित बार उसकी पीठ पर वैठा ही नहीं, लेटा तक है जवकि वह भैंसों को चराकर घर लौटता था। स्वास्ति ने यह भी बताया कि वह अन्य चरवाहो के साथ क्या-क्या खेल खेलता था। राहुल को ये सब सुनकर बड़ा मजा आता। राजमहल मे पले राहुल को इस जीवन के विषय मे कुछ भी ज्ञान नहीं था। राहुल की इच्छा थी कि वह भी किसी दिन भैंसे की पीठ पर वैठ सके और स्वास्ति ने आश्वसन दिया कि वह किसी-न-किसी प्रकार इसकी व्यवस्था कर देगा।

स्वास्ति को समझ मे नहीं आ रहा था कि वह इसकी व्यवस्था कैसे करे। दोनो ही प्रवृज्या प्राप्त भिक्खु थे। उसने निश्चय किया कि जब वे उसके घर के पास से गुजरेगे तो वह वुद्ध से आज्ञा लेकर अपने परिवारजनो से मिलने जाएगा और राहुल को भी साथ ले जाएगा। उस समय जव कोई आस-पास नहीं होगा तो वह रूपक से कहकर राहुल को भैंसे की पीठ पर चड्डी करवा देगा। राहुल नैरजना नदी के किनारे भैंस की सवारी करेगा और वह स्वय भी भिक्खु के वस्त्र उतारकर पहले दिनो के समान भैसे की सवारी कर लेगा।

अगले वर्ष वुद्ध ने चलिका पर्वत पर वर्षा-प्रवास किया। वुद्ध द्वारा मंवोधि-प्राप्ति के वाद यह उनका तेरहवा प्रवास था। बुद्ध के सहायक के रूप मे मेघीय उनके साथ रहता था। एक दिन मेघीय ने वुद्ध से कहा कि जव वह वन मे अकेला होता है तो इच्छाओ और वासनाओ के विचार उसके चित्त मे विक्षेप उत्पन्न करते है। वह इसलिए चिन्तित था कि बुद्ध भिक्खुओ को प्रेरित करते थे कि अकेले वन मे ध्यान-साधना करो किन्तु जव भी वह एकान्त मे ध्यान करता तो मानसिक विक्षेप आने लगते।

वुद्ध ने कहा कि एकान्त साधना का अर्थ मित्रो की सहायता के विना रहना नहीं है। और, लोगो के साथ गप्पे लगाना अथवा समय नष्ट करना आध्यात्मिक साधना की दृष्टि से लाभकर नहीं होता। अपने साधना-अभ्यास मे मित्रो की सहायता लेना वहुत महत्त्वपूर्ण है। भिक्खुओ को इसीलिए सघ मे रखा जाता है जिससे वे एक-दूसरे की सहायता कर सके और प्रेरणा

दे सके। 'सघं शरणं गच्छामि' का व्रत लेने का सच्चा अर्थ यही है।

वुद्ध ने उससे कहा कि भिक्खु को पाच वातो की आवश्यकता होती है। इनमे से पहली है—सौहार्द्र तथा सदाशयता वाले मित्र, जो उसके साथ सद्धर्म के मार्ग के सहभागी है। दूसरी वात, शीलो का पालन, जिससे भिक्खु सचेतनावस्था वनाए रखे। तीसरी वात, धर्म-शिक्षाओ के अध्ययन के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त करना। चौथी वात है, परिश्रमपूर्वक साधना करना और पाचवीं वात है प्रज्ञा। अंतिम चार वाते पहली वात से जुड़ी भी है और इस पर आधारित भी हैं कि वह मित्रो के साथ साधना करे।

"मैत्रीय, मरण, करुणा, अनित्यता और श्वसन-क्रिया के प्रति पूर्ण सचेतनावस्था मे रहने की धारणा पर ध्यान करने का अभ्यास करो।

"इच्छाओ पर विजय पाने के लिए मृत शरीर, शव के विक्षत होने-प्राणान्त से अस्थियो के राख होने-तक की नौ अवस्थाओ को ध्यान मे लाओ।

"क्रोध और घृणा पर विजय प्राप्त करने के लिए करुणा की धारणा पर ध्यान करो। इससे क्रोध और घृणा के कारणो पर तुम्हारे अपने चित्त मे और क्रोध एव घृणा के पात्र के चित्त मे जागृति आएगी।

"ऐषणाओ पर विजय पाने के लिए अनित्यता की धारणा मन मे लाकर जन्म से मृत्यु तक की सभी वातो पर ध्यान करो।

"मायाजन्य विक्षेपो से उवरने के लिए श्वसन-क्रिया के प्रति पूर्ण सचेतनावस्था मे ध्यान करो।

"यदि तुम इन चार धारणाओ को आधार वनाकर पूर्ण रूप से नियमित ध्यान करोगे तो तुम आत्म-मुक्ति और अर्हत अवस्था प्राप्त कर सकोगे।"

अध्याय इक्यावन

अन्तर्दृष्टि का कोष

ते रहवां वर्षा-प्रवास समाप्त होने पर बुद्ध श्रावस्ती लौट गए। स्वास्ति और राहुल भी साथ थे। स्वास्ति पहली बार जेतवन विहार मे आया था। यहा का वातावरण कितना सुदर और साधना-अभ्यास के लिए आमंत्रित करने वाला है, यह देखकर स्वास्ति गद्गद हो गया। जेत वन शीतल, सुखदायक और मैत्रीपूर्ण स्थल था। ऐसे मनोरम वातावरण मे वह अपने साधना-अभ्यास मे अच्छी प्रगति कर सकेगा। अव उसे यह समझ आने लगा था कि बुद्ध और धर्म के वाद सघ की क्या महत्ता है। सघ सद्धर्म मार्ग का साधना-अभ्यास करने वाले लोगो का समुदाय है। इससे साधक को सहायता और मार्ग-निर्देश प्राप्त होता है। इसलिए 'सघ शरण गच्छामि' का व्रत लेना आवश्यक है।

राहुल की आयु वीस वर्ष की हो गई थी और सारिपुत्त ने राहुल को प्रवृज्या दिलाई। इस पर समस्त भिक्खु समुदाय ने हर्ष व्यक्त किया। प्रवृज्या देने से पूर्व सारिपुत्त ने राहुल को कई दिनो तक विशेष शिक्षाए दी थीं। इन दिनो स्वास्ति भी राहुल के साथ ही था इसलिए सारिपुत्त की शिक्षाओ का लाभ उसने भी उठाया।

प्रवृज्या के पश्चात् बुद्ध ने भी राहुल को धारणा की विभिन्न पद्धतियो का ज्ञान कराने के लिए समय दिया। राहुल के साथ स्वास्ति भी था। बुद्ध ने छ. इन्द्रियो-"आख, कान, नाक, जीभ, शरीर और मन, इन इन्द्रियो के विषयो ध्वनि, गध, स्वाद, शरीर और मन के कर्मों तथा छहो इद्रिय-चेतनाओ—नेत्र चेतना, कर्ण चेतना, नासिक चेतना, स्वाद चेतना, शरीर चेतना और मनः चेतना पर किस प्रकार धारणा-ध्यान करना है, यह शिक्षा दी। बुद्ध ने यह भी वताया कि इन अठारह धातुओ की अनित्य प्रकृति पर किस प्रकार धारणा करनी है। ज्ञानेन्द्रियो और इनके विपयो के मध्य सपर्क होने पर ही भाव-वोध का

जन्म होता है। ज्ञानेन्द्रियो के विषय अनित्य हैं और अपनी विद्यमानता के लिए ये एक-दूसरे पर अवलम्बित हैं। इस प्रकार ये सभी सर्वथा अनित्य और परस्परावलम्बी हैं। यदि साधक इस तत्त्व की अभिज्ञता प्राप्त कर लेता है तो अनात्मता के सत्य का भेदन कर लेता है और जन्म-मृत्यु के विक्षेपो का निवारण करने मे समर्थ होता है।

बुद्ध ने अनात्म-भाव की विस्तार से व्याख्या की और कहा, "शरीर, भावनाओ, अवधारणाओ, भाव-बोध और चेतनता इन पाचो स्कधो मे से कुछ भी नित्य नहीं है और 'आत्मा' जैसा कोई तत्त्व नहीं है। शरीर आत्मा नहीं है और आत्मा अशरीरी है। शरीर मे आत्मा को नहीं खोजा जा सकता और आत्मा मे शरीर की स्थिति नहीं पाई जा सकती।

"आत्मा के सम्बन्ध में तीन प्रकार के विचार है। पहला विचार यह है कि शरीर ही आत्मा है अर्थात् भावनाए, अवधारणाए, भाव-बोध और चेतना (अर्थात् 'स्कध') ही आत्मा है। यह प्रथम विचार ही भ्रामक है। किन्तु जब कोई यह मानता है कि 'स्कध' आत्मा नहीं है या आत्मा स्कधो से स्वतत्र कोई भिन्न तत्त्व है अथवा स्कध आत्मा के वशवर्ती है तो यह विचार दूसरी भ्राति है। इसी प्रकार स्कधो को आत्मा से भिन्न मानना भी भ्रामक है। तीसरा भ्रात विचार यह मानना है कि स्कधो मे आत्मा विद्यमान होती है या आत्मा मे स्कधो की विद्यमानता है। इसका अर्थ है आत्मा और स्कधो की एक-दूसरे मे विद्यमानता स्वीकारना।

"राहुल, अनात्मता पर गहन ध्यान करने का अर्थ है कि स्कधो का ध्यान करना जिससे ज्ञात हो सके कि न तो आत्मा है, न आत्म-सबध और न आत्मा का अन्तर्ग्रंथन। एक बार जब हम तीनो भ्रामक विचारो की वास्तविकता समझ लेते हैं तो हम सभी धर्मों की शून्यता की सत्य प्रकृति से अवगत हो जाते हैं।"

स्वास्ति ने देखा कि जेतवन मे थेर नामक भिक्खु कभी किसी से बोलता ही नहीं था। वह अकेला ही चलता, वह किसी को कष्ट नहीं देता और न किसी शील का उल्लघन करता था। फिर भी, वह शेप भिक्खु समुदाय के साथ सौहार्द्रपूर्वक नहीं रहता था। एक बार स्वास्ति ने उससे बात भी करनी चाही किन्तु वह उत्तर दिए बिना ही चला गया। अन्य भिक्खु तो उसे 'एकान्तवासी' ही कहने लगे थे। स्वास्ति ने प्रायः सुना था कि बुद्ध भिक्खुओ द्वारा निरर्थक बाते न करने, अधिक ध्यान-साधना करने और आत्म-निर्भर होने के लिए प्रेरित करते थे। किन्तु स्वास्ति ने अनुभव किया कि बुद्ध जिस

प्रकार की आत्म-निर्भरता के जीवन की वात करते हैं, उस प्रकार की आत्म-निर्भरता भिक्खु थेर मे नहीं है। इसीलिए स्वास्ति ने इस विषय मे वुद्ध से वात करने का निश्चय किया।

अगले दिन धर्म-देशना के उपरान्त वुद्ध ने थेर को बुलाकर पूछा, "क्या यह सत्य है कि तुम अकेले रहते हो, सभी काम अकेले ही करते हो और अन्य भिक्खुओ के सपर्क मे आने से वचते हो ?"

वरिष्ठ भिक्खु थेर ने उत्तर दिया, "यह सत्य है वोधिसत्व। आप ही हमे कहते हैं कि आत्म-निर्भर वनो और अकेले ही साधना करो।"

वुद्ध ने भिक्खु समुदाय को सवोधित करते हुए कहा, "मैं आपको वताऊगा कि वास्तविक आत्म-निर्भरता क्या है और अकेले रहने का उत्तमतर मार्ग क्या है ? आत्म-निर्भर व्यक्ति वह है, जो सचेतनावस्था मे रहता है। वह जान रहा होता है कि वर्तमान क्षण मे क्या हो रहा है, उसके शरीर, भावनाओ, मन और मन के विषयो मे क्या घटित हो रहा है और वह जानता है कि वर्तमान क्षणो मे सभी तत्त्वो पर कैसे धारणा करनी है। वह न तो अतीत के पीछे भागता है और न स्वय को भविष्य के भ्रम-जाल मे फसाता है क्योंकि अतीत तो व्यतीत हो चुका और भविष्य अभी आया नहीं है। जीवन मे जो कुछ है, वह वर्त्तमान समय ही है जो जीना है। यदि हम वर्तमान को खो देते हैं तो जीवन को खो देते है। यह अकेले जीने का उत्तमतर मार्ग है।

"भिक्खुओ, 'अतीत को खगालने का क्या अर्थ है ? इसका अर्थ है कि आपके विचार इस दिशा मे भटके कि आप अतीत मे क्या थे, उस समय आपके विचार क्या थे, आपकी स्थिति क्या थी और उस समय किस प्रकार के सुखद या दुखद अनुभव आपके रहे। इस प्रकार के विचार आपको अतीत मे उलझा लेते हैं।

"भिक्खुओ, 'भविष्य के भ्रम-जाल' मे पडने का अर्थ है भविष्य के विचारो मे खोना। आप सोचते हैं और भविष्य विषयक आशा भय या चिन्ताए करते हैं। आप अनुमान लगाते हैं कि भविष्य मे आप कैसे होगे, आपकी भावनाएं क्या होंगी और आप सुखी होगे या दुखी। ये सभी विचार आपको भविष्य के भ्रम-जाल मे फसा लेते हैं।

"भिक्खुओ, वर्तमान के क्षणो मे लौटो जिससे जीवन के जीवन्त सपर्क मे आ सको और जीवन को ध्यानपूर्वक जान-समझ सको। यदि जीवन से प्रत्यक्ष सपर्क न करोगे तो आप उसे गहनता से समझ भी न पाओगे। वर्तमान

मे क्या घटित हो रहा है, इस विषय मे इच्छाए या चिन्ताए करोगे तो आप अपनी मानसिक सचेतनता खो दोगे और आप वास्तविक रूप से वर्तमान को जी नहीं रहे होगे।

"भिक्खुओ, वही व्यक्ति वर्तमान क्षणो को वास्तव मे जी पाता है जो भीड़ मे भी एकान्तवासी हो सके। यदि कोई व्यक्ति वन मे भी अकेला बैठा हो और अतीत या भविष्य उसको घेरे हुए हो तो वह वास्तव मे अकेला नहीं होता।"

बुद्ध ने अपनी देशना को सार रूप मे एक गाथा के रूप मे सुनाया–

"अतीत का पीछा न करो।
भविष्य के भ्रम-जाल मे न फसो।
अतीत व्यतीत हो गया।
भविष्य अभी अनागत है।
यहा अभी इस क्षण जीवन
जैसा है, उसी की धारणा करो
साधनाभ्यासी, स्थिरता
और मुक्त-भाव मे जीता है।
कल की प्रतीक्षा की, तो विलम्ब होगा।
मृत्यु अचानक धर दबोचती है
उससे हम क्या सौदा कर सकते है ?
भिक्खुजन उसी का आह्वान करते हैं ?
जो दिन और रात
सचेतनावस्था मे जागृत रहता है
जो जानता है कि
एकान्तवास का उत्तमतर मार्ग क्या है।"

गाथा के पश्चात् बुद्ध ने थेर को धन्यवाद दिया और अपना स्थान ग्रहण करने को कहा। बुद्ध ने थेर की न तो प्रशसा की और न आलोचना किन्तु यह स्पष्ट था कि भिक्खु को अब अधिक स्पष्ट हो गया था कि बुद्ध ने आत्म-निर्भरता और एकान्तवास की जो व्याख्या की थी, उसका भाव क्या था।

उस दिन शाम को जो धर्म-चर्चा हुई, उसमे स्वास्ति ने वरिष्ठ शिष्यो को यह कहते सुना कि प्रातः बुद्ध की देशना कितनी महत्त्वपूर्ण थी। मान्य आनद ने बुद्ध की देशना, शब्दशः उसी स्वराघात के साथ ज्यो की त्यो

दोहरा दी तो स्वस्ति आनंद की स्मरण-शक्ति देखकर अवाक् रह गया। आनंद द्वारा बुद्ध की देशना दोहरा चुकने के बाद महाकात्यायन ने खड़े होकर कहा कि "आज प्रातः की बुद्ध की देशना को औपचारिक रूप से सूत्र बद्ध कर दिया जाए और इसका नाम 'भद्रकर्त्ता सूत्र' और 'एकान्तवास का उत्तमतर सूत्र' रख दिया जाए। यह सूत्र प्रत्येक भिक्षु को कंठस्थ कर लेना चाहिए और इस पर आचरण करना चाहिए।" महाकाश्यप ने उठकर उनके इस सुझाव का समर्थन किया।

अगले दिन प्रातः जब भिक्षु भिक्षाटन के लिए गए तो उन्होंने कुछ बच्चों को धान के प्याल में खेलते देखा। बच्चों ने उसमें एक केकड़ा देखा। एक बच्चे ने उसे पकड़ रखा था। उसने दूसरे हाथ से केकड़े का एक पंजा काट दिया। सभी बच्चों ने खुशी से तालियां बजाईं। इस खुशी से उत्साहित हो, उस बच्चे ने उसका दूसरा पंजा भी काट दिया और फिर एक-एक करके सभी पंजे काट डाले। उसने उस पंजे कटे केकड़े को प्याल में डाल दिया और दूसरे केकड़े को पकड़ लिया।

जब बच्चों ने बुद्ध और भिक्षुओं को आते देखा तो उन्हें नमन किया और दूसरे केकड़े के पंजे काटने को तैयार हुए। बुद्ध ने बच्चों को ऐसा करने से मना किया और कहा, "बच्चो, यदि कोई तुम्हारे हाथ-पांव काट दे तो तुम्हें कष्ट होगा या नहीं ?"

"हां गुरुदेव।" बच्चों का उत्तर था।"

"क्या तुम जानते हो कि केकड़े को भी तुम्हारी ही भांति कष्ट होता है ?" बच्चे चुप रहे। बुद्ध ने अपना कथन जारी रखा, "केकड़ा भी तुम्हारी ही तरह खाता-पीता है। इसके भी माता-पिता और भाई-बहन होते हैं। जब तुम इसे कष्ट देते हो तो पूरे परिवार को कष्ट देते हो। अब सोचो कि तुम यह क्या कर रहे हो ?"

बच्चों ने जो कुछ किया था, उस पर उन्हें दुख हुआ। यह देखकर गांव वाले लोग भी एकत्र हो गए कि बुद्ध और बच्चों में क्या बातचीत हो रही है। ऐसे अवसरों पर बुद्ध करुणा की शिक्षा दिया करते थे।

उन्होंने कहा, "प्रत्येक सजीव प्राणी को सुरक्षा और आत्म-कल्याण की भावना का लाभ उठाने का अधिकार है। हमें जीवन-रक्षा करनी चाहिए और दूसरे प्राणियों को सुख देना चाहिए। सभी प्राणियों को चाहे वह छोटा हो या बड़ा, द्विपद या चतुष्पद हो, जल में तैरने वाला हो या उड़ने वाला हो,

जीने का अधिकार है। हमे दूसरे जीवो को हानि नहीं पहुचानी चाहिए और न मारना चाहिए। हमे जीव-रक्षा करनी चाहिए।

"जिस प्रकार मा अपनी एकमात्र सतान की रक्षा अपने प्राणो को जोखिम मे डालकर करती है, उसी प्रकार उदार होकर हर प्राणी की रक्षा करनी चाहिए। हमे अपने आस-पास, ऊपर या नीचे विद्यमान सभी जीवो के प्रति प्रेम और करुणा का भाव रखना चाहिए। हमे दिन मे या रात मे, खड़े या चलते हुए, वैठते या सोते हुए इस भाव को सदा हृदय मे रखना चाहिए।"

वुद्ध ने कहा कि वच्चो, तुमने जो केकड़ा पकड रखा है, उसे छोड़ दो। इसके वाद उन्होने प्रत्येक व्यक्ति से कहा, "इस प्रकार प्रेम का ध्यान करने से, पहले तो इसके अभ्यासी को ही आनद मिलता है। तुम्हे अच्छी निद्रा आती है और प्रसन्नतापूर्वक जागते हो, रात मे स्वप्न नहीं आते, तुम्हे न दुःख होता है, न चिन्ता, और प्रत्येक व्यक्ति और तुम्हारे आस-पास की हर वस्तु तुम्हारी रक्षा करती है। जिन लोगो के प्रति तुम्हारे मन मे प्रेम और करुणा होती है, उससे तुम्हे आनद प्राप्त होता है और धीरे-धीरे समस्त कष्टो का अन्त हो जाता है।"

स्वास्ति को ज्ञात था कि बुद्ध वच्चो को शिक्षा देने का व्रत लिए हुए हैं, अतः इस कार्य मे सहायक होने की दृष्टि से उसने और राहुल से मिलकर जेतवन मे वच्चो की विशेप कक्षाओ का आयोजन किया। युवा उपासको, विशेषतः सुदत्त के चार वच्चो की सहायता से महीने मे एक बार बच्चो की विशेष कक्षाओ का आयोजन होता था। सुदत्त के पुत्र को शुरू मे तो इन कक्षाओ मे आने का उत्साह नहीं था किन्तु स्वास्ति के वहा उपस्थित होने की खातिर आ जाता था लेकिन धीरे-धीरे उसे इन कक्षाओ मे दिलचस्पी वढ़ने लगी। राजा की पुत्री राजकुमारी वज्री ने इन प्रयासो मे विशेष सहायता की।

एक वार, पूर्णिमा की रात को राजकुमारी ने बच्चो से कहा कि वे बुद्ध को उपहार मे देने के लिए पुष्प लाए। अपने बगीचो और विहार तक आते समय मार्ग से वच्चे फूल तोड़कर लाए। राजकुमारी वज्री अपने राजमहल के सरोवर से कमल-गुच्छ लेकर आई। जब बच्चे बुद्ध की कुटिया के पास पहुचे तो उन्होने पाया कि बुद्ध तो धर्म-कक्ष मे गए हैं और भिक्खुओ को और उपासको को देशना करने की तैयारी कर रहे है। राजकुमारी दबे पाव वच्चो सहित धर्म-कक्ष मे घुसी। सभी व्यक्तियो ने खिसक कर बच्चो को आगे जाने का रास्ता दे दिया। बच्चो ने बुद्ध के सामने रखी मेज पर पुष्प
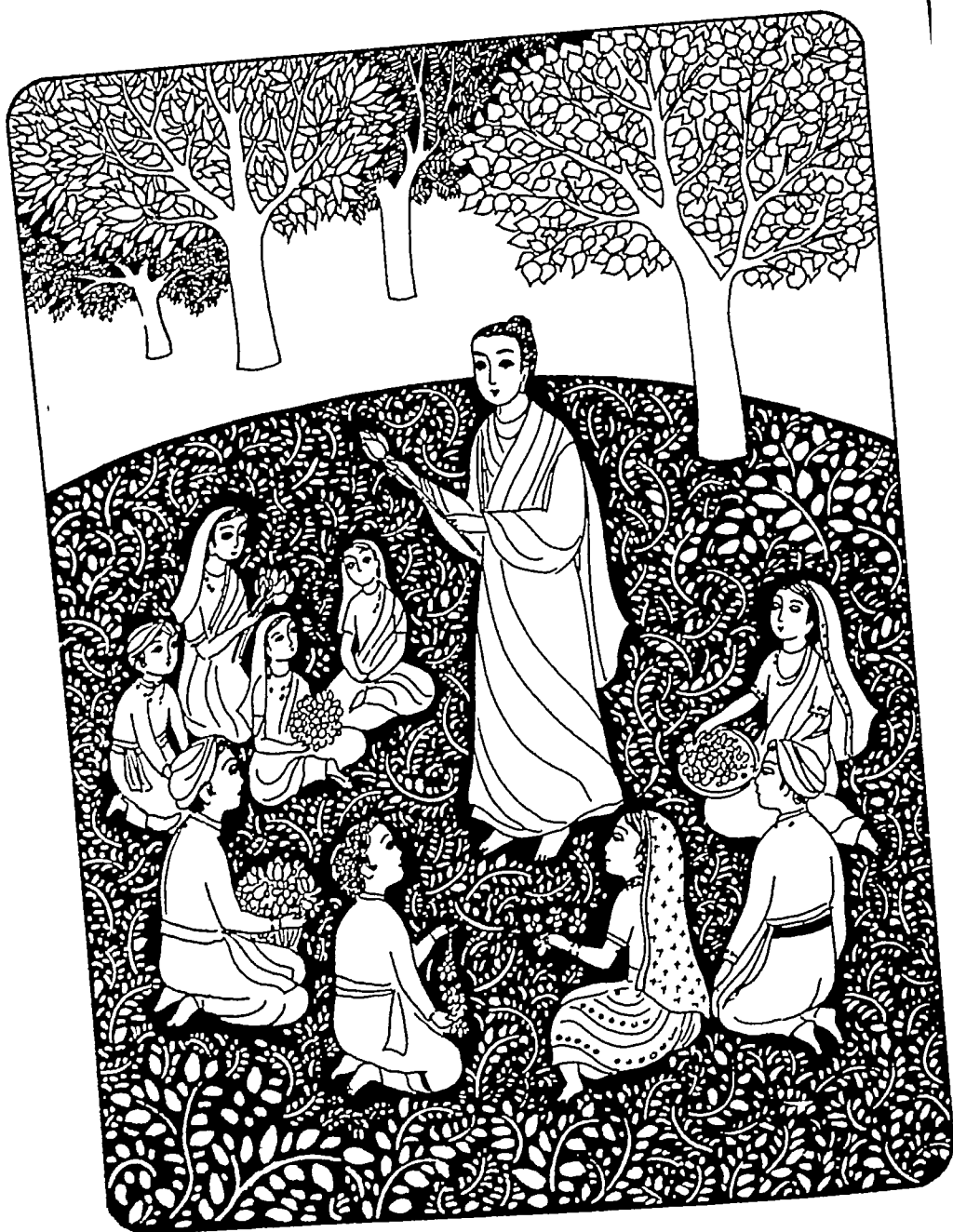
उस दिन बुद्ध की धर्म-देशना अत्यंत विशिष्ट थी

"मित्रो, विचारो मे खो जाना एक ऐसा पक्ष है, जो जीवन के सत्य से साक्षात्कार मे वाधक होता है। यदि तुम उलझन, निराशा, चिन्ता, क्रोध या द्वेप के भावो से भरे रहोगे तो जीवन की समस्त अद्भुतताओ के सत्य का साक्षात्कार करने से वचित ही रहोगे।

"मित्रो, मेरे हाथ मे पकड़ा हुआ कमल आप मे से उन लोगो के लिए एकमात्र सच्ची वास्तविकता थी जो वर्तमान के क्षणो को सचेतनावस्था मे व्यतीत कर रहे थे। यदि आप वर्तमान क्षण को जीवन्त होकर नहीं जी रहे होते हैं तो पुष्प की वास्तविक विद्यमानता ही कहा है। ऐसे भी लोग हैं जो चदन वन से गुजर जाते हैं और वास्तव में चदन का एक भी वृक्ष नहीं देखते। जीवन कष्टो से भरा है किन्तु इसमे अगणित अद्भुतताए भी विद्यमान है। इसलिए जागरूक अवस्था मे रहो जिससे जीवन के कष्टो और अद्भुतताओ दोनो को देखने की सामर्थ्य जागृत हो सके।

दु खो के सम्पर्क मे आने का अर्थ उनमे खो जाना नहीं है। जीवन की अद्भुतताओ के सपर्क मे आने का भी अर्थ यह नहीं कि उनमे खो जाओ। सपर्क मे होने का अर्थ है जीवन का सामना करना, उसे गहन दृष्टि से समझना। यदि हम जीवन का प्रत्यक्षत सामना करे तो हम उसकी परस्पर अवराम्वन की अवस्था और अनित्यता को समझ सकते हैं। यह बोध हो जाने पर हम इच्छाओ, क्रोध और आकाक्षाओ के वशीभूत न होगे। तब हम मुक्त होगे, अर्हत होगे।"

स्वास्ति को प्रसन्नता की अनुभूति हुई। वह इस बात से प्रसन्न था कि बुद्ध अपनी देशना आरभ करे, उससे पहले वह मुस्कराया था और समझ गया था। मान्य महाकाश्यप सबसे पहले मुस्कराए थे। वह स्वास्ति के एक शिक्षक थे और सद्धर्म मार्ग पर दीर्घ काल से चलने वाले वरिष्ठ शिष्य थे। स्वास्ति जानता था कि वह महाकाश्यप और अन्य वरिष्ठ शिष्यो, यथा सारिपुत्त, महामोद्गल्यायन और अस्सजि से अपनी तुलना नहीं कर सकता। आखिर उसकी आयु अभी चौवीस वर्ष की ही हुई थी।

अध्याय बावन

विशेष योग्यता के क्षेत्र

अगला वर्षा-प्रवास कपिलवस्तु के समीप न्यग्रोधा विहार मे स्वास्ति ने विताया। वुद्ध वर्षा-प्रवास से पहले ही अपने स्वदेश आ गये थे क्योंकि उन्हे सूचना मिली थी कि शाक्य राज्य और कोलिय राज्य (जो रानी गौतमी का और यशोधरा का मायका था) के वीच सघर्ष और अशांति उत्पन्न हो गई है।

दोनो राज्यो की विभाजक रेखा रोहिणी नदी थी। वास्तव मे झगडा नदी के पानी से शुरू हुआ था। सूखे के कारण दोनो राज्यो के खेतो की सिचाई के लिए पर्याप्त पानी नहीं था। दोनो ही राज्य रोहिणी पर वाध वनाना चाहते थे जिससे अपने राज्य के किसानो के लिए पानी सुलभ किया जा सके। शुरू में तो झगड़ा दोनो पार के किसानो के वीच वाद-विवाद से आरभ हुआ लेकिन विवाद थोड़ा उग्र हुआ तो पत्थर फेके जाने शुरू हुए। इस पर अपने नागरिको की रक्षा के लिए पुलिस आयी और अन्त मे नदी के दोनो किनारो पर सैनिक तैनात हो गये और ऐसा लगने लगा कि कभी भी दोनो सेनाओ के वीच युद्ध छिड़ सकता है।

सवसे पहले, वुद्ध ने झगड़े का असली कारण समझना चाहा। पहले उन्होंने शाक्य राज्य के सेनापतियो से पूछा तो उन्होने कहा कि कोलिय राज्य के नागरिक शाक्य राज्य के नागरिको को मारने और सपत्ति लूट लेने की धमकिया दे रहे हैं। तव उन्होने कोलिय राज्य के सेनापतियो से पूछा तो उन्होने शाक्य राज्य के नागरिको पर इसी प्रकार की धमकियां देने के आरोप लगाये। जव वुद्ध ने स्थानीय किसानो से पूछा तो पता चला कि सारा झगड़ा पानी की कमी के कारण शुरू हुआ।

शाक्य और कोलिय राज्यो के वीच चले आ रहे मधुर सवंधो के

परिणामस्वरूप बुद्ध शाक्य राजा महानाम और कोलिय राजा सुप्पबुद्ध के बीच सीधी वार्ता कराने मे सफल हो पाये। उन्होने इस सकट का शीघ्र निपटारा करने का आह्वान किया क्योंकि युद्ध से दोनो राज्यो की हानि होगी–भले ही किसी एक की कुछ अधिक और किसी दूसरे की कुछ कम हो। उन्होने कहा, "'महामहिमो, मुझे बताइए कि जल अधिक मूल्यवान है या मानव जीवन ?"

दोनो राजाओ ने स्वीकारा कि मानव जीवन का अनत महत्त्व है।

बुद्ध ने कहा, "महामहिम, सिचाई के लिए पर्याप्त पानी की प्राप्ति ही इस सारे झगडे की जड है। यदि दोनो ओर से अहकार और क्रोध न भडके होते तो इस झगडे का निबटारा सहज मे कर पाना सभव होता। युद्ध की कोई भी आवश्यकता नहीं थी। आप लोग अपने हृदयो को टटोले। अहकार और क्रोध के कारण अपने लोगो का रक्त व्यर्थ मे न बहाये। एक बार अहकार और क्रोध शात हो जाएगा तो इनसे उत्पन्न तनाव भी समाप्त हो जाएगा। आप लोग बैठकर बातचीत कीजिए कि किस प्रकार सूखे के इन दिनो मे नदी के जल का विभाजन ऐसे किया जाए कि दोनो पक्षो को बराबर-बराबर पानी मिल सके।"

बुद्ध के परामर्श के फलस्वरूप दोनो पक्षो मे शीघ्र समझौता हो गया और दोनो पक्षो के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित हो सके। राजा महानाम ने बुद्ध से अनुरोध किया कि वह शाक्य राज्य मे ही वर्षा-प्रवास बिताए। सबोधि-प्राप्ति के बाद यह बुद्ध का पद्रहवा वर्षा-प्रवास था। उसके बाद बुद्ध ने सोलहवा वर्षा-प्रवास अलवी मे, सत्रहवा वेणुवन मे, अठारहवा कोलिय मे और उन्नीसवा राजगृह मे बिताया।

राजगृह मे भिक्खु सघ के रुकने पर बुद्ध गृद्धकूट पर्वत पर निवास करते। राजा बिम्बिसार धर्म-देशना सुनने प्रायः गृद्धकूट शिखर पर जाते। पहाड़ो पर उन्होने सीढिया बनवा दी थीं जिससे बुद्ध की कुटीर तक सुविधापूर्वक जाया जा सके। झरनो और प्रपातो पर उन्होने छोटे-छोटे पुल बनवा दिये थे। वह अपने रथ को पहाड़ की तलहटी मे ही छोड जाते और सीढ़िया चढकर बुद्ध की कुटिया तक जाते। बुद्ध की कुटी के समीप बडी-बड़ी चट्टाने थीं और एक प्रपात बह रहा था जिसमे बुद्ध नहाते और चट्टान पर वस्त्र सुखाते। बुद्ध की कुटी के सामने का दृश्य बहुत प्रभावशाली था। वहा बैठकर वह सूर्यास्त का आनददायी दृश्य देखा करते। सारिपुत्त उरुवेला काश्यप, मौद्गल्यायन, उपालि, देवदत्त और आनद सरीखे वरिष्ठ शिष्यो की कुटियाए भी गृद्धकूट

शिखर पर थीं। राजगृह के समीप अब अठारह ध्यान-साधना-केन्द्र थे। वेणुवन और गृद्धकूट शिखर के अतिरिक्त वैभार वन, सर्पशुडलिका प्रागभार, सप्तपर्णगुहा तथा इन्द्रशैल गुहा मे भी ये केन्द्र थे। इनमे से अतिम दो केन्द्र तो विशाल गुफाओ मे ही बने हुए थे।

आम्रपाली और राजा बिम्बिसार का पुत्र जीवक अब एक चिकित्सक बन चुका था और गृद्धकूट शिखर के समीप ही एक कुटी मे रहता था। वह बुद्ध का निकटस्थ उपासक बन गया था। सब ओर उसकी ख्याति फैल गयी थी कि वह अनेक असाध्य रोगो की चिकित्सा कर सकता था। वह राजा बिम्बिसार का व्यक्तिगत चिकित्सक भी नियुक्त कर दिया गया था।

गृद्धशिखर और वेणुवन मे बुद्ध और भिक्खुओ के स्वास्थ्य की देखभाल जीवक ही करता। शीतकाल के दौरान वह मित्रो की सहायता से भिक्खुओ के लिए चीवर आदि और रात मे ओढ़ने के लिए कम्बलो की व्यवस्था करता। उसने स्वय बुद्ध को एक चीवर भेट किया था। जीवक रोगो के उपचार के अतिरिक्त रोगो की रोकथाम पर भी ध्यान देता। उसने भिक्खुओ को सफाई की बहुत-सी आधारभूत बाते समझाईं। उसने कहा कि सरोवरो से लिये गये जल को पहले उबालकर पीना चाहिए। भिक्खुओ को सात दिनो मे एक बार अपने वस्त्र अच्छी तरह साफ कर लेने चाहिए। विहार मे अधिक शौचालयो की भी व्यवस्था की जाए। उसने चेतावनी दी कि अगले दिन खाने के लिए आज का बासी भोजन न रखा जाय। बुद्ध ने जीवक के सभी सुझावो को स्वीकार कर लिया था।

उपासक भिक्खुओ को सामान्यतः चीवर दान दिया करते थे। एक दिन बुद्ध ने एक भिक्खु को अपने कधे पर लादकर ढेर सारे चीवर लाते हुए देखा तो बुद्ध ने पूछा—"तुम कितने चीवर लाये हो ?"

भिक्खु ने उत्तर दिया, "गुरुवर, आठ चीवर।"

"क्या तुम समझते हो, तुम्हे इतने चीवरो की आवश्यकता है ?"

"नहीं, गुरुदेव, मुझे इतने चीवरो की आवश्यकता नहीं है। लोगो ने ये सारे चीवर मुझे उपहार मे दिये तो मैने स्वीकार कर लिये।'

"आपके विचार से एक भिक्खु को कितने चीवरो की आवश्यकता होती है ?"

"गुरुदेव, मेरे विचार से तीन चीवर पर्याप्त हैं। इनसे सर्दियो तक मे ठड से बचा जा सकता है।"

"मै तुम्हारे विचार से सहमत हू। सर्दियो मे भी तीन चीवर पर्याप्त है।

जीवक द्वारा दिये चीवर को धोते हुए बुद्ध

अब से हमे घोपणा कर देनी चाहिए कि भिक्खु को भिक्षा-पात्र के अलावा तीन से अधिक चीवर अपने पास नहीं रखने हैं। यदि कोई इससे अधिक चीवर भेट मे देता है तो उन्हे अस्वीकार कर दे।"

बुद्ध को नमन करके भिक्खु अपनी कुटिया मे चला गया।

पहाड़ी के शिखर पर खड़े होकर एक दिन बुद्ध ने धान के पकते खेत देखे। उन्होने आनद की ओर मुड़कर देखते हुए कहा, "पके धानो के ये स्वर्णिम खेत क्षितिज तक फैले हुए कितने सुन्दर लग रहे है। यदि भिक्खुओ के चीवर इसी परिदृश्य के बनाये जाएं तो कितना अच्छा लगेगा ?"

"गुरुदेव, यह तो अद्भुत विचार है। धान के खेतो के नमूने पर आधारित चीवर बहुत ही सुन्दर लगेगे। आपने कहा है कि जो भिक्खु सद्धर्म का साधना-अभ्यास करता है, वह एक उर्वर खेत होता है जिसमे सदाशयता और सद्गुणो के बीज वर्तमान तथा भावी पीढ़ियो के लाभार्थ बोये जाते है। जब कोई भिक्खु को भिक्षा देता है अथवा उसके साथ अध्ययन या साधना-अभ्यास करता है तो वह मानो सदाशयता और सद्गुणो के बीज बोता है। मै भिक्खु समुदाय को कहूगा कि वे भविष्य मे पके धान के खेतो के नमूने के चीवर ही सिलवाये। हम इन चीवरो को 'सद्गुणो के क्षेत्र' कहेगे।" बुद्ध ने मुस्कराकर स्वीकृति दे दी।

अगला वर्षा-प्रवास विताने बुद्ध जेतवन आ गये क्योंकि जब सुदत्त राजगृह आया था तो बुद्ध से कहा था कि कितने दिनो से आपने जेतवन मे वर्षा-प्रवास व्यतीत नहीं किया है। सबोधि-प्राप्त के बाद बुद्ध का यह बीसवा वर्षा-प्रवास था। बुद्ध की आयु अब पचपन वर्ष की हो गयी थी। बुद्ध के आने का समाचार पाकर राजा प्रसेनजित बहुत हर्षित हुए और समस्त राजपरिवार जिसमे दूसरी रानी वृषभक्षत्रिय, राजकुमार विद्युताभ और राजकुमारी वज्री भी थी, के साथ बुद्ध से मिलने आये। उसकी दूसरी पत्नी शाक्य वश की थी। वर्षों पहले जव राजा प्रसेनजित बुद्ध की शिष्य बन गये थे तो उन्होने शाक्य वश की एक राजकुमारी से विवाह करने की इच्छा व्यक्त की तो राजा महानाम ने अपनी सुदरी कन्या वृषभक्षत्रिय से उनका विवाह कर दिया था।

वर्षा-प्रवास मे बुद्ध की एक भी धर्म-देशना ऐसी नहीं थी जिसमे राजा प्रसेनजित उपस्थित नहीं हुए हो। बुद्ध की देशना सुनने अधिक-से-अधिक लोग आने लगे। इनमे सर्वाधिक सहायक उनकी उपासिका महिषी विशाखा थी जिसने श्रावस्ती के पूर्व मे बड़ा फलता-फूलता वन उन्हे उपहार मे दिया था। यद्यपि यह वन जेतवन से थोड़ा छोटा था किन्तु उससे कम सुदर नहीं

था। अपने अनेक मित्रो की सहायता से उसने वन मे ध्यान-कक्ष, धर्म-कक्ष और भिक्खुओ के लिए कुटिया वना दी गयी थीं। मान्य सारिपुत्त के सुझाव पर उसका नाम 'पूर्वाराम' रख दिया गया और मध्य मे बने धर्म-कक्ष का नाम 'विशाखा कक्ष' रखा गया।

महिषी विशाखा का जन्म अग राज्य के भद्रिका नामक नगर मे हुआ था। वह धनिक श्रेष्ठि धनजय की पुत्री थी। उसका पति श्रावस्ती का एक श्रेष्ठि था। उसका पति और पुत्र निग्रथ ज्ञातिपुत्र के शिष्य थे जो आरभ मे तो वुद्ध से तनिक भी प्रभावित न थे किन्तु महिषी विशाखा की धर्म-निष्ठा से प्रेरित होकर उन्होने धीरे-धीरे वुद्ध की शिक्षाओ मे रुचि लेनी आरभ की और अन्त मे उनके उपासक वन गये थे। महिषी विशाखा और उसकी मित्र महिषी सुप्रिया प्राय. विहार आया करतीं और भिक्खुओ को उनकी आवश्यकता के अनुसार दवाइया, चीवर और तौलिए दिया करती थीं। उसने भिक्खुनी महाप्रजापति को भिक्खुनियो के लिए गगा के दक्षिण तट पर धर्म-कक्ष बनवाने मे भी सहायता देने का वचन दिया था। महिषी विशाखा भौतिक और आध्यात्मिक दृष्टियो से भिक्खुनियो को पूरी-पूरी सहायता देती थीं। भिक्खुनियो के बीच उठे छोटे-मोटे विवादो के निराकरण मे एकाधिक वार उनकी करुणामय वुद्धिमत्ता से सहायता मिली थी।

विशाखा कक्ष मे हुए एक धर्म सम्मेलन मे दो महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये। पहला यह कि आनद वुद्ध के स्थायी सहायक होगे और दूसरा यह कि वुद्ध प्रतिवर्ष वर्षा-प्रवास करने श्रावस्ती लौट आया करेगे।

पहला प्रस्ताव मान्य सारिपुत्त ने रखा था और कहा था कि आनद की स्मरण-शक्ति हममे सवसे अच्छी है और वह वुद्ध के बोले प्रत्येक शब्द को स्मरण रख सकता है। इस प्रकार किसी धर्म-देशना मे कहे अथवा किसी उपासक से हुई वातचीत के दौरान जो भी वात होती है, उसे आनद स्मरण रख सकेगा। हमे उनके वचनों को सुरक्षित रखना चाहिए। अपनी असावधानी के कारण हमने वुद्ध के श्रीमुख से उच्चरित वहुत से वचन खो दिये है। मान्य आनद अव हम सवकी और भावी पीढियो की खातिर कृपया वुद्ध के सहायक का उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य सभाल लीजिए।

सभी भिक्खुओ ने मान्य सारिपुत्त के प्रस्ताव को स्वीकृति दे दी किन्तु इसमे आनद ने कुछ हिचक दिखायी और कहा, "इसमे मुझे अनेक प्रकार की समस्याए दिखती हे। पहली वात तो यही है कि वुद्ध मुझे अपना सहायक रखना भी चाहेगे या नहीं। वुद्ध ने सदैव यह सावधानी वरती है कि शाक्य

वश के लोगो को कोई विशिष्ट मान्यता न दे। वह अपनी विमाता भिक्खुनी महाप्रजापति तक के प्रति कठोरता बरतते है और एक दूरी बनाये रखते है। उन्होने राहुल को कभी भी अपनी कुटिया मे नहीं रखा और न उसके साथ भोजन किया। मुझे भय है कि यदि मुझे उनका सहायक चुना गया तो कुछ भिक्खु बधु मुझ पर बुद्ध का प्रियपात्र बनने का आरोप लगाएगे। यदि बुद्ध ने किसी का दोष सुधारने का प्रयास किया तो वह मुझ पर बुद्ध का पक्ष लेने का आरोप लगा सकता है।"

सारिपुत्त की ओर देखकर आनंद ने आगे कहा, "बुद्ध बधुवर सारिपुत्त का विशेष रूप से सम्मान करते है और वह हममे सर्वाधिक प्रतिभा-सम्पन्न और चतुर हैं। सारिपुत्त ने विहार-व्यवस्था का कुशलता से सगठन किया है। बुद्ध का उन पर भरोसा करना स्वाभाविक है। यद्यपि बुद्ध कोई भी बड़ा निश्चय करने से पूर्व सदैव अनेक लोगो से परामर्श करते है, किन्तु कुछ बधुजनो की शिकायत रहती है कि निर्णय तो सारिपुत्त ही करते है मानो बुद्ध कोई निर्णय स्वय लेने मे अक्षम हो। ये आरोप मूर्खतापूर्ण है, किन्तु इन्हीं सब बातो से मै बुद्ध का सहायक बनने से इनकार करना चाहता हू।"

मान्य सारिपुत्त हसकर बोले, "मै किसी बधु की अस्थायी गलतफहमी पर आधारित ईर्ष्या से भयभीत नहीं हूं। मुझे विश्वास है कि हममे से प्रत्येक को वही करना चाहिए जो ठीक हो और लाभप्रद हो, भले ही और लोग कुछ भी कहते रहे। कृपया यह पद स्वीकार कर लीजिए। यदि आप इसे स्वीकार नहीं करेगे तो इस पीढ़ी के लिए और आने वाली पीढ़ी के लिए भी धर्म की हानि होगी।"

मान्य आनद इस पर चुप बैठे रहे। बड़ी हिचकिचाहट के साथ अन्नतः उन्होने कहा, "मै यह स्थिति तभी स्वीकार करूगा, जब बुद्ध मेरी इन प्रार्थनाओ को अगीकार कर लेगे—(1) बुद्ध मुझे कभी भी अपना चीवर नहीं देगे, (2) बुद्ध भिक्षाटन मे प्राप्त अपने भोजन मे से मुझे भोजन नहीं देगे, (3) बुद्ध अपनी कुटिया मे रहने के लिए मुझे नहीं कहेगे, (4) उपासक के यहा भोजन करने जाते समय बुद्ध मुझे साथ चलने को नहीं कहेगे, (5) यदि मुझे उपासक भोजन के लिए आमंत्रित करे तो बुद्ध भी मेरे साथ चल सकेगे, (6) बुद्ध से मिलने जो लोग आएगे, उन्हे मिलाने या न मिलाने के सिलसिले मे मुझे अपने विवेक से काम लेने की अनुमति देगे, (7) बुद्ध मुझे वे बाते फिर से पूछ लेने की अनुमति देगे, जो मैंने ठीक से समझ न पायी हो और (8) जिस धर्म-देशना मे मै उपस्थित नहीं होऊ, उसका सार बुद्ध मुझे पुनः कहेगे।

मान्य उपालि ने उठकर कहा, "आनद की शर्तें सर्वथा उचित प्रतीत होती है। मुझे विश्वास है कि वुद्ध इन वातो पर सहमत हो जाएगे। किन्तु मैं उनकी चौथी शर्त से सहमत नहीं हू। यदि आनद उपासको के यहा वुद्ध को निमत्रित किये जाने पर नहीं जाएगे, तो वहा हुई उस धर्म-चर्चा को कैसे सुन सकेगे और स्मरण रख सकेगे जो भावी पीढियो और हम सव के लिए उपयोगी हो ? जव भी कोई उपासक वुद्ध को आमत्रित करे तो आनद के अतिरिक्त एक अन्य भिक्खु भी साथ जाए। इस प्रकार कोई भी आनद पर यह आरोप नहीं लगा मकता कि आनद के साथ विशेप पक्षपात किया जा रहा है।"

आनंद ने कहा, "वघुवर, मैं इसे इतना अच्छा सुझाव नहीं मानता। सभव है कि किसी उपासक की स्थिति ऐसी न हो कि वह दो भिक्खुओ को भोजन करा सके।"

उपालि ने कहा, "तव वुद्ध और आप दोनो भिक्खु कम भोजन करके ही सतुप्टि प्राप्त कर मकते हैं।"

सभी भिक्खु ठठाकर हस पडे। वह जानते थे कि वुद्ध के लिए सर्वोत्तम सहायक खोजने की समस्या हल हो गयी है। इसके वाद उन्होने इस प्रस्ताव पर विचार आरभ हुआ कि वुद्ध प्रत्येक वर्पा-प्रवास श्रावस्ती मे ही व्यतीत किया करे। श्रावस्ती अच्छा स्थान था क्योंकि वहीं जेतवन, पूर्वाराम वन और भिक्खुनियो का विद्यालय सभी पास-पास थे। इस प्रकार श्रावस्ती सघ के मुख्य केन्द्र के रूप मे कार्य कर सकेगा। वुद्ध का प्रति वर्ष एक ही स्थान पर वर्पा-प्रवास कर लेने पर वहुत से लोग वर्षा-प्रवास मे आने की और वुद्ध की देशना उनके श्रीमुख से सुनने की योजना वना सकते हैं। अनाथपिंडिक और महिपी विशाखा ने श्रावस्ती मे वर्पा-प्रवास के समय आने वाले सभी लोगो तथा भिक्खु एव भिक्खुनियो के लिए भोजन, चिकित्सा, चीवर एव निवास की व्यवस्था करने का वचन दे चुके हैं।

भिक्खु प्रतिवर्प वर्पा-प्रवास श्रावस्ती मे ही विताने के निर्णय पर सहमत हो गये। इसके वाद उनका सम्मेलन समाप्त हुआ और वे सीधे वुद्ध की कुटिया मे गये ताकि अपने विचार उनके समक्ष रख सके। वुद्ध ने प्रसन्नतापूर्वक दोनो प्रस्ताव स्वीकार कर लिये।

अध्याय तिरपन

वर्तमान में जीना

अगले वर्ष वसन्त ऋतु मे बुद्ध ने कुरु देश की राजधानी कर्मसद्धर्म मे तीन सौ भिक्खुओ के समक्ष 'सतिपत्थानसुत्त' और सचेतनावस्था के चार दार्शनिक सिद्धान्तो की देशना की। यह ध्यान-साधना के अभ्यास का आधारभूत सूत्र था। बुद्ध ने उसे ऐसा मार्ग बताया था जिससे प्रत्येक व्यक्ति को शरीर और मन की शांति प्राप्त करने, सभी दु.ख-दर्दों से उबरने, कष्टो एव वेदनाओ को नष्ट करने और उच्चतम प्रज्ञा की प्राप्ति एव मुक्ति पाने मे सहायता मिल सकती है। बाद मे मान्य सारिपुत्त ने सघ से कहा कि बुद्ध ने अब तक जितनी देशना की है, उनमे ये सबसे महत्त्वपूर्ण सूत्र है। उन्होने समस्त भिक्खुओ और भिक्खुनियो को प्रेरित किया कि वे इन सूत्रो को कण्ठस्थ कर ले, उनका अध्ययन-मनन करे और इसके अनुसार साधनाभ्यास करे।

उस रात मान्य आनद ने उस सूत्र को शब्दश· दोहराया और कहा कि 'सति' का अर्थ है सचेतनावस्था मे रहना अर्थात् साधक द्वारा अपने शरीर, भावनाओ, मन तथा मन के विषयो मे जो कुछ घटित हो रहा है, उसके प्रति पूर्णतया सचेत रहना।

सबसे पहले साधक अपने शरीर-श्वास की धारणा करे, शरीर की चार मुद्राए—चलना, खड़े होना, लेटना और बैठने के प्रति जागृत रहे, फिर शरीर की क्रियाओ, यथा—आगे-पीछे होना, देखना, वस्त्र धारण करना, खाना-पीना, मल-मूत्र विसर्जन, बोलने और वस्त्र आदि धोने की धारणा करे, शरीर के अगो, यथा—बालो, दातो, स्नायु-तत्र, अस्थियो, आतरिक अगो, हड्डियो मे विद्यमान तरल पदार्थ, अतडियो, लार और पसीने पर ध्यान दे, शरीर के महातत्त्वो,

यथा—पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और शरीर-क्षय को तव तक देखे जव तक अस्थिया राख न वन जाए।

शरीर पर ध्यान करते समय साधक शरीर की सूक्ष्म वातो के प्रति सचेत हो जाए। उदाहरणार्थ जव वह श्वास ले रहा हो तो उसे ज्ञात हो कि वह श्वास ले रहा है और यदि श्वास नहीं ले रहा, तव भी उसे ज्ञात हो कि वह श्वास नहीं ले रहा। श्वास को भीतर खींचने और समस्त शरीर को शांति प्रदान करने पर साधक को ज्ञात हो कि वह वैसा कर रहा है। चलते समय साधक को ज्ञात हो कि वह चल रहा है, वैठे तो ज्ञात हो कि वह वेठ रहा है और अन्य गतिविधि करने यथा वस्त्र पहनने या जल पीने के ममय साधक सजग हो कि वह वस्त्र धारण कर रहा या जल-ग्रहण कर रहा है। शरीर की यह धारणा वैठकर माधना करने पर ही नहीं, वरन् समूचे दिन के प्रत्येक क्षण मे करनी है, यहा तक कि जव वह भिक्षाटन कर रहा हो, भोजन कर रहा हो या कि भिक्षा-पात्र धो रहा हो।

भावनाओ या विचारो की धारणा करते समय साधक को देखना है कि भावनाए किस प्रकार उठ रही है, कैसे विकसित हो रही है और कैसे क्षीण होती जा रही हे या कि वे भावनाए सुखद है, दुखद हैं या तटस्थ भावपूर्ण हैं। भावनाओ के उदय का विपय या तो शरीर होता है या मन। जव साधक के दात मे दर्द हो तो साधक जाने कि यह पीड़ा दात के कारण हो रही हे। प्रशसा मिलने पर यदि वह प्रसन्न हो तो उसे ज्ञात होना चाहिए कि वह प्रशसा से प्रसन्न हो रहा है। साधक गहनता से इसलिए आत्मचिन्तन करता है, जिससे वह अपनी प्रत्येक भावना को सहज और शात कर सके और स्पष्ट रूप से देख सके कि मन मे वह भावना उठी ही क्यो। भावनाओ पर ध्यान केन्द्रित करने का काम केवल वैठकर साधना-अभ्यास के समय ही नहीं करना है। इमका अभ्यास समूचे दिन जारी रखना है।

चित्त पर ध्यान-धारणा का अर्थ है कि साधक अपनी मानसिक अवस्थाओ की विद्यमानता के प्रति सचेत रहे। जव उसे किसी प्रकार की प्राप्ति की आकाक्षा जगे तो वह उसे जाने, जव कोई आकाक्षा न जगे, तव भी मन की स्थिति को समझे। यदि क्रोध या आलस्य आये तव भी उसे ज्ञात हो कि उमे क्रोध या आलम्य आ रहा है। यदि क्रोध या आलस्य की अवस्था न हो तो भी वह उम मन स्थिति को ममझे। उसका मन सचेत हो या विक्षेपपूर्ण, तव भी वह मन को समझे। वह मुक्तमन है या वद्धचित्त, या चित्त ध्यानपूर्ण है या मचेतनावस्था मे हें, यह भी साधक तुरन्त जान ले। यदि वह इनमें

से किसी भी अवस्था मे नहीं है, तब भी वह उसके प्रति सचेत हो। साधक वर्तमान मे विद्यमान मन की प्रत्येक अवस्था को पहचानता हो और उसके प्रति सजग रहे। मन की तन्मात्राओ पर ध्यान-धारणा करते समय साधक निर्वाण मार्ग की पच बाधाओ (ज्ञानेन्द्रियो इच्छा, आकाक्षाओ, दुर्भावना, प्रमाद, उद्वेग और शकाओ) के उपस्थित होने पर चित्त को केन्द्रित करे। शरीर के पचस्कधो (शरीर, कामनाओ, अवधारणाओ, भाव-बोध और चेतना, छः ज्ञानेद्रियो और उनकी छहो तन्मात्राओ, सचेतनावस्था के सात तत्त्वो (पूर्ण ध्यान, धर्मानुसधान, ऊर्जा, हर्ष, सहजावस्था, ध्यान और विरति) और चार आर्य सत्य (दु ख की विद्यमानता, दुखो के मूल कारको दुखो का निवारण और दु:ख के नाश के उपाय एव मार्ग) ये सभी मन की तन्मात्राए है और इन्ही से सभी धर्म सपृक्त है।

बुद्ध ने सभी महाविधानो पर पूर्ण विस्तार एव सावधानी के साथ देशना की है। जो भी इन चारो महाविधानो पर आचरण करते है, वे सात वर्षो मे निर्वाण-प्राप्त कर अर्हत बन सकते है। जो इन पर पूर्ण आचरण करते है वे सात महीनो मे ही निर्वाण प्राप्ति के अधिकारी बन सकते है। जो इन महाविधानो के अनुसार सात दिनो तक पूर्ण गहनता के साथ ध्यान-धारणा कर ले तो वह सात दिनो मे ही निर्वाण-प्राप्त कर सकता है।

धर्म-देशना के समय मान्य अस्सजि ने सघ के भिक्खुओ को स्मरण दिलाया कि बुद्ध ने सचेतनावस्था के चारो विधानो के विषय मे पहली बार देशना नहीं की है, वरन् वह इन पर पहले भी देशना करते रहे है। आज पहली बार सभी पक्षो पर समग्रता और गहनता के साथ उन्होने देशना की है। अस्सजि ने सारिपुत्त के इस कथन पर सहमति व्यक्त की कि प्रत्येक भिक्खु, भिक्खुनी को इसे कठस्थ कर लेना चाहिए, इसका नित्य पाठ और इसके अनुसार साधनाभ्यास करना चाहिए।

वसन्त के अन्त मे जब बुद्ध देव जेतवन लौटे तो उनका सामना अगुलिमाल नामक एक खूखार हत्यारे से हुआ जिसका उन्होने हृदय-परिवर्तन किया। एक दिन प्रात जब बुद्ध श्रावस्ती मे प्रविष्ट हुए तो सारा नगर भूत-बस्ती बना हुआ था। सभी लोग घरो को बन्द किये हुए बैठे थे और सड़के सुनसान पडी हुई थीं। बुद्ध उस घर के आगे खडे हुए जहा से उन्हे प्रायः सदैव ही भिक्षा मिला करती थी। घर के लोगो ने दरवाजा जरा-सा खोला और सध मे से देखा कि बुद्ध खड़े है। गृह-स्वामी दौड़कर बाहर आया और बुद्ध से भीतर आने का अनुरोध किया। बुद्ध के घर मे घुसते ही गृह-स्वामी ने दरवाजे पर साकल चढ़ा ली और बुद्ध से बैठ जाने और भीतर ही बैठकर

भोजन करने का आग्रह किया। उसने कहा, मान्यवर, आज वाहर जाना बहुत ही खतरनाक है। इस क्षेत्र मे हत्यारा अगुलिमाल देखा गया है। कहते हैं कि इसने अन्य नगरो मे वहुत से लोगो की हत्या कर दी है। जव भी वह किसी की हत्या करता है तो उसकी एक उगली काटकर अपने गले की माला मे डाल लेता है। लोगो का कहना है कि यदि उसने अपने गले की माला मे सौ उगलिया कर लीं तो उसकी मायावी शक्ति वहुत बढ़ जाएगी। आश्चर्य की वात यह है कि वह जिस व्यक्ति की हत्या करता है, उसकी कोई चीज चुराता नहीं है। राजा प्रसेनजित ने उसे पकड़ने के लिए सैनिको और पुलिस की कई टुकडिया तैनात कर रखी है।

वुद्ध ने पूछा, "एक व्यक्ति को पकडने के लिए इतने सैनिको तथा आरक्षियो को नियुक्त करने की क्या आवश्यकता थी ?"

"आदरणीय गौतम, अगुलिमाल वहुत ही खतरनाक हत्यारा है। उसमे युद्ध करने का अद्‌भुत कौशल है। एक वार चालीस लोगो ने उसे सडक पर घेर लिया था। उसने अधिकाश लोगो को मार डाला था और शेष लोग जान वचाकर भाग लिये थे। अगुलिमाल जालिनी वन मे रहता है और कोई भी उधर से गुजरने की हिम्मत नहीं करता। कुछ दिन पहले बीस सशस्त्र आरक्षी उसे पकड़ने के लिए जगल मे घुसे थे किन्तु उनमे से दो ही बचकर लौट सके। अव वह इस नगर मे देखा गया है, अतः कोई भी न तो वाहर निकलता है और न दुकान या अपने काम पर जाता है।"

अगुलिमाल के विषय मे जानकारी देने के लिए धन्यवाद करते हुए बुद्ध उठ खडे हुए और चलने के लिए विदा मागी। गृह-स्वामी ने गिड़गिडाकर प्रार्थना की कि वुद्ध भीतर ही रहे, किन्तु वुद्ध न माने। उन्होने कहा कि मैं अपने प्रति लोगो का विश्वास तभी वनाये रख सकूगा, जव सामान्य रूप से भिक्षाटन करना जारी रखू।

जव वुद्ध धीरे-धीरे सचेतावस्था मे मार्ग पर पग वढ़ा रहे थे तो दूर से भागकर आते किसी व्यक्ति की पदचाप सुनायी दी। वह समझ गये कि यह अगुलिमाल ही है। उनके मन के अदर तथा वाहर जो कुछ भी घटित हो रहा था, उसके प्रति पूर्ण सजग वुद्ध मद पगो से आगे वढ़ते रहे।

अगुलिमाल चिल्लाया, "भिक्खु रुक जाओ।"

वुद्ध अपने धीर-गभीर पग वढ़ाते हुए चलते रहे। उसकी पद-चाप से वह समझ गये कि अगुलिमाल भागने के वजाय तेज कदमो से चलने लगा है और वह उनसे अधिक दूर नहीं है। यद्यपि वुद्ध छप्पन वर्ष के हो गये

थे–किन्तु उनकी दृष्टि और श्रवण-शक्ति पहले की अपेक्षा प्रखर हो गयी थी। उनके हाथ मे भिक्षा-पात्र के अतिरिक्त कुछ नहीं था। उन्हे यह याद करके मुस्कराहट आ गयी कि युद्ध-विद्या सीखते समय वह कितने तेज और फुर्तीले थे। कोई अन्य व्यक्ति उन पर आघात नहीं कर सकता था। बुद्ध समझ चुके थे कि अगुलिमाल एकदम पास आ गया है और उसके हाथ मे तलवार है। बुद्ध सहजतापूर्वक चलते रहे।

तेज चलकर अगुलिमाल बुद्ध के समीप आ गया और बोला, "भिक्खु, मैंने तुम्हे रुकने के लिए कहा था, रुके क्यो नहीं ?"

बुद्ध ने चलते-चलते ही कहा, "अगुलिमाल, मैं तो बहुत समय पहले स्थिर हो चुका हूं किन्तु तुम्हीं नहीं हुए हो।"

अगुलिमाल बुद्ध के इस असाधारण उत्तर से सकपका गया। उसने बुद्ध का मार्ग रोककर उन्हे आगे नहीं बढ़ने दिया। बुद्ध ने अगुलिमाल की आखो से आखे मिलायीं तो वह और भी सकपकाया। बुद्ध की आखे दो तारको की भांति ज्योतिर्मान थीं। अगुलिमाल का सामना ऐसे व्यक्ति से अब तक नहीं हुआ था जो इतना तेजस्वी और सहज हो। हर कोई, उससे डरकर भाग जाता था। इस भिक्खु को किसी प्रकार का भय क्यो नहीं हो रहा ? बुद्ध उसकी ओर ऐसे देख रहे थे, मानो वह कोई मित्र या भाई हो। बुद्ध ने उसका नाम लिया था जिसका अर्थ है कि वह जानता है कि अगुलिमाल कौन है ? निश्चय ही यह व्यक्ति मेरी खूखार प्रकृति का ज्ञान रखता है। एक हत्यारे को सामने देखकर यह इतना शांत और सहज कैसे हो सकता है ? अगुलिमाल बुद्ध की कृपालु और सदाचारपूर्ण दृष्टि को अधिक सहन नहीं कर सका तो बोला, "भिक्खु, तुमने कहा था कि तुम तो बहुत समय पहले स्थिर हो चुके हो किन्तु तुम तो अब भी चल रहे हो। तुमने कहा था कि मैं ही नहीं रुका हू। इससे तुम्हारा क्या अर्थ था ?"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "अगुलिमाल, मैने दूसरो को कष्ट पहुचाने वाले कर्म करना बहुत पहले बंद कर दिये हैं। मैने मनुष्यो ही नहीं, प्राणीमात्र की रक्षा करना सीख लिया है। अगुलिमाल, सभी प्राणी जीवित रहना चाहते है। सभी को मृत्यु का भय लगता है। हमे करुणापूर्ण हृदय और प्राणीमात्र की रक्षा करने की भावना जगानी चाहिए।"

"मानव मानव के साथ प्रेम नहीं करता। तब मैं अन्य लोगो से प्रेम क्यो करू? मनुष्य निर्दयी और धोखेबाज होते हैं। मै तब तक चैन से नहीं बैठूगा, जब तक सबको न मार डालू।"

बुद्ध ने सहजता से कहा, "अगुलिमाल, तुमको लोगो के हाथो बहुत कष्ट उठाने पड़े है। कभी-कभी तो मानव बहुत ही क्रूर हो जाता है। यह क्रूरता, अज्ञान, घृणा और द्वेष के कारण होता है किन्तु लोग समझदार और करुणा से भी पूर्ण होते हैं। तुम कभी किसी भिक्खु से मिले हो ? भिक्खुओ ने अन्य सभी प्राणियो की रक्षा करने की प्रतिज्ञा ली होती है। उन्होने इच्छाओ, घृणा और अज्ञान पर विजय प्राप्त करने का वचन लिया होता है। भिक्खु ही नही, अन्य लोगो का जीवन भी समझदारी और प्रेमपूर्ण हो सकता है। अगुलिमाल, यदि ससार मे क्रूर व्यक्ति होते है तो अन्य प्रकार के भी लोग होते हैं, अधे मत बनो। मेरा सद्धर्म मार्ग क्रूरता को करुणा मे बदल देता है। घृणा के मार्ग पर तो तुम चल रहे हो। तुम्हे रुकना चाहिए। इसके स्थान पर तुम्हे क्षमा, ज्ञान और प्रेम का मार्ग चुनना चाहिए।"

अगुलिमाल भिक्खु के शब्दो से बहुत प्रभावित हुआ किन्तु उसके दिमाग मे उलझन पैदा हो गयी। उसे अकस्मात् लगा जैसे उसे चीर कर खोल दिया गया है और घावो पर नमक लगा दिया गया हो। बुद्ध के मन मे न तो घृणा थी और न तिरस्कार भाव। बुद्ध अगुलिमाल को इस प्रकार देख रहे थे जैसे वह उस व्यक्ति को आदर का पात्र समझ रहे हो। तो क्या यह भिक्खु गौतम है जिसे लोग 'बुद्ध' कहते हैं। अगुलिमाल ने पूछा, "क्या आप भिक्खु गौतम हो ?'

बुद्ध ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया।

अगुलिमाल ने कहा, "कितनी दुर्भाग्य की बात है कि मेरी आपसे भेट इससे पहले नहीं हुई। मैं विनाश के मार्ग पर बहुत आगे तक बढ़ गया हू। अब मेरे लिए उस स्थान से लौट पाना सभव नहीं।"

बुद्ध ने कहा, "नहीं, अगुलिमाल, अच्छा काम करने के लिए कोई भी समय विलम्बपूर्ण नहीं होता।"

"मैं क्या अच्छा काम करने योग्य रह गया हू?"

"घृणा और हिसा के मार्ग पर चलना बद करो। यही सबसे बड़ा काम होगा। अगुलिमाल, दुःख सागर बहुत विशाल है किन्तु पीछे की ओर देखोगे तो किनारा दिखाई दे जाएगा।"

"गौतम, यदि मैं चाहू भी तो अब पीछे नहीं मुड़ सकता। मैं जो कुछ कर चुका हू, उसके बाद कोई भी मुझे शातिपूर्वक नहीं रहने देगा।"

बुद्ध ने अगुलिमाल का हाथ पकड लिया और कहा, "अगुलिमाल, यदि तुम अपनी घृणा त्याग दो और सद्धर्म के मार्ग का अध्ययन और अभ्यास

करो तो मैं तुम्हारी रक्षा करूगा। नये सिरे से जीवन-यापन और दूसरो की सेवा करने की प्रतिज्ञा करो। यह सहजता से जाना जा सकता है कि तुम समझदार व्यक्ति हो। मुझे इसमे तनिक भी सदेह नहीं है कि तुम निर्वाण के मार्ग पर सफल हो सकोगे।"

अगुलिमाल ने बुद्ध के समक्ष नमन किया। उसने अपनी पीठ पर बधी तलवार खोलकर जमीन पर रख दी और बुद्ध के चरणो पर प्रणत हो गया। उसने अपने हाथो से अपना मुह ढंककर सिसकना आरभ कर दिया। बहुत देर बाद उसने अपना सिर उठाया और बुद्ध से कहा, "मै कुमार्ग छोड़ने की प्रतिज्ञा करता हू। मैं आपका अनुसरण करूगा और करुणा का पाठ आपसे सीखूगा। मैं आपसे प्रार्थना करता हू कि मुझे अपना शिष्य बना ले।"

उसी समय मान्य सारिपुत्त, आनद, उपालि, किम्बिल और अन्य भिक्खु भी घटना-स्थल पर आ गये। उन्होने बुद्ध और अगुलिमाल का चारो ओर से घेरा बना लिया। बुद्ध को सुरक्षित और अगुलिमाल को प्रवृज्या लेने के लिए उद्यत देख उनके हृदय आनद से भर गये। बुद्ध ने आनद से चीवर और अन्य वस्त्र देने को कहा। उन्होने सारिपुत्त से कहा कि पास के घर से उस्तरा माग लो जिससे उपालि अगुलिमाल के सिर के बाल उतार सके। अगुलिमाल को तत्काल वहीं प्रवृज्या दे दी गयी। उसने नमन किया और 'बुद्ध शरणं गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' के त्रिरत्नो का उच्चार किया। उसे उपालि ने प्रवृज्या दिलायी गयी थी। उसके बाद वे सभी साथ-साथ जेतवन लौट आये।

अगले दस दिनो तक उपालि और सारिपुत्त ने उसे शीलो की शिक्षा दी, ध्यान करना सिखाया और भिक्षाटन की पद्धति समझायी। अगुलिमाल ने अपने से पूर्ववर्ती भिक्खुओ की अपेक्षा कहीं अधिक प्रयास किये। जब बुद्ध प्रवृज्या दिये जाने के दो सप्ताह बाद अगुलिमाल से मिले तो उसकी प्रगति देखकर आश्चर्यचकित हुए। अगुलिमाल मे सौम्यता और स्थिर-चित्तता का तेज झलमला रहा था। उसका इतना उत्कृष्ट व्यवहार हो गया था कि अन्य भिक्खु उसे 'अहिसक' कहने लगे थे। वास्तव मे जन्म के समय उसका यही नाम था। स्वास्ति ने पाया कि यही उसका उपयुक्त नाम था क्योकि बुद्ध के अतिरिक्त किसी और की दृष्टि मे इतना दया-भाव नहीं था।

एक दिन बुद्ध श्रावस्ती मे भिक्षाटन के लिए गये। उनके साथ अगुलिमाल सहित अनेक भिक्खु थे। नगर-द्वार पर उन्होने राजा प्रसेनजित को देखा जो सैनिको के एक दल के साथ घोड़े पर सवार थे। राजा और सेनापति युद्ध
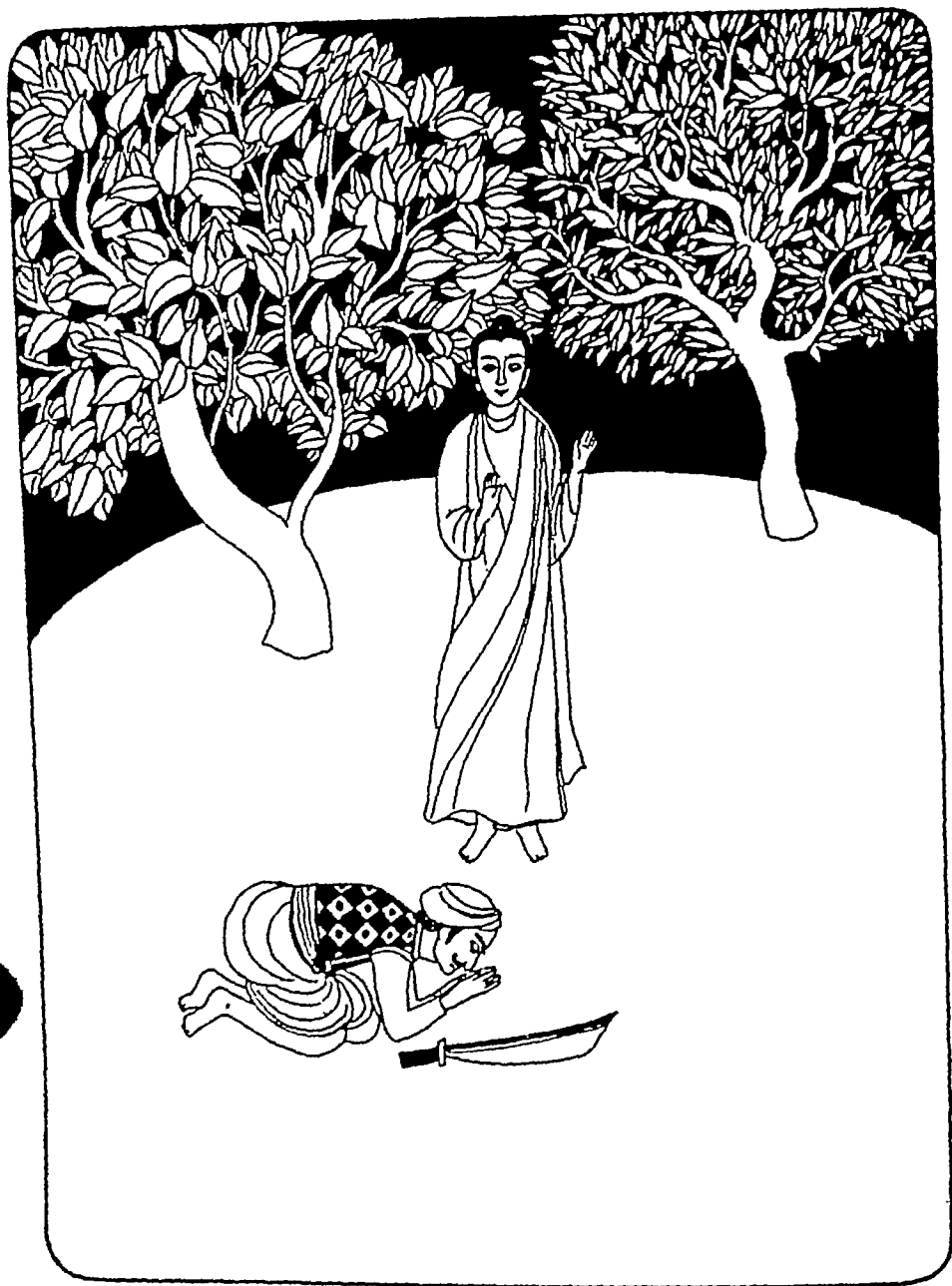
अगुलिमाल का वुद्ध के चरणो में नमन

की पूरी तैयारी के साथ थे। राजा ने जब बुद्ध को देखा तो अश्व से उतरकर उन्होने बुद्ध को नमन किया।

बुद्ध ने पूछा, "महामहिम, क्या कुछ घटित हो गया है ? क्या किसी अन्य राज्य की सेना ने आपके राज्य पर आक्रमण कर दिया है ?"

राजा ने उत्तर दिया कि "कौशल पर तो किसी ने आक्रमण नहीं किया है। मैंने ये सैनिक हत्यारे अगुलिमाल को पकड़ने के लिए एकत्र किये हैं। वह वहुत ही खतरनाक व्यक्ति है। अभी तक कोई उसे पकड़ नहीं सका है। वह दो सप्ताह पूर्व नगर मे देखा गया था। मेरी प्रजा अब भी उसके भय से त्रस्त है।"

बुद्ध ने कहा, "क्या आप सुनिश्चित हैं कि अगुलिमाल इतना भयकर है ?"

राजा ने कहा, "वोधिसत्व, अगुलिमाल प्रत्येक पुरुष, स्त्री और बालक के लिए खतरा है। जब तक मै उसे ढूढ़कर मार नहीं दूगा, चैन से नहीं वैठूगा।"

बुद्ध ने पूछा, "यदि अगुलिमाल अपने किये पर पश्चात्ताप करे और कभी किसी की हत्या न करने का वचन दे, यदि वह भिक्खु वन गया हो और प्राणीमात्र का आदर करने लगा हो, तव भी क्या उसे पकड़कर मार डालने की आवश्यकता रह जाएगी ?"

"गुरुवर ! यदि अगुलिमाल आपका शिष्य बन गया है और हिसा त्यागने का शील अपना लिया है, यदि वह भिक्खु का शुद्ध एव हानिरहित जीवन व्यतीत कर रहा है तो मेरी प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं। मै न केवल उसको जीवनदान दे दूगा, वरन् उसे मुक्त भी कर दूगा। मैं उसे चीवर, भोजन और औषधिया प्रदान करूगा। किन्तु मैं नहीं समझता कि ऐसा हो सकेगा।"

बुद्ध ने अहिसक की ओर सकेत किया जो उनके पीछे ही खड़ा था और कहा, "यह भिक्खु और कोई नहीं, अगुलिमाल ही है। इसने भिक्खु के शीलो पर आचरण करने की प्रतिज्ञा कर ली है। पिछले दो सप्ताहो मे यह एकदम दूसरा ही प्राणी बन गया है।

राजा प्रसेनजित ने जब पाया कि वह भयानक हत्यारे के इतने समीप खडे है, तो आतकित हो गये।

बुद्ध ने कहा, "अब इससे भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं। अब हम इसे 'अहिसक' कहते है।"

राजा ने बड़ी देर तक अगुलिमाल को कठोर दृष्टि से देखा। फिर उसको

नमन किया और पूछा, "आदरणीय भिक्खु, आपका किस परिवार मे जन्म हुआ था ? आपके पिता का नाम क्या था ?"

"महामहिम, मेरे पिता का नाम गर्ग और मेरी माता का नाम मत्रिणी (मन्तनी) था।"

"भिक्खु गर्ग-मंत्रिणी पुत्र ! कृपया मुझे चीवर, भोजन और औषधिया प्रदान करने की अनुमति दीजिए।

अहिसक ने उत्तर दिया, "महामहिम, मेरे पास तीन चीवर हैं। मै प्रतिदिन भिक्षाटन करके भोजन प्राप्त करता हू और अभी मुझे किसी प्रकार की औषधि की आवश्यकता नहीं है। आपने मुझे यह सव देने का प्रस्ताव रखा, इसके लिए हार्दिक धन्यवाद।"

राजा ने नये भिक्खु को पुनः नमन किया। उसके वाद बुद्ध को सबोधित करके वोला, "वोधिसत्व, आपकी तेजस्विता वास्तव मे अद्भुत है। आपने उन स्थितियो मे शाति और सद्भाव स्थापित किया है, जो कोई अन्य नहीं कर पाया। जिमे अन्य लोग शक्ति और हिसा के द्वारा नहीं कर पाये, उसे आपने अपनी महान कृपालुता से सभव वना दिया है। कृपया मेरी हार्दिक कृतज्ञता स्वीकार करे।"

राजा ने सेनापतियो से कहा कि वे सेना को विसर्जित कर दे और सभी लोग अपने दैनिक कार्यों मे लग जाए। इसके वाद राजा स्वय भी लौट गये।

बुद्ध ने बताया कि सद्धर्म-मार्ग के अनुसार पापपूर्ण विचार ही अधिक गभीर है क्योकि मनस तत्त्व ही कर्मों का आधार होता है। तपस्वी ने बुद्ध से अपने ये विचार तीन वार दोहराने का अनुरोध किया, जिससे वह उनके विचार अपने गुरु के समक्ष ठीक-ठीक प्रस्तुत कर सके। बुद्ध से विदा लेकर तपस्वी आचार्य नाथपुत्र के पास गया और जब वुद्ध के विचार उनके समक्ष रखे तो वह वड़ी जोर से हसे।

नाथपुत्र ने कहा कि भिक्खु गौतम बड़ी भूल कर रहे हैं। पापपूर्ण विचार और पापमय वचन सवसे बड़े पाप नहीं हैं। काया-कृत पाप ही सवसे गभीर होते हैं और उनके परिणाम अत्यन्त दूरगामी होते है। साधु तपस्वी ! तुमने मेरी शिक्षा का सार हृदयगम कर रखा है।

इस वार्तालाप के समय बहुत से अन्य शिष्य भी उपस्थित थे जिनमे उपालि भी था। उसने वुद्ध से मिलने की इच्छा प्रकट की जिससे वह बुद्ध के तर्कों को काट सके। नाथपुत्र ने उपालि को जाने की प्रेरणा दी किन्तु तपस्वी ने इसका समर्थन नहीं किया। उसे चिन्ता थी कि कहीं बुद्ध उसे अपने मत से प्रभावित न कर दे और उपालि उनका शिष्य ही बन जाए।

नाथपुत्र को उपालि पर बहुत भरोसा था इसलिए कहा, "ऐसा भय करने की कोई आवश्यकता नहीं कि उपालि हमे छोड़कर बुद्ध का शिष्य बन जाएगा। कौन कह सकता है कि गौतम स्वय ही उपालि के शिष्य बन जाए।"

तपस्वी ने तब भी उपालि को जाने से रोका किन्तु उपालि तो जाने का मन वना चुका था। जब उपालि बुद्ध से मिला तो वह बुद्ध द्वारा अपने विचार अत्यत सजीवता एव प्रेरक रूप से प्रस्तुत करने से तुरन्त प्रभावित हो गया। सात उदाहरण देकर बुद्ध ने उपालि के समक्ष सिद्ध कर दिया कि पाप पूर्ण विचार (मनसा-पाप), वाचा और कर्मणा पापो से अधिक गभीर होते है। बुद्ध जानते थे कि निर्ग्रंथ सम्प्रदाय भी अहिसा के शील को मानता है। वह जानते थे कि इनके साधु कीड़ों तक को वचाकर चलते हैं कि कहीं कोई कीडा-मकोडा पैरो से कुचल न जाए। इसके लिए वुद्ध ने उनकी प्रशसा की। इसके वाद उन्होने उपालि से पूछा, "आप एक कीड़े तक को जान-बूझकर नहीं मारते, किन्तु जव कोई कीड़ा अकस्मात् कुचल ही जाए तो क्या आपने कोई पाप कर दिया ?"

उपालि ने कहा, "आचार्य नाथपुत्र कहते थे कि यदि तुम्हारा इरादा उसे मारने का नहीं था, तो तुमने कोई पाप नहीं किया।"

वुद्ध मुस्कराकर वोले, "तव तो आचार्य नाथपुत्र इस विचार से सहमत

है कि विचार ही पाप का बुनियादी तत्त्व है। तब वह यह कैसे मानते हैं कि पापपूर्ण कर्म ही अधिक गभीर होते हैं ?"

उपालि बुद्ध के चिन्तन की स्पष्टता और सूझ-बूझ से अत्यधिक प्रभावित हुआ। उसने बाद में बुद्ध के समक्ष स्वीकार किया कि आपके पहले उदाहरण ने ही कथन के तर्क को प्रमाणित कर दिया था किन्तु वह अधिक उदाहरण देने का अनुरोध इसीलिए करता रहा, जिससे उनकी अधिकाधिक शिक्षाओ को सुन सके। जब बुद्ध ने सातवा उदाहरण समझाना समाप्त किया तो उसने बुद्ध को नमन किया और उनसे स्वय को शिष्य बनाने का अनुरोध किया।

बुद्ध ने कहा, "उपालि इस अनुरोध पर तुम्हे भली-भाति विचार कर लेना चाहिए। आपकी प्रतिभा और स्तर के व्यक्ति को कोई भी निर्णय उतावली मे आकर नहीं करना चाहिए। जब तक पूर्ण सुनिश्चित न हो जाओ, बार-बार विचार करो।"

बुद्ध के इन शब्दो से उपालि के मन मे उनके प्रति श्रद्धा और भी बढ़ गयी। वह देख रहा था कि बुद्ध स्वय अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने की खातिर ही उससे अपना सम्प्रदाय बदलने के लिए प्रेरित नहीं कर रहे थे। किसी अन्य आध्यात्मिक गुरु ने अपने सम्प्रदाय का समर्थन करने से पूर्व इस प्रकार अपने निश्चय पर पुनर्विचार करने के लिए नहीं कहा था। उपालि ने उत्तर दिया, "बोधिसत्व, मैंने इस पर गभीरता से विचार कर लिया है। कृपया मुझे बुद्ध, धम्म और सघ की शरण मे आने की अनुमति दीजिए। सच्चा और सही सद्धर्म-पथ पाकर मै बहुत प्रसन्न हू और आपका आभारी हू।"

बुद्ध ने कहा, "शिष्य उपालि, तुम निर्ग्रंथ सम्प्रदाय के प्रमुख सरक्षक बहुत दिनो से बने हुए हो। भले ही तुम मेरे शिष्य बन जाओ, कृपा करके अपने पूर्व सम्प्रदाय की सहायता करना बद मत कर देना।"

उपालि ने कहा, "गुरुवर, आप वास्तव मे बेहद भले है। आप उदारमना तथा मुक्त हृदय हैं। ऐसा गुरु मैंने अब तक नहीं देखा।"

जब तपस्वी ने आचार्य नाथपुत्र को सूचना दी कि उपालि ने बुद्ध का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया है तो नाथपुत्र को इस पर विश्वास ही नहीं हुआ। वह तपस्वी को लेकर उपालि के घर गये जहा उपालि ने स्वय इस कथन की पुष्टि की।

मगध और कौशल के अधिक-से-अधिक लोग सद्धर्म का मार्ग अपनाते जा रहे थे। बहुत से भिक्खुओ ने यह सुखद समाचार बुद्ध को उस समय दिया जब वे उनसे मिलने श्रावस्ती आये।

बुद्ध ने उनसे कहा कि सद्धर्म-पथ अपनाने वालो की सख्या बढ रही है, यह अपने आप मे सुखद समाचार है या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि भिक्खुगण अपनी धर्म-साधना कितने परिश्रम से करते हैं। हमे सफलता या विफलता की भावना मे नही फसना चाहिए। हमे सौभाग्य और दुर्भाग्य दोनो को सम भाव से अपनाना चाहिए।

एक दिन सवेरे बुद्ध और भिक्खुगण भिक्षाटन के लिए विहार से निकल ही रहे थे कि वहुत से पुलिस वाले जेतवन मे घुस आये ताकि वे एक महिला का शव वरामद कर सके। भिक्खु भौंचक्के रह गये और उनकी समझ मे नहीं आ रहा था कि महिला का शव खोजने के लिए पुलिस विहार मे क्यो आयी है। मान्य भद्दिय के पूछने पर बताया गया कि श्रावस्ती के एक वड़े सम्प्रदाय की सदस्या का नाम सुदरी है। भिक्खु पहचान गये कि इस नाम की एक सुदर युवती हाल के महीनो मे कई बार धर्म-देशना सुनने आयी थी। भिक्खुओ ने कहा भी कि यहा कुछ भी नहीं मिलेगा किन्तु पुलिस खोज करने पर अडी रही। उस समय सवको आश्चर्य हुआ जव बुद्ध की कुटी के पीछे उसका शव उथली कब्र मे दवा हुआ मिला। किसी की समझ मे नही आ रहा था कि वह महिला कैसे मरी और उसे यहा किसने गाडा। पुलिस जव शव लेकर चली गयी तो बुद्ध ने भिक्खुओ से कहा कि वे सामान्य रूप से भिक्षाटन पर जाए। उन्होने कहा कि "अपनी सचेतनावस्था की मुद्रा यथावत रखे।"

उसी दिन शाम को सुदरी के सम्प्रदाय वाले लोगो ने उसके शव का नगर मे जुलूस निकाला। वे रुक-रुक कर शहर मे लोगो से चिल्ला-चिल्लाकर कह रहे थे, "यह सुन्दरी का शव है। यह शव जेतवन विहार की उथली कब्र से वरामद हुआ है। किन्तु शाक्य वश के बुद्ध के शिष्य जो वासना रहित शुद्ध जीवन व्यतीत करने का दावा करते हैं, उन्हीं ने सुदरी के साथ वलात्कार किया है और फिर उसका शव छिपाने की चेष्टा की है। दया, करुणा, आनद और समत्व भाव सरीखी उनकी बाते सरासर झूठी हैं। अपनी आखो से देख लो।"

श्रावस्ती के नागरिक इस घटना से वडे उद्विग्न हुए। बुद्ध के अनेक श्रद्धावान शिष्यो की आस्था भी डोलने लगी। अन्य लोगो को पक्का विश्वास था कि यह जघन्य काड बुद्ध की प्रतिष्ठा को धक्का पहुचाने के लिए रचा गया षड्यत्र है जिससे वे वहुत दुखी हुए। बुद्ध की लोकप्रियता से जिन धर्म सप्रदायो को खतरा उपस्थित हो गया था, उन्हे बुद्ध की खुलकर आलोचना और सघ की निन्दा करने का एक सुअवसर हाथ आ गया था। भिक्खु जव

भी भिक्षाटन को जाते तो उनसे तरह-तरह के सवाल किये जाते और भला-बुरा कहा जाता। भिक्खुगण अपनी सौम्यता बनाये रखते और चेतनावस्था मे स्थित रहकर अपना कार्य करते रहते। लेकिन नव प्रवृज्जित भिक्खुओ के लिए अपनी ध्यानावस्था मे रहना कठिनतर होता जा रहा था। बहुत से भिक्खुओ को शर्म आती और वे नगर मे भिक्षाटन करने से आना-कानी करने लगे।

एक दिन अपराह्न मे बुद्ध ने भिक्खुओ को बुलाया और सभी को सबोधित करते हुए कहा, "अनुचित आरोप कहीं भी और कभी भी लगाये जा सकते हैं। आप लोगो को लज्जित अनुभव करने की आवश्यकता नहीं है। लज्जा का एक ही कारण हो सकता है, जब आप लोग शुद्ध जीवन-यापन की साधना के प्रयासो से विरत हो जाए। असत्य आरोप कुछ दिनो तक फैलेगे और फिर समाप्त हो जाएगे। कल जब आप भिक्षाटन के लिए जाए और कोई भी इस सबकी चर्चा करे तो आप कहना, "जो भी इस कर्म के लिए उत्तरदायी है, वह इसका फल पाएगा।"

बुद्ध के इन शब्दो से भिक्खुओ को बड़ी हिम्मत मिली। इस बीच इस घटना से अत्यधिक चिन्तित महिषी विशाखा सुदत्त के यहा गयी और इस विषय पर विस्तार मे चर्चा की। उन्होने सारे मामले की गुप्त रूप से जाच कराने का निश्चय किया जिससे असली अपराधी का पता चल सके। उन्होने अपनी योजना राजकुमार जेत को बतायी और उसने भी इस कार्य मे सहायता देने का वचन दिया।

सात दिनो के भीतर ही गुप्तचरो ने अपराधियो का पता लगा लिया। दो व्यक्ति अत्यधिक मद्यपान करके आपस मे झगडने लगे। उसी झोक मे इस रहस्य का उद्घाटन भी उन्होने कर दिया। राजकीय आरक्षी ने अपराधियो को पकड लिया। उन्होने अपराध स्वीकार करते हुए बता दिया कि सुदरी के सप्रदाय के लोगो ने ही उन्हे धन देकर सुदरी को मरवाया और बुद्ध की कुटी के पीछे गडवाया था।

राजा प्रसेनजित यह खबर बताने के लिए कि हत्यारे पकडे गये हैं, तुरन्त जेतवन गये। उन्होने सघ के प्रति अपनी अडिग निष्ठा व्यक्त की और इस बात पर हर्ष व्यक्त किया कि सभी लोगो को वास्तविकता का ज्ञान हो गया है। बुद्ध ने राजा से कहा कि इस अपराध के लिए जिम्मेदार व्यक्तियो को क्षमा कर दिया जाए। यदि लोग अपने द्वेष और घृणा को नहीं जीतेगे तो ऐसे अपराध फिर-फिर होते रहेगे।

श्रावस्ती के लोग फिर भिक्खुओ को बहुत ही सम्मान एव आदर की दृष्टि से देखने लगे।

अध्याय पचपन

उदय प्रभाती तारक का

एक दिन बुद्ध और आनद नगर के वाहर स्थित एक छोटे विहार मे गये। वे वहा उस समय पहुचे जव सभी भिक्खु भिक्षाटन को गये हुए थे। जव वे विहार मे चहलकदमी कर रहे थे तो उन्हे एक कुटिया से कष्टपूर्ण स्वर सुनायी दिया। वुद्ध एक कुटिया मे घुसे तो देखा एक दुर्वल भिक्खु एक कोने मे सिकुड़ा पड़ा है। पूरी कुटिया गदी हवा से भरी हुई थी। वुद्ध उसके पास गये और पूछा, "वन्धु तुम क्या रुग्ण हो ?"

"गुरुवर, मुझे विशूचिका हो गया है।" भिक्खु ने उत्तर दिया।

"क्या कोई आपकी देख-भाल नहीं करता ?"

"गुरुवर अन्य भिक्खु भिक्षाटन करने गये है। यहा मेरे अतिरिक्त कोई नहीं है। जव मैं पहली वार वीमार पड़ा तो कई वन्धु मेरी देख-भाल करते थे। किन्तु जव मैंने देखा कि मै किसी के काम का नहीं हू तो मैंने उनसे कह दिया कि अव मेरी अधिक देख-रेख करने की आवश्यकता नहीं है।"

वुद्ध ने आनद से पानी लाने को कहा। आनद एक वाल्टी पानी लाये तो वुद्ध ने भिक्खु को स्नान कराया, उसके वस्त्र वदले और शौच से गदे वस्त्र धोये। उन्होने कुटिया का फर्श भी खुरच-खुरच कर साफ किया। जव वे उसका धुला चीवर सुखाने डाल रहे थे तो अन्य भिक्खु भिक्षाटन से लौट आये। मान्य आनद ने उनसे पानी गर्म करने को कहा जिससे दवा तैयार की जा सके।

सभी भिक्खुओ ने वुद्ध और आनद को भोजन करने के लिए आमत्रित किया। भोजन करने के वाद उन्होने भिक्खुओ से कहा—"उस कुटिया का भिक्खु किस रोग से ग्रस्त था ?"

"वोधिसत्व, उसे विशूचिका हो गया था।"

"क्या कोई उसकी देख-रेख कर रहा था ?"

"गुरुवर, पहले तो हम देख-रेख कर रहे थे किन्तु वाद मे उन्होने स्वय ही मना कर दिया।"

"भिक्खुओ, जव हम सद्धर्म मार्ग के पथिक वनने के लिए गृह-त्याग कर देते हैं तो हमारा परिवार और माता-पिता पीछे छूट जाते है। जव भिक्खु रुग्ण हो तो हम ही यदि एक-दूसरे की देख-रेख नही करेगे तो कौन करेगा? हमे एक दूसरे का ख्याल अवश्य करना चाहिए। फिर वह रुग्ण व्यक्ति कोई गुरु हो, शिष्य हो या मित्र हो, हमे तव तक उसकी देख-भाल करनी चाहिए जव तक वह स्वस्थ न हो जाए। भिक्खुओ, यदि मै वीमार पड जाऊ तो क्या आप मेरी आवश्यकताओ का ख्याल न करेगे ?"

"निश्चय ही बुद्ध देव।"

"तव आपको रुग्ण होने वाले प्रत्येक भिक्खु की देख-भाल अवश्य करनी चाहिए। किसी भी भिक्खु को देख-भाल करना स्वय मेरी देख-भाल करने के समान है।"

भिक्खुओ ने करवद्ध हो बुद्ध देव को नमन किया।

आगामी ग्रीष्म ऋतु मे बुद्ध श्रावस्ती के पास पूर्वोधान मे रुके। उन्हीं दिनो भिक्खुनी महाप्रजापति श्रावस्ती मे भिक्खुनियो को शिक्षा प्रदान कर रही थीं। इस शिक्षण कार्य मे विम्बिसार की पूर्व पत्नी भिक्खुनी खेमा भी सहायता करती थीं। वह वीस साल पहले बुद्ध की शिष्या वन चुकी थीं किन्तु शुरू मे उसका अहकार प्रवल रहा लेकिन बुद्ध की शिक्षाओ के उपरान्त उसमे नम्रता आयी। चार वर्ष तक उपासिका के रूप मे साधना करने के वाद उसने नियमित प्रवृज्या ली थी। वह परिश्रमपूर्वक साधनाभ्यास करतीं और अव वह भिक्खुनियो की प्रमुख नेता वन गयी थी। महिषी विशाखा वहा प्रायः आ जाया करती। एक दिन वह सुदत्त–अनाथ- पिण्डिक–को भी अपने साथ लायी और भिक्खुनी खेमा, धर्माधीना, उत्पलवर्णा और पात्रचारा से भी परिचय कराया जो भिक्खुनी वनने से पूर्व ही उनकी सहेलिया थीं। इनमे से प्रत्येक का जीवन एक करुण गाथा थी।

एक दिन सुदत्त अपने साथ अपने मित्र विशाख को भिक्खुनी विद्यालय ले गया जहा धर्माधीना विख्यात अध्यापिका थीं और विशाख की रिश्तेदार भी थी। विशाख एव सुदत्त ने उस दिन धर्माधीना का धर्म-प्रवचन सुना जो उसने पच स्कन्धो और अष्टागिक मार्ग पर दिया था। इन गूढ़ सत्यो की इतनी गहन समझ धर्माधीना को है, इसे समझ विशाख आश्चर्यचकित रह

गया। जव वह जेतवन गया तो उन्होने वुद्ध को धर्माधीना के प्रवचन के विषय मे वताया।

इसे सुनकर वुद्ध ने कहा, "यदि इन विपयो पर आप मुझसे भी प्रश्न करते तो मेरा उत्तर भी वही होता जो भिक्खुनी धर्माधीना का है। उसने वास्तव मे अर्हत-पद और मुक्ति-पथ की शिक्षाओ को भली प्रकार समझ लिया है।" यह कहने के वाद उन्होने आनद से कहा कि धर्माधीना का प्रवचन कठस्थ कर लो, यह वड़ा महत्त्वपूर्ण है और सभी भिक्खुओ के लिए भी उपयोगी रहेगा।

भिक्खुनी भद्रकापालिनी भी धर्म-शिक्षा की गहन समझ के लिए विख्यात थीं और भिक्खुनी धर्माधीना की भाति उन्हे भी जगह-जगह प्रवचन देने के लिए वुलाया जाता था।

भिक्खुनी पात्रचारा की कथा वड़ी करुण थी। वह एक धनिक श्रेष्ठि की एकमात्र पुत्री थी। उसे घर से वाहर नहीं जाने दिया जाता था। विवाह योग्य आयु होने पर उसका घर के सेवक से ही प्रेम हो गया और जब उसका पिता किसी और से उसका विवाह करना चाहता था तो वह उस सेवक के साथ घर से भाग कर किसी अन्य नगर मे चली गयी और वहा उसने उस सेवक से विवाह कर लिया। कुछ समय वाद उसके एक पुत्र हुआ और दूसरे पुत्र के जन्म के समय जब वह अपने पितृ-गृह जा रही थी तो मार्ग मे ही भीषण आधी-तूफान आ गया और उसे प्रसव-पीडा होने लगी। उसका पति जगल से कुछ डाल-पत्ते लाने के लिए गया तो उसे साप ने डस लिया। वह सवेरा होने पर नवजात शिशु को एक हाथ मे लिये और दूसरे हाथ से पहले पुत्र को पकडे अपने पितृ-गृह श्रावस्ती को चल दी। रास्ते मे जो नदी पडी वह वर्पा-तूफान से उफन रही थी। उसने वड़े वेटे को इस किनारे छोड नवजात शिशु को उस पार उतारने का प्रयास किया। वह वच्चे को पानी से वचाने के लिए सिर पर रखे थी कि एक गृद्ध उसे उठा ले गया। वह चिल्लायी तो वड़े वेटे ने समझा कि मा किसी सकट मे है तो वह नदी मे उतर गया। पात्रचारा वच्चे को रोकती ही रही किन्तु वह नदी की धार मे वह गया।

आखिर दूसरे किनारे पर पहुचकर वह गिरकर वेहोश हो गयी। होश मे आने पर वह उठकर जव कई दिन पैदल चलकर श्रावस्ती पहुची तो वहा पता चला कि आधी-तूफान मे उसका घर नष्ट हो गया और माता-पिता की भी मृत्यु हो गई। जिस दिन वह वहा पहुची, उसी दिन माता-पिता का शव-सस्कार हो रहा था।

पात्रचारा सड़क पर ही गिरकर अचेत हो गई। वह अब जीवित नहीं रहना चाहती थी। कुछ लोग उसकी अवस्था पर दया खाकर उसे बुद्ध के पास ले गये। उसकी करुण कथा सुनकर बुद्ध ने कहा, "पात्रचारा, तुमने अपार कष्ट सहे हैं किन्तु जीवन केवल कष्ट और दुर्भाग्य ही नहीं है। साहसी वनो और सद्धर्म के मार्ग का साधना-अभ्यास करो। एक दिन तुम अपनी भीषणतम पीड़ा पर भी हसने मे समर्थ हो सकोगी। तुम जान सकोगी कि वर्तमान जीवन और अगले जन्म मे भी नयी शाति और आनद से कैसे जिया जा सकता है।"

पात्रचारा ने प्रणत होकर प्रवृज्या दिये जाने का अनुरोध किया। बुद्ध ने उसे भिक्खुनी महाप्रजापति के सरक्षण मे छोड़ दिया। उसे भिक्खुनी महाप्रजापति और अन्य भिक्खुनिया वहुत प्रेम करतीं। एक दिन जब वह अपने पैर धो रही थी तो उसने देखा कि पानी-पृथ्वी मे समाकर सूखता जाता है तो अकस्मात् उसे तत्त्वो की अनित्यता का वोध जागृत हुआ। अनेक दिनो तथा रातो तक उसने अपनी साधना इसी धारणा पर केन्द्रित की, तो एक दिन प्रातः काल उसके समक्ष जन्म-मरण की समस्या भी स्पष्ट हो गई। उसने तुरन्त अपने भावो को कविता रूप दे दिया :

एक दिन पैर धोते समय
मैंने जल की धारा को वहकर
पृथ्वी के गर्भ मे पुनः समाते देखा
मैंने प्रश्न किया, "जल कहा लौट गया ?"

सौम्य मौनावस्था मे ध्यान किया
चित्त और शरीर को चेतनावस्था मे रखा
मैं छः ज्ञानेन्द्रियो के विषयो का स्वरूप देखा
जैसे वे शक्तिशाली त्वरित गामी अश्व हो।

दीपक की वत्ती पर त्राटक साधना की
मैंने अपना चित्त केन्द्रीकृत किया,
समय न जाने कब कितना बीत गया,
दीपक तब भी जल रहा था।

मैंने सुई उठायी,
दीप वाती को नीचे सरका दिया
प्रकाश तुरन्त समाप्त हो गया
सब कुछ अधकार मे डूब गया।

एक ज्योति बुझ गई थी
किन्तु अकस्मात् मेरा आत्म-तेज जागा
मेरा चित्त समस्त बधनो से मुक्त था
और उदित हो गया था प्रभाती तारा।

जब पात्रचारा ने अपनी वह कविता अपनी नेता भिक्खुनी महाप्रजापति को सुनायी तो उन्होने उसकी भूरि-भूरि प्रशसा की।

उत्पलवर्णा एक अन्य भिक्खुनी थी जो बहुत से दुःख सहकर मान्य मौद्गल्यायन की कृपा से धर्म की शरण मे आयी थी। मुडित मस्तक होने पर भी वह असामान्य रूप से सुदर थी। एक दिन मान्यमौद्गल्यायन और वह नगर के एक उद्यान मे टहल रहे थे। वह पुरुष वर्ग मे कमल के समान सुदर समझी जाती थी किन्तु मान्य गौद्गल्यायन ने उसकी आखो मे तैरते दुःख को समझकर पूछा, "आप वास्तव मे सुन्दर हो और बहुत ही उत्कृष्ट वस्त्र धारण किये हो किन्तु मै देख रहा हू कि आपका हृदय दुःखो और भ्रमो से परिपूर्ण है। आपके हृदय पर दुःखो का भार बहुत अधिक है किन्तु अब भी उसी मार्ग पर चल रही हो जो और भी प्रगाढ़ अधकार की ओर ले जाता है।"

हृदय के आतरिक भावो को भी पढ़ने की क्षमता मौद्गल्यायन मे देखकर वह एकदम अवाक् रह गयी। फिर भी उसने हिम्मत जुटाकर कहा, "सभवत. आप जो कह रहे है, वह सत्य हो, किन्तु मेरे पास जीवन का यही एकमात्र मार्ग बचा है।"

मौद्गल्यायन ने कहा, "आप इतनी निराशावादी क्यो हैं ? आपका जो भी अतीत रहा हो, आप अब भी परिवर्तन कर सकती हो और अच्छे भविष्य का निर्माण कर सकती हो। गदे कपड़े धोये जा सकते हैं। भ्रमो और चिन्ताओ से भारी हृदय को आत्म-जागृति से शुद्ध किया जा सकता है। बुद्ध की शिक्षा है कि प्रत्येक व्यक्ति मे जागृत होने और शांति एव आनद प्राप्त करने की सामर्थ्य है।"

उत्पलवर्णा रोते-रोते वोली, "मेरा जीवन पाप-कर्मों और अन्यायो से भरपूर है। मुझे आशका है कि बुद्ध भी मेरी सहायता नहीं कर पाएगे।"

मौद्गल्यायन के अनुरोध पर उत्पलवर्णा ने अपनी जीवन-गाथा बतायी कि सोलह वर्षों की आयु मे विवाह होने के बाद उसके ससुर मर गये और उसकी सास अपने पुत्र से ही शरीर-संपर्क रखने लगी। उत्पलवर्णा ने एक पुत्री को जन्म दिया किन्तु अपनी सास और पति के सबधो से तंग आकर पुत्री को छोड़कर घर से भाग गयी। कुछ सालो बाद उसने एक व्यापारी से विवाह कर लिया। उसे पता चला कि उसका पति भी एक रखैल को रखे हुए है। गुप्त रूप से खोजवीन करने पर ज्ञात हुआ कि वह रखैल और कोई नहीं, उसकी अपनी वह वेटी थी जिसे वह वर्षों पहले छोड़कर भाग आयी थी।

उसका कष्ट और कटुता इतनी तीव्र थी कि वह समस्त ससार से ही घृणा करने लगी थी। न वह किसी को प्रेम करती थी और न किसी का भरोसा। वह नर्तकी वन गयी थी और धन, रत्न और भौतिक सुख प्राप्त करने मे जुट गयी। उसने स्वीकार किया कि जब वह मौद्गल्यायन के पास से गुजर रही थी तो वह मौद्गल्यायन को ही पटाने की फिक्र मे थी।

उत्पलवर्णा ने अपना मुह ढक लिया और सुवकने लगी। मौद्गल्यायन ने उसे रोने दिया जिससे उसका मन हल्का हो सके। इसके बाद उन्होने उसे सद्धर्म का मार्ग वताया और वुद्ध से मिलाने ले गये। बुद्ध ने उससे सात्वना भरे शब्दो के वाद पूछा कि क्या वह भिक्खुनी महाप्रजापति के नेतृत्व मे सद्धर्म का अध्ययन करना चाहेगी। उसको प्रवृज्या दी गयी और चार वर्षों के ही परिश्रमपूर्ण साधना-अभ्यास के पश्चात् हर कोई उसको साधिका का अपूर्व उदाहरण वताने लगे थे।

भाग तीन

अध्याय छप्पन

पूर्णतम सचेत प्राणायाम

भिक्खुनियो के विहार मे कभी तो स्वय बुद्ध और कभी कोई वरिष्ठ शिष्य धर्म-देशना करने चला जाता। महीने मे एक बार भिक्खुनिया जेतवन मे या पूर्वोद्यान मे धर्म-देशना सुनने आया करती थीं। एक साल, मान्य सारिपुत्त के सुझाव पर बुद्ध ने वर्षा-प्रवास की अवधि एक महीना और वढा दी। सारिपुत्त समझते थे कि वर्षा-प्रवास की अवधि एक महीने वढ़ा देने से दूर-दूर के केन्द्रो के भिक्खुगण और भिक्खुनिया अपना वर्षा-प्रवास समाप्त करके श्रावस्ती तक आ सकते है और स्वय बुद्ध के श्रीमुख से धर्म-देशना सुनने का सुअवसर पा सकते हैं। और, वास्तव मे वहुत से लोग आए भी। उपासक सरक्षक सुदत्त, विशाखा और मल्लिका ने तीन हजार भिक्खु-भिक्खुनियो के रहने और खाने की व्यवस्था अपने साधनो से की थी। प्रत्येक वर्षा-प्रवास की समाप्ति पर आयोजित होने वाला समारोह उस दिन आसौज की बजाय कार्तिक पूर्णिमा के दिन पड़ा।

कार्तिक पूर्णिमा के दिन सर्वत्र कुमुद खिल रहे थे। श्वेत कमल-कुमुद--प्रतिवर्ष इन्हीं दिनो खिला करते है। इसलिए कार्तिक पूर्णिमा को कुमुद दिवस भी कहते है। उस रात बुद्ध अपने तीन हजार शिष्यो के साथ आकाश मे फैली चन्द्रिका का स्नान कर रहे थे। सरोवर से कुमुदो की मद-मद सुगध वातावरण को सुरभित कर रही थी। समस्त भिक्खु और भिक्खुनिया शात वैठे हुए थे और बुद्ध सघ पर सतोषपूर्ण दृष्टि डाल रहे थे और उनके साधना-परिश्रम की सराहना कर रहे थे। बुद्ध ने इस अवसर का 'पूर्णतम श्वसन-क्रिया सूत्र' की देशना करने के लिए उपयोग किया।

वस्तुतः प्रत्येक भिक्खु और भिक्खुनी को जो वहा उपस्थित थे, श्वसन-क्रिया की सचेतनावस्था की प्रक्रिया सिखाई गई थी। किन्तु यह पहला अवसर था
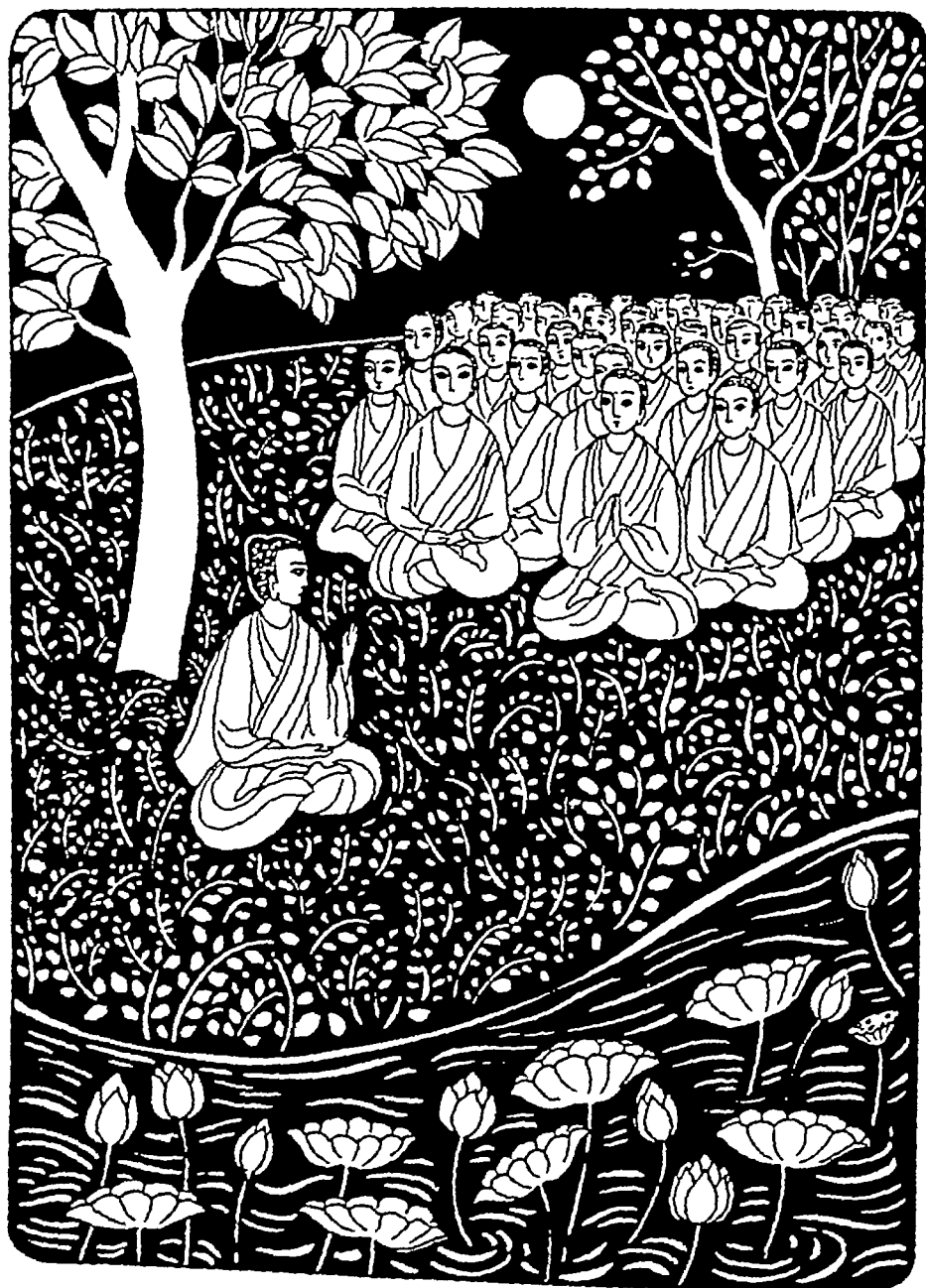
3,000 शिष्यों के समक्ष चांदनी रात में
बुद्ध द्वारा प्राणायाम सूत्र की देशना

जव अधिकाश शिष्यो को इस विषय की देशना स्वय बुद्ध के श्रीमुख से सुनने को मिल रही थी।' यह पहला अवसर था जव बुद्ध ने पूर्णतम सचेत प्राणायाम सवधी सभी शिक्षाओ को एक साथ सक्षिप्त रूप से शिष्यो के समक्ष प्रस्तुत किया था। मान्य आनद ने बुद्ध की देशना वहुत ध्यान से सुनी क्योकि वह समझते थे कि यह सूत्र, सघ के सभी केन्द्रो तक प्रसारित करने की दृष्टि से वहुत महत्त्वपूर्ण होगा।

इस अवसर पर आने वालो मे राहुल की माता भिक्खुनी यशोधरा और भिक्खुनी सुन्दरी नदा भी थी। भिक्खुनी गौतमी द्वारा कपिलवस्तु के उत्तर मे स्थापित विहार मे ही वे साधना- अभ्यास करती थीं। अपनी सास द्वारा प्रवृज्या ग्रहण करने के छ. महीनो के वाद ही यशोधरा ने भी प्रवृज्या ग्रहण कर ली थी और एक वर्ष की साधना के उपरान्त ही, वह भिक्खुनी गौतमी की प्रधान सहायिका वन गई थी।

भिक्खुनियो का पुरा प्रयास रहता कि वे श्रावस्ती मे किए गए सभी वर्षा-प्रवासो मे उपस्थित रहे ताकि स्वय बुद्ध और उनके वरिष्ठ शिष्यो की पत्यक्ष देशना सुन सके। रानी मल्लिका और महिषी विशाखा भिक्खुनियो की पूर्ण ह्दय से सहायता कर रही थीं। ,दो वर्षो तक तो भिक्खुनियो को राजमहल के उद्यान मे ही रहने को स्थान दिया गया था किन्तु तीसरे वर्ष मे रानी मल्लिका और महिषी विशाखा के सहयोग से भिक्खुनियो के लिए पृथक् विहार वनवा दिया गया था। वयोवृद्धता के कारण भिक्खुनी गौतमी भिक्खुनियो मे से नए नेताओ को उभर कर आने की ओर पूरा ध्यान दे रही थी। इन नवोदित नेताओ मे भिक्खुनी यशोधरा, शैला, विमला, सोमा, नादुत्तरा आदि थी। इसी दिन पूर्वोद्यान मे ये सभी आई थीं। राहुल ने भिक्खु श्रेष्ठ स्वास्ति का परिचय भिक्खुनी यशोधरा और भिक्खुनी सुन्दरी नदा से कराया। स्वास्ति इन लोगो से मिलकर वहुत अधिक प्रभावित हुआ।

बुद्ध ने सूत्र की देशना आरभ की

"भिक्खुओ और भिक्खुनियो, पूर्णतम सचेत प्राणायाम का सतत विकास किया जाए और निरन्तर साधना की जाए तो इसका धर्म-साधना मे श्रेष्ठ परिणाम और लाभ प्राप्त होता है। इससे सचेतनावस्था के चारो चरणो और महा वैरोचन अथवा आत्म-जागृति के सातो पक्षो की साधना मे सफलता प्राप्त होती है जिसमे प्रज्ञा का उदय होता है और निर्वाण शात की स्थिति तक पहुचना सभव होता है।

"इसके लिए साधना-अभ्यास इस प्रकार करना है—

"**पहली श्वास :** गहरी सास खींचते (पूरक प्राणायाम) समय मुझे ज्ञात हो कि मैं गहरी श्वास ले रहा हू। गहरी श्वास छोड़ते (रेचक प्राणायाम) समय मुझे ज्ञात हो कि मैं गहरी श्वास छोड़ रहा हू।

"**दूसरी श्वास :** छोटी श्वास खींचते समय मुझे ज्ञात हो कि मैं छोटी श्वास ले रहा हू। लघु श्वास छोड़ते समय भी मुझे ज्ञात हो कि मैं लघु श्वास ही छोड़ रहा हू।

"इन दो श्वासो से विस्मरण और अनावश्यक विचारो का आना समाप्त होता है। साथ ही सचेतनता बढ़ती है और जीवन के वर्तमान क्षणो का सामना करने की सामर्थ्य आती है। सचेतनता का अभाव ही विस्मरण है। पूर्ण सचेतन प्राणायाम से आप अपने तेजस स्वरूप को अपनाते हैं और तदनुसार जीवन्तता की ओर लौटते हैं।

"**तीसरी श्वास :** भीतरी श्वास खींचते समय मैं अपनी सपूर्ण काया के प्रति सजग हू और उस श्वास को छोड़ते समय भी अपनी सपूर्ण काया के प्रति जागरूक हू।

"इस श्वास से आप अपने शरीर की धारणा करते हैं और अपने शरीर के साथ जीवन्त सबध जोड़ते है। सपूर्ण शरीर और शरीर के समस्त अगो के प्रति जागरूक होने से आप अपने शरीर की अद्भुतता की अनुभूति करते है और आपके शरीर के साथ घटित होने वाली जन्म और मरण की प्रक्रिया को भी समझ पाते है।

"**चौथी श्वास :** मैं श्वास भीतर खींच रहा हू और अपनी सपूर्ण काया को सहज एव शात बना रहा हू। मैं श्वास का रेचन कर रहा हू और इससे अपनी सपूर्ण काया को सहज एव शान्त बना रहा हू।

"इस श्वास से आपके शरीर को सहजता और शाति प्राप्त होती है जिससे हम उस अवस्था मे पहुच जाते है, जिसमे चित्त, शरीर और श्वास-प्रश्वास एक सामजस्यपूर्ण वास्तविकता बन जाते हैं।

"**पांचवीं श्वास :** मैं श्वास भीतर खींच रहा हू और आनद का अनुभव कर रहा हू। मैं श्वास का रेचन कर रहा हू और आनद अनुभव कर रहा हू।

"**छठी श्वास :** मैं भीतर श्वास खींचते हुए प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हू और श्वास रेचन के साथ प्रसन्नता की अनुभूति कर रहा हू।

"इन दो श्वासो से आप भावनाओ के जगत के पार चले जाते है। इन दो श्वासो से शान्ति और आनन्द उत्पन्न होता है जिससे चित्त और शरीर

को पोषण प्राप्त होता है। विभ्रम और विस्मरण की परिसमाप्ति पर आप अपने 'स्व' मे स्थित हो जाते है और वर्तमान क्षण के प्रति पूर्ण जागरूक होते हैं। इसमे आपके अतस मे प्रसन्नता और आनद का उदय होना सभव होता है।

"आप जीवन की अद्‌भुतताओ को जीते है और सचेतनताजन्य शांति और आनद की अनुभूति करने मे सक्षम होते है। जीवन की अद्‌भुतताओ से साक्षात्कार होने के कारण आप अपनी तटस्थ भावनाओ को हर्षपूर्ण भावनाओ मे परिवर्तित कर पाते हैं। इस प्रकार ये दो श्वासे सुखद भावनाओ की दिशा मे ले जाती हैं।

"**सातवीं श्वास** : मै श्वास खींच रहा हू और अपने चित्त मे चल रही गतिविधियो के प्रति सचेत हो रहा हू। मै श्वास के रेचन के समय भी अपने चित्त की गतिविधियो के प्रति जागरूक हो रहा हू।

"**आठवीं श्वास** : मै श्वास ले रहा हू और अपने चित्त की गतिविधियो को सहजता एव शांति की ओर ले जा रहा हू। मै श्वास का रेचन कर रहा हू और अपने चित्त की गतिविधियो को सहज एवं शात कर रहा हू।

"इन दो श्वासो के माध्यम से आप अपने मन मे उठ रही सभी भावनाओ को स्पष्टतः समझ रहे होते है—फिर चाहे वे भावनाए सुखद, दुखद या तटस्थता भाव की ही क्यो न हो, और इस प्रकार उन भावनाओ को शान्त और कोमल बनाने मे सक्षम होते है। इस सदर्भ मे चित्त की गतिविधियो का अर्थ भावनाएं हैं। जब आप अपनी भावनाओ को समझते हैं और उनकी वास्तविक प्रकृति और उनके मूल कारणो का ज्ञान प्राप्त कर लेते है, तो आप उन पर नियत्रण कर सकते है, उन्हे शान्त और सुमधुर बना सकते हैं, भले ही वे दुखद विचार ही क्यो न हो जो कामनाओ, क्रोध या द्वेष के कारण उत्पन्न हुए हो।

"**नौवीं श्वास** · मैं श्वास ले रहा हू और अपने चित्त के प्रति सचेतन हू। मै श्वास को रेचन कर रहा हू और चित्त के विषय मे सचेत हू।

"**दसवीं श्वास** : मै श्वास ले रहा हू और अपने चित्त को हर्षयुक्त और शात बना रहा हू। मै श्वास का रेचन कर रहा हू और चित्त को हर्षयुक्त और शान्त कर रहा हू।

"**ग्यारहवीं श्वास** : मै श्वास खींच रहा हू और अपने चित्त को एकाग्र कर रहा हू। मै श्वास का रेचन कर रहा हू और चित्त को एकाग्र कर रहा हू।

"**बारहवीं श्वास** · मै श्वास खींच रहा हू और अपने चित्त को मुक्त कर रहा हू। मैं श्वास का रेचन कर रहा हू और अपने चित्त को मुक्ति प्रदान कर रहा हू।

"इन चार श्वसन-क्रियाओ के माध्यम से तीसरे क्षेत्र—चित्त को पार कर लेते है। नौवीं श्वास आपको मन की सभी अवस्थाओ, यथा—अवधारणाओ, विचार-क्षमता, भेद-भाव वाले विचारो, हर्ष, विषाद तथा शकाओ का परिचय पाने मे सहायक होती है। इन अवस्थाओ पर धारणा एव ध्यान करने से आप चित्त की गतिविधियो के गहन द्रष्टा बन जाते है। जब आप चित्त की गतिविधियो को देखकर पहचान जाते है तो अपने चित्त को एकाग्र कर सकते है और उसे सहज एव शात बनाने मे समर्थ हो पाते हैं। यह स्थिति दसवीं और ग्यारहवीं श्वास से सभव होती है। बारहवीं श्वास के द्वारा आप चित्त की सभी बाधाओ को समाप्त करने मे सक्षमता प्राप्त कर लेते है। अपने चित्त को प्रकाशवान बनाकर आप सभी मानसिक सकल्प-विकल्पो का मूल कारण देख-समझ पाते है और इस प्रकार उन बाधाओ को समाप्त करने की स्थिति मे आ जाते हैं।

"**तेरहवीं श्वास** : मैं श्वास भीतर खींच रहा हू और सभी धर्मों की अनित्य प्रकृति को देख रहा हू। मैं श्वास का रेचन करते हुए सभी धर्मो की अनित्यता की अनुभूति कर रहा हू।

"**चौदहवीं श्वास** : मै श्वास भीतर खींच रहा हू और सभी धर्मों का क्षय होते देख रहा हू। मै श्वास के रेचन के समय भी सभी धर्मो को क्षय होते देख रहा हू।

"**पंद्रहवीं श्वास** . मे श्वास भीतर खींच रहा हू और मुक्ति की धारणा कर रहा हू। मैं श्वास के रेचन मे भी मुक्ति की ही धारणा कर रहा हू।

"**सोलहवीं श्वास** · मैं श्वास भीतर खींच रहा हू और जगत् मे आवागमन की परिसमाप्ति की धारणा कर रहा हू। श्वास के रेचन के समय भी मैं जागतिक आवागमन की परिसमाप्ति की धारणा कर रहा हू।"

"इन चार श्वासो के माध्यम से साधक चित्त की तन्मात्राओ को पीछे छोड देता है और समस्त धर्मों के प्रकृत स्वरूप को देखने पर ध्यान केन्द्रित करता है। पहली स्थिति तो सभी धर्मों की अनित्यता की अवस्था है। जब सभी धर्म अनित्य है तो उनका क्षय होना भी निश्चित है। जब आप सभी धर्मो की अनित्यता और उनके क्षय के तथ्य से साक्षात्कार कर लेते हैं तो आप जन्म-मरण के अनत चक्र से बधे नहीं रहते। उसके बाद आप निर्वाण

शात की स्थिति प्राप्त कर लेते है। निर्वाण शात का अर्थ जीवन से विरक्ति या जीवन से भागना नहीं है। इसका अर्थ है सभी प्रकार की कामनाओ और मोहो की माया से मुक्त हो जाना जिससे जन्म-मरण के अन्तहीन चक्र से वधे रहने की दुखद अवस्था समाप्त हो जाए। एक वार मुक्त हो जाने पर आप जीवन जीते हुए भी शाति और आनद की अवस्था मे रह सकते है। इसके वाद जीवन के साथ किसी प्रकार का वधन शेप नहीं रहता।"

इस प्रकार वुद्ध ने पूर्णतया सचेत श्वसन-क्रिया (प्राणायाम) की सोलह प्रक्रियाओ के माध्यम से वताया कि किस प्रकार शरीर, भावनाओ, चित्त और चित्त की तन्मात्राओ को गहन द्रष्टा वनकर देखना है। उन्होने प्राणायाम की इन सोलह प्रक्रियाओ से सात विवेचन अथवा आत्म- जागृति के सात तत्त्वो से इस प्रकार सम्वद्ध करके दिखाया कि इन पक्रियाओ से पूर्ण सचेत ध्यान, धर्मों की मूल प्रकृति की खोज, ऊर्जा, आनद, सहजावस्था, ध्यान-समाधि और निर्वाण शात की प्राप्ति हो सकती है।

मान्य स्वास्ति ने सचेतनावस्था के चार चरणो के विपय मे तो सुन रखा था, अब उसने भली-भाति समझ लिया था कि 'प्राणायाम द्वारा पूर्ण जागृति सूत्र' से वह अब इन चारो चरणो की गहन साधना कर सकता है। उसने देखा कि ये दोनो सूत्र किस प्रकार एक-दूसरे के पूरक है और दोनो ही ध्यान-समाधि की दृष्टि से कितने आधारभूत महत्त्व के है।

उस रात तीन हजार भिक्खुओ और भिक्खुनियो ने धवल चद्रिका मे वैठकर कितने हर्षोल्लास से वुद्ध की देशना सुनी। इस समागम को सभव वनाने की मान्य सारिपुत्त की सूझ-वूझ पर स्वास्ति गद्गद हो गया।

एक दिन भिक्खु अहिसक भिक्षाटन से लौटा तो उसके सारे वस्त्र रक्त मे सने थे और चोटो के कारण वह चलने मे भी असमर्थ प्राय था। स्वास्ति दौड़कर उसके पास गया तो अहिंसक ने कहा कि मुझे वुद्ध के पास ले चलो। उसने वताया कि जव वह नगर मे भिक्षाटन कर रहा था तो कुछ लोगो ने पहचान लिया कि वह पहले का हत्यारा अगुलिमाल है। उन्होने मुझे घेर लिया और पीटना शुरू कर दिया। अहिसक हाथ जोडे सवकी मार सहता रहा जिससे वे मन के क्रोध और घृणा की भड़ास निकाल ले। वे लोग उसे तव तक पीटते रहे जव तक उसको रक्त-वमन नहीं होने लगा।

जव वुद्ध ने देखा कि अहिंसक को वहुत चोटे लगी है तो उन्होने आनद

से कहा कि कर-प्रक्षालन पात्र, जल और तौलिया लाओ जिससे इस भिक्खु के शरीर का रक्त साफ किया जा सके। उन्होने स्वास्ति से कहा कि शीघ्र ही कुछ बूटिया तोड लाओ और उनकी पुल्टिस बनाकर घावो पर लगा दो।

यद्यपि उसे बहुत पीड़ा का अनुभव हो रहा था किन्तु अहिंसक चीखा-चिल्लाया नहीं। बुद्ध ने कहा कि "तुम्हारी आज की पीडा तुम्हारे अतीत के सभी पापो को धो डालेगी। प्रेम और जागरूकता के साथ पीड़ा को सह जाना हजारो जन्मो की कटु घृणा को भी नष्ट करने मे समर्थ है। अहिंसक तुम्हारा चीवर तो फटकर तार-तार हो गया। तुम्हारा भिक्षा-पात्र कहा है ?"

"प्रभुवर, उसे उन लोगो ने तोड़ डाला।"

"मे आनद से कहूगा कि वह तुम्हारे लिए नया चीवर और भिक्षा-पात्र लाकर दे।"

जब स्वास्ति अहिंसक के घावो पर पुल्टिस बाध रहा था तो उसने अनुभव किया कि अहिंसक ने अहिंसा का कितना महान उदाहरण प्रस्तुत किया है। मान्य भिक्खु अहिंसक ने भिक्षाटन के दौरान इसके पहले घटित एक अन्य घटना सुनाई।

वन मे एक वृक्ष के नीचे अहिंसक ने देखा कि एक महिला प्रसव-पीड़ा से तड़प रही है। उसे अत्यधिक कष्ट था और बच्चा भी हो नहीं रहा था। उसे देखकर अहिंसक चिल्ला उठा, "कितनी भयकर पीड़ा है।" वह दौड़कर बुद्ध के पास आए और पूछा कि ऐसी अवस्था मे क्या किया जा सकता है ?

बुद्ध ने कहा, "उसके पास दौडकर जाओ और कहो, 'बहिन, जिस दिन से मैं जन्मा हू, मैंने जान-बूझकर किसी प्राणी को कष्ट नहीं पहुचाया है। इसके बदले मे, ईश्वर आपको और आपके बच्चे को सुरक्षित रखे।"

अहिंसक ने कहा, "यदि मैंने यह कहा, तो यह तो असत्य-भाषण होगा। सत्य यह है कि मैने बहुत से प्राणियो को हानि पहुचायी है।"

बुद्ध ने कहा, "तब जाओ और उनसे कहो, बहिन, जब से मैं सद्धर्म की शरण मे आया हू, मैंने जान-बूझकर किसी भी प्राणी को हानि नहीं पहुचायी। इसके बदले ईश्वर आप और आपके बच्चे को शातिपूर्वक सुरक्षित रखे।"

अहिंसक दौडता हुआ वन मे गया और जोर से वे शब्द कहे। इसके कुछ मिनट बाद ही महिला ने शिशु को सुरक्षापूर्वक जन्म दिया।

मान्य अहिंसक सदधर्म के मार्ग पर काफी अधिक आगे निकल चुके थे जिनकी बुद्ध सर्वाधिक प्रशसा करते थे।

अध्याय सत्तावन

नौका ही तट नहीं

उस शरद् ऋतु मे बुद्ध वैशाली मे ही ठहरे। एक दिन जब वह कूटागारशाला धर्म-कक्ष के समीप ही ध्यान-समाधि मे बैठे थे तो विहार के दूसरे भाग मे अनेक भिक्खुओ ने आत्म-हत्या कर ली। जब बुद्ध को इसकी सूचना दी गई तो उन्होने पूछा कि उन लोगो ने क्यो आत्म-हत्या की। उन्हे बताया गया कि शरीर की अनित्यता और क्षयशीलता पर जब वे लोग ध्यान-साधना कर रहे थे तो इन लोगो को शरीर से वितृष्णा हो गई और जीवित ही रहना नहीं चाहते थे। यह सुनकर बुद्ध अवसादग्रस्त हो गए। उन्होने सभी शेष भिक्खुओ को बुलवाया।

उन्होने कहा, "भिक्खुओ, हम शरीर की अनित्यता और क्षयशीलता पर इसलिए ध्यान करते है, जिससे हम शरीर-धर्मों की प्रकृत अवस्था को समझ सके और उनके बधन मे न फसे। आत्म-जागृति (महाविरोचन) और निर्वाण शात की स्थिति जगत् से भाग कर प्राप्त नहीं की जा सकती। इनकी अनुभूति तभी की जा सकती है, जब हम समस्त शरीर धर्मों को प्रकृत अवस्था की गहराई से जान ले। इन बधुओ ने इस स्थिति को ठीक से समझा ही नहीं और मूर्खतावश पलायन का मार्ग अपना लिया। यह करके उन्होने 'अहिंसा' के शील का उल्लघन किया है।

"भिक्खुओ, मुक्त प्राणी न तो शरीर-धर्मों से बधा रहता है और न उनके प्रति चित्त मे वितृष्णा रखता है। उन धर्मों से चिपके रहना अथवा उनके प्रति वितृष्णा रखना दोनो ही बधन के कारण हैं। शाति और निर्विकल्प अवस्था मे चित्त को स्थापित करने के लिए मुक्त प्राणी इन दोनो के ऊपर उठ जाता है। इस हर्षावस्था का मापन सभव नहीं है। मुक्त प्राणी न तो नित्यता और पृथक् आत्मा के सीमित विचारो से बधा रहता है और न अनित्यता और

अनात्म-भाव के सकीर्ण विचारो से। भिक्खुओ, रागातीत भाव से बुद्धिमत्तापूर्वक देशना का अध्ययन और साधना-अभ्यास करो।" बुद्ध ने भिक्खुओ को प्राणायाम-साधना प्रत्यक्ष करके दिखाई जिससे सब लोगो को नव-प्रफुल्लता प्राप्त हो सके।

जब वह श्रावस्ती वापस आए तो अरिष्ट नामक भिक्खु के प्रश्नो के उत्तर मे बुद्ध ने आगे शिक्षा दी कि मोहाशक्ति से कैसे बचा जा सकता है। अरिष्ट भी धर्म-देशनाओ का भ्रात अर्थ समझकर सकीर्ण विचारो मे फसा हुआ था। जेतवन मे भिक्खुओ के समक्ष बैठकर बुद्ध ने देशना की कि "यदि धर्म-देशना को अज्ञतावश ठीक से न समझा जाए तो सभव है कि साधक सकीर्ण विचारो मे फस जाए और स्वय अपने लिए अथवा अन्य लोगो के लिए दुख के कारण उत्पन्न कर दे। आपको धर्म-शिक्षा निस्पृह होकर बुद्धिमत्तापूर्वक सुननी, समझनी और साधना-अभ्यास मे अपनानी चाहिए। यदि कोई सर्प की उपस्थिति देख लेता है तो आकड़ेदार वस्तु से सर्प की गर्दन दबाकर फिर साप को पकडता है। यदि वह ऐसा न करके साप को सीधे पूछ या बीच मे से पकडेगा तो सर्प उसे आसानी से डस लेगा। जिस प्रकार आप सर्प को पकडने के लिए अपनी बुद्धि का प्रयोग करोगे, वैसे ही धर्म-शिक्षाओ को बुद्धिमत्तापूर्वक अपनाना चाहिए।

"भिक्खुओ, ये शिक्षाए तो केवल यथार्थ-सत्य का वर्णन करती हैं। इन्हे स्वय सत्य समझने की भूल मत करो। चन्द्रमा की ओर सकेत करती उगली मात्र यह बताती है कि चद्रमा को किधर देखो। उगली स्वय में चंद्रमा नहीं है। यदि तुम उस उगली को ही चन्द्रमा समझ लोगे तो चद्रमा का दर्शन कभी नही कर पाओगे।

"शिक्षाए तो उस तट तक जाने के लिए नौका मात्र है। किन्तु नौका स्वय मे दूसरा किनारा नहीं है। समझदार व्यक्ति दूसरे तट पर पहुचकर नौका को सिर पर रखे नहीं फिरेगा। भिक्खुओ! मेरी देशना जन्म-मरण के दूसरे तट तक ले जाने वाली नौका मात्र है। दूसरे तट तक जाने के लिए नौका प्रयोग करो किन्तु उसे अपनी सपत्ति समझकर अपने साथ मत लिए फिरो। देशनाओ से ही बधे मत रह जाओ। तुम्हे उस नौका को सरिता पार करके छोड देना चाहिए।

"भिक्खुओ, मैंने आप लोगो को चार आर्य सत्यो, आत्म-जागृति (महाविरोचन) के जो सात तत्त्व बताए हैं, अनित्यता, अनात्म स्थिति, दुख, शून्यता, अनस्तित्व और लक्ष्यहीनता के विषय मे जो देशना दी है, उसका बुद्धिमत्तापूर्वक मुक्त-भाव

से अलग करना चाहिए। इन समस्त देशनाओ का प्रयोग 'निर्वाण शात' की स्थिति तक पहुचने के लिए सहायता के रूप मे करो। इन देशनाओ के बधनो मे मत पडो।"

भिक्खुनियो के विहार मे पाच सौ भिक्खुनिया निवास करती थी। वे प्राय: बुद्ध या अन्य मान्य भिक्खुओ को जेतवन से आकर धर्म-शिक्षा देने के लिए आमत्रित किया करती थी। बुद्ध ने आनद से कह रखा था कि वह किसी मान्य भिक्खु को वहा भेजकर भिक्खुनियो को धर्म-शिक्षा देने की व्यवस्था कर दिया करे। एक दिन उन्होने मान्य माड को वहा जाने के लिए कहा। मान्य माड साधन-अभ्यास के क्षेत्र मे बहुत प्रगति कर चुके थे किन्तु उन्हे भाषण करना नहीं आता था। अगले दिन भिक्षाटन करके वन मे अकेले ही भोजन ग्रहण करने के बाद वह भिक्खुनियो के विहार गए। भिक्खुनियो ने उनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया और भिक्खुनी गौतमी ने उनको मच पर आसीन किया और धर्म-देशना करने का अनुरोध किया।

उन्होने अपने आसन पर बैठकर धर्म-देशना के स्थान पर छोटी-सी कविता सुनाई :

"अगाध शांति मे स्थित होना,
धर्म को स्पष्ट समझना,
घृणा और हिंसा के बिना
मूल स्रोत की ओर प्रत्यावर्तन से
अपार आनद और शाति मिलती है।
पूर्णतम आत्म-जागृति से
सच्ची शांति और अनासक्ति आती है।
सभी कामनाओ के पार हो जाना ही
सर्वोत्तम सर्वोत्फुल्लता है।"

मान्य भिक्खु ने इससे आगे कुछ नहीं कहा वरन् वहीं बैठे-बैठे गहन समाधि-अवस्था मे पहुच गए। यद्यपि उन्होने कुछ ही शब्द बोले थे, किन्तु उनकी उपस्थिति से शान्ति और प्रसन्नता वातावरण मे भर गई थी। हालाकि कुछ युवा भिक्खुनियो ने उनकी लघु देशना पर निराशा व्यक्त की और भिक्खुनी गौतमी से कहा कि कृपया उनसे पूछिए कि वह कुछ और देशना करना चाहेगे। भिक्खुनी गोतमी ने मान्य भिक्खु माड के समक्ष प्रणत होकर युवा भिक्खुनियो की इच्छा व्यक्त की। किन्तु मान्य माड ने दुबारा वही कविता दोहरा दी और मच से उतर आए।

कुछ दिनो के पश्चात्, बुद्ध को मान्य माड की धर्म-देशना के विषय मे वताया गया। बुद्ध से कहा गया कि भविष्य मे वह ऐसे प्रतिभावान मान्य भिक्खुओ को ही भेजा करे जो धर्म-देशना पर अच्छे वक्ता हो किन्तु बुद्ध ने कहा कि शब्दो की अपेक्षा साधक व्यक्ति की उपस्थिति अधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

एक दिन सवेरे भिक्षाटन से लौटने पर बुद्ध ने आनद को कहीं भी नही देखा। मान्य राहुल तथा अन्य भिक्खुओ ने भी बताया कि हमने भी उनको नहीं देखा। तब एक भिक्खु ने बताया कि उसने आनद को अस्पृश्यो के एक समीपस्थ गाव मे भिक्षाटन के लिए जाते देखा था। बुद्ध ने उसे कहा कि वहा जाकर आनद को खोजकर लाओ। भिक्खु को वहा आनद मिल गए और वह उनको लेकर लौटा। उनके साथ दो महिलाए भी थीं, एक मा और दूसरी उसकी वेटी प्रकृति।

आनद ने बुद्ध को वताया कि उसे गाव मे कैसे विलम्ब हो गया। कई सप्ताह पहले एक दिन भिक्षाटन के पश्चात् आनद को विहार की ओर आते समय वहुत जोर की प्यास लगी। वह अस्पृश्यो के गाव मे कुए के समीप पानी पीने के लिए रुक गए। वहा प्रकृति कुए से बाल्टी मे पानी खींच रही थी। वह वहुत सुदर युवती थी। आनद ने उससे पानी पिलाने के लिए कहा, किन्तु, उसने यह कहकर मना कर दिया कि वह अस्पृश्या है और पानी पिलाकर किसी भिक्खु को अपवित्र नहीं करना चाहती।

आनद ने कहा कि "मुझे उच्च पद या वर्ण की आवश्यकता नहीं है। मुझे तो मात्र जल चाहिए जिसे आपसे पाकर मुझे प्रसन्नता होगी। कृपया इस वात से न डरे कि आप मुझे अपवित्र कर देगी।"

प्रकृति ने तुरन्त उन्हे जल पिला दिया। उसे इस कृपालु, सुदर और मृदुभाषी भिक्खु से गहन प्रेम हो गया। रात को वह सो नहीं सकी और आनद के विषय मे ही सोचती रही। उसके वाद वह प्रतिदिन कुए पर इस आशा मे प्रतीक्षा करती रहती कि उसे आनद की एक झलक देखने को मिल जाएगी। अत मे उसने अपनी मा को इस वात के लिए तैयार कर लिया कि वह आनद को अपने यहा भोजन पर आमन्त्रित कर ले। आनद ने उसका निमत्रण दो वार स्वीकार कर लिया किन्तु ज्यो ही उन्हे लगा कि वह युवती उन्हे प्रेम करने लगी है, उन्होने आगे निमत्रण स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

प्रकृति तो उसके प्रेम मे पागल थी जिसके कारण वह दुबली होती गई और शरीर-कांति पीली पडती गई। आखिरकार, उसने अपनी मा से अपनी

कुए से खींचकर आनंद को जल पिलाती प्रकृति

व्यथा वताई कि वह चाहती है कि आनद भिक्खु सघ त्यागकर उससे विवाह कर ले। यह सुनकर उसकी मा ने उसे डाटा और कहा कि उसका प्रेम मूर्खतापूर्ण है और इसकी प्राप्ति असभव है। किन्तु प्रकृति ने कहा कि आनद को त्यागने की अपेक्षा वह मर जाना पसद करेगी। अपनी पुत्री .की रक्षा के लिए मा ने अपनी वच्ची की कामना पूरी करने के लिए जाल विछाया। वह मातग जाति की थी और उसे जादू-टोना आता था।

उस दिन प्रकृति आनद से राह मे मिली और उनसे अपने घर आने का उसका अतिम निमत्रण स्वीकार करने का अनुरोध किया। आनद को विश्वास था कि वह प्रकृति और उसकी मा को ऐसी शिक्षा दे सकेगा, जिससे प्रकृति उसकी कामना त्याग देगी। लेकिन ज्यो ही उन्होने मादक द्रव्य युक्त चाय पी उन्हे अपना सिर घूमता और शरीर शिथिल होते लगा और उन्हें शिक्षा देने का कोई अवसर ही नहीं मिला। आनद ने तुरन्त ताड़ लिया कि उनके साथ क्या कर दिया गया है। उन्होने मादक द्रव्य का उपचार करने के लिए तुरन्त प्राणायाम क्रियाए आरभ कर दीं। वुद्ध के भेजे हुए भिक्खु ने आनद को प्रकृति की कुटिया मे पद्मासन पर वैठे हुए पाया।

वुद्ध ने मृदुल वाणी मे प्रकृति से पूछा, "तुम भिक्खु आनद को वहुत अधिक प्रेम करती हो ? है, न ?"

प्रकृति ने कहा, "मैं पूर्ण हृदय से आनंद को चाहती हू।"

"उसके प्रति तुम्हारी किस चीज के लिए चाहत है ? उसकी आखो, उसकी नासिका अथवा उसका मुख ?"

"मैं उसकी सभी चीज–आखे, नासिका, मुख, उसकी वाणी, उसकी चाल सभी से प्रेम करती हू। गुरुवर, मैं उसकी हर चीज को चाहती हू।"

"आख, नासिका, मुख, वाणी, चाल के अतिरिक्त भिक्खु आनद मे और भी सुदर गुण हैं, जिन्हे तुम अभी तक जानती भी नहीं हो।"

"वे कौन-कौन से गुण हैं ?" प्रकृति हठात् पूछ वैठी।

"पहला तो उसका प्रेम भरा हृदय। क्या तुम जानती हो कि भिक्खु आनद किसे प्रेम करते हैं ?"

"श्रीमन्, यह तो मै नहीं जानती किन्तु इतना जानती हू कि वह मुझे प्रेम नहीं करते।"

"यहा तुम भूल करती हो। भिक्खु आनद तुमसे भी प्रेम करते हैं, किन्तु वैसा प्रेम नहीं, जिसकी इच्छा तुम्हारे मन मे है। आनद मुक्ति, स्वतत्रता, शांति और हर्षोल्लास को प्रेम करता है। उस मुक्ति और स्वतत्रता का ही प्रभाव

है कि आनद प्राय: मुस्कराता रहता है। वह अन्य सभी प्राणियो को प्रेम करता है। वह सभी प्राणियो को मुक्ति-पथ का पथिक बनाना चाहता है जिससे वे सभी मुक्ति, स्वतत्रता तथा आनंद की अनुभूति कर सके। प्रकृति भिक्खु आनद का प्रेम प्रज्ञा और मुक्ति से आविर्भूत है। उसे न तो दुख होता है और न कभी असहायता का वह अनुभव जिसे तुम्हारा प्रेम तुम्हे करा रहा है। यदि तुम आनद से सच्चा प्रेम करती हो तो तुम उसके प्रेम को समझ सकोगी, उसे मुक्त जीवन से प्रेम करने दोगी जिसका मार्ग उसने अपने लिए निर्धारित कर लिया है। जब तुम आनद के प्रेम-मार्ग को जान-समझ लोगी, तब न तो तुमको दु:ख होगा और न निराशा। तुम भिक्खु आनद को केवल अपने लिए चाहती हो, इसी से सारा दु:ख और निराशा है। यह तो स्वार्थपूर्ण प्रेम है।"

प्रकृति ने बुद्ध की ओर देखकर पूछा, "किन्तु मै किस प्रकार वैसा प्रेम कर सकती हू, जैसा प्रेम भिक्खु आनंद करते है ?"

"इस प्रकार से प्रेम करो जिससे तुम अपनी प्रसन्नता के साथ आनद का प्रेम भी सुरक्षित रख सको। भिक्खु आनद ताजी हवा का झोका है। यदि तुम उस ताजी हवा को अपने वक्ष मे बाध लोगी तो वह वायु मर जाएगी और उसकी शीतलता का न तो तुम्हे कुछ लाभ होगा और न किसी अन्य को। आनद को इस प्रकार से प्रेम करो जिस प्रकार ताजी वायु को करती हो। यदि तुम आनद के साथ इस प्रकार का प्रेम कर सको तो तुम स्वय भी शीतल मद पवन बन जाओगी। इससे तुम्हारी अपनी पीड़ा भी समाप्त हो जाएगी और अन्य बहुत से लोगो की पीड़ा भी।"

"गुरुदेव, मुझे शिक्षा दीजिए कि उस प्रकार का प्रेम कैसे किया जा सकता है ?"

"तुम भी वही मार्ग अपना सकती हो जो आनद ने अपनाया है। तुम भी आत्म-मुक्ति, शांति और आनद का जीवन व्यतीत कर सकती हो जिससे आनद के समान अन्य लोगो को भी हर्षोल्लास प्रदान कर सको। तुम्हे भी आनन्द के समान प्रवृज्या दी जा सकती है।"

"किन्तु मै तो अस्पृश्य हू। मुझे कैसे प्रवृज्या दी जा सकती है ?"

"हमारे सघ मे जाति के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं है। अनेक अस्पृश्य पुरुष प्रवृज्या ग्रहण कर चुके है। मान्य सुनीत, जिनका राजा प्रसेनजित इतना आदर करते है, अस्पृश्य ही थे। यदि तुम भिक्खुनी बनना चाहो तो तुम अस्पृश्य जाति की पहली भिक्खुनी होगी। यदि तुम चाहो तो भिक्खुनी खेमा से मै कहूगा कि वह तुमको प्रवृज्या प्रदान कर दे।"

प्रसन्नता से गद्‌गद होकर प्रकृति बुद्ध के समक्ष प्रणत हो गई और उनसे अनुरोध किया कि उसे भी प्रवृज्या दे दी जाए। बुद्ध ने प्रकृति को भिक्खुनी खेमा के सरक्षण मे दे दिया। भिक्खुनी के पीछे-पीछे वह सुन्दर युवती चली गई। इसके वाद वुद्ध ने आनद की ओर देखकर समस्त भिक्खु समुदाय के समक्ष देशना की और वोले :

"भिक्खुओ, आनद की प्रतिज्ञाए अव भी यथावत् हैं किन्तु मै आप लोगो को चेतावनी देता हू कि वाह्य सपर्क साधते समय सावधानी वरते। यदि आप सदैव सचेतनावस्था मे स्थिर रहते हैं तो आप दृष्टा-भाव से देख सकेगे कि अपने वाह्य और अभ्यतर प्रदेश मे क्या कुछ घटित हो रहा है। कुछ भी घटित होने को जल्दी पहचान लेने पर आप उस स्थिति को प्रभावी ढग से सभाल सकते हैं। जीवन मे हर क्षण सचेतनावस्था मे रहने से आपकी ध्यान-साधना इतनी सवल हो जाएगी कि इस जैसी स्थितिया आने देने से पहले ही वच सकोगे। यदि आपकी ध्यान-साधना प्रबल और स्थिर होगी तो आपकी दृष्टि स्पष्ट होगी और आपका कर्त्तव्य-कर्म यथोचित समय पर किया जाना सभव होगा। ध्यान-साधना और प्रज्ञा दोनो एक-दूसरे के साथ-साथ चलती हैं। ध्यान-साधना मे प्रज्ञा और प्रज्ञा मे ध्यान-साधना का वास होता है। वस्तुत दोनो एक ही हैं।

"भिक्खुओ, जो महिला आप से आयु मे वड़ी हो उसे अपनी माता या वड़ी वहिन समझो और जो आयु में छोटी हो उसे छोटी वहिन या पुत्री समझो। किसी महिला के आकर्षण को अपनी ध्यान-साधना मे वाधक मत वनने दीजिए। जव तक आपकी ध्यान-साधना सवल न हो, तव तक, आवश्यक हो तो, महिलाओ से अपना सम्पर्क सीमित ही रखिए। उनसे वही वाते करिए जो सद्धर्म के अध्ययन और ध्यान-साधना से सवधित हो।"

वुद्ध का स्पष्ट मार्ग-निर्देश पाकर सभी भिक्खु वहुत ही प्रमुदित हुए।

अध्याय अट्ठावन

मुट्ठी-भर मूल्यवान माटी

एक दिन एक निर्धन गाव मे बुद्ध भिक्षाटन को गए तो उन्होने देखा कि कुछ वच्चे धूल भरी राह मे मिट्टी से खेल रहे हैं। वे मिट्टी और रेत से एक नगर बना रहे थे जिसमे नगर की चारदीवारी, रहने के मकान, भडार-गृह और नदी तक सब कुछ बना हुआ था। जब बच्चो ने देखा कि बुद्ध और भिक्खु उनकी ओर आ रहे है तो एक बच्चे ने कहा, "बुद्ध और भिक्खु हमारे नगर से निकल रहे हैं, अतः उन्हे कुछ उपहार देना उचित होगा।"

दूसरे बच्चे ने कहा, "विचार तो उत्तम है, लेकिन बुद्ध को उपहार मे दे क्या ? हम तो बच्चे हैं ?"

इस पर पहले बच्चे ने कहा, "अरे यार सुनो, हमारे नगर के भडार-गृह मे फसल के चावल भरे हुए हैं। उसमे से कुछ चावल हम उन्हे उपहार मे दे सकते है।"

सभी बच्चो ने खुशी से तालियां बजाईं। उन्होने अपने भडार-गृह से मुट्ठी भर माटी उठाई और उसे चावल मानकर एक पत्ते पर रखकर, दोनो हाथो से पकड़कर बुद्ध के सामने प्रणत होकर उन्हे भेट की। अन्य बच्चो ने भी उनको नमन किया। बच्चे ने कहा, "हमारे नगरवासी अपने भडार-गृह से आपको ये चावल भेट कर रहे हैं। हमारी प्रार्थना है कि हमारी भेट स्वीकार की जाए।"

बुद्ध मुस्कराए। उन्होने बच्चे के सिर पर हाथ फेरा और कहा, "हमे यह मूल्यवान चावल भेट करने के लिए धन्यवाद। तुम लोग बड़े समझदार हो।"

बुद्ध ने आनद की ओर मुड़कर देखकर कहा, "आनद इस उपहार को

सभाल लो और विहार मे पहुचकर इसमे पानी मिलाकर मेरी कुटिया की कच्ची ईंटो पर लीप देना।"

आनद ने वह मुट्ठी भर माटी सभाली। वच्चो ने वुद्ध को पास की चट्टान पर वट वृक्ष के नीचे विराजने को कहा। आनद और अन्य भिक्खु भी वहीं जा वैठे।

वुद्ध ने वच्चो को एक कहानी सुनाई : "बहुत साल पहले, एक राजकुमार विश्वान्तर था। वह वड़ा दयालु एव उदारमना व्यक्ति था। सदैव निर्धनो और ज़रूरतमदो की सहायता करता और अपनी वस्तुए देने तक मे हिचकिचाता नहीं था। उसकी पत्नी माद्री भी वहुत उदार थी। उसका पति जब और लोगो की मदद करता था तो वह अत्यधिक प्रसन्न होती थी और उसके कुछ भी दे डालने पर उसे खेद नहीं होता था। उसका जलिन नामक पुत्र और कृष्णाजिन नामक पुत्री थी।

"एक वार अकाल के दौरान राजकुमार ने निर्धनो को राजकोप से धन और वस्त्र निर्धनो को वॉटने की अनुमति प्राप्त कर ली। लोगो की आवश्यकता इतनी थी कि राजकोष भी रिक्त- प्राय हो गया। इससे राजा के मत्री घवराए। वे ऐसी तरकीव निकालने की सोचने लगे कि राजकुमार, और कोष न लुटा सके। उन्होने कहा कि राजकुमार की बे-सोचे-समझे दानशीलता से तो राज्य ही नष्ट हो जाएगा। राजकुमार ने तो एक राजकीय हाथी तक दान मे दे डाला है। यह सुनकर राजा भी चिन्तित हो गया और उसने जयतुरा पर्वत पर राजकुमार के निर्वासन की आज्ञा दे दी जिससे वह सादा जीवन और उसकी कठिनाइयो का स्वय अनुभव कर सके। इस प्रकार राजकुमार विश्वातर, पत्नी माद्री और दोनो वच्चो को निर्वासित कर दिया गया।

"पर्वत की ओर जाते हुए उन्हे एक भिखारी मिला तो राजकुमार ने अपनी मूल्यवान जैकेट उसे दे डाली। और निर्धन लोगो के मिलने पर उसने अपनी पत्नी और वच्चो की मूल्यवान जैकेटे भी दे दीं। परिवार ने अपने मूल्यवान आभूपण और रत्नादि भी गरीवो को दान मे दे दिए। पर्वत तक पहुचते-पहुचते उन्होने अपना सव कुछ दान मे दे डाला था। आखिर राजकुमार ने अपना रथ और घोडे भी गरीवो को दे दिए। राजकुमार ने पुत्र जलिन और माद्री ने कृष्णाजिन को गोदी मे उठाया और निस्पृह-भाव से जयतुरा पर्वत पर चलते हुए पहुचे। वह चलते जाते और गाते जाते मानो उनको ससार की कोई चिन्ता न हो। उनके हृदय शात और मुक्त थे।"

"पर्वत तक की यात्रा लम्वी थी जिससे उनके पाव सूज गए थे और

लहूलुहान हो गए थे। पर्वत के ढलान पर उन्हे किसी सन्यासी की परित्यक्त कुटिया मिल गई। उसे उन्होने झाड़-पोछ कर साफ किया और पत्तो का बिछौना बना लिया। जगल मे कदमूल फल, और फलिया खाने के लिए प्रचुर मात्रा मे थी ही। बच्चो ने भी खाद्य सामग्री जगल से एकत्र करना, झरने मे कपड़े धोना और बड़े पत्तो को कागज और काटो की कलम बनाकर विद्याभ्यास करना सीख लिया था।

"यद्यपि उनका जीवन-यापन कठिनाइयो से भरा था किन्तु वे उससे सतुष्ट थे। तीन साल इसी प्रकार बीत गए। एक दिन जब राजकुमार और उसकी पत्नी जगल मे खाने के लिए फल-फूल एकत्र करने गए थे तो एक व्यक्ति आकर दोनो बच्चो को उठा ले गया। वापस आने पर राजकुमार और माद्री ने जगल तथा आस-पास के गावो मे बच्चो की खोज की किन्तु अपने प्यारे बच्चो का कही कोई सुराग नही पा सके। आखिर थक-हार कर वह अपनी कुटिया मे यह आशा करते आए कि शायद बच्चे अपने-आप लौट आए हो। बच्चो की बजाय उन्हे राजा का सदेशवाहक प्रतीक्षा करता मिला। उन्हे यह जानकर परम सतोष मिला कि बच्चे राजमहल मे सुरक्षित है।

"जब उन्होने पूछा कि बच्चे राजमहल मे कैसे पहुचे तो उसने बताया कि 'कई दिन पहले महल की एक महिला ने राजधानी के बाजार मे बच्चो को बिकते देखा। उसने बच्चो को पहचान लिया और अपने पति को जो राजा का मत्री था, उसको सूचना दी। वह दौड़ा हुआ बाजार मे आया और बच्चो को महल मे चलने का आग्रह किया और बेचने वाले से कहा कि वहा उसे इससे अच्छी कीमत मिल जाएगी। राजा ने बच्चो को पहचानकर अपने सीने से लगा लिया हालाकि उनके कपड़े चिथड़े हो चुके थे और चेहरे धूल-मिट्टी मे भरे थे। राजा आप लोगो और बच्चो की बडी याद करते थे।'

"राजा ने पूछा, ये बच्चे तुम्हे कहा मे मिले और इन्हे कितने मे बेच रहे थे।"

व्यापारी कुछ कहता, उससे पहले ही मत्री ने बताया, महामहिम, लड़की को एक हजार स्वर्ण मुद्राओ और एक हजार पशुओ के बदले और पुत्र को एक सौ स्वर्ण मुद्राओ और एक सौ पशुओ के देने पर बेचा जा रहा था।' व्यापारी सहित सभी लोग यह सुनकर आश्चर्यचकित थे। इस पर राजा ने पूछा—'लड़की का मूल्य लड़के से अधिक क्यो था ?'

"मत्री ने उत्तर दिया, क्योकि आप पुत्र की अपेक्षा पुत्रियो को अधिक

महत्त्व देते है। आपने किसी राजकुमारी को दंडित नहीं किया और महल की॰सेविकाओ से भी कठोर शव्द नहीं कहे। आपने अपने इकलौते पुत्र को निष्कासित कर वहा भेज दिया जहा बाघ, चीतो सरीखे भयकर पशु रहते हैं और खाने के लिए केवल जगली फल आदि ही थे। स्पष्ट है कि आप पुत्र की अपेक्षा पुत्रियो को अधिक महत्त्व देते हैं।'

"राजा की आखो मे आसू भर आए। उन्होने कहा, बस अब अधिक कुछ न कहो। मै आपका अर्थ समझ गया हू।"

"राजा को व्यापारी से ज्ञात हुआ कि उसने पहाड़ के एक व्यक्ति से इन वच्चो को खरीदा था। राजा ने व्यापारी को धन दिया और अपहरणकर्त्ता को पकडने के लिए आरक्षी भेज दिये। राजकुमार का निर्वासन समाप्त करने के आदेश देकर कहा कि पुत्र राजकुमार और पूत्र-वधू को वापस्म ले आओ। उसके वाद से राजा अपने पुत्र को स्नेह करते रहे और उसकी निर्धनो को मदद देने के काम मे उदारता से सहायता देते रहे।"

वच्चो को वुद्ध की कहानी वहुत अच्छी लगी। वुद्ध ने उनकी ओर देख हसकर कहा, "राजकुमार विश्वान्तर के पास जो कुछ था, उसे औरो को देने मे प्रसन्नता होती थी। आज तुमने अपने नगर मे भडार-गृह मे जो कुछ था, उसमे से कुछ मूल्यवान माटी मुझे दी है। इससे मुझे वडी प्रसन्नता हुई है। प्रतिदिन कुछ भी छोटा-मोटा उपहार देकर तुम और लोगो को सुखी वना सकते हो। यदि तुम धान के खेत से एक फूल भी तोड़कर अपने माता-पिता को उपहार मे दोगे तो उन्हे प्रसन्नता होगी। धन्यवाद या प्रेम के दो बोल या स्नेहपूर्ण दृष्टि से भी औरो को प्रसन्नता होती है। अपने परिवारजनो और मित्रो को ऐसे उपहार देते रहो। अव मुझे और भिक्खुओ को चलने दीजिए। हमे तुम्हारा आज का उत्तम उपहार सदैव स्मरण रहेगा।"

वच्चो ने वचन दिया कि वे अपने वहुत से मित्रो को लेकर वुद्ध ओर भिक्खुओ से मिलने जेतवन आएगे। हम ढेर सारी कहानिया सुनना चाहते है।

अगली ग्रीष्म ऋतु मे वुद्ध देशना देने राजगृह आए। वाद मे वह गृद्धकूट शिखर पर गए। वहा जीवक उनसे मिलने आया और उनसे अनुरोध किया कि वह आम्रवन मे आकर कुछ समय तक निवास करे। वुद्ध ने निमत्रण स्वीकार कर लिया। आनद भी उनके साथ थे। वैद्यराज का आम्रवन शान्त और श्रमहारी था। पेडो पर आम्रमजरी लगी थी। जीवक ने उनके लिए कुटिया वनवा दी ओर नित्य शाकाहारी भोजन भेजने लगा। उसने अनुरोध किया कि

बुद्ध कुछ दिनों तक भिक्षाटन करने न जाएं जिससे उनका स्वास्थ्य सुधर सके। जड़ी-बूटियों और फलों से उसने बुद्ध के लिए शक्तिवर्द्धिनी औषधि बनाकर दी।

एक दिन जब वह साथ-साथ बैठे थे तो जीवक ने कहा, "प्रभु, कुछ लोग कहते हैं कि आप भिक्खुओं को मांसाहार की अनुमति देते है। वे कहते हैं कि गौतम अपने और अपने शिष्यों के खाने के उद्देश्य से पशु-वध की अनुमति दे देते हैं। कुछ लोगों ने तो यहां तक आरोप लगाया है कि गौतम लोगों को प्रेरित करते हैं कि सघ को मासाहार दिया जाए। मैं जानता हू कि ये आरोप सत्य नहीं हैं किन्तु इस विषय मे आपके विचार जानना चाहूगा।"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "जीवक, जब लोग कहते है कि मैं स्वय अपने लिए या भिक्खुओं के खाने के लिए पशु-वध की अनुमति देता हू, तो यह बात असत्य है। इस विषय पर मैं अनेक बार अपने विचार व्यक्त कर चुका हू। यदि भिक्खु देखे कि कोई भिक्खु को सामिष भोजन देने के लिए पशु-वध करता है तो वह उस भिक्षा को अस्वीकार कर सकता है। यदि भिक्खु स्वय पशु-वध होते न देखे और उसे कोई बता भी दे कि भिक्षा मे सामिष भोजन देने के लिए पशु-वध किया जाता है, तो भी वह उस भिक्षा को अस्वीकार कर दे। जीवक भिक्षाटन की प्रक्रिया मे भिक्खु को वह भोजन स्वीकार करना होता है, जो दाता देता है। जो लोग समझते हैं कि भिक्खु ने करुणा का व्रत लिया हुआ है, वे केवल शाकाहारी भोजन ही भिक्खुओ को देते है। लेकिन कभी ऐसा भी होता है कि दाता के यहा मासयुक्त भोजन ही सुलभ है। जिन लोगों का बुद्ध धर्म या सघ से पहले सपर्क नहीं हुआ, वे यह जानते ही नहीं कि भिक्खु शाकाहारी भोजन लेना ही पसद करते हैं। इन स्थितियों मे दाता को ठेस न पहुचाने की दृष्टि से दाता जो भी भिक्षा देता है, उसे भिक्खु स्वीकार कर लेता है। इस प्रकार वह उस दाता से सपर्क बनाता है, जिससे दाता भी मुक्ति के मार्ग के विषय मे जान-समझ सके।

"जीवक, एक दिन सभी लोग समझ जाएगे कि भिक्खु अपने भोजन के लिए पशु-वध किया जाना पसद नहीं करते। उस समय कोई भी व्यक्ति भिक्खुओं को सामिष भोजन भिक्षा मे नहीं देगा और तब भिक्खु भी शाकाहारी भोजन ही ग्रहण किया करेंगे।"

जीवक ने कहा, "मेरा विश्वास है कि शाकाहारी भोजन करने से स्वास्थ्य अच्छा रहता है। शाकाहारी भोजन भारी नहीं होता और शाकाहार करने वाला बीमार भी कम पड़ता है। मै अब दस वर्षों से शाकाहारी हू। शाकाहारी

भोजन स्वास्थ्य के लिए ही नहीं, हृदय मे करुणा भावना के उदय के लिए भी लाभकारी है। आपका स्पष्ट मत जानकर मुझे प्रसन्नता हुई।"

जीवक ने संघ की इस परपरा की भी प्रशसा की कि एक दिन पहले का रखा हुआ भोजन न खाया जाए। रखा हुआ खाना खराव हो जाता है और वीमारियो का कारण वनता है। वुद्ध ने जीवक को धन्यवाद दिया और विहार मे आने को आमंत्रित किया जिससे वह भिक्खुओ को सफाई की आधारभूत वाते एव पद्धतिया भली प्रकार समझा सके।

अध्याय उनसठ

दर्शन-सिद्धान्तों का तर्कजाल

जीवक का आम्रवन सर्वथा शान्त और विस्तृत था जिसमे भिक्खुनियो के लिए छोटी-छोटी कुटिया बनी थीं। एक दिन शुभा नाम की एक युवा भिक्खुनी बुद्ध से एक समस्या पर बातचीत करने आई। भिक्षाटन पूर्ण करके वह विहार मे वापस आ रही थी तो एक सुनसान मार्ग पर उसे एक युवक मिला। वह व्यक्ति एक ओर से अचानक निकलकर उसके सामने आ गया। उसने उसके असम्मानपूर्ण इरादे भाप लिए और प्राणायाम करके शान्त और सुस्थिर चित्त हो गई। उसने उस युवक की आखो से आखे मिलाकर कहा, "श्रीमन्, मैं बुद्ध के सद्धर्म मार्ग की पथिक हू। कृपया मेरे रास्ते से हट जाइए ताकि मैं अपने विहार वापस जा सकूं।"

उस व्यक्ति ने कहा, "तुम अभी युवती हो, सुदर हो, भला सिर मुडाकर ये चीवर पहने क्यो अपना जीवन व्यर्थ कर रही हो। सुनो कुमारी, तुम्हारी सुदर काया काशी के रेशमी वस्त्र पहनने के लिए बनी है। मैने अभी तक तुम जैसी सुदर स्त्री नही देखी। आओ तुम्हे शारीरिक सुखो की झलक दिखा दू। आओ मेरे साथ आओ।"

शुभा शान्त रहकर बोली, "मूर्खता की बाते मत करो। मैं आत्म-मुक्ति और चेतना-जागृति के जीवन का ही आनद लेना चाहती हू। पाचो प्रकार की कामनाए दुख का कारण बनती है। मुझे जाने दीजिए। इसके लिए मै कृतज्ञ होऊगी।"

वह व्यक्ति न माना। "तुम्हारी आखे बहुत ही आकर्षक है। मैने इतनी सुदर आखे अब तक नहीं देखीं। मुझे इतना मूर्ख न समझो कि तुम्हे यो चले जाने दूगा। तुम्हे मेरे साथ चलना होगा।"

वह उसे पकड़ने झपटा तो वह हटकर उसकी पकड़ मे नहीं आई।

वह बोली, "श्रीमन् मुझे छूना मत। मेरे भिक्खुनी व्रत को मत तोड़ना। मैंने कामनाओ और घृणा के जीवन के भार से दुखी होकर ही साधना-मार्ग अपनाया है। आप कहते है कि मेरी आखे सुदर हैं, मैं अपनी आखे निकालकर आपको दे देती हू। मै तुम्हारे द्वारा भ्रष्ट किए जाने की अपेक्षा अधी होना पसद करूगी।"

शुभा के स्वर मे दृढ़ता थी। वह युवक डगमगा गया। वह समझ गया कि यह भिक्खुनी जो कहती है, कर दिखाएगी। वह पीछे हट गया। शुभा ने कहा कि 'तुम अपनी इच्छा को अपराध का कारण न बनने दो। तुम जानते नहीं कि राजा बिम्बिसार ने राजाज्ञा जारी कर रखी है कि जो भी बुद्ध के सघ के किसी सदस्य को हानि पहुचाएगा, उसे कड़ा दड दिया जाएगा। यदि तुमने अभद्र व्यवहार किया या मेरे स्त्रीत्व को भग करने की चेष्टा की या मेरे जीवन को हानि पहुचाने का प्रयास किया तो बदी बना लिए जाओगे और तुम्हे कठोर दड मिलेगा।'

इससे उस युवा को होश आ गया। वह समझ गया कि अधी वासना किस प्रकार दुःख का कारण बन सकती है। वह रास्ते से हट गया और भिक्खुनी को गुजर जाने दिया। उसने पीछे से कहा, "बहन, मुझे क्षमा करना। मुझे आशा है कि आप आध्यात्मिक मार्ग पर अवश्य सफल होगी।"

यह सब बताकर बुद्ध के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना वह चली गई।

बुद्ध ने उस युवा भिक्खुनी के साहस और विचारो की स्पष्टता के लिए प्रशसा की। उन्होने कहा, "सूने मार्ग पर किसी भिक्खुनी का अकेला आना-जाना खतरनाक है। इसी कारण से मैं महिलाओ को दीक्षा देने से हिचक रहा था। अब से कोई भिक्खुनी अकेली आए-जाएगी नहीं। चाहे नदी पार करनी हो, चाहे भिक्षाटन करना हो या वन मे या खेत मे चलना हो, किसी भी भिक्खुनी को अकेले नहीं जाना है। कोई भी भिक्खुनी अकेली सोएगी भी नहीं, फिर चाहे वह विहार मे सोए, किसी कुटिया मे सोए या वृक्ष के नीचे सोए। हर भिक्खुनी चलते समय या सोते समय एक अन्य भिक्खुनी को साथ रखे जिससे वह एक-दूसरे का ध्यान रखे और एक-दूसरे की रक्षा कर सके।"

बुद्ध ने आनद को निर्देश दिया कि 'आनद इस नियम को सावधानी से समझ लो और वरिष्ठ भिक्खुनियो से कहो कि वे इस नियम को अपने शीलो मे सम्मिलित कर ले।'

जीवक के आम्रवन से चलकर बुद्ध नालदा आए। उनके साथ बहुत से भिक्खु थे। भिक्खुओ के साथ दो सन्यासी सुप्रिय और उनका शिष्य ब्रह्मदत्त

भी चल रहे थे। दोनो ऊंची-ऊची आवाज़ो से वौद्धमत की चर्चा कर रहे थे। सुप्रिय वुद्ध की शिक्षाओ की आलोचना कर रहा था और उनका शिष्य उनकी शिक्षाओ का समर्थन। सन्यासी वहुत स्पष्टता से और निष्ठा के साथ अपने गुरु को उत्तर दे रहा था। भिक्खुगण उनके वार्तालाप को सुन रहे थे किन्तु कोई उत्तर नहीं दे रहे थे।

उस रात भिक्खुगण अम्वलतिका उपवन मे ठहरे जो राजपरिवार का हरा-भरा उद्यान था। राजा विम्विसार ने घोषणा कर रखी थी कि जव भी किसी धर्म के सप्रदाय को आवश्यकता हो, तो वे इस उपवन मे ठहर सकते है। सुप्रिय और व्रह्मदत्त भी वहीं ठहरे।

अगले दिन भिक्खु आपस मे उन सन्यासियो के वार्तालाप की चर्चा कर रहे थे। वुद्ध ने यह सुनकर कहा, "भिक्खुओ, जव भी आप लोग मेरी या सद्धर्म मार्ग की आलोचना सुने, तो उस पर न तो क्रोध करने की, न परेशान होने या अमर्प अनुभव करने की आवश्यकता है। ऐसी भावनाओ से आपकी अपनी ही हानि होगी। जव भी कोई मेरी या सद्धर्म मार्ग की प्रशसा करे, तव भी प्रसन्न, हर्षित अथवा सतोष की भावनाए मन मे मत आने दीजिए। इनसे भी तुम्हे स्वय को ही हानि होगी। इस सम्वन्ध मे सही दृष्टिकोण यह है कि आलोचना मे क्या वात सत्य है और क्या असत्य। ऐसा विश्लेषण करने से ही तुम अपने अध्ययन मे प्रगति कर सकोगे और साधना-अभ्यास मार्ग पर आगे वढ़ सकोगे।

"भिक्खुओ, जो वुद्ध, धर्म या संघ की प्रशसा करते हैं, उनका ज्ञान भी सतही होता है। उन्हे यह अच्छा लगता है कि भिक्खु किस प्रकार शुद्ध, सादगी भरा और सौम्य जीवन विताते हैं, किन्तु वे उससे आगे नहीं देखते। जिन्होने धर्म की सूक्ष्मता और निगूढ़ तत्त्वो को समझ लिया है, वे प्रशसा के चद शव्द ही कहेगे। वे चेतना-जागृति के सच्चे ज्ञान को समझते हैं। ऐसा ज्ञान प्रगाढ़, सूक्ष्म और अनिर्वचनीय होता है। यह सामान्य विचारो और शव्दो से परे की वात होती है।

"भिक्खुओ, इस संसार मे अगणित दर्शन, सिद्धान्त और मत हैं। लोग इन सव पर अनन्त समय तक आलोचना-प्रत्यालोचना कर सकते है। किन्तु मैंने इनका जो सार समझा है, उसके अनुसार मुख्य बासठ सिद्धान्त है जिनमे हजारो दर्शनो और धार्मिक मत-मतान्तरो को समाहित किया जा सकता है। चेतना-जागृति और आत्म-मुक्ति के मार्ग के अनुसार इन सभी सिद्धान्तो मे त्रुटिया है और उनसे वाधाए उत्पन्न होती हैं।"

इसके वाद वुद्ध ने उन वासठ सिद्धान्तो और उनकी त्रुटियो का विश्लेषण किया। उन्होने अतीत काल विषयक अठारह सिद्धातो की चर्चा की। चार सिद्धात अनतता से सवधित, चार आंशिक अनतता से, चार सिद्धान्त ससार की नित्यता और अनित्यता से सवंधित और चार सिद्धात अनत अनिश्चितता से सवधित है और दो दर्शन सिद्धात कार्य-करण शृखला को अस्वीकार करते हैं। उन्होने कहा कि पैंतालीस सिद्धान्त भविष्यकाल से सवधित हैं। सोलह सिद्धातो के अनुसार मृत्यु के उपरान्त आत्मा शेप रहती है, आठ सिद्धातो के अनुसार मृत्यु के वाद आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं रहता और आठ सिद्धात ऐसे हैं जो मानते हैं कि मृत्यु के वाद आत्मा नहीं रहती और न यह मानते कि नहीं रहती। सात सिद्धातो के अनुसार आत्मा विनष्ट हो जाती है और पाच सिद्धातो के मतानुसार वर्तमान का जीवन ही निर्वाण है। इन सभी सिद्धान्तो की त्रुटियो की ओर सकेत करते हुए वुद्ध ने कहा, "चतुर मछुआरा अपना जाल पानी मे डालता है जो भी मछलिया या झींगा पकड़ सकता है, पकड़ता है। वह जव उन्हे देखता है तो कुछ मछलिया जाल से उछल जाती हैं तो वह उनसे कहता है, चाहे जितना उछलो, आखिर गिरोगी जाल ही मे।" इस समय जो हजारो मत-मतान्तर फैले हुए हैं, वे सभी इन वासठ जालो मे फसे हुए हैं। भिक्खुओ, उन तर्क-जालो को देखकर आश्चर्यचकित मत होओ। इससे अपना ही समय नष्ट करोगे और चेतना-जागृति के साधना-मार्ग का अवसर खोओगे। मात्र सभावनाओ के तर्क-जाल मे मत फसो।

"भिक्खुओ, इन मतो और सिद्धातो का जन्म इसलिए हुआ है कि लोग अपने दृष्टि-वोध और भाव-वोध से भटक गए है। सुचेतनता की साधना के विना इन दृष्टि-वोधो और भाव- वोधो की मूल प्रकृति समझना असभव है। जव तुम इनकी मूल प्रकृति और अपने दृष्टि-वोध एव भाव-वोध को समझ लोगे तो तुम सभी धर्मों की अनित्यता और परस्परावलम्बन समझ सकोगे। तव तुम कामनाओ, चिन्ताओ और भयो मे फसे नहीं रहोगे और न इन वासठ असत्य सिद्धान्तो मे उलझोगे।"

इस धर्म-देशना के पश्चात् मान्य आनद मे टहलते हुए वुद्ध के प्रत्येक शब्द का स्मरण किया और सोचा, 'यह तो महत्त्वपूर्ण सूत्र है। मैं इसे 'व्रह्मजाल सूत्र' नाम दूगा। इस जाल मे इस ससार के सभी असत्य सिद्धातो और मतान्तरो को समाहित किया जा सकता है।'

अध्याय साठ

महिषी विशाखा का क्लेश

अम्बलतिका से बुद्ध देशना देने नालदा गए और वहा से अग राज्य की राजधानी चम्पा गए। अगदेश सघन जनसख्या वाला उर्वर राज्य था जो विम्बिसार का उपनिवेश था। वहा घग्गर झील के किनारे शीतल शांत वन मे बुद्ध ने निवास किया।

चम्पा मे बुद्ध की देशना सुनने बड़ी सख्या मे लोग आते थे। स्वर्णदण्ड नामक एक धनी ब्राह्मण भी बुद्ध से मिलने आया। वहा के लोग स्वर्णदण्ड की कुशाग्र वुद्धि के प्रशसक थे। उसके अनेक मित्रो ने उससे कहा कि वह बुद्ध से मिलने न जाए क्योकि उसके जाने से बुद्ध की प्रतिष्ठा और वढ जाएगी। स्वर्णदण्ड ने कहा कि असाधारण अन्तर्दृष्टि सम्पन्न बुद्ध से भेट करने का यह अवसर मै हाथ से नहीं जाने दूगा। ऐसा अवसर तो हजार वर्षों मे एक बार सुलभ होता है। "मुझे अपने ज्ञान को और गहन बनाने हेतु उनसे मिलना ही है। मै देखना चाहता हू कि किन क्षेत्रो मे भिक्खु गौतम का ज्ञान मुझसे अधिक है और किन क्षेत्रो मे मेरा ज्ञान उनसे अधिक है।"

सैकड़ो ब्राह्मणो ने भी स्वर्णदण्ड के साथ जाने का निश्चय किया। उन्हे दृढ़ विश्वास था कि ब्राह्मण वर्ग की धर्म-शिक्षा बुद्ध की शिक्षाओ से श्रेष्ठतर हैं और स्वर्णदड ब्राह्मणो का सिर नीचा नहीं होने देगा।

भीड़ से घिरे बुद्ध के सामने जब स्वर्णदण्ड बोलने के लिए खड़ा हुआ तो एक क्षण तो उसकी समझ मे न आया कि वह बात कहा से आरभ करे। बुद्ध ने स्वयं ही पूछा, "स्वर्णदण्ड, क्या आप हमे बता सकते है कि सच्चे ब्राह्मण मे क्या-क्या गुण होने अनिवार्य है। यदि आवश्यक हो तो आप वेदो के उद्धरण भी देते जाना।"

यह सुनकर स्वर्णदण्ड को प्रसन्नता हुई क्योंकि वेदाभ्यास तो उसकी एक विशिष्टता थी। उसने कहा, "भिक्खु गौतम, सच्चे व्राह्मण मे पाच गुण होते हैं–आकर्पक व्यक्तित्व, मत्रोच्चार, और कर्मकाड कराने की निपुणता, सात पीढ़ियो से रक्त की शुद्धता, उदात्त कर्म और ज्ञान।"

वुद्ध ने पूछा कि "इन पाच गुणो मे से भी सर्वाधिक आवश्यक गुण कौन-कौन से होने चाहिए। इनमे से किसी गुण के अभाव मे भी क्या वह सच्चा व्राह्मण हो सकता है ?"

स्वर्णदड ने एक क्षण विचार करके कहा कि अन्तिम दो गुणो का होना तो सर्वथा अपरिहार्य है। शारीरिक सौदर्य, मत्रोच्चार और अनुष्ठान कराने की निपुणता और रक्त की शुद्धता अपरिहार्य नहीं है। स्वर्णदण्ड को यह कहते सुन, साथ आए पाच सौ व्राह्मण वड़े अप्रसन्न हुए। सव उठ खड़े हुए और हाथ हिलाहिलाकर स्वर्णदण्ड के कथन को चुनौती देने लगे। उन्हे लगा कि स्वर्णदण्ड वुद्ध के प्रश्नो से भ्रमित हो गया और उसके कथन से व्राह्मण जाति की निंदा होती है।

वुद्ध ने उनसे कहा, "मान्य अतिथियो, यदि आपको स्वर्णदण्ड पर विश्वास है तो कृपया शात हो जाइए और उन्हे अपनी वात पूरी करने दीजिए। यदि आपको उन पर विश्वास नहीं है तो कृपया उनसे वैठ जाने के लिए कहिए और तव उनके वदले मैं आपमे से किसी से भी वात करने को प्रस्तुत हू।"

स्वर्णदड ने अपने साथियो की ओर देखकर कहा, "मेरा चचेरा भाई अगक कहा है। अगक सुन्दर मनोहारी युवक है। उसका व्यवहार मृदुल और अभिजात सस्कार है। देह-यष्टि की दृष्टि से भिक्खु गौतम ही उसकी तुलना मे ठहर सकते है। अगक श्रेष्ठ वेदाभ्यासी भी है। उसे मत्रोच्चार एव अनुष्ठान सपन्न कराने मे भी निपुणता प्राप्त है। वह अपने पितृकुल और मातृकुल मे सात पीढियो तक रक्तशुद्धता का दावा कर सकता था। कोई भी नहीं कह सकता कि उसमे ये तीन गुण नहीं हैं। किन्तु यदि हम मान ले कि वह खूब मद्यपान करता है, हत्यारा, लुटेरा, वलात्कारी या असत्य भाषी भी है। यदि ऐसा होता है, तो आकर्पक व्यक्तित्व, मत्रोच्चार और अनुष्ठान कराने की निपुणता और रक्त की शुद्धता किस काम की। प्रिय मित्रो, हमे स्वीकार करना चाहिए कि सदाचारी कर्म और ज्ञान ऐसे दो गुण हैं जो सच्चे व्राह्मण मे होने अत्यन्त आवश्यक हैं। यह सर्वांगीण सत्य है, न कि भिक्खु गौतम का व्यक्तिगत सत्य।"

कथन की स्वीकृति मे सभी ने तालिया वजाई। तालियो की हर्ष-ध्वनि

थमने पर वुद्ध ने स्वर्णदण्ड से पूछा कि "इन दोनो गुणो मे से भी आप किस गुण को सर्वोत्तम समझते हैं ?"

स्वर्णदण्ड ने उत्तर दिया, "भिक्खु गौतम, सदाचारयुक्त कर्म से ज्ञान बढ़ता है और ज्ञान से सदाचार पूर्ण कार्य बढ़ते है। इन दोनो को अलग-अलग नहीं समझा जा सकता। यह इसी प्रकार है जैसे एक हाथ दूसरे हाथ को या एक पैर दूसरे पैर को साफ करता है। सदाचार पूर्ण कार्य और प्रज्ञा दोनो ही एक दूसरे के सहायक एव पोषक है। श्रेष्ठ कर्मों से प्रज्ञा प्रखर होती है और प्रज्ञा से कर्म श्रेष्ठतर होते जाते है। ये दोनो गुण जीवन के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।"

वुद्ध ने कहा, "साधुवाद स्वर्णदण्ड ! आप सत्य कह रहे है। सद्कर्म और ज्ञान जीवन की सवसे मूल्यवान चीजे हैं। क्या आप वताएगे कि सद्कर्मों और ज्ञान को उच्चतर स्तरो तक कैसे ले जाया जा सकता है ?"

स्वर्णदण्ड ने मुस्कराकर हाथ जोड़े। उसने वुद्ध को नमन किया और कहा, "गुरुदेव, इस दिशा मे आप मार्ग-निर्देश करे। हम तो मात्र सिद्धान्त जानते हे किन्तु आप वास्तविक मार्ग के पथिक है। कृपया वताइए कि हम सद्कर्मों और प्रज्ञा को उच्चतर स्तर तक कैसे ले जा सकते हैं।"

वुद्ध ने उन्हे मुक्ति-मार्ग के पथ के विपय मे वताया और आत्म-मुक्ति के तीन चरणो—शीलाचार, ध्यान और प्रज्ञा के विषय मे देशना की। "शीलो का आचरण करने से ध्यान-साधना वढ़ती है। ध्यान-साधना से प्रज्ञा का उदय होता है जिससे शीलो का गहन आचरण करना सभव होता है। इसी क्रम से ज्यो-ज्यो शीलाचार गहनतर होता है, ध्यान-साधना सघन होती है और प्रज्ञा का उत्तरोत्तर उदय होता है। वुद्ध ने परस्परावलम्वी सह-वर्द्धन की धारणा पर ध्यान करने को कहा जिससे हम नित्यता और पृथक् आत्मा की भ्रात धारणाओ से आगे जा सके। इससे हम लोभ, क्रोध और अज्ञान से मुक्त होकर आत्म-मुक्ति, शाति और आनंद की प्राप्ति कर सकते है।"

स्वर्णदण्ड ने वुद्ध की देशना पूर्ण मनोयोग से सुनी। जब बुद्ध अपना कथन समाप्त कर चुके तो स्वर्णदण्ड ने खडे होकर हाथ जोड़े और कहा, "गुरु गौतम, कृपया मेरा कृतज्ञतापूर्ण आभार स्वीकार कीजिए। आपने आज मेरी आखे खोल दीं, और मुझे अधकार से वाहर निकाल लिया। अब मुझे वुद्ध, धर्म और सघ की शरण मे आने की अनुमति दीजिए। मै आपको और आपके भिक्खु शिष्यो को अपने यहा भोजन पर आमन्त्रित करता हू।"

उस दिन वुद्ध और स्वर्णदण्ड के बीच विचारो का जो सार्वजनिक आदान-प्रदान हुआ, उसकी उस क्षेत्र के सभी वर्गों मे प्रतिक्रिया हुई। बहुत

से ब्राह्मण बुद्धिजीवी बुद्ध के शिष्य बन गए जिनमे विख्यात ब्राह्मण अवष्ट और उनके गुरु पुष्करसादि भी सम्मिलित थे। जैसे-जैसे अधिक ब्राह्मण बुद्ध के शिष्य बनते जाते थे, कुछ ब्राह्मण नेताओ और अन्य धार्मिक सप्रदायो के नेताओ को द्वेष दवाना कठिन होता जा रहा था।

जव भिक्खुगण अम्बलतिका मे ठहरे हुए थे तो स्वास्ति ने मान्य मौद्गल्यायन को उस काल के विभिन्न धार्मिक आदोलनो के विपय मे जिज्ञासा की। मौद्गल्यायन ने उसे प्रत्येक सप्रदाय के आधारभूत सिद्धातो का सार रूप मे परिचय कराया।

पहला सप्रदाय तो पुराण काश्यप का था जो सदाचार और नैतिकता की बाते अवास्तविक मानते थे। उनकी मान्यता थी कि अच्छाई और बुराई की अवधारणाए आदतो और परम्पराओ की उपज होती हैं।

मास्करि गोशालिपुत्र भाग्यवादी थे। वे मानते थे कि व्यक्ति के जीवन के क्षण-पल पूर्व निर्धारित होते हैं जिसे कोई व्यक्ति बदल नहीं सकता। यदि किसी को पाच सौ या हजार वर्षों तक जन्म लेने के बाद मुक्ति होती है, तो वह भी पूर्व-निर्धारित होता है। इसमे किसी के विशेष प्रयासो का कोई योगदान नहीं होता।

आचार्य अजित केशकाम्बल के मत की मान्यता थी कि शरीर पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु इन चार तत्त्वो से निर्मित है। जब व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तो कुछ भी शेष नहीं रहता। इस मत के अनुसार व्यक्ति को इसी जीवन मे जिस भी कामना की पूर्ति की इच्छा हो, पूर्ण कर लेनी चाहिए (अगले जन्म का क्या पता)।

काकुद कात्यायन का सप्रदाय इसका विरोधी था। उसके मतानुसार आत्मा और सूक्ष्म शरीर कभी कष्ट नहीं होते। मानव सात तत्त्वों—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, दु:ख, सुख और चेतना से वना है। जन्म और मृत्यु तो केवल वाह्य आवरण हैं जो सात तत्त्वो के मिश्रण से बनते और बिगड़ते हैं जबकि आत्मा न मरती है और न नष्ट होती है।

मान्य सारिपुत्त और मौद्गल्यायन स्वय भी आचार्य सजय वैरातिपुत्र के अनुयायी थे। आचार्य सजय सापेक्षता सिद्धान्त के प्रतिपादक थे और मानते थे कि सत्य परिस्थितियो और देश-काल के अनुसार परिवर्तनीय है। जो वात एक स्थिति के लिए सत्य हो, वह दूसरी स्थिति मे भी सत्य हो, यह आवश्यक नहीं। इन मव वातो का मानदण्ड स्वय व्यक्ति की चेतना-प्रज्ञा है।

निर्ग्रंथ नाथपुत्र ऐसे सन्यासियो का सप्रदाय था जो शरीर-पीड़न तप मे

विश्वास करता था। वे निर्वस्त्र रहते थे और अन्य प्राणियो को न मारने के शील का कठोरता से आचरण करते थे। निर्ग्रंथ द्वैत भाग्यवादी थे और जीव और अजीव को सृष्टि का आधार मानते थे। उस समय इस सम्प्रदाय का बड़ा सम्मान और प्रभाव था। भिक्खुगण प्राय: निर्ग्रंथ सम्प्रदाय के सन्यासियो के सपर्क मे आते थे। दोनो ही जीवन को बहुत आदर प्रदान करते थे। किन्तु दोनो मे अनेक वातो पर मतभेद भी थे और निर्ग्रंथ सप्रदाय के सन्यासी भिक्खुओ का कटु विरोध भी करते थे। मान्य मौद्गल्यायन सन्यासियो के मत को अतिवादी मानते थे और अपना मत व्यक्त करने मे भी सकोच नहीं करते थे। इसी कारण से बहुत से सन्यासी मान्य मौद्गल्यायन के कटु आलोचक थे।

बुद्ध श्रावस्ती लौट आए थे और पूर्वोद्यान मे ठहरे थे। उनसे मिलने वालो का ताता लगा रहता था। एक दिन सबेरे महिषी विशाखा उनसे मिलने आई उनके बाल और वस्त्र वर्षा के कारण भीगे हुए थे। बुद्ध ने पूछा, "विशाखा आप कहा रहीं ? आपके वस्त्र और केश क्यो भीगे हुए है ?"

महिपी विशाखा रोने लगी। "गुरुवर, मेरे छोटे प्रपौत्र की अभी मृत्यु हो गई। मैं आपसे मिलने आना चाहती थी किन्तु दुख के कारण मै वर्षा से बचने के लिए कुछ भी लिए विना निकल पड़ी।"

"आपका प्रपौत्र कितना बड़ा था। वह कैसे मरा ?"

"श्रीमन्, वह तीन वर्प का था और मोतीझारा से उसकी मृत्यु हुई।"

"बेचारा बच्चा। विशाखा तुम्हारे कितने बच्चे और प्रपौत्र आदि हैं ?"

"श्रीमन्, मेरे सोलह बच्चे हैं जिनमे से नौ के विवाह हो चुके हैं। मेरे बच्चो के आठ बच्चे थे, अब सात ही रह गए हैं।"

"विशाखा, तुम चाहती हो कि तुम्हारे बच्चो के बहुत से बच्चे हो ?"

"जी हा, गुरुदेव । जितने अधिक वच्चे, उतने ही अच्छे। यदि मेरे पुत्र, प्रपौत्र आदि की सख्या इतनी हो, जितनी श्रावस्ती के लोगो की है तो मुझे इससे अधिक प्रसन्नता की क्या वात है ?"

"विशाखा क्या यह जानती हो कि श्रावस्ती मे प्रतिदिन कितने लोगो की मृत्यु हुआ करती है ?"

"गुरुदेव, कभी नौ तो कभी दस लेकिन इतना निश्चित है कि प्रतिदिन एक व्यक्ति की मृत्यु तो अवश्य होती है।"

"विशाखा, यदि तुम्हारे पुत्र-प्रपौत्रो की सख्या इतनी हो, जितने कि श्रावस्ती के लोग हैं तो तुम्हारे वस्त्र और बाल आज की ही भाति प्रतिदिन गीले होते रहेगे।"

विशाखा ने हाथ जोड़े। "मैं समझ गई। मै वास्तव मे इतने पुत्र-प्रपौत्र नहीं चाहती जितनी श्रावती की जन-सख्या है। व्यक्ति को जितनी मोह-ममता होगी, उतना ही अधिक दुख होगा। आपने सदैव मुझे इस बात की शिक्षा दी है किन्तु मैं ही इसे सदैव भूल जाती थी।"

बुद्ध सौम्य भाव से मुस्कराए।

विशाखा ने उनसे कहा, "गुरुदेव, आप सामान्यतः अपनी यात्रा से तभी लौटते है, जव वर्षा ऋतु प्रारभ होने वाली होती है। आपकी अनुपस्थिति मे आपके शिष्यो को आपका अभाव बहुत खलता है। हम भी विहार मे आते है लेकिन यह खाली लगता है। मै आपकी कुटिया के कुछ चक्कर लगाकर घर लौट जाती हू। समझ मे ही नहीं आता कि मैं करू तो क्या करू।"

बुद्ध ने कहा, "यहा आने की अपेक्षा परिश्रमपूर्वक साधना-अभ्यास करना अधिक महत्त्वपूर्ण है। जव भी विहार आती हो, आपको अन्य मान्य भिक्खुओ की देशना सुनने को मिलती होगी। अपनी साधना मे सहायक होने वाले प्रश्न तुम उनसे कर सकती हो। शिक्षक और उसकी शिक्षाए एक ही होती है। मैं यहा नहीं होता, इसके कारण आप अपने साधना-अभ्यास मे कमी मत आने दीजिए।"

वहा खडे आनद ने इस पर एक सुझाव दिया, "यदि इस विहार मे एक वोधि वृक्ष लगा दिया जाए तो बढिया रहेगा। ऐसे मे, आपके यहा उपस्थित न होने पर विहार मे आने वाले शिष्यगण आपके स्थान पर बोधि वृक्ष के दर्शन कर जाया करेगे। वे वोधि वृक्ष का उसी प्रकार नमन कर सकेगे जैसे आपको नमन करते हैं। हम वोधि वृक्ष के चारो ओर चवूतरा वना देगे, जिससे भिक्खुगण उस पर पुष्प अर्पित कर सके। वे शिष्यगण बुद्ध का ध्यान करते हुए मद पगो से वोधि वृक्ष की परिक्रमा भी कर सकेगे।

महिपी विशाखा ने कहा, "यह तो अति उत्तम वात होगी। किन्तु आपको वोधि वृक्ष मिलेगा कहा से ?"

आनद ने उत्तर मे कहा, "मैं उरुवेला स्थित वोधिवृक्ष से, जहा बुद्ध को सवोधि प्राप्ति हुई थी, वीज मगवा लूगा। उसे यहा वोकर, उससे उपजे वृक्ष की देख-भाल करके वडा वना लूगा। आप वोधि-वृक्ष की स्थापना की चिन्ता न करे।"

महिषी विशाखा का हृदय हल्का हो गया और उसे सुकून मिला। उसने बुद्ध और मान्य आनद को नमन किया और अपने घर लौट गई।

अध्याय इकसठ

सिंह-गर्जना

उसी वर्षा-प्रवास मे आनंद ने परस्परावलम्वी सहवर्द्धन के विषय मे वुद्ध से एक प्रश्न पूछा जिसके उत्तर मे वुद्ध ने भिक्खुओ को भव-चक्र की वारह कड़ियो[1] के विषय मे देशना की।

उन्होने वताया, परस्परावलम्वी सहवर्द्धन की देशना वहुत महत्त्वपूर्ण है और परम गूढ है। यह मत समझो कि इसे शव्दो या देशना के माध्यम से हृदयगम किया जा सकता है। भिक्खुओ, परस्परावलम्वी सहवर्द्धन विषयक देशना सुनकर मान्य उरुवेला काश्यप सद्धर्म-पथ मे प्रविष्ट हो गए हैं। इसी प्रकार परस्परावलम्वी सहवर्द्धन विषयक गाथा सुनकर हमारे एक मान्य वधु सारिपुत्त को सद्धर्म मार्ग की गति प्राप्त हो गई। प्रत्येक क्षण परस्परावलम्वी सह-वर्द्धन की मूल प्रकृति का ध्यान करो। जव भी किसी पत्ते या वर्षा

---

1 भव-चक्र की वारह कड़िया एक दूसरे पर अवलम्वित होकर जीवन-मरण की परपरा को गतिमान रखती हैं। ये कड़िया हैं-(1) अविद्या—तमस्कध, जिसके प्रभाव से धर्मो के यथार्थ रूप का वोध नहीं होता और जो सारे क्लेशो का मूल है। (2) सस्कार–कर्म का मूक्ष्म मानसिक रूप, (3) विज्ञान–छ ज्ञानेन्द्रियो मे मन का एक रूप चेतना तत्त्व जो पुनर्जन्म का कारण है, (4) नाम रूप–यह पच स्कधो से सवधित है, (5) षड्यतन–गर्भ मे विकसित नाम रूपात्मक पिंड मे ज्ञानेन्द्रिया विषयो के सपर्क के अभाव मे निष्क्रिय रहती हैं। (6) स्पर्श–गर्भ से जन्म लेने के पश्चात् जीव की छ. इद्रियो का अपने-अपने विषयो से संपर्क होने पर क्रियाशीलता। (7) वेदना–इद्रियो का विषय से सपर्क होने पर सुखात्मक या दुखात्मक अनुभूति। (8) तृष्णा–इन्द्रियो के लिए अपने विषयो की प्राप्ति ही तृष्णा है। (9) उपादान–प्राप्त वस्तु पर घोर आमक्ति, (10) पुनर्जन्म की इच्छा भव है यथा कायभव, रूपभव तथा अरूपभव। (11) जाति–जन्म या समार मे पुन आगमन और (12) जरा-मरण-जरा का अर्थ जीर्ण होना और मरण का अर्थ मृत्यु को प्राप्त होना।

की वूद को देखो तो समीपस्थ एव दूरस्थ उन सभी स्थितियो का ध्यान करो जिनके कारण पत्ते या वर्षा की वूद की सत्ता सभव हुई है। यह जानो कि धागो के सुग्रथन से ही जगत-वसन वुना गया है। एक है तो दूसरे की भी सत्ता है। एक नहीं है तो दूसरा भी अस्तित्वहीन है।

"एक धर्म का जन्म या उसकी मृत्यु अन्य सभी धर्मों के जन्म या मरण से सवंधित है। एक मे सव हैं और सब मे एक है। एक के बिना बहुतो की सत्ता सभव नहीं और वहुत की सत्ता के बिना एक का अस्तित्व सभव नहीं। परस्परावलम्वी सहवर्द्धन की शिक्षा का यह अद्भुत सत्य है। यदि आप गहनता से सभी धर्मों की प्रकृति समझ लेगे तो आप जरा-मरण की सभी चिन्ताओ से पार हो जाएगे। आप जन्म और मरण के चक्र से छूट जाएगे।

"भिक्खुओ, परस्पर सवधित कड़ियो की कई परते और स्तर हैं किन्तु इनमे चार चरणो को पहचाना जा सकता है--मूल कारण, सवेदी कारण, पूर्ववर्ती क्षण का तात्कालिक कारण और कारण का विषय।"

"प्रपच के उद्भव की पहली आवश्यक शर्त है मूल कारण का विद्यमान होना। उदाहरण के लिए चावल के पौधे को उगाने के लिए धान का वीज मूल कारण है। पौधे के उगने मे सहायक होने वाली स्थितिया सवेदी कारण हैं। चावल के पौधे के सदर्भ मे धूप, वर्षा और मिट्टी के सपर्क से ही धान चावल का पौधा वन पाता है। पूर्ववर्ती क्षण का तात्कालिक कारण एक निर्वाध प्रक्रिया है जो तलवर्ती कारण वनता है। इस सतत् प्रक्रिया के बिना चावल का वढकर पकना वाधित हो सकता है। कारण विषय का अर्थ है विपय की सचेतनता। धान की विद्यमानता, समस्त निकटस्थ एव दूरस्थ स्थितियो का होना जो चावल के पौधे की विद्यमानता सभव वनाती है, वे सब विपय की मचेतनता हैं। इन्हे चेतना से पृथक् नहीं किया जा सकता। समस्त धर्मों की मत्ता के लिए चित्त आधारभूत स्थिति है।

"भिक्खुओ, जन्म और मरण की प्रक्रिया के कारण दुःख हैं। जन्म और मरण क्यो होता है ? अज्ञान के कारण। प्रथमत· जन्म-मरण सव मानसिक अवधारणाए है। जो अविद्याजन्य होती हैं। अज्ञान समाप्त कर लेने के लिए समस्त पदार्थों के कारणो का गहनता से ज्ञान होना आवश्यक है। अज्ञान-विजय के वाद जन्म-मृत्यु के समस्त विचारो से आगे निकला जा सकता है। जन्म-मृत्यु के कारणो के पार चले जाने पर समस्त चिन्ताए और दु ख समाप्त हो जाते हैं।

"भिक्खुओ, हम मृत्यु को तभी मानते है, जव पहले जन्म को मानते

हैं। ये भ्रात धारणाए अस्तित्व की भ्रामक धारणा पर आधारित है। अस्तित्व की भ्रामक मान्यता इसीलिए है क्योकि हम वैसा स्वीकारते है। वह स्वीकृति इच्छा के कारण है। इच्छा भी इसीलिए होती है क्योकि हम भावनाओ की मूल प्रकृति को नहीं समझते। भावनाओ की मूल प्रकृति को पहचानना सभव इसलिए नहीं होता क्योकि हम इद्रियो और उनके विचारो के सपर्क से आबद्ध है। इद्रियो और उनके विषयो के सपर्क से हम इसलिए वधे होते है क्योकि हमारे चित्त का चिन्तन स्पष्ट नही होता, चित्त शात नही होता। चित्त की अस्पष्टता और अशाति इसलिए होती है क्योकि अनेक उत्तेजनाए एव सवेग है जो सव अज्ञानजन्य होते हैं। भव की ये वारह कड़िया एक दूसरे से जुडी हुई है। एक कड़ी मे आप अन्य ग्यारह कडियो को देख सकते है।

"भिक्खुओ, इन वारह कड़ियो को जोड़ने वाला तत्त्व अज्ञान है। परस्परावलम्वी सहवर्द्धन की प्रकृति पर ध्यान करने से हम अज्ञान-तिमिर का भेदन कर सकते है और चिन्ताओ एव दुःखो से मुक्ति पा सकते है। आत्मचेतन व्यक्ति जन्म-मरण की लहरो पर चल सकता है, उनमे डूब नहीं सकता। जागृत व्यक्ति भव (अस्मिता) की वारह कड़ियो को रथ के पहिए के रूप मे प्रयोग कर सकता है। जागृत चेतना वाला व्यक्ति इस ससार के वीच ही रहता है, इसमे डूवता नहीं। भिक्खुओ, जन्म-मरण की अवस्थाओ से भागो नहीं, इनसे ऊपर उठो। जन्म-मरण से पार जाने का अर्थ है अर्हत वनकर निर्वाण शात की प्राप्ति।"

इसके अनेक दिनो वाद मान्य मौद्गल्यायन ने सघ को स्मरण कराया कि वुद्ध ने पहले भी परस्परावलम्वी सहवर्द्धन पर अनेक बार देशना की है और इस शिक्षा को सद्धर्म-मार्ग का केन्द्रीय मर्म माना जा सकता है। एक वार वुद्ध ने सिरकियो का वडल दिखाकर परस्परावलम्वी सहवर्द्धन की शिक्षा का उदाहरण प्रस्तुत किया था। गुरुदेव ने कहा था कि वस्तुओ के लिए किसी सर्जक की विद्यमानता आवश्यक नहीं। वे एक-दूसरे से ही रूपाकार ग्रहण करती है। अज्ञान के कारण उत्तेजनाए एव सवेग उत्पन्न होते है और उत्तेजनाओ एव सवेगो से अज्ञान, ठीक उसी प्रकार जैसे खड़े रहने के लिए सिरकिया एक-दूसरे पर झुकी रहती हैं। यदि एक गिर जाती है तो सभी सिरकिया गिर जाती है। यही बात सृष्टि की समस्त वस्तुओ के विषय मे सत्य है। एक से अनेक होते हैं और अनेक से एक। यदि हम गहनता से देखे, तभी हम एक मे अनेकता और अनेकता मे एक के दर्शन कर सकते है।

उसी वर्षा-प्रवास मे अनेक ब्राह्मणो ने बुद्ध पर झूठा आरोप लगाया कि उन्होने एक स्त्री से गमन किया और उसे गर्भवती बना दिया। उन्होने चिंचा नामक एक सुदर ब्राह्मण युवती को तैयार किया कि वह ब्राह्मण धर्म की रक्षा के लिए कुछ करे। वह प्रतिदिन सुन्दर साड़ी पहनकर पुष्पगुच्छ लेकर जेतवन जाती। वह धर्म-देशना के समय पर नहीं आती वरन् धर्म-कक्ष के बाहर उस समय खडी होती जब श्रोता जा रहे होते। आरभ मे जब लोगो ने पूछा कि वह कहा जाती है और क्या करती है तो वह मात्र मुस्करा दी। कुछ दिनो तक अस्पष्ट उत्तर देने के बाद उसने एक दिन कहा–'मैं भिक्खु बुद्ध के पास जाती हू। आखिर मे उसने यह भी कहा–जेतवन मे सोना बहुत ही आनददायक है।'

इससे लोगो को अजीब लगा और उपासको के मन मे तरह-तरह की आशकाए उठने लगीं किन्तु किसी ने कहा कुछ नहीं। एक दिन चिंचा बुद्ध की धर्म-देशना मे उपस्थित हुई। उसका पेट फूला दिख रहा था। बुद्ध की देशना मे खडे होकर उसने कहा–"आप धर्म की लम्बी-चौड़ी बाते तो करते हैं, आपका सम्मान भी बहुत है किन्तु आप इस अबला का कोई ख्याल नहीं करते, जिसे आपने गर्भवती बनाया है। मेरे गर्भ मे आपका बालक पल रहा है, क्या आप इसका उत्तरदायित्व लेगे ?"

सघ मे चिंता की लहर दोड़ गई। हर कोई बुद्ध की ओर देखने लगा। बुद्ध केवल शात भाव से मुस्कराकर बोले, "कुमारी जी, आप और मैं ही जान सकते हैं कि आप जो कह रही है, वह कितना सत्य है।" बुद्ध की शात मुस्कान से चिंचा डगमगा गई। लेकिन बोली, "बिलकुल ठीक। मैं और आप ही जान सकते हैं कि मेरा कथन सत्य है या मिथ्या।"

सघ के भिक्खु अब अपना आश्चर्य छिपा नहीं पाए। अनेक लोग क्रुद्ध होकर खड़े हो गए। चिंचा को लगा कि कहीं लोग उसे मारे-पीटे नहीं। वह बचकर भाग निकलने की जुगाड़ मे भयभीत होकर भागी तो एक खभे मे टकरा गई। जब वह खड़ी हुई तो एक बड़ा गोल काष्ट-खड जो उसके पेट पर बधा था उसके पैर पर गिर गया। वह चीखी और अपना घायल अगूठा पकड़कर बैठ गई। अब उसका पेट एकदम सपाट था।

उपस्थित जन समुदाय ने राहत की सास ली। बहुत से लोग हसने लगे तो कुछ चिंचा की निन्दा करने लगे। भिक्खुनी भीमा ने उठकर सहारा देकर चिंचा को धर्म-कक्ष से बाहर निकाला। जब दोनो महिलाए चली गईं तो बुद्ध ने अपनी देशना आगे देनी आरभ की, मानो कुछ भी घटित हुआ ही न हो।

प्रत्येक प्रकार की वाधा लाघ सकते हैं और हर प्रकार के मोह-जाल से वच सकते हैं। अपने जीवन मे प्रतिदिन परस्पर-अवलम्बन की मूल प्रकृति पर, अपने शरीर, भावनाओ चित्त और चित्त के विषयो की धारणा पर गहन ध्यान करो।"

अगले दिन प्रमुख कक्ष मे आनद ने बुद्ध की देशना को शब्दशः दोहराया। उन्होंने इस देशना का 'सिंह गर्जना सूत्र' नाम रखा।

उस वर्षा-प्रवास मे बहुत से भिक्खु मलेरिया ज्वर से पीड़ित हो गए। वहुत से इतने दुर्वल और क्षीणकाय हो गए कि अपने लिए भिक्षा मागने जाने मे भी असमर्थ हो गए। अन्य भिक्खुओ ने सहर्ष अपनी भिक्षा मे से उन्हे भोजन देना स्वीकार कर लिया किन्तु अधिकाश भिक्षा चावल और कढी के रूप मे मिली थी जो दुर्वल व्यक्तियो के लिए गरिष्ट थी। बुद्ध ने उपासको को अनुमति दे दी कि वे रुग्ण भिक्खुओ के लिए विशेष भोजन बना ले। उन्होने ऐसा भोजन वनाया जिसे रोगी भिक्खु सहजता से पचा सके। इस प्रकार के भोजन के कारण भिक्खु धीरे-धीरे स्वास्थ्य-लाभ कर सके।

एक दिन जव बुद्ध वैठे हुए ध्यान कर रहे थे तो उन्होने देखा कि चारो ओर वहुत से कौए उड़ रहे हैं। पूछताछ करने पर पता चला कि बहुत से भिक्खु रुग्ण भिक्खुओ के लिए विशेप रूप से वनाया गया भोजन कौओ को डाल रहे हैं। उन्होने बताया कि आज सवेरे अनेक भिक्खु रोगी रोग के कारण भोजन कर ही नहीं सके। दोपहर हो चुकी थी और दोपहर वाद भिक्खुओ को भोजन करना वर्जित है। जव बुद्ध ने कहा कि इस भोजन को कल के लिए वचाकर क्यो नहीं रखा गया तो उन्हे बताया गया कि भोजन रात भर रखा नहीं जा सकता। बुद्ध ने कहा कि रोगी भिक्खुओ को इस नियम से छूट दे दी जाए कि वे दोपहर वाद भोजन नहीं कर सकते। यदि कुछ भोजन वचता है तो रात मे रखा जा सकता है।

इसके कुछ ही दिन वाद राजधानी के एक वैद्य मान्य सारिपुत्त से मिलने आए। उन्होने सुझाव दिया कि रोगी भिक्खुओ को विशेष जड़ी-बूटियो से युक्त भोजन दिया जाना चाहिए। उनके इस सुझाव के फलस्वरूप रोगी भिक्खु शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ कर सके।

अध्याय बासठ

सारिपुत्त की उद्घोषणा

व र्षा-प्रवास समाप्त होने के बाद मान्य सारिपुत्त ने धर्म-प्रसार यात्रा पर निकलने से पूर्व बुद्ध से विदा ली। बुद्ध ने शात सुरक्षित यात्रा तथा शरीर और चित्त को सभी चिन्ताओ से मुक्त रहने की कामना की और कहा कि सारिपुत्त की इस यात्रा मे अधिक विघ्न नही आएगे। सारिपुत्त बोधिसत्व को धन्यवाद करके विदा हुए।

दोपहर को एक भिक्खु बुद्ध के पास आया और सारिपुत्त के दुर्व्यवहार की शिकायत करते हुए कहा, "मैने मान्य सारिपुत्त से पूछा कि आप कहा जा रहे हैं। उन्होने कोई उत्तर नहीं दिया अपितु मुझे रास्ते से इतनी जोर का धक्का देकर हटाया कि मै जमीन पर गिर पडा। इस दुर्व्यवहार के लिए उन्होने क्षमा भी नहीं मागी और चले गये।"

बुद्ध ने आनद से कहा, "मै समझता हू कि सारिपुत्त अभी बहुत दूर नहीं गये होगे। किसी श्रामणेर को भेजकर उन्हे बुलाओ। शाम को जेत धर्म-कक्ष मे सघ की वैठक होगी।" जैसा बुद्ध ने कहा, वैसा ही आनद ने किया और तीसरे पहर गये सारिपुत्त विहार मे लौट आये। बुद्ध ने कहा, "आज सायं समस्त सघ की बैठक धर्म-कक्ष मे होगी। एक भिक्खु ने आप पर आरोप लगाया है कि आपने धक्का मारकर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया और इस दुर्व्यवहार की क्षमा तक नही मागी।"

मान्य मौद्गल्यायन और आनद ने विहार मे सर्वत्र घोषणा करा दी, "सायकाल को सघ की बैठक होगी। आप सभी उसमे उपस्थित हो। आज रात को सारिपुत्त को उद्घोषणा करने का अवसर मिलेगा।"

उस शाम सभी भिक्खु धर्म-कक्ष मे एकत्र होकर यह देखना चाह रहे थे कि जो लोग सघ मे उनकी प्रमुख स्थिति के कारण द्वेष अनुभव करते

है, उनका सामना सारिपुत्त कैसे करेगे। मान्य सारिपुत्त बुद्ध के सर्वाधिक विश्वासपात्र शिष्य थे जिसके कारण बहुत सी गलतफहमिया और द्वेष भाव लोगो के मन मे था। बुद्ध के विश्वास के कारण सारिपुत्त बहुत अधिक प्रभाव दिखाते है। जब बुद्ध ने कुछ भिक्खुओ की त्रुटियो की ओर सकेत किया तो उन्होने सारिपुत्त को ही त्रुटियो की ओर सकेत करने का दोषी माना। कुछ भिक्खु तो सारिपुत्त से घृणा तक करते थे। वे इस बात को भूले नहीं थे कि कुछ वर्ष पूर्व बुद्ध ने सारिपुत्त को अपने आसन पर ही बैठने को कहा था।

मान्य आनद को स्मरण हो आया कि आठ वर्ष पहले जेतवन मे गोखलिक नामक भिक्खु सारिपुत्त और मौद्गल्यायन से इतनी घृणा करता था कि स्वय बुद्ध के समझाने पर भी उसने अपना विचार न बदला। गोखलिक उन्हे अहकारी मानता और उनके कार्यों को महत्त्वाकाक्षाओ से प्रेरित मानता था। बुद्ध ने अकेले मे मिलकर भी उसे समझाया कि दोनो वरिष्ठ भिक्खु निष्ठावान हैं और उनके कार्य प्रेम-भाव से पूर्ण होते हैं। किन्तु गोखलिक के मन मे घृणा और द्वेष इस सीमा तक भरा था कि वह राजगृह मे देवदत्त के पास चला गया और वहा उनका प्रमुख सहायक बन गया।

इसी प्रकार की समस्याओ के कारण आनद बुद्ध के सहायक बनने मे आना-कानी कर रहे थे। यह कार्य करने से पूर्व उन्होने शर्त रखी थी कि मै न तो बुद्ध की कुटिया मे सोऊगा और न उनके साथ भोजन करूगा। आनद को ज्ञात था कि ऐसे भिक्खु बधु इसका विरोध करेगे। कुछ भाइयो को लगता था कि बुद्ध उनकी ओर पर्याप्त ध्यान नहीं देते है। आनद जानता था कि ऐसी भावनाओ से घृणा और द्वेष बढेगा और सभव है कि कुछ भिक्खु बुद्ध देव को ही छोडकर चले जाए।

आनन्द को यह भी स्मरण आया कि कोशाम्बी के कालमसद्माया गाव की मगदिका नामक महिला बुद्ध से इसीलिए घृणा करने लगी थी क्योकि उसे बुद्ध की ओर से विशिष्ट व्यवहार नहीं मिला। वह सुन्दरी ब्राह्मण कन्या थी। जब वह उनसे मिले थे तो बुद्ध की आयु चवालीस वर्ष की थी। वह उसी क्षण उन पर मर मिटी थी और प्रेम बढ़ने पर वह यह जानना चाहती थी कि क्या बुद्ध भी उसका विशेष ख्याल करते है या नहीं। बुद्ध का ध्यान आकृष्ट करने के लिए उसने हर सभव प्रयास किया किन्तु बुद्ध उसके साथ वही व्यवहार करते रहे जैसा औरो से करते थे। अन्त मे उसका प्रेम पलट कर घृणा मे परिवर्तित हो गया। बाद मे जब वह राजा उदेन की पत्नी बन

गयी तो उसने बुद्ध को अपमानित करने हेतु अपनी स्थिति का दुरुपयोग किया और उनके विरुद्ध तरह-तरह की झूठी अफवाहे फैलानी आरभ की। राजा उदेन (उदयन) की प्रिय रखैल जव बुद्ध की शिष्या बन गयी तो मगदिका ने उसे भाति-भाति के कष्ट पहुचाये। इन सव घटनाओ से दुखी होकर आनद ने बुद्ध से कहा कि हम क्यो न कौशावी छोडकर कहीं अन्यत्र चले जहा धर्म-प्रचार सुगमता से हो सके। बुद्ध ने कहा, "यदि वहा भी ऐसी ही आपमानपूर्ण और कष्टकर स्थितिया आयीं तो हम क्या करेगे ?"

आनद ने कहा, "तो हम कहीं और चलेगे।" किन्तु, बुद्ध इस पर सहमत नहीं हुए और कहा, "कठिनाइया आने पर हमे हतोत्साहित नही होना चाहिए, वरन् कठिनाइयो के वीच से ही रास्ता निकालना चाहिए। यदि हम समभाव का अभ्यास करे तो ये अपमान या दुरारोप हमे डिगा नहीं पाएगे। ये आचरण स्वय उन्हीं लोगो को दु:खी वनाएगे। यदि हम आकाश पर थूकेगे तो थूक हमारे ही मुह पर पड़ेगा।"

आनद इस वात से चिन्तित नहीं था कि सारिपुत्त वर्तमान स्थिति का कैसे सामना करेगे। वुद्ध का उन पर विश्वास करना सर्वथा ठीक था। वह वस्तुत सदाशयी हे और सघ के मान्य वरिष्ठ भिक्खु है। बुद्ध उनकी गहन अन्तर्दृष्टि के कारण ही सघ के मार्ग-निर्देशन मे उनकी सहायता लेते है। उन्होने 'हस्तिपादी सूत्र' सहित अनेक सूत्रो की रचना की है जिसमे उन्होने चार तत्त्वो के साथ पाच स्कधो का मौलिकतापूर्ण सामजस्य प्रस्तुत किया है।

जव बुद्ध ने धर्म-कक्ष मे प्रवेश किया तो सभी भिक्खु उठकर खड़े हो गये। उन्होने भिक्खुओ को वैठने का सकेत किया और स्वय भी बैठ गये। उन्होने सारिपुत्त को अपने सामने की छोटी कुर्सी पर बैठने को कहा। बुद्ध ने सारिपुत्त से कहा, "एक भिक्खु ने आप पर आरोप लगाया है कि आपने उसे धक्का देकर गिरा दिया और क्षमा-याचना तक नही की। क्या आपको इस विपय मे कुछ कहना है ?"

मान्य सारिपुत्त ने खड़े होकर हाथ जोड़े। पहले उन्होने बुद्ध को नमन किया और फिर सघ को। उन्होने कहा, "गुरुवर, जो भिक्खु साधना नहीं करता, जो काया पर ध्यान नहीं करता, जो काया के क्रिया-कलापो के प्रति सजग नहीं है, तो ऐसा भिक्खु तो साथी भिक्खु को धक्का दे सकता है और बिना क्षमा-याचना के उसे छोड़कर जा सकता है।"

"गुरुदेव, आपने चौदह वर्ष पूर्व जो शिक्षा भिक्खु राहुल को दी थी, वह

मुझे आज भी याद है। आपने उस समय अठारह वर्षीय राहुल को पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु तत्त्वो की मूल प्रकृति पर ध्यान करने के लिए कहा था जिससे प्रेममय, दया, करुणा, आनद और समत्व का विकास और पोषण हो सके। यद्यपि आपने शिक्षा तो राहुल को दी थी, मैंने उस शिक्षा के अनुसार पिछले चोदह वर्षो से साधना की है और मैं आतरिक रूप से उसके लिए आभारी हू।

"मेने पृथ्वी की भाति हो जाने का अभ्यास किया है। पृथ्वी विशाल है और उन्मुक्त है और उसमे कुछ भी ग्रहण करने और उसे परिवर्तित करने की क्षमता है। चाहे लोग पृथ्वी पर फूल, सुगध या ताजा दूध डाले या दुर्गंध युक्त मल, मूत्र, मवाद या रक्त डाले, पृथ्वी उस सवको ग्रहण करती है और उसे उस ग्रहण मे न तो कुछ भी प्रसन्नता होती है न अवसाद। मैंने अपने चित्त और शरीर को पृथ्वी के समान वनाने के लिए साधना की है।

"गुरुवर, मैंने जल के समान वनने की साधना की है। जल मे भला या वुरा जो भी पदार्थ डाले, उस सवको जल अनासक्त भाव से ग्रहण कर लेता है। जल प्रवाहमय है और उसमे परिवर्तन करके पदार्थ को शुद्ध करने की क्षमता होती है। मैंने अपने चित्त और शरीर को जल के समान बनाने की साधना की है।

"गुरुवर, अग्नि सुदर अथवा अशुद्ध सभी वस्तुओ को समभाव से जलाकर भस्म कर देती है। मैंने अपने चित्त और शरीर को अग्नि के समान बनाने की साधना की है। गुरुदेव मैंने वायु के समान बनने का साधना-अभ्यास किया है। वायु सुगध और दुर्गंध दोनो को समभाव से प्रसारित करती है। उसमे गध को शुद्ध करके प्रसारित करने की भी क्षमता है। मैंने अपने शरीर और चित्त को वायु के समान वनाने की साधना की है। जो भिक्खु शरीर मे काया को नहीं देखता, जो शरीर के क्रिया-कलापो के विषय मे सचेतन नहीं रह सकता, ऐसा भिक्खु ही भिक्खु वधु को धक्का देकर गिरा सकता है और विना क्षमा-याचना किये चला जा सकता है। ऐसा करना मेरा मार्ग नहीं है।

"आदरणीय वुद्ध! तार-तार कपडे पहने, गली-गली उच्छिष्ट अन्न मागने के लिए भिक्षा-पात्र फैलाये छोटे अस्पृश्य वालक के समान मुझमे झूठा गर्व अथवा अहकार नहीं है। मैंने अपने हृदय को उस अस्पृश्य वालक के हृदय के समान वनाने का प्रयास किया है। मैंने विनम्रता का अभ्यास किया है और कभी स्वय को औरो मे ऊचा रखने का साहस नहीं किया है। जो

भिक्खु शरीर मे काया को दृष्टा बनकर नहीं देखता, जो भिक्खु शरीर के क्रिया-कलापो के प्रति सचेत नहीं रहता, ऐसा भिक्खु ही किसी भिक्खु भाई को धक्का देकर गिरा सकता है और बिना क्षमा-याचना के चला जा सकता है। ऐसा करना मेरा धर्म नहीं है।"

मान्य सारिपुत्त तो आगे भी बोलना चाहते थे किन्तु आरोपी इससे आगे सुन न सका। वह खड़ा हो गया और अपने उत्तरीय से खुला कधा ढक लिया। वह बुद्ध के समक्ष हाथ जोड़कर प्रणत हुआ और अपना अपराध स्वीकार कर लिया। "बोधिसत्व मैने शीलाचार का उल्लघन किया है। मैने मान्य सारिपुत्त के विरुद्ध असत्य साक्ष्य दिया है। मै समस्त सघ समुदाय के समक्ष अपना अपराध स्वीकार करता हू और भविष्य मे शीलो के पालन का वचन देता हूं।"

बुद्ध ने कहा, "आपने शील-उल्लघन का अपराध सघ-समुदाय के समक्ष स्वीकार कर लिया, यह अच्छी बात है। हम आपकी अपराध स्वीकृति को मानते हैं। मान्य सारिपुत्त ने हाथ जोड़कर कहा-"मुझे अपने भिक्खु बधु के प्रति किसी प्रकार का अमर्ष नहीं है। मेरा उनसे निवेदन है कि अतीत मे यदि मैंने ऐसा कुछ कार्य किया हो, जिससे उन्हे दुख पहुचा हो तो मैं उसके लिए क्षमाप्रार्थी हू।"

उस भिक्खु ने हाथ जोड़कर सारिपुत्त को नमन और सारिपुत्त ने प्रति-नमन किया। धर्म- कक्ष मे सर्वत्र प्रसन्नता छा गयी। आनद ने खड़े होकर कहा, "बधु सारिपुत्त, कृपया हमारे साथ कुछ दिन और निवास करिए। आपके बधु भिक्खु आपके साथ कुछ अधिक समय व्यतीत करना चाहेगे।" मान्य सारिपुत्त स्वीकृतिसूचक हसी हस दिये।

वर्षा-प्रवास समाप्त होने पर बुद्ध ने देहात के अनेक ग्रामो का भ्रमण किया। एक दिन वह कालम समुदाय के एक गाव केशपुत्त मे देशना कर रहे थे जिसे बहुत से युवक सुन रहे थे। उन्होने बुद्ध के विषय मे सुन तो बहुत कुछ रखा था किन्तु उनसे आमने-सामने मिलने का यह पहला अवसर था।

एक युवक ने हाथ जोड़कर कहा, "गुरुवर, बहुत समय से केशपुत्त मे अनेक ब्राह्मण पुजारी आते हैं जो अपने-अपने भिन्न-भिन्न सिद्धान्तो का वर्णन करते रहे हैं। हर वक्ता अपने सिद्धान्त को दूसरो के सिद्धान्तो से अच्छा बताता है। इससे हम असमजस मे पड़े है। हम नहीं जानते कि इनमें से कौन-सा मार्ग अपनाए। सत्य तो यह है कि हमें इन सिद्धान्तो पर से विश्वास

ही उठ गया है। हमने सुना है कि आप सबोधि-प्राप्त आचार्य है। क्या आप हमे वताएगे कि हम किस सिद्धात पर विश्वास करे और किस पर नही ? कौन सत्य वोल रहा है और कौन मिथ्या सिद्धान्त कथन कर रहा है ?"

वुद्ध ने उत्तर दिया, "मैं समझ सकता हू कि आपके मन मे सदेह क्यो उठ रहा है। मित्र किसी भी वात पर जल्दी मे विश्वास मत करो, चाहे कोई उसे वार-वार क्यो न कहे, चाहे वह पावन ग्रथो मे लिखी हो या किसी सम्माननीय आचार्य ने वोला हो। केवल उन्हीं बातो को मानो जो आपकी तर्क-वुद्धि की कसौटी पर खरी उतरती हो, जिसको वुद्धिमान और सौहार्द्रपूर्ण लोग वताये और जिनपर चलकर लोग लाभान्वित हो तथा प्रसन्नता प्राप्त करे। जो वाते आपकी तर्क-वुद्धि को स्वीकार न हो, जिनका विद्वान या सदाशयी व्यक्ति समर्थन न करते हो और जिनपर चलने से लोगो का भला न हो और प्रसन्नता प्राप्त न हो, ऐसी वातो को स्वीकार न करे।"

कालम समुदाय के लोगो ने वुद्ध से कुछ और शिक्षा देने का अनुरोध किया तो वह वोले, "मित्रो, मान लीजिए कोई व्यक्ति क्रोध, लोभ और अज्ञान का शिकार हो तो उसका लोभ, क्रोध या अज्ञान उसको प्रसन्नता प्रदान करेगा अथवा दु ख ?"

लोगो ने उत्तर दिया, "गुरुवर, लोभ, क्रोध और अज्ञान तो उससे ऐसे कार्य कराएगे जिनसे उसे स्वय भी दु ख भुगतना होगा और दूसरो को भी दु ख ही पहुचेगा।"

वुद्ध ने पृछा, "अव ऐसे व्यक्ति का उदाहरण लीजिए जो प्रेमपूर्ण कृपा-भाव, करुणा, सहानुभूति- जन्य आनद और समत्व भाव से पूर्ण हो और जो दूसरो के दु.ख दूर करके उनको प्रसन्नता प्रदान करता हो, जो दूसरो की खुशहाली देख कर प्रसन्नता प्राप्त करता हो और सभी लोगो के साथ भेद-भाव के विना समान व्यवहार करता हो, ऐसे गुणो से उस व्यक्ति को प्रसन्नता प्राप्त होगी अथवा दु ख मिलेगा ?"

"गुरुवर, ऐसे गुणो से तो उस व्यक्ति को भी और उसके आस-पास के सभी लोगो को प्रसन्नता ही प्राप्त होगी।"

"प्रेमपूर्ण कृपाभाव, करुणा, आनद और समत्व-भाव का ज्ञानी और गुणी जन समर्थन करेगे या नहीं ?"

"हा गुरुदेव।"

"मित्रो, आप लोग इन वातो की छानवीन कर भले-वुरे की पहचान कर

सकते है। केवल उन्ही बातो को स्वीकार करिए जो आपकी तर्क बुद्धि पर खरी ठहरे, जिनका ज्ञानी और गुणीजन समर्थन करते हो और जिनपर आचरण करके अपना तथा अन्य लोगो का भला हो और उन्हे प्रसन्नता प्रदान की जा सके। जो बाते इन सिद्धान्तो के प्रतिकूल हो, उन्हे त्याग दीजिए।

कालम युवक बुद्ध की शिक्षाओ से प्रभावित एव उत्साहित हुए। उन्होने कहा कि इनकी शिक्षाओ को मानने की कोई शर्त भी नहीं है। बुद्ध का मार्ग वास्तव मे विचार-स्वातत्र्य का सच्चा सम्मान करता है। बहुत से कालम युवको ने उसी दिन बुद्ध का शिष्यत्व स्वीकार कर लिया।

अध्याय तिरसठ

सागर तक सीधी यात्रा

अपनी यात्राओ के दौरान बुद्ध अलवी गाव मे रुके। वहा एक सार्वजनिक भवन मे बुद्ध और भिक्खुओ तथा अन्य स्थानीय लोगो को भोजन कराया गया। भोजन की समाप्ति के वाद बुद्ध अपनी धर्म देशना आरभ करने ही वाले थे कि एक अधेड़ किसान भवन मे आया जिसकी सास उखड़ी हुई थी। उसे अपने एक भैसे को खोजने मे विलम्ब हो गया था, इसीलिए वह दौड़ता-हाफता आया था। बुद्ध को लगा कि इसे आज भोजन मिला ही नहीं है। उन्होने कहा कि पहले इस किसान को भोजन कराओ, तभी देशना आरभ होगी। लोग अधीर हो रहे थे और उनकी समझ मे नहीं आ रहा था कि एक व्यक्ति की खातिर धर्म देशना क्यो रुकी रहे।

जव किसान भोजन कर चुका तो बुद्ध ने कहा, "मान्य वधुओ, यदि हमारा एक भाई भूखा हो और मै देशना आरभ कर दू तो उसका ध्यान मेरी देशना मे कैसे लगेगा। भूख से वड़ा कोई दु.ख नहीं होता। भूख हमारी शारीरिक शक्तियो का क्षय कर देती है और हमारे कल्याण, शाति और आनद को नष्ट कर देती है। जो लोग भूखे है, हमे उन्हे कभी नहीं भूलना चाहिए। एक समय भोजन न मिलने पर जव असुविधा होती है, तो उन लोगो के दु:ख की कल्पना कीजिए जिन्हे दिनो और सप्ताहो तक समुचित भोजन नहीं मिलता। हमे ऐसे मार्ग तलाशने चाहिए जिससे इस ससार मे एक भी व्यक्ति को भूखा रहने को वाध्य न होना पडे।"

अलवी के वाद बुद्ध गगा के किनारे उत्तर-पश्चिम मे कौशाम्वी की ओर चले। वह रास्ते मे थोड़ी देर तक रुककर धारा मे वहते काष्ठ-खडो को देखने लगे। उन्होने अन्य भिक्खुओ को भी बुला लिया और उन काष्ठ-खडो को दिखाते हुए कहा, "भिक्खुओ यदि ये काष्ठ-खड कहीं किनारे पर रुक

न जाए, यदि ये डूब न जाए, कहीं रेत मे धस न जाए या ये भीतर से बाहर तक सड़ न जाए, यदि इन्हे बीच मे उठा न लिया जाए या ये किसी भवर मे न फसे तो ये बहते हुए सीधे समुद्र तक चले जाएगे। यही बात आपके लिए धर्म-पथ के विषय मे सत्य है। यदि तुम कहीं किनारे पर न जा लगो यदि तुम डूबो नहीं, यदि तुम कहीं रेत मे फसो, यदि तुम उठा न लिये जाओ, यदि तुम भवर मे न फसो या तुम्ही भीतर से सड़ने न लगो तो तुम भी सीधे आत्म-जागृति और मुक्ति के सागर तक पहुच सकते हो।"

भिक्खुओ ने कहा, "गुरुदेव, कृपया अपने कथन को पूर्णतया स्पष्ट करने का अनुग्रह कीजिए। किनारे रुक जाने, डूब जाने या रेत मे धस जाने से आपका तात्पर्य क्या है ?"

बुद्ध ने उत्तर देते हुए कहा, "नदी के किनारे रुक जाने का अर्थ है—छः इद्रियो और उनके विषयो मे फस जाना। परिश्रमपूर्वक साधना करने से आपमे वे विचार नही आने पाएगे जिनके कारण इद्रियो और उनके विषयो के बीच सपर्क होता है। डूब जाने का अर्थ इच्छा-आकाक्षाओ का दास हो जाना है जिससे आपकी साधना करने की क्षमता का क्षरण हो जाता है। रेत मे फस जाने का अर्थ है स्वार्थी हो जाना, सदैव अपनी ही इच्छाओ, अपने ही लाभ की तथा अपनी ही प्रतिष्ठा की बात सोचना और आत्म-जागृति के लक्ष्य को भूल जाना। जल से निकाल लिए जाने का अर्थ है—साधना-अभ्यास के स्थान पर स्वय को निरुद्देश्य बना लेना और घटिया लोगो की सगति मे घूमते फिरना। भंवर मे फसने का अर्थ है—पाच प्रकार की इच्छाओ—सुस्वादु भोजन, विषय-वासना, वित्तेषणा, यशेषणा और निद्रा मे फसे रहना। भीतर से सड़ने का अर्थ है—दिखावे के सद्‌गुणो वाला जीवन जीना, सघ को धोखा देना और धर्म को अपनी इच्छा-आकाक्षाओ की पूर्ति के लिए प्रयोग करना।

"भिक्खुओ यदि आप लोग परिश्रमपूर्वक साधना करो और इन छः भ्रमजालो मे न फसो तो तुम निश्चित ही सबोधि (निर्वाण शातम्) का फल प्राप्त कर सकते हो, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार बहता काष्ठ-खड सभी बाधाओ से बचता हुआ समुद्र तक पहुच जाता है।"

जब बुद्ध भिक्खुओ को यह सब समझा रहे थे तो पास खड़ा एक चरवाहा युवक यह सुनने के लिए रुक गया था। उसका नाम नन्द था। वह बुद्ध की देशना से इतना प्रभावित हुआ कि उसने भिक्खुओ के पास जाकर प्रार्थना की कि उसे भी शिष्य बना लिया जाए। उसने कहा, "गुरुदेव, मैं इन बधुओ के समान भिक्खु बनना चाहता हू और धर्म-मार्ग अपनाना चाहता हू। मै

वचन देता हू कि मैं सद्धर्म मार्ग का अध्ययन करूगा। मैं न किनारे पर फसूगा, न डूबूगा, न रेत मे फसूगा, न जल से निकाला जा सकूगा, न भवर मे पड़ूगा और न भीतर से स्वय को सड़ने दूगा। कृपया मुझे भी अपना शिष्य वना लीजिए।"

बुद्ध युवक को देखकर प्रसन्न हुए। वह समझ गये कि यह युवक क्षमतावान और परिश्रमी है किन्तु सभवत. अशिक्षित या अल्पशिक्षित है। बुद्ध ने स्वीकृति देते हुए पूछा, "तुम्हारी आयु क्या है ?"

नद ने कहा कि सोलह वर्ष, तो बुद्ध ने पूछा कि क्या तुम्हारे माता-पिता जीवित हैं। इसके उत्तर में नद ने वताया कि वे दोनो मर चुके है। मेरा कोई परिवार नहीं है। मैं एक धनी व्यक्ति के यहा आश्रय पाकर उसके भैंसों की देखभाल करता हू।

बुद्ध ने पूछा, "क्या तुम दिन मे एक वार भोजन करके रह सकते हो।"

"ऐसा तो मैं वहुत सालो से कर रहा हू।"

बुद्ध ने कहा, "सिद्धान्ततः तुम्हे सघ मे तभी सम्मिलित किया जा सकता है जव वीस वर्ष की आयु हो जाए। कोई भी युवा वीस साल से पहले इतना समझदार नहीं हो पाता कि वह गृह-त्याग कर भिक्खु-जीवन व्यतीत कर सके। लेकिन तुम साधारण युवको से अलग हो। मैं कहूगा कि सघ समुदाय तुम्हारे लिए इस शर्त मे ढील दे दे। तुम चार वर्षों तक श्रामणेर की भाति साधना-अभ्यास करोगे। इसके वाद तुम्हे पूर्ण प्रवृज्या दे दी जाएगी। भैसो को मालिक के घर छोड आओ और उससे नौकरी छोड देने की अनुमति ले लो। तव तक हम यहीं प्रतीक्षा करेगे।"

युवक ने कहा, "गुरुदेव, इसकी आवश्यकता नहीं है। ये भैंसे वडे आज्ञाकारी है। ये मेरे हाके विना ही अपने स्थान तक चले जाएगे।"

बुद्ध ने कहा, "नहीं, इन्हे तुम स्वय लेकर जाओ और अपने मालिक से सघ मे सम्मिलित होने की अनुमति लेकर आओ।"

"लेकिन जव तक मैं लौटू, तव तक आप चले गये तो क्या होगा ?"

बुद्ध ने मुस्कराकर कहा, "इसकी चिन्ता मत करो। मैं वचन देता हू कि हम तुम्हारे आने तक यहीं प्रतीक्षा करेगे।"

नन्द जव भैसो को वापस ले गया तो बुद्ध ने स्वास्ति से कहा, "स्वास्ति, मैं इस युवक को तुम्हारे सरक्षण मे रखूगा। मै समझता हू कि तुम भली-भाति जानते हो कि इसे किस प्रकार मार्ग-निर्देश देना है और सहायता करनी है।"

भैंसे की पीठ पर बैठने के लिए भिक्खु राहुल स्वास्ति को अपना चीवर पकड़ाते हुए

स्वास्ति ने हाथ जोडे और मुस्कराया। मान्य स्वास्ति की आयु उन्तालीस वर्ष की हो गई थी। वह समझ रहा था कि बुद्ध क्यो उसे युवक नद का प्रशिक्षक वना रहे है। वहुत पहले बुद्ध ने 'भैसो के सरक्षण का सूत्र' स्वास्ति के साथ अपनी मैत्री के आधार पर सुनाया था, जव वह स्वय नद की भाति एक चरवाहा था। वह समझता था कि वह सद्धर्म-पथ पर नद का मार्ग-दर्शन कर सकेगा जिसमे उसे राहुल का भी सहयोग मिलेगा।

स्वास्ति के छोटे भाई-वहिन अव बड़े हो गये थे और उनका अपना-अपना परिवार हो गया। एक साल वह राहुल के साथ उरुवेला गया था तो देखा कि उसकी पुरानी झोपडी का नामोनिशान नहीं रह गया है। भिक्खु स्वास्ति और राहुल नैरजना नदी के तट पर गये। स्वास्ति राहुल से किया अपना वायदा नहीं भूला था कि वह राहुल को भैंसे की सवारी की मौज करवाएगा। उसने आस-पास के चरवाहे वच्चो को बुलाकर राहुल को भैंसे की सवारी कराई। भैंसा इतना सीधा होता है, यह देखकर राहुल प्रभावित हुआ। वह और स्वास्ति दोनो ने भैसो की सवारी की। राहुल सोचने लगा कि यदि वुद्ध ने उन्हे इस तरह भैसो पर वैठे देखा तो क्या सोचेगे। स्वास्ति मुस्करा दिया। वह जानता था कि यदि राहुल शाक्य वश के राजमहल मे रहा होता तो राजा वन गया होता लेकिन तव भैंसे की सवारी का आनद उसे कहा मिलता।

जव युवक नद आ गया तो स्वास्ति अतीत की स्मृतियो से निकलकर वर्तमान मे आ गया। उस रात उसने नद के सिर के बाल मूडे, चीवर धारण करना, भिक्षा-पात्र पकड़ना, चलना, खडे होना तथा बैठना और सभी कुछ सजग भिक्खु की भांति करना सिखाया। नद समझदार और परिश्रमी था और स्वास्ति को उसकी सहायता करने मे आनद आ रहा था।

उसे स्मरण आया कि किस प्रकार कुछ वर्प पहले वेणुवन मे सत्रह युवको ने सघ की शरण ली थी। उनमे सवसे वड़ा उपालि सत्रह वर्ष का और सवसे छोटा युवक वारह वर्ष का था। सभी धनी परिवारो के युवक थे। सवने अपने माता-पिता से सघ का सदस्य वनने की अनुमति ले ली थी। सघ मे उन्हे भिक्खु जीवन विताना था जिसमे दिन में एक वार ही भोजन की व्यवस्था थी। पहली रात उनमे से कई वच्चे रात को भूख के मारे रोते रहे। सवेरे जव वुद्ध ने पता किया तो ज्ञात हुआ कि रात मे वच्चे भूख से रो रहे थे। तव से वुद्ध ने यह नियम वना दिया था कि, "आगे से किसी भी युवक को वीस वरस से कम आयु का होने पर सघ का सदस्य नहीं वनाया जाएगा।"

उन बच्चो को सघ मे तो रहने दिया गया था किन्तु उन्हे शाम को दुवारा भोजन कर लेने की अनुमति दे दी गयी थी। सभी बच्चे भिक्खु बने रहे। उनमे से जो सबसे कम उम्र का बच्चा था, उसकी आयु अब बीस वर्ष की हो गयी थी।

अध्याय चौंसठ

जन्म-मरण का चक्र

एक दिन वुद्ध भेषकाल उद्यान मे बैठे थे तो बुद्ध ने कहा कि-"मैं आपको महापुरुषो की आठ अनुभूतियो के विषय मे बताना चाहता हू। मान्य अनिरुद्ध ने इनके विषय मे पहले आपको वताया हुआ है। इन अनुभूतियो से विस्मृति पर विजय पाने और सबोधि प्राप्ति मे बहुत सहायता मिलती है।

"पहली अनुभूति से यह ज्ञान होता है कि सभी धर्म अनित्य और अनात्म है। सभी धर्मों की अनित्यता और अनात्मता की धारणा पर ध्यान करने से आप दु खो से छुटकारा पाते है और आत्म-जागृति, शाति और आनद प्राप्त कर सकते हैं।

"दूसरी अनुभूति यह ज्ञान है कि जितनी अधिक इच्छा-आकाक्षाएं होती हे, उतना ही अधिक दु ख होता है। जीवन मे सभी कठिनाइया लोभ और इच्छाओ के कारण सामने आती हैं।

"तीमरी अनुभूति यह ज्ञान है कि सादगी भरे जीवन और सीमित इच्छाओ से शान्ति, हर्प ओर सौहार्द्र का उदय होता है। सादा जीवन जीने से माधना-अभ्यास करने और दूसरो की सहायता करने के लिए अधिक समय व्यक्ति को सुलभ होता है।

"चौथी अनुभृति यह ज्ञान है कि परिश्रमपूर्वक साधना करने से सवोधि की प्राप्ति मभव हे। आलस्य-प्रमाद और वासनापूर्ण इच्छाओ मे व्यस्त होना माधना के मार्ग की वाधाए हैं।

"पाचवीं अनुभूति यह ज्ञान है कि अज्ञान के कारण ही जन्म-मरण के अनत चक्र मे फमना पडता है। आपको मदैव सुनकर वात स्मरण रखनी

चाहिए और उसे समझना चाहिए जिससे आपमे प्रज्ञा और अभिव्यक्ति-क्षमता विकसित हो।

"छटी अनुभूति यह जानना है कि गरीवी से घृणा और क्रोध जागृत होता है जिनके कारण नकारात्मक विचार आते है और वैसे ही कर्म होते है। सद्धर्म के अनुयायी को उदारता की साधना करते हुए प्रत्येक व्यक्ति को (मित्र एव शत्रु को) समदृष्टि से देखना चाहिए। किसी के अतीत के गलत कार्य के लिए निन्दा नहीं करनी चाहिए और न वर्तमान समय मे हानि पहुचाने वाले से घृणा करनी चाहिए।

"सातवीं 'अनुभूति' यह समझना है कि यद्यपि हम दूसरो को शिक्षा देने और सहायता करने के लिए जागतिक कर्मो मे पड़ते है लेकिन हमे सासारिक प्रपचो मे नहीं फसना चाहिए। सद्धर्म मार्ग अपनाने के लिए व्यक्ति गृह-त्याग करता है तो उसके पास तीन चीवर और एक भिक्षा-पात्र होता है। वह सदैव सादगी से रहे और समस्त प्राणियो को करुणा की दृष्टि से देखे।

"आठवीं अनुभूति यह ज्ञान होता है कि हम केवल अपनी आत्म-मुक्ति के लिए ही साधना नही करते वरन् हमे अपना सर्वस्व अन्य सभी लोगो को मुक्ति के द्वार तक पहुचाने मे लगा देना चाहिए।

"भिक्खुओ, ये महापुरुपो की आठ महान अनुभूतिया है जिन पर आचरण करके उन लोगो ने सबोधि या निर्वाण प्राप्त किया। जव भी वे जगत के सपर्क मे आते हैं तो इन अनुभूतियो को दूसरो का चित्त विमल करने और शिक्षा देने के लिए प्रयोग करते है जिससे वे भी वह मार्ग खोज सके जिससे सबोधि प्राप्त हो सके और वे मुक्त हो सके।"

जव वुद्ध राजगृह के वेणुवन आये तो उन्हे सूचित किया गया कि भिक्खु वक्कालि वहुत ही वीमार है और मरने से पूर्व वुद्ध के दर्शन करना चाहते है। समाचार देने वाले ने कहा, "प्रभुवर, मेरे गुरु वहुत रुग्ण है और सामान्य उपासक एक कुम्हार के घर है। उन्होने मुझे आपके समक्ष तीन वार नमन करने भेजा है।"

वुद्ध आनद के साथ उन्हे देखने गये। वुद्ध को कमरे मे घुसता देख भिक्खु वक्कालि ने उठने का प्रयास किया तो वुद्ध ने उन्हे उठने से रोक दिया और स्वय ही उनके विस्तर के पास कुर्सियो पर बैठ गये। बुद्ध ने कहा, "वक्कालि, मै आशा करता हू कि आपकी शरीर-शक्ति बढ़ रही होगी और शरीर का दर्द कम हो रहा होगा।"

"प्रभु, मेरी शक्ति घट रही है। मुझे बहुत कष्ट है और दर्द भी बढ़ रहा है।"

"मुझे आशा है कि तुम्हे कोई चिन्ता अथवा खेद नहीं होगा।"

"नहीं प्रभु, मुझे चिन्ताए भी है और खेद भी।"

"तुम्हे किस वात की चिन्ता है और किस बात का खेद है ?"

"मुझे इसी वात का खेद है कि दीर्घकाल से मैं आपके दर्शन नहीं कर पा रहा।"

वुद्ध ने स्नेहपूर्वक झिडकते हुए कहा, "वक्कालि, ऐसी बातो की चिन्ता नहीं करते। तुम्हारा जीवन निष्कलक रहा है। गुरु और शिष्य के बीच यही सम्वन्ध-सूत्र होता है। तुम समझते हो कि वुद्ध को देखने के लिए मेरी शक्ल देखनी आवश्यक है ? यह शरीर महत्त्वपूर्ण नहीं है। जब तुम मेरी शिक्षाओ को देख सकते हो तो मुझे देखते हो। यदि तुम यह शरीर देखते हो और शिक्षाए नहीं तो उसका कोई मूल्य नहीं।"

कुछ क्षण रुककर वुद्ध ने पूछा, "वक्कालि, क्या तुम जानते हो कि तुम्हारा और मेरा शरीर कितना अनित्य है ?"

"प्रभु, मै इसे भली-भाति समझता हू। शरीर सतत् जन्म लेता, मरता और वदलता रहता है। मै समझ पा रहा हू कि भावनाए कितनी अस्थायी हैं, सतत् उत्पन्न होती, मरती और वदलती रहती है। सभी अवधारणाए, भाव-वोध तथा चेतना जन्म-मरण के एक ही नियम से वधे हैं। सभी अनित्य हैं। आज आपके आने से पूर्व मैंने पच स्कन्धो की अनित्यता पर ध्यान किया था और पाया कि इनमे से किसी की भी स्वतत्र सत्ता नहीं है।"

"अद्भुत वक्कालि, मुझे तुम पर पूर्ण भरोसा है। पाच स्कधो मे से किसी की स्वतत्र सत्ता नहीं है। आखे खोलो और देखो कि वक्कालि कहा नहीं है ? जीवन की अद्भुतताए सर्वत्र हैं। वक्कालि जन्म और मृत्यु तुमको छू भी नहीं सकती। चार तत्त्वो से वने अपने शरीर पर मुस्कराओ। तुम्हारे शरीर मे कष्ट वढ-घट रहा हो, तव भी मुस्कराओ।"

वक्कालि की आखो मे आसू भर आये और वह मुस्करा दिये। वुद्ध उठ खडे हुए और विदा ली। आनद और वुद्ध के चले जाने पर वक्कालि ने अपने मित्रो से कहा कि मुझे इसिगिल पहाड़ पर ले चलो। "मुझ जैसा कोई भी व्यक्ति वद कमरे मे कैसे मर सकता है ? मैं पहाड़ पर आकाश के नीचे मरना चाहता हू।"

उसके मित्र उसे पर्वत पर ले गये। उस रात वुद्ध ने समाधि लगायी और प्रात. ब्रह्म वेला मे अपनी कुटिया के पास के भिक्खु से कहा, "जाओ, भिक्खु वक्कालि से मिलो और कहो कि भय की कोई वात नहीं। उनकी

मृत्यु शांतिपूर्ण और निष्कलक होगी। उनसे कहो कि वे चित्त को शांत रखे। मुझे उन पर वहुत निष्ठा है।"

जव भिक्खु वुद्ध का सदेश लेकर वक्कालि के पास पहुचे तो उन्होने कहा–"मित्रो, कृपा करके मुझे विस्तर पर से उतार कर पृथ्वी पर लिटा दो। वोधिसत्व के गुरुवचन मैं ऊचे आसन पर लेटकर कैसे सुन सकता हू।"

उन्होने वक्कालि के कथनानुसार किया और फिर बुद्ध का सदेश सुनाया। वक्कालि ने हाथ जोड़कर कहा कि "जाकर बुद्ध के समक्ष मेरी ओर से तीन वार नमन करना और कहना कि वह भीषण रूप से रुग्ण है। वह स्पष्ट रूप से पाचो स्कधो की अनित्यता और सत्ताहीनता देख पा रहा है। वक्कालि पाचो स्कधो से ओर सभी भयो एव चिन्ताओ से मुक्त है।"

जैसे ही भिक्खु वक्कालि की दृष्टि से ओझल हुए उन्होने शरीर त्याग दिया। नील आकाश निरभ्र था। पहाड़ की तलहटी की एक झोपड़ी से निकले धुए की रेखा उठी और तिरोहित हो गयी। विराट वृत्ताकार आकाश को देख वुद्ध ने कहा, "वक्कालि मुक्त हो-गये। अव कोई भूत-प्रेत उन्हे नहीं सता सकते।"

वुद्ध ने पुनः यात्रा आरभ की। अवकी वार वह नालदा और वैशाली गये। एक दिन महावन के कूटागार विहार मे वुद्ध ने भिक्खुओ के समक्ष देशना की, "मभी जीवित प्राणियो को न्यूनाधिक कष्ट होते है लेकिन जो धर्म का अध्ययन ओर माधनाभ्यास करते है, उन्हे अन्य लोगो की अपेक्षा कम कप्ट होते हें क्योंकि साधना के फलस्वरूप उनमे प्रज्ञा का उदय हो जाता है।

"उस दिन वहुत गर्मी थी किन्तु बुद्ध अपने भिक्खुओ के साथ अनेक साल वृक्षो की छाया मे वैठे थे। उन्होने अपने अगूठे और तर्जनी के बीच मिट्टी का छोटा-सा ढेला उठाकर पूछा, "भिक्खुओ, मिट्टी के इस ढेले और गयाशीर्प पर्वत मे से कौन वडा है ?"

"प्रभुवर, निश्चय ही गयाशीर्ष वड़ा है।"

"ठीक इसी प्रकार धर्म के अध्ययन और साधना से जो लोग प्रज्ञावान हो चुके है, उनको अज्ञान मे डूवे लोगो की अपेक्षा 'न' के समान कष्ट होता है। अज्ञान के कारण कष्ट लाखो गुना वढ़ जाता है। जब कोई शारीरिक या मानसिक कष्ट होता है तो ज्ञानी पुरुप चिन्ता नही करता, किसी प्रकार की उसे शिकायत नहीं होती, वह रोता या छाती नहीं पीटता, न सिर के वाल नोचता है और न अपने शरीर या चित्त के साथ अन्याय करके बेहोश

होता है। वह अपनी भावनाओ का दृष्टा होता है और जो घटित होता है, वह भावना मात्र है, इसका उसे ज्ञान होता है। इस प्रकार वह भावनाओ के वधन मे नहीं वधता, जब शरीर मे दर्द होता है तो उससे नहीं बधता और अपनी शात मानसिक अवस्था नहीं खोता, वह चिन्ता नहीं करता, भयभीत नहीं होता। इस प्रकार शारीरिक कष्ट उसकी समस्त सत्ता को झिझोड़ता नहीं है।

"भिक्खुओ, अपनी साधना परिश्रमपूर्वक करो जिससे प्रज्ञा का फल मिल सके और आप कष्ट से वधनग्रस्त न हो। इसी प्रकार जन्म, मृत्यु, जरा, रुग्णता आपको विचलित नहीं कर सकते। जव कोई भिक्खु मृत्यु-शैया पर हो तो उसे अपनी शरीर, भावनाओ, मन तथा मन के विपयो का धारणा-ध्यान करना चाहिए। वह शरीर की प्रत्येक अवस्था तथा प्रत्येक क्रिया-कलाप तथा भावनाओ का दृष्टा वन जाए। भिक्खु जव शरीर की अनित्यता और परस्पर-अवलम्वन की अवस्था का दृष्टा होगा तो वह शरीर से तथा सुखद एव दुखद-भावनाओ से नहीं वधेगा। यह शरीर और भावनाए एक दीपक के समान हैं जिसका तेल और वाती चुक रही है। ये दोनो अवस्थाए प्रकाश होने या प्रकाश न होने से सम्वद्ध है किन्तु मै इन अवस्थाओ से वधा नहीं हू। यदि भिक्खु इस प्रकार ध्यान करेगा तो उसे शाति तथा मुक्ति मिलेगी।

पहली जलवृष्टि के साथ ही, वुद्ध वर्षा-प्रवास के लिए जेतवन आ गये। वहा उन्होने भिक्खुओ को परस्परावलम्वी-सहवर्द्धन के सिद्धान्त के विषय मे और देशना की। एक भिक्खु ने जिज्ञासा की कि "गुरुदेव, क्या सभी धर्मों की विद्यमानता ज्ञान एव चेतना पर आधारित है ?"

वुद्ध ने कहा, "रूप चेतना का एक विपय है। कर्त्ता और विषय दोनो ही एक सिक्के के दो पहलू है। विषय के विना कोई भी चेतना नहीं हो सकती। चेतना और विपय दोनो एक-दूसरे के विना स्वतत्र रूप से विद्यमान नहीं हो सकते। इन दोनो को पृथक् नहीं किया जा सकता, अत ये दोनो चित्त से निसृत होते है।

"प्रभु, यदि रूप की सत्ता चेतना से है तव तो समस्त सृष्टि के सृजन के पीछे चेतना ही काम करती है। क्या यह जानना सभव है कि चेतना और मन का सृजन कैसे हुआ ? मन कव सक्रिय हुआ ? क्या मन के सृजन के साथ ही व्यक्ति वोल सका था ?"

"भिक्खुओ, आदि और अन्त केवल मन की अवधारणाए हैं। वस्तुत: सृष्टि का सृजन और अन्त कुछ नहीं है। अज्ञान मे फसे होने से ही हम आदि

और अन्त के विषय मे सोचते है। अज्ञान के कारण ही हम जन्म-मृत्यु के अनत चक्र मे फंसे रहते है।"

"यदि जन्म-मरण का चक्र अनत है तो कोई व्यक्ति उससे कैसे बच सकता है ?"

"जन्म और मृत्यु केवल अज्ञानजन्य धारणाएं है। जन्म-मृत्यु तथा सृजन और विनाश दोनो का अतहीन चक्र है। मैं आज इतना ही कहूगा कि सभी वातो के सचेत होकर दृष्टा वनो। अव इस विषय पर हम किसी और दिन आगे चर्चा करेगे।"

अध्याय पैंसठ

न भरा, न खाली

धर्म-देशना के वाद मान्य स्वास्ति ने देखा कि बहुत से भिक्खु बडे उदास हैं। उसे स्वय भी लगा कि मुझे भी पूरी तरह यह समझ मे नहीं आया कि बुद्ध ने क्या शिक्षा दी थी। उसने सकल्प किया कि वह धर्म-देशना को पूरे ध्यान से सुना करेगा।

अगली धर्म-देशना के बाद भिक्खुओ ने आनद से अनुरोध किया कि वह समस्त सघ के समक्ष बुद्ध से उनके कथन की व्याख्या पूछे। उनका पहला प्रश्न था, "वोधिसत्व, 'जगत' और 'धर्मों' से क्या तात्पर्य है ?"

बुद्ध ने कहा कि यह 'लोक' उन सभी पदार्थों-वस्तुओ का समुच्चयन है जो परिवर्तनशील है और विशृखल हो जाते है। सभी धर्म अठारह अशो मे विभक्त है . छ. इद्रिया, छ· इन्द्रियो के विपय और छः इद्रियजन्य चेतनाए (तन्मात्राए)। छ. इद्रिया हैं–दृष्टि, श्रवण-शक्ति, घ्राण शक्ति, स्वाद, काया, चेतना आर मनसचेतना। इन इद्रियो के विपय हैं—रूप, ध्वनि, गध, स्वाद, स्पर्श ओर चित्त के विपय। छ. तन्मात्राए हैं—देखना, सुनना, स्वाद लेना, स्पर्श करना आर समझना। इन अटारह अशो मे भिन्न कोई धर्म नहीं। ये अठारहो जन्म, मृत्यु, परिवर्तन ओर विभजन से वधे हुए हैं। इसीलिए मैं कहता हू कि लोक सभी पदार्थों (वस्तुओ) का समुच्चयन है जिनकी प्रकृति ही परिवर्तन और विभजन है।"

इस पर आनद ने प्रश्न किया, "गुरुदेव, आप प्राय· कहते हैं कि सभी धर्म शून्यता युक्त है। इससे आपका तत्पर्य क्या है ?"

बुद्ध ने कहा, "मैंने सभी धर्मों को शून्यतायुक्त इसलिए वताया है कि इनकी पृथक् सत्ता नहीं होती। छ· इन्द्रियो, इन्द्रियो के छः विपयो ओर इनकी छ तन्मात्राओ (चेतना) मे से किसी की अपनी सत्ता नहीं होती।"

आनद ने कहा, "गुरुवर, आपने कहा कि मुक्ति के तीन द्वार शून्यता, अस्तित्वहीनता और उद्देश्यहीनता है। आपने यह भी कहा कि सभी धर्म शून्यतापूर्ण हैं। क्या इसका कारण यह है कि सभी धर्म परिवर्तनशील और विभजनकारी हैं, इसीलिए ये शून्यतापूर्ण है।"

"आनद, मैने प्राय: शून्यता के विपय मे देशना की है और शून्यता का ध्यान करने को कहता हू। शून्यता पर ध्यान करना अद्‌भुत ध्यान है जिससे साधक दु:खो, जन्म और मरण के पार चले जाते है। आज मै इस धारणा पर अपने कुछ अधिक विचार प्रस्तुत करूगा।"

"आनन्द, हम सभी धर्म-कक्ष मे वैठे हैं। इसमे न वाजार है, न भैंसे है, न गाव है। यहा तो केवल भिक्खु हैं जो वैठे हुए देशना सुन रहे है। हम कह सकते है, जो चीजें धर्म-कक्ष मे नही है, उनसे धर्म-कक्ष खाली है। और जो हैं, उनसे भरा है। क्या आप इस कथन को ठीक मानते हैं ?"

"हा गुरुदेव।"

"धर्म-देशना ममाप्त होने के वाद जव हम चले जाएगे तो धर्म-कक्ष वाजार, भैंसो, गाव और भिक्खुओ से खाली होगा।"

"आनद भरे होने का अर्थ किसी कुछ से भरा होना है और खाली होने का अर्थ किसी चीज से खाली होना है। इस प्रकार शब्द 'भरे' और 'खाली' का अपने आप मे कोई अर्थ नहीं। खाली का अर्थ सदैव किसी पदार्थ से खाली होना है। हम यह नहीं कह मकते कि 'रिक्तता' स्वतत्र रूप से कोई अर्थ नहीं रखती। इसी तरह 'भरे होने' का भी अर्थ किसी चीज से भरा होना है। यदि हम कहे कि सभी धर्म भरे हुए है, तो किस चीज से भरे हैं ? यदि हम कहते हैं कि सभी धर्म खाली है, तो किस चीज से खाली हैं ?"

"भिक्खुओ, धर्म के खाली होने का अर्थ है कि वे स्थायित्व और परिवर्तनशीलता से खाली है। यही सभी धर्मों की शून्यता का अर्थ है। आप जानते है कि सभी धर्म परिवर्तनशील है और विभजनीय हैं, इसीलिए उनका पृथक् अस्तित्व नहीं है। भिक्खुओ, खाली होने का अर्थ अस्तित्व (सत्ता) से खाली होना है।

"पच स्कधो मे से एक भी स्कध स्थायी या अपरिवर्तनशील नहीं है। शरीर के सभी स्कध, भावनाए, अवधारणाए, भाव-बोध और चेतना किसी की पृथक् सत्ता नहीं है। सत्ता होने के लिए स्थायी और अपरिवर्तनशील प्रकृति

का होना आवश्यक है। इस स्वतत्र और पृथक् सत्ता के अभाव की धारणा ही शून्यता है।"

आनद ने कहा, "सभी धर्म सत्ता-रहित हैं, यह तो हम समझ गये। किन्तु गुरुवर, क्या धर्म-वास्तव मे होते भी हैं या नहीं ?" बुद्ध ने शात भाव से उस मेज को देखा जिस पर पानी भरी प्याली रखी थी। उसकी ओर सकेत करते हुए बुद्ध ने कहा, "वह प्याली भरी है या खाली ?"

"गुरुवर, प्याली मे पानी भरा है।"

"आनद, इस प्याली को वाहर ले जाओ और इसे खाली कर लाओ।" आनद ने वैसा ही किया। बुद्ध ने मेज पर रखी खाली प्याली उठाकर उलट दिया और पूछा, "आनद, अव यह प्याली भरी है या खाली ?"

"गुरुवर, अव यह भरी नहीं, खाली है।"

"आनद, यह प्याली अव पानी से नहीं भरी है किन्तु वायु से भरी है, यह तो तुम विलकुल भूल गये। खाली होने का अर्थ किसी चीज से खाली होना और भरे होने का अर्थ किसी चीज से भरा होना होता है। इस समय यह प्याली पानी से खाली है किन्तु वायु से भरी है।"

"आनद, प्याली का भरा या खाली होना इस बात पर निर्भर है कि प्याली तो विद्यमान है। प्याली के बिना उसका खाली या भरा होना हो ही नहीं सकता।"

"ओह।" भिक्खुओ ने एक स्वर से कहा।

आनद ने हाथ जोड़कर कहा, "प्रभुवर, तव तो धर्मों का अस्तित्व है। धर्म तो एक वास्तविकता है।"

बुद्ध ने मुस्कराकर कहा, "आनद, शब्द-जाल मे मत फसो। धर्म अस्तित्वहीन शून्य हैं किन्तु उनका अस्तित्व इतना सूक्ष्म है कि उसे सामान्य अवधारणा मे समझा नहीं जा सकता। उनका अस्तित्व वैसा ही है जैसा शून्यता का अस्तित्व है।

"आनद, अभी हमने भरी और खाली प्याली की चर्चा की। मैंने अभी सक्षेप मे रिक्तता (शून्यता) के विपय मे भी कहा। अव हम पूर्णता की चर्चा करेगे। यद्यपि हमने समझ लिया कि मेज पर रखी प्याली जल से रिक्त है। यदि हम गहराई से देखे तो यह भी पूर्णत. सत्य नहीं है। आनद जिन तत्त्वों मे प्याली का निर्माण हुआ है, क्या उनमे आप जल तत्त्व की विद्यमानता नहीं देखते ?"

"प्रभु, प्याली बनाने के लिए कुम्हार ने जो मिट्टी-सानी थी, उसमे जल तो था।"

"ठीक, आनंद यदि हम गहराई से देखे तो प्याली मे जल तत्त्व विद्यमान हैं हालाकि हमने पहले कहा था कि प्याली जल से खाली है। प्याली की विद्यमानता जल की विद्यमानता पर ही निर्भर है। आनद, क्या तुम इस प्याली मे अग्नितत्त्व देख पा रहे हो ?"

"जी हा, प्रभु। प्याली को पकाने के लिए अग्नि तत्त्व जरूरी है। बिना गरमी या अग्नि तत्त्व के यह प्याली पक ही नहीं सकती।"

"इसके अतिरिक्त और क्या-क्या देख रहे हो ?"

"मै वायु तत्त्व भी देख रहा हू। वायु न होती तो न तो अग्नि जलती और न कुम्हार जीवित रह सकता था। मै इसमे कुम्हार के कुशल हाथो की कारीगरी, उसकी चेतना, उसकी भट्ठी, वे पेड़ जिनसे भट्ठी जलाने की लकड़ी आती है, वर्षा, धूप और पृथ्वी जिससे वे पेड़ उगते हैं, उन सबको देख पा रहा हू। प्रभु, परस्पर अवलंबित उन हजारों तत्त्वो को मै देख रहा हू जो इस प्याली को अस्तित्ववान बनाने मे योग देते हैं।"

"बहुत सुदर, आनद। प्याली पर ध्यान करने से उन सभी तत्त्वो को देखा जा सकता है जो उसके भीतर और बाहर विद्यमान होते है। तुम्हारी अपनी स्वय की चेतना भी उनमे से एक तत्त्व है। यदि तुम गर्मी सूर्य को लौटा दो, मिट्टी पृथ्वी को लौटा दो, जल सरिता को लौटा दो, कुम्हार को उसके माता-पिता को लौटा दो और लकड़ी वन के वृक्षो को लौटा दो तो क्या प्याली का अस्तित्व सभव है ?

"आनंद, परस्परावलम्बी सहवर्द्धन के सिद्धान्त पर ध्यान करे तो हम पाएगे कि प्याली स्वतत्र रूप से सत्ता मे आ ही नहीं सकती। यह अन्य धर्मों के परस्पर अवलम्बी सम्बन्धो के आधार पर ही अस्तित्व ग्रहण कर सकती है। सभी धर्म एक-दूसरे के जन्म, अस्तित्ववान होने और मरण पर आधारित होते हैं। एक धर्म की सत्ता मे अन्य धर्मों की सत्ता निहित होती है। आनद यही सिद्धान्त अन्तःभूतत्व और अतःप्राणत्व पर भी लागू होता है।

"अन्तःभूतत्व का अर्थ यह है कि इसमे वह समाहित है और उसमे यह। उदाहरण के लिए, जब हम प्याली देखते हैं तो कुम्हार को देखते हैं और जब कुम्हार को देखते हैं तो प्याली देखते हैं। अन्तःप्राणत्व का अर्थ यह है लहरे पानी हैं और पानी ही लहरे। आनद, इस समय धर्म-कक्ष मे न बाजार है, न भैसे और न गाव। लेकिन यह एक दृष्टिकोण है। वास्तव

मे बाजार, भैसो और गावो के बिना इस धर्म-कक्ष का अस्तित्व ही नहीं। इसी प्रकार जब खाली धर्म-कक्ष देखते हो तो तुम्हे बाजार, भैसे और गाव भी दिखने चाहिए। रिक्तता का अर्थ है शून्यता।"

भिक्खु शातिपूर्वक देशना सुनते रहे। बुद्ध के शब्दो ने उन पर गहरा प्रभाव डाला। थोड़ा रुककर बुद्ध ने खाली प्याली को फिर उठा लिया और कहा, "भिक्खुओ, यह प्याली भी स्वतत्र रूप से विद्यमान नहीं रह सकती। यह तो अन्य तत्त्वो, जैसे—मिट्टी, जल, वायु, अग्नि और कुम्हार आदि सभी की सत्ता का परिणाम है। यही स्थिति सभी धर्मों की है। सभी धर्म अन्य धर्मों पर परस्पर अवलबित हैं।

"भिक्खुओ, इस प्याली को गहन ध्यान से देखो तो आप समस्त सृष्टि को देख सकते हो। प्याली की रिक्तता और पृथक्ता इसी बात मे है कि इसका अपना अस्तित्व है। यह पृथक्ता और अस्तित्व क्या है ? यह है सर्वथा आत्म-आधारित अस्तित्व जो अन्य सभी तत्त्वो से स्वतत्र हो। कोई धर्म अन्य धर्मों के आश्रय के बिना आधारित नहीं है। किसी धर्म की पृथक् अनिवार्य सत्ता नहीं है। यही शून्यता का अर्थ है। शून्यता का अर्थ है—स्वतत्र सत्ता की शून्यता।

"भिक्खुओ, पाच स्कध व्यक्ति के आधारभूत तत्त्व हैं। रूपाकार का अस्तित्व नहीं है क्योकि रूपाकार स्वतत्र रूप से (आत्मरूप से) विद्यमान नहीं रह सकता। रूपाकार मे भावनाए भी हैं, अवधारणाए भी हैं, भाव-बोध भी है और चेतना भी है। यही बात इन पाचो स्कधो के विषय मे सत्य हैं। भावनाए रूपाकार, अवधारणाओ, भाव-बोध या चेतना के बिना अस्तित्ववान नहीं है। किसी स्कध की स्वतत्र सत्ता नहीं है। ये सभी स्कध रिक्त हैं।

"भिक्खुओ, छ इन्द्रिया, इन्द्रियो के छ: विषय और छहो इन्द्रिय चेतनाए सभी शून्यतामय हैं। प्रत्येक इद्रिय, इद्रिय का विषय और इद्रिय चेतना अन्य सभी इद्रियो, इन्द्रिय विषयो और इन्द्रिय चेतनाओ पर निर्भर हैं। इनमे से किसी की भी अपनी स्वतत्र सत्ता नहीं है।

"अत भिक्खुओ याद रखो कि यह है तो वह विद्यमान है। सभी धर्म अपने अस्तित्व के लिए एक-दूसरे पर निर्भर रहते है। अत सभी धर्म रिक्ततामय हैं। यहा रिक्तता का अर्थ है पृथक् स्वतत्र सत्ता का अभाव।"

मान्य आनद ने कहा कि कुछ ब्राह्मण विद्वान और अन्य धार्मिक सप्रदायो के नेता कहते हैं, "भिक्खु गौतम तो अनस्तित्ववाद या शून्यवाद की शिक्षा देते हैं। वे कहते हैं कि लोगो को जीवन का सब कुछ नकारने की शिक्षा

वुद्ध देते है। क्या वे आपकी शिक्षाओ को गलत ढग से समझ रहे है क्योकि आप कहते हो कि सभी धर्म रिक्तिमय है ?"

वुद्ध ने कहा, "आनद ब्राह्मण-विद्वान या अन्य सप्रदाय के लोग इस सबध मे सही तरह से नही वोलते। मैंने कभी अनस्तित्ववाद (शून्यवाद) की शिक्षा नही दी है। मैने किसी को भी जीवन जीवन्तपूर्वक जीने से नही रोका है। आनद भ्रामक विचारणा मे से दो विचारो मे लोग सर्वाधिक उलझे है : 'अस्तित्ववादी विचार और अनस्तित्ववादी विचार'। अस्तित्ववादी विचार के अनुसार सभी पदार्थों (वस्तुओं) की पृथक् और स्थायी सत्ता होती है। अनस्तित्ववादी विचारधारा के अनुसार सव 'माया' है। यदि आप इनमे से किसी विचार के जाल मे फस जाओगे तो शाश्वत सत्य तक नही पहुच सकोगे।

"आनंद, एक वार भिक्खु कात्यायन ने मुझे पूछा था, 'प्रभु भ्रामक विचार क्या है और सत्य विचार क्या है ?' मैने उत्तर दिया था कि अस्तित्ववादी या अनस्तित्वादी धारणा मे से किसी मे भी फसना भ्रामक है। जब हम शाश्वत सत्य को विशुद्ध रूप मे देखे तो हम इनमे से किसी एक धारणा के पक्षधर नहीं हो सकते। सत्य धारणा वाला व्यक्ति सभी धर्मों मे जन्म और मृत्यु की प्रक्रिया को जानता है। इसीलिए वह 'अस्तित्ववादी' और 'अनस्तित्ववादी' विचारो से भ्रमित नहीं होता। जव पीडा होती है तो सत्य दृष्टि वाला जानता है कि पीड़ा उभर रही है और जब पीड़ा घट रही है तो जानता है कि पीडा घट रही है। सभी धर्मों के घटने या वढ़ने से सत्य दृष्टि वाला व्यक्ति भ्रम मे नहीं पडता। स्थायी अस्तित्व होने और माया होने के दोनो विचार दो छोर है–दो अतिया है। इन दोनो के बीच की अवस्था है—परस्परावलम्वी सहवर्द्धन।

"आनद, 'अस्तित्व' और 'अनस्तित्व' दोनो ही शाश्वत सत्य नहीं है। शाश्वत सत्य इन दोनो की सीमा से परे है। आत्मजागृत (निर्वाण शातम् की स्थिति वाला) व्यक्ति इन दोनो अवधारणाओ से भी परे देखता है। न केवल अस्तित्व और अनस्तित्व वरन् जन्म और मृत्यु भी शून्य है। ये भी केवल अवधारणाए हैं।"

मान्य आनद ने प्रश्न किया, "प्रभु, यदि जन्म और मृत्यु भी शून्य हैं, तव आप यह क्यो कहते हैं कि सभी धर्म अनित्य है, सतत् जन्म लेते और मरते है ?"

"आनद, हम अवधारणा की सापेक्षता के स्तर पर कहते है कि सभी

धर्म जन्म लेते और क्षय को प्राप्त होते हैं। किन्तु सर्वांग (सम्यक्) दृष्टि से देखे तो प्रकृतित· धर्म अज और अमर हैं। उदाहरण के लिए, जो बोधि वृक्ष तुमने धर्म-कक्ष के सामने लगाया है, वह कब पैदा हुआ था ?"

"प्रभु, वह वृक्ष चार वर्ष पहले, जव बीज फूटा उसी क्षण उसका जन्म हुआ।"

"आन्नद! उसके पहले क्या बोधि वृक्ष का अस्तित्व था ?"

"नहीं प्रभु, उससे पूर्व वोधि वृक्ष नहीं था।"

"क्या तुम्हारे कहने का अर्थ है कि वोधि वृक्ष शून्य से उगा ? क्या कोई धर्म शून्यता मे से अस्तित्व ग्रहण कर सकता है ?"

मान्य आनद चुप रह गये।

वुद्ध ने आगे कहना जारी रखा और कहा, "समस्त सृष्टि मे कोई भी धर्म शून्य से उदित नहीं हो सकता। बिना बीज के बोधि वृक्ष भी नहीं होता। वोधि वृक्ष का अस्तित्व वीज से सभव है। वृक्ष तो बीज का सातत्य वनाये रखने वाला है। वीज ने पृथ्वी मे जब जड़े पकड़ीं तो वृक्ष बीज मे समाहित था। जव एक धर्म पहले ही विद्यमान हो तो वह जन्म कैसे ले सकता है। प्रकृतितः वोधि वृक्ष अज है। जब वीज ने पृथ्वी मे जडे पकडी तो क्या वीज की मृत्यु हो गयी ?"

"हा प्रभु, वृक्ष को जन्म देने के हेतु बीज मर गया।"

"आनद, वीज कभी नहीं मरता। मृत्यु का अर्थ है—अस्तित्व से अनस्तित्व मे चले जाना। क्या सृष्टि मे कोई धर्म है जो अस्तित्व से अनस्तित्व मे विलीन हो जाए ? एक पत्ता, एक धूलिकण, अगरु धूम की लकीर इनमे से कोई भी अस्तित्व से अनस्तित्व मे विलीन नहीं होता। ये सभी धर्म वस भिन्न धर्मों मे रूपान्तरित हो जाते है। यही वात वोधि वृक्ष के विपय मे सत्य है। वीज कभी नहीं मरता वरन् वृक्ष मे रूपातरित होता है। वीज और वृक्ष दोनो ही अज और अमर है। इसी प्रकार हम, तुम, भिक्खुगण, धर्म-कक्ष, पत्ता, धूलिकण और अगरु धूम की लकीर सभी अज और अमर है।

"आनद, सभी धर्म अज और अमर है। जन्म और मृत्यु तो मानसिक अवधारणाए हैं। सभी धर्म न पूर्ण हैं और न शून्य है, न ये सृजित होते आर न विनष्ट, न तो मलिन होते हैं, न निर्मल, न वढते है, न घटते हैं, न आते और न जाते हैं और न एक हैं, न अनेक। ये सव वाते मानसिक भाव-वोध हैं। सभी धर्मो की शून्यता पर ध्यान करने से इन सभी विभेदक भाव-वोधो के परे जाकर सभी पदार्थों की मूल प्रकृति की अनुभूति की जा सकती है।

"आनद, सभी की मूल प्रकृति यह है कि वे न भरी हैं, न खाली हैं, न उनका जन्म होता है, न मृत्यु, न उनकी सत्ता है और न वे सत्ताहीन हैं। इस मूल प्रकृति के आधार पर ही जन्म-मृत्यु, पूर्णता और रिक्तता, अस्तित्व और अनस्तित्व का ससार मे उदय होता है। यदि ऐसा नहीं है तो जन्म-मृत्यु, पूर्णता और रिक्तता, अस्तित्व और अनस्तित्व के जाल से निकला कैसे जाता ?

"आनद, क्या तुमने कभी समुद्र तट पर खड़े होकर लहरो का उठना और सागर के जल पर ही विलीन होना देखा है ? अज और अमर होना जल के समान है। जन्म और मृत्यु लहरो की भाति है। आनद, लहरे लम्बी भी होती है, छोटी भी, लहरे ऊची भी होती है और नीची भी। लहरे उठती है और गिरती भी है, किन्तु उनका जल, जल ही रहता है। जल के बिना लहरो का बनना ही सभव नहीं। लहरे लौटकर फिर जल बन जाती है। लहरे जल ही है और जल ही लहरे हैं। हालांकि लहरे उठतीं और गिरती हैं किन्तु यदि वे यह समझ जाए कि वे स्वय ही जल है तो जन्म और मृत्यु की धारणाओ से परे पहुच जाए। उन्हे जन्म-मरण की न चिन्ता रहेगी, न भय और न दु:ख।

"भिक्खुओ, सभी धर्मों की शून्यता पर ध्यान करना अद्भुत है। इससे समस्त भयो, चिन्ताओ और दु:खो से मुक्ति प्राप्त होती है। इससे आप जन्म-मृत्यु के लोक से आगे चले जाते है। इसलिए अपनी समस्त प्राण-सत्ता के साथ ध्यान करो।"

बुद्ध की देशना समाप्त हो गयी थी।

मान्य स्वास्ति ने इससे पूर्व बुद्ध को इतनी पूर्णता और अद्भुतता से देशना करते कभी नहीं सुना था। बुद्ध के वरिष्ठ भिक्खुओ की मुस्कराहट और आखो की चमक से उनके आतरिक आनद की झलक मिलती थी। स्वास्ति को अनुभव हुआ कि उसने बुद्ध के शब्दो को तो समझ लिया किन्तु उनके गूढ़ार्थ उसकी समझ मे नहीं आये। उसे ज्ञात था कि मान्य आनद आने वाले दिनो मे बुद्ध की देशना को दोहरा देगे। उस समय वह वरिष्ठ शिष्यो के विचार-विमर्श को सुनकर बुद्ध के कथन के गूढ अर्थों को समझ पाने का अवसर पा सकेगा।

अध्याय छियासठ

चार पर्वत

एक दिन सवेरे मान्य मौद्गल्यायन बुद्ध के पास आये तो उनकी आखे आसुओ से भरी थीं। बुद्ध द्वारा कारण पूछने पर मौद्गल्यायन ने बताया कि "प्रभु, कल रात साधना के समय मेरा चित्त अपनी माता की ओर चला गया। उनके प्रति अपनी भावनाओ पर ध्यान केन्द्रित किया। मुझे ज्ञात हुआ कि युवावस्था मे मैंने उन्हे बहुत कष्ट दिये किन्तु यह बात मेरे दु:ख का कारण नहीं थी। मुझे दुख इस बात से हुआ कि जब वह जीवित थीं और जब उनकी मृत्यु हुई, उस समय भी मैं उनके किसी काम नही आ सका। प्रभु, मेरी माता के कर्म भी अच्छे नहीं थे। उसने अपने जीवन मे अनेक अपराध भी किये। उनके बुरे कर्म अब भी उनको दुख दे रहे है। ध्यान मे मैंने देखा कि एक कटोरी मे चावल रखे हुए है, जिन्हे जब मैंने उनको खिलाया तो चावल जलते अगारे बन गये जिनसे उनका मुह जल गया। प्रभु यह चित्र मेरे चित्त से नहीं हटता। पता नहीं कि मै उनके बुरे कर्मों की भारी गठरी को कैसे हल्का करू और बुरे कर्मों से उन्हे कैसे मुक्ति दिला पाऊ।"

बुद्ध ने पूछा, "जीवन काल मे उन्होने क्या बुरे कर्म किये ?"

मौद्गल्यायन ने उत्तर दिया, "उन्होने न तो सद्धर्म-पथ पर पग रखा। उनका काम ऐसा था जिससे उन्होने अनेक प्राणियो को मारा। वह बहुत कर्कशा थीं और उनके शब्दों से अन्य लोगो को कष्ट होता था। वह ऐसी थीं जो लहलहाते वृक्षो तथा पौधो को भूत बना देती थीं। मैं उनके कदाचारो को गिना नहीं सकता। बस इतना समझ लीजिए कि उन्होने जीवन भर सभी शीलो का उल्लघन किया। प्रभु, मा के बुरे कर्मों के लिए मैं कोई भी दड भुगतने को तैयार हू। बताइए मैं क्या करू।"

बुद्ध ने मौद्गल्यायन से कहा, "तुम्हारे मातृ-प्रेम से मै अति प्रभावित हुआ। अपने माता-पिता के प्रति हमारा ऋण आकाश के समान विस्तृत और सागर के समान गहरा है। किसी को भी यह ऋण नही भूलना चाहिए। जिस युग मे बुद्ध अथवा पुण्यात्मा लोग नहीं थे, उस समय माता-पिता ही सव कुछ थे। मौद्गल्यायन जव तक तुम्हारी माताजी जीवित थी, तुमने सर्वोत्तम सेवा की। अव जव वह नहीं रही है, तब भी तुम्हे उनकी चिन्ता है। इससे तुम्हारा मातृ-प्रेम प्रकट होता है। यह देखकर मै परम प्रसन्न हू।

"मौद्गल्यायन, अपने माता-पिता के ऋण से उऋण होने का सर्वोत्तम मार्ग यही हे कि आनदपूर्ण और श्रेष्ठ गुणवान का जीवन बिताओ। तुम्हारा जीवन इसी प्रकार का है। शाति, हर्प, प्रसन्नता और गुणवान के रूप मे तुम्हारा जीवन आदर्श जीवन है। तुमने वहुत से लोगो को सद्धर्म के पथ पर चलाया है। तुम अपना जीवन और समस्त साधना अपने मा के बुरे कर्मो का जाल काटने हेतु अर्पित कर दो।

"मेरा इस मवध मे सुझाव यह है कि वर्पा-प्रवास के समापन समारोह मे सारा भिक्खु समुदाय तुम्हारी मा के पाप कर्मों को नष्ट करने के लिए तुम्हारी साधना-अर्पण समारोह मे भाग ले और तुम्हारी माता की आत्मा को शाति प्रदान करे। हमारे सघ मे अनेक भिक्खु ऊचे साधक है। उनकी साधना और तुम्हारी साधना मिलकर प्रचड शक्ति वन जाएगी जिससे तुम्हारी माता के पाप कर्म नष्ट हो जाएगे और उनकी आत्मा सच्चे धर्म मार्ग पर प्रविष्ट हो सकेगी।

"हमारे सव मे अन्य लोग भी होगे जिनकी ऐसी ही स्थिति हो। हम प्रत्येक के माता-पिता की आत्मा की शाति के लिए ऐसे समारोह किया करेगे। इससे हम युवको को भी पितृऋण और पूर्वज ऋण से उऋण होने की शिक्षा दे सकेंगे।

"मौद्गल्यायन, अधिकाश लोग अपने माता-पिता को उनकी मृत्यु के उपरान्त ही पहचान पाते है। माता-पिता का जीवित होना वहुत सुखकर है। वे अपने वच्चो के लिए वडे हर्प का स्रोत होते हैं। बच्चो को अपने माता-पिता की, उनके जीवन काल मे ही, सेवा करनी चाहिए और उन्हे सुखी बनाने का प्रयास करना चाहिए। चाहे माता-पिता जीवित हो या मृत्यु को प्राप्त हो गये हो, सतान के प्रेम पूर्ण कार्यो से उन्हे प्रसन्नता होती है। उनके अच्छे् गुणो को जीवन मे अपनाना चाहिए। गरीबो और विकलागो की सहायता करना, असहाय लोगो से मिलना, बदियो को मुक्त करना, वधिको के हाथो मरने

वाले पशुओ को मुक्त कराना, वृक्ष लगाना ये सब करुणापूर्ण काय है। जो वर्तमान स्थिति मे परिवर्तन ला सकते है, और अपने माता-पिता की आत्मा को सुख पहुचा सकते हैं। वर्षा-प्रवास के समापन समारोह पर हम प्रत्येक को ऐसे ही कार्य करने की प्रेरणा देगे।"

इससे मौद्गल्यायन के चित्त को चैन मिला और उन्होने बुद्ध को नमन किया।

उसी दिन अपराह्न मे, चलित ध्यान के पश्चात् बुद्ध को राजा प्रसेनजित विहार के द्वार पर ही मिल गये। निर्ग्रंथ सम्प्रदाय के सात सन्यासी पास से गुजरे। इस सप्रदाय के लोग निर्वस्त्र रहते थे और हठयोग की साधना करते थे। वे न दाढ़ी मुडवाते थे और न सिर के बाल कटवाते थे। बुद्ध की अनुमति से राजा सन्यासियो के पास गये और कहा, "आदरणीय सन्यासी वधुओ, मै कौशल का राजा प्रसेनजित हू।" राजा ने उन्हे तीन बार प्रणाम किया। किन्तु वे वोले कुछ नहीं। राजा उनके चले जाने पर वुद्ध के पास आये और पूछा, "प्रभु आपके विचार से इन सन्यासियो मे से कोई भी सिद्ध था अथवा सिद्धि प्राप्त करने के समीप की अवस्था मे था ?"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "महामहिम, आपने शासक का जीवन व्यतीत किया है इसलिए आप राज अधिकारियो तथा राजनीति के ही अभ्यासी है। आपके लिए यह निश्चित करने मे कठिनाई आना सर्वथा स्वाभाविक है कि किस सन्यासी ने साधना के क्षेत्र मे क्या कितना अर्जित कर लिया है। वास्तव मे किसी भी व्यक्ति के लिए एक या दो चार की भेट के द्वारा यह जान पाना कठिन है कि कोई साधना के पथ पर कितनी प्रगति कर चुका है। इसके लिए उनके निकट रहना और विषम स्थितियो का वे कैसे सामना करते है, इसे ध्यान से देखना तथा दूसरो से कैसे वार्तालाप करते है, और उनके ज्ञान, गुणो और सफलताओ का सावधानी से आकलन करना आवश्यक है।"

राजा समझ गये। उन्होने कहा, "प्रभु, यह वैसा ही जैसे मै गुप्तचरो को अन्य स्थानो पर भेजता हू तो वे ऐसे भेष वदलकर रहते है कि उनके लौटने पर उन्हे ही पहचान पाना कठिन होता है। मै समझ गया कि आप सत्य ही कहते हैं। जब तक आप किसी को गहराई से न जाने, तब तक आप उसके गुणो, ज्ञान और साधनात्मक उपलब्धियो के विषय मे जान नहीं सकते।"

बुद्ध ने राजा से अपनी कुटिया मे आने का अनुरोध किया। कुटी पर

आकर, आनद से दो आसदिया वाहर डालने को कहा। राजा ने वुद्ध से मन की वात कही, "प्रभु, मेरी आयु सत्तर वर्प की हो गई। मै अव आध्यात्मिक साधना मे अधिक समय विताना चाहता हू। मै पहले की अपेक्षा अधिक चलित ध्यान और वैठकर साधना करू। लेकिन राजकाज अधिक समय और श्रम चाहता है। कभी-कभी मै आपकी धर्म-देशना सुनने आता हू तो इतना थका होता हू कि मैं अपनी आखे खुली नही रख पाता। एक दिन खूव भोजन करके विहार आया तो इतनी अधिक नीद आयी कि मैं नींद भगाने के लिए चलित ध्यान करने निकल गया। मैने यह भी नहीं देखा कि उसी मार्ग पर आप भी खड़े है और आपसे टकरा गया।"

वुद्ध हसे। "हा, मुझे याद है। इसके लिए आप भोजन कम मात्रा मे करे। इससे आपका चित्त और शरीर हल्का रहेगा। आप रानी मल्लिका या राजकुमारी से कह दीजिए कि वे आपके भोजन का ध्यान रखे। भोजन मात्रा मे कम और पोपक होना चाहिए।"

राजा ने वुद्ध का सुझाव मानते हुए हाथ जोडे।

वुद्ध ने अपना कथन जारी रखा, "अपने स्वास्थ्य और आध्यात्मिक साधना की ओर अधिक ध्यान दे, यह अच्छा है। आपके जीवन का अधिक समय नहीं रहा है। महामहिम, मान लीजिए कि आपका विश्वस्त दूत आकर बताये कि एक वडा पहाड आकाश मे उडता हुआ पूर्व की ओर से आ रहा है जिसके मार्ग मे पड़ने वाला सव कुछ कुचल कर नष्ट हो जाएगा। ऐसे ही विशाल पर्वत की आने की सूचना आपके विश्वस्त अनुचर पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओ मे भी दे। अर्थात् चार विशाल पर्वत राजधानी की ओर वढ़ रहे है, जिनके गिरने मे कुछ भी वचने की सभावना नही है। आप जानते है कि आप वच भी नही सकते और उनका आना रोक भी नहीं सकते। ऐसी स्थिति मे आप क्या करेगे ?"

राजा ने एक क्षण विचार करने के वाद कहा "प्रभु, उस अवस्था मे मैं यही कर सकता हू कि जो भी समय शेष है, उन क्षणो को सच्ची सद्शिक्षाओ के अनुसार यथा-सभव उत्तम और श्रेयपूर्ण कार्य करके विताऊ।"

वुद्ध ने राजा की प्रशसा की। "ठीक ही कहा महामहिम ! ये चार पर्वत जन्म, जरा, रोग और मृत्यु है। वयोवृद्धता और मृत्यु हम सवके समीप आ रही है जिनसे हममे से कोई भी नहीं वच सकता।

राजा ने हाथ जोड़े। "प्रभु वुढ़ापा और मृत्यु निकट आ रही है। इसे याद रखते हुए, मै समझता हू कि मेरे लिए अपने शेष दिन और महीने

आपकी शिक्षाओ के अनुसार श्रेयस पूवर्क जीवन, ध्यान-साधना के साथ बिताऊ और अन्य लोगो, भावी पीढियो के हितार्थ कार्य करू यही श्रेयस्कर होगा।"

राजा उठ खड़े हुए और विदा हेतु तीन वार नमन किया।

उस वर्षा-प्रवास मे श्रावस्ती के विभिन्न धार्मिक सप्रदायो के सदस्य और ब्राह्मण भी एकत्र हुए। उन्होने नगर के लोगो को आमत्रित करके प्रवचनो, अभिभाषणो और शास्त्रार्थों का विराट आयोजन किया। शास्त्रार्थों मे भी सम्प्रदायो को अपने सम्प्रदाय के आधारभूत सिद्धान्त प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया। बुद्ध के अनेक उपासको ने इन शास्त्रार्थों को सुना। इन लोगो ने वहा जो कुछ देखा और सुना था, वह बुद्ध को बताया। उन्होने कहा कि इन शास्त्रार्थों मे प्रत्येक सभव आध्यात्मिक समस्या उपस्थित की गई और उस पर चर्चा के दौरान प्रत्येक वक्ता ने यह सिद्ध करना चाहा है कि उसके सम्प्रदाय के सिद्धान्त ही आध्यात्मिक समस्याओ के सर्वोत्तम समाधान है। शास्त्रार्थों का आरभ तो सौहार्द्रपूर्ण वातावरण मे हुआ किन्तु उनके समापन के समय सब कुछ क्रोधपूर्ण चीख-चिल्लाहट का ही अखाड़ा वन गया।

बुद्ध ने अपने शिष्यो को एक कहानी सुनाई।

एक बार एक चतुर राजा ने अपने राजमहल मे अनेक जन्माध व्यक्तियो को आमत्रित किया। राजा ने हाथी मगवाकर उनके बीच खड़ा कर दिया और उनसे कहा कि वे यह बताए कि हाथी कैसा होता है। जिस अधे व्यक्ति ने हाथी की टागे टटोलीं, वह बोला कि हाथी मकान के खभो के सदृश्य है। जिस अधे व्यक्ति ने हाथी की पूछ छुई, उसने कहा कि हाथी पखो से बने झाडन के जैसा है। जिस व्यक्ति ने उसके कान छुए, उन्होने कहा कि हाथी सूप के समान होता है। जिस व्यक्ति ने उसका पेट छुआ, उसने कहा कि हाथी गोल ढोल जैसा होता है। जिसने उसका सिर छुआ उसने कहा कि हाथी मिट्टी के घडे जैसा होता है और जिसने उसकी सूड छुई, उसने कहा कि हाथी लाठी जैसा है। जब वे बैठकर इस पर विचार करने लगे कि हाथी कैसा होता है तो कोई भी किसी से सहमत नहीं हुआ। उनके बीच खूब जमकर बहस हुई।

"भिक्खुओ, आपने जो देखा और सुना, वह सपूर्ण वास्तविकता का एक लघु अश मात्र है। अगर आप उसे ही सपूर्ण सत्य समझ लेगे तो उसका परिणाम तोडा-मरोडा, आधा-अधूरा सत्य होगा। सद्धर्म पर चलने वाले व्यक्ति को विनम्र एव उदार हृदय होकर स्वीकार करना चाहिए कि उसका ज्ञान अपूर्ण है। हमे सद्धर्म-पथ पर अग्रसर होने के लिए सतत् प्रयास करके

गहन अध्ययन करना चाहिए। सद्धर्म के साधक को मुक्त मन होना चाहिए और यह समझना चाहिए कि वर्तमान विचारो को ही चरम सत्य मान बैठना, पूर्ण सत्य की अनुभूति मे बाधक ही सिद्ध होगा। सद्धर्म-मार्ग पर प्रगति करने के लिए दो शर्तें आवश्यक है–एक, विनम्रता और दूसरी, मुक्त-चित्तता।"

अध्याय सड़सठ

सागर कवि

वर्षा-प्रवास के वाद वहुत से भिक्खुओ ने वुद्ध से विदा ली और सद्धर्म का प्रचार करने निकल पडे। वुद्ध के एक सुयोग्य शिष्य पुन्ना (पूर्ण मैत्रेयिनी पुत्र) ने वुद्ध को वताया कि उनकी योजना अपने जन्म-प्रदेश मे धर्म-प्रचार करने की है। वह पूर्वी समुद्र तट पर स्थित स्वर्णप्रान्त के निवासी थे।

वुद्ध ने उनसे कहा, "मैंने सुना है कि तुम्हारा जन्म-प्रान्त अब भी अधिकाशत असभ्य है और वहा के वहुत से लोगो की प्रकृति वडी उग्र, हिंसक और झगडालू है। मै नहीं कह सकता कि तुम्हारा वहा धर्म-प्रचार के हेतु जाना उपयुक्त रहेगा या नहीं।"

मान्य पूर्णा ने कहा, "वहा के लोग अव भी उग्र और असभ्य हैं, इसीलिए तो म वहा धर्म-प्रचार के लिए जाना चाहता हू। मैं उन्हे करुणा और अहिंसा का पथ दिखा सकूगा और मुझे विश्वास है कि मैं इसमे सफल होऊगा।"

"पूर्णा यदि वे तुम पर चीखे-चिल्लाए और तुम्हे भला-वुरा कहा तो ?"

"आदरणीय वुद्ध, यह तो कुछ नहीं। कम-से-कम वे मुझे पत्थर तो न मारेगे या मुझ पर गदगी तो नहीं फेकेगे। यदि उन्होने यह भी किया तो कम-से-कम मुझे लाठियो या डडो से तो नहीं मारेगे। यदि उन्होने मुझे मारा-पीटा भी तो कम-से-कम मेरी हत्या तो नहीं करेगे।"

"पूर्णा, यदि उन्होने तुम्हे मार ही डाला तो क्या होगा ?"

"मुझे सदेह है कि वे ऐसा करेगे। किन्तु प्रभु यदि उन्होने ऐसा किया भी तो सद्धर्म के करुणा और अहिंसा मार्ग पर चलाते हुए मेरी सार्थक मृत्यु होगी जिससे सद्धर्म की शिक्षा का प्रत्यक्ष रूप देखने को मिलेगा। मरना तो सभी को होता है। सद्धर्म के खातिर मरने मे मुझे किसी प्रकार का खेद नहीं होगा।"

बुद्ध ने उनकी प्रशसा की, "पूर्णा आप धन्य हैं। आपमे सद्धर्म के प्रचार का साहस है। मैंने तो ये प्रश्न यहा खड़े अन्य भिक्खुओ को शिक्षा देने के लिए किए थे। मुझे तुम्हारी योग्यता और अहिंसा-व्रत के पालन की क्षमता का ज्ञान है।"

मान्य पूर्णा पहले एक व्यापारी थे। वह स्थानीय वस्तुओ की उपज लाकर श्रावस्ती बेचने आते थे। वह अपने बहनोई के साथ नदी मार्ग से या बैलगाड़ियो से सामान लाते-ले जाते थे। एक दिन वह श्रावस्ती मे अपने माल के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे कि उन्होने श्रावस्ती मे भिक्खु दल को भिक्षाटन करते देखा। वह उनकी सौम्यता से अति प्रभावित हो बुद्ध की देशना सुनने जेतवन चले गए। देशना सुनकर उनके मन मे व्यापारी बने रहने की इच्छा शेष नहीं रही और अपना माल तथा धन अपने बहनोई को सौपकर भिक्खु बनने की प्रवृज्या ले ली। उन्होने अपनी साधना मे असाधारण प्रगति की और शीघ्र ही एक सुयोग शिक्षक बन गए। धर्म-प्रचार करते हुए उन्होने समूचे मगध और कौशल की यात्रा कर ली थी। सभी भिक्खुओ को विश्वास था कि वह अपने जन्म-प्रदेश मे भी धर्म-प्रसार मे सफल होगे।

आगामी वसन्त ऋतु मे बुद्ध पूर्वी क्षेत्रो मे लौट आए। वह वैशाली और चम्पा मे रुके। वह नदी के किनारे-किनारे चलते हुए समुद्र तट पर आ गए। एक दिन समुद्र तट पर खड़े हुए थे तो आनद ने कहा-"प्रभु, समुद्र तट पर ज्वार की तेज ध्वनि सुनकर और लहरो को देखकर मैने प्राणायाम करके वर्तमान क्षण जिया तो मेरे चित्त और शरीर को बड़ा अच्छा लगा। मुझे लगा, जैसे समुद्र ने मुझमे ताजगी भर दी है।"

एक दिन भिक्खु लोग मछुआरो से बातचीत करने लगे। आनद ने समुद्र के विषय मे अनेक विचार जानने चाहे। एक लम्बे, सुदर मछुआरे ने आनद से कहा, "मुझे समुद्र की कई बाते अच्छी लगती है। पहला, इसका बालू का किनारा पानी तक ढलान युक्त होता है जिससे नावे खींच लाने और जाल फेकने मे सुविधा होती है। दूसरे, समुद्र सदैव अपने स्थान पर रहता है जिससे हम जानते हैं कि वह कहा मिलेगा। तीसरे, समुद्र किसी शव को अपने मे डुबाता नहीं, उसे तट पर फेक देता है। चौथे, सभी नदिया-गगा, यमुना, अचिरावती, सरयू और माही-समुद्र मे आ मिलती हैं जिसके बाद उनका नाम तक नहीं रहता। समुद्र उन सबको अपने गर्भ मे समा लेता है। पाचवे, यद्यपि नदिया दिन-रात जल ला-लाकर समुद्र में पहुचाती हैं, किन्तु उसका जल-स्तर अपनी मर्यादा मे रहता है। छठे, समुद्र का जल सदैव खारा होता

है। सातवे, समुद्र मे सुन्दर घोघा, सीप, शख, मोती और मूल्यवान पत्थर होते हे। आठवे समुद्र, हजारो प्रकार के प्राणियो को अपने गर्भ मे समाए रहता हैं जिनमे सैकडो फुट लम्वे प्राणियो से लेकर सूक्ष्मतम प्राणी (रेत के कण समान) तक होते हे। अव आप समझ गए होगे कि हम समुद्र को कितना प्रेम करते है।"

आनद ने सराहनापूर्ण दृष्टि से मछुआरे को देखा जो मछुआरा होकर भी कवि की भापा वोल रहा था। आनद ने बुद्ध से कहा, "इस व्यक्ति ने कितने सुन्दर ढग से समुद्र की प्रशसा की है। यह समुद्र को उसी प्रकार प्रेम करता है जैसे मैं सवोधि के मार्ग को। क्या आप इस सवध मे कुछ शिक्षा देगे?"

बुद्ध मुस्कराए और चट्टानो पर वैठकर सद्धर्म-मार्ग की कुछ विशेपताए वताने लगे। वह मछुआरा भी उनके साथ गया। बुद्ध ने कहा, "हमारे मछुआरे वधु ने समुद्र की आठ विशेषताए वताई है, और मै अव सच्चे धर्म-मार्ग की आठ विशेपताए वताऊगा। पहली, धर्म समुद्र के समान नीचे की ओर ढलवा नहीं होता, जिससे मछुआरे अपनी नावे और जाल तट तक सुविधापूर्वक ला सके। सद्धर्म मार्ग पर व्यक्ति तभी प्रगति कर सकता है, जव वह सुगम मे कठिन मार्ग की ओर वढ़े, नीचे से ऊपर की ओर उठे और दिखावे से उठकर परिश्रमपूर्ण साधना करे। धर्म इतना व्यापक है कि वह सभी प्रकार की मानसिकताओ को समाहित कर सके। युवा या वृद्ध, शिक्षित या अशिक्षित सभी कोई धर्म मार्ग पर चल सकता है। हर व्यक्ति अपनी आवश्यकताओ के अनुरूप साधना-पद्धतिया अपना सकता है।

"दूसरे, समुद्र की भाति धर्म भी अपने स्थान पर रहता है। धर्म-शिक्षाओ के सिद्धात कभी नहीं वदलते। शीलो को स्पष्ट रूप से समझा और समझाया जा सकता हे। कोई भी व्यक्ति कहीं भी धर्म के सिद्धान्तो का अध्ययन और शीलो का पालन करके कहीं भी साधना कर सकता है। धर्म न कहीं जाता हे और न गुम हो सकता है।

"तीसरे, समुद्र जैसे शव को अपने गर्भ मे नहीं रखता, उसी प्रकार धर्म अज्ञान, आलस्य या शीलाचार को भग करना सहन नहीं करता। साधना न करने वाला व्यक्ति अन्तत स्वय को समुदाय से वाहर निकला पाता है।

"चौथे, समुद्र सभी नदियो को समान रूप से आत्मसात् कर लेता है, उसी प्रकार सद्धर्म सभी जातियो को समान रूप से अपनाता है। समुद्र मे मिलने के वाद नदी का नाम समाप्त हो जाता है, इसी प्रकार सद्धर्म पर

चलने वाला व्यक्ति अपनी जाति, वश और पूर्व पद सभी त्यागकर मात्र भिक्खु वन जाता है।

पाचवे, जैसे समुद्र का जल स्तर सदैव समान रहता है, समुद्र अपनी मर्यादा मे रहता है, सद्धर्म भी एक ही स्तर पर रहता है, चाहे उसके अनुयायियो की सख्या कम हो अथवा अधिक। धर्म को शिष्यो की सख्या से नहीं मापा जा सकता।

"छठे, समुद का जल सदैव खारा होता है। अगणित मार्गों और अगणित साधना-पद्धतियो के वावजूद धर्म का भी एक ही स्वाद होता है और वह स्वाद है—मुक्ति का आनद। यदि धर्म-शिक्षाओ से मुक्ति न मिले तो वह सच्ची शिक्षा नहीं है।

"सातवे, समुद्र मे शख-सीपी, मोती और मूल्यवान रत्न होते है तो धर्म मे भी ऊर्द्धगामी और मूल्यवान शिक्षाए यथा चार आर्य सत्य, चार विशुद्ध साधनाए, पाच गुण, पाच शक्तिया, आत्म-जागृति के सात चरण और श्रेष्ठ अप्टांगिक मार्ग होते है।

"आठवे, समुद्र हजारो जीवित प्राणियो को शरण देता है तो धर्म भी सभी को अपनी शरण मे ले लेता है, फिर चाहे वे अशिक्षित वच्चे हो या वोधिसत्व हो। धर्म के असख्य अनुयायी है जिन्होने जन्म-मृत्यु की धारा मे प्रवेश, प्रथम प्रत्यागत, प्रत्यागतहीन अवस्था और अर्हत पदो के पुण्य फल प्राप्त किए हैं।

"इस प्रकार समुद्र के समान सद्धर्म भी प्रेरणा का और अपरिमित सपदा प्राप्त करने का स्रोत है।"

मान्य आनद ने हाथ जोड़कर बुद्ध की ओर देखा और कहा, "प्रभुवर, आप महान आध्यात्मिक गुरु तो हैं ही, आप एक कवि भी है।"

अध्याय अड़सठ

आत्म-मुक्ति के तीन द्वार

समुद्र तट से चलकर बुद्ध पाटलिपुत्र और वैशाली गए और फिर स्वदेश की ओर चल दिए। शाक्य राज्य के सामगाम मे पहुचने पर उनको ज्ञात हुआ कि निर्ग्रंथ सप्रदाय के गुरु नाथपुत्र का निधन हो गया और उनके शिष्य दो भागो मे वट गए हैं और दोनो गुटो मे परस्पर वहुत कटुता है। दोनो ही एक-दूसरे पर सप्रदाय के सिद्धातो की भ्रष्ट व्याख्या करने का आरोप लगाते हैं। लोग समझ नहीं पा रहे है कि वे किसका पक्ष ले।

सारिपुत्त के परिचर श्रामणेर चड ने आनद को निर्ग्रंथ सम्प्रदाय की कलह की कहानी वताई। आनद को भी इन वातो की जानकारी थी। आनद ने सव वाते वुद्ध को वताईं और एक आशका भी व्यक्त की, "प्रभु, मुझे आशा है कि आपके न रहने पर हमारे सघ का विभाजन नहीं होगा।"

वुद्ध ने आनद का कधा थपथपाकर कहा, "आनद, क्या कोई भिक्खु धर्म-देशना के विपय मे किसी प्रकार के तर्क-वितर्क करता है ? क्या किसी ने प्राणायाम के चार चरणो, चार प्रकार की साधनाओ, पाच गुणो, पाच शक्तियो, आत्म-जागृति के सात सोपानो अथवा श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग की आलोचना-प्रत्यालोचना की है ?"

"नहीं, मैंने कभी किसी भिक्खु को आपकी देशना के विपय मे तर्क करते हुए नहीं देखा। किन्तु आप हम लोगो के वीच मे है। हम आपकी सदाशयता की छाया मे शरण लिए हुए हैं। हम आपकी देशना सुनते हैं और शांतिपूर्वक अपना अध्ययन करते है। किन्तु जव आप नहीं रहेगे तो लोगो के पालन, सघ की सर्वोत्तम सघटना अथवा देशना के प्रचार-प्रसार के सम्बन्ध मे असहमतिया हो सकती हैं। यदि सघर्ष हुआ तो वहुत से लोगो का दिल टूट जाएगा, यहा तक कि सद्धर्म पर से श्रद्धा ही उठ जाएगी।"

बुद्ध ने सांत्वना देते हुए कहा, "आनद, चिन्ता मत करो। यदि सघ मे शिक्षाओ के विविध अगो के विपय मे विवाद होते है या सघर्ष होते हैं तो यह चिन्ता का कारण होगा। किन्तु यदि शीलो के पालन, सघ की व्यवस्था अथवा धर्म-शिक्षा के प्रसार सवधी विषयो पर असहमति हो तो इन पर चिन्ता करने की आवश्यकता नही।"

बुद्ध के आश्वासनो के वाद भी आनद का चित्त शकाहीन नहीं हुआ। हाल ही मे उसे पता चला था कि कभी बुद्ध ने निजी परिचर मान्य सुनक्तावत ने वैयक्तिक असतोप के कारण सघ त्याग दिया है। वह भाषण कर-करके बुद्ध और सव की निन्दा कर रहा है। वह कहता है कि भिक्खु गौतम भी सामान्य व्यक्ति के समान हैं और उन्हे कोई विशिष्ट अन्तर्दृष्टि प्राप्त नहीं है। गौतम की शिक्षाओ से व्यक्ति आत्म-मुक्त तो हो सकता है किन्तु उन्हे समस्त समाज की चिन्ता नहीं है। मान्य सारिपुत्त को भी यह सव ज्ञात था और वह भी आनंद की भाति चिन्तित थे।

आनद को ज्ञात था कि राजगृह मे असतोप के बीज बोये जा रहे है। मान्य देवदत्त के नेतृत्व मे अनेक भिक्खु बुद्ध से स्वतत्र एक पृथक् सघ स्थापित करने के प्रयास गुप्त रूप से कर रहे है। मान्य कोकलिक, कटमोरक, तिस्स, खडदेविपुत्र ओर समुद्दत्त समेत अनेक सुयोग्य भिक्खु देवदत्त को इसमे सहयोग दे रहे हैं। देवदत्त बुद्ध के सवसे अधिक प्रतिभा-सम्पन्न और सुयोग्य वरिष्ठ शिष्य थे। मान्य सारिपुत्त ने सभी के सामने उनकी प्रायः प्रशसा की थी और उन्हे अपना विशेष मित्र कहते थे। आनद की समझ मे नहीं आ रहा था कि देवदत्त औरो के प्रति, विशेषत· बुद्ध के प्रति, इतना ईर्ष्यालु क्यो हो उठा है। आनद को ज्ञात था कि अभी तक किसी ने बुद्ध को इसके विषय मे सूचना नहीं दी है। कहीं उसे स्वय ही बुद्ध को ये दुखद सूचनाए न देनी पड़े।

अगले वर्ष वर्षा-प्रवास के लिए बुद्ध श्रावस्ती लौट आए और जेतवन मे निवास किया। वहा उन्होने 'धर्म मुद्रा सूत्र' की देशना की। "आज मैं आपके समक्ष अद्भुत देशना करूगा। इसके लिए आप सभी विचारो से चित्त को मुक्त कर लीजिए जिससे आप इसे शात भाव से सुन सके, हृदयगम कर सके और अपना सके।

"भिक्खुओ, कुछ धर्म-मुद्राए सत्य धर्म की प्रतीक होती हैं। मेरी प्रत्येक देशना की तीन मुद्राए है। ये मुद्राएं हैं : शून्यता, अनिमित्तता और अप्पनिहिता (आत्मनिहितत्व)। ये तीन गुण वे तीन द्वार है, जिनसे आत्म-मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। इन धर्म मुद्राओ को आत्म-मुक्ति के तीन द्वार कहा जा सकता है।

"भिक्खुओ, 'शून्यता' का अर्थ अनस्तित्व नहीं है। इसका अर्थ है कि किसी की भी स्वतत्र सत्ता नहीं है अर्थात् स्वतत्र-सत्ता शून्यता। आप जानते ही है कि अस्तित्व और अनस्तित्व की मान्यताए सही नहीं है। सभी धर्म अपनी सत्ता के लिए एक-दूसरे पर अवलवित हैं। एक है तो दूसरे की विद्यमानता है। एक नहीं है तो दूसरा भी विद्यमान नहीं है। यह जन्मता है तो दूसरा जन्म लेता है और यदि यह मरता है तो वह भी मर जाता है। इसलिए शून्यता की प्रकृति परस्परावलम्बी है।

"भिक्खुओ, सभी धर्मों की परस्परावलम्विता पर ध्यान करो जिससे यह देख सको कि सभी धर्म एक दूसरे मे विद्यमान है और एक धर्म मे सभी धर्म विद्यमान हैं। एक धर्म की अनुपस्थिति मे अन्य धर्म भी अस्तित्ववान नहीं हो सकते। छः इन्द्रियो, इन इद्रियो के विपयो और इनकी चेतनाओ-इन अठारहो तत्त्वो का ध्यान करो। शरीर के पाचो स्कधो-काया, भावनाओ, अवधारणाओ, मानसिक भाव-वोधो और प्रज्ञा (चेतना) की धारणा एव ध्यान करो तो आप देख सकेगे कि इनमे से कोई भी स्वतत्र रूप से अस्तित्ववान नहीं हो सकता। सभी एक-दूसरे पर अवलम्वित है। जव इसे देख-समझ लोगे तो सभी धर्मों की शून्यता का ज्ञान हो जाएगा। इनकी शून्यता समझ लेने पर आप न तो किसी धर्म के पीछे भागेगे और न किसी धर्म को त्यागेगे। तव आप सभी धर्मों के ममत्व, भेद-भाव और रति-विरति के पार चले जाएगे। शून्यता की प्रकृति का ध्यान करने से मुक्ति का पहला द्वार उन्मुक्त होगा। शून्यता प्रथम मुक्ति-द्वार है।

"भिक्खुओ, दूसरी मुद्रा है 'अनिमित्तता'। इसका अर्थ है अवधारणाओ और भेद-वुद्धि से ऊपर उठ जाना। जव लोग सभी धर्मों की परस्परावलम्बी और शून्य प्रकृति को देख नहीं पाते तो वे धर्मों को पृथक् और स्वतत्र समझने लगते हैं। यह स्थिति ऐसी है जैसे मानसिक भेद- वुद्धि की तलवार से शाश्वत सत्य के टुकडे-टुकड़े करना। भिक्खुओ, सभी धर्म एक-दूसरे पर अवलम्वित हैं। इस प्रकार ध्यान करने पर आप पाओगे कि सामान्य अवधारणा त्रुटिपूर्ण है। अवधारणा की दृष्टि प्रज्ञा-चक्षु के समान स्पष्ट और त्रुटिरहित रूप मे प्रकृत सत्य का दर्शन नहीं कर पाती। इसी से रस्सी मे साप की प्रतीति होती हैं। सत्य ज्ञान होने पर रस्सी का वोध होता है और सर्प का वोध नष्ट हो जाता है।

"भिक्खुओ, अस्तित्व-अनस्तित्व, जन्म-मृत्यु, एक-अनेक, दृश्य-अदृश्य, आना-जाना मद-अमद, घटना-वढना इन सभी अवधारणाओ और मानसिक

भेद-वुद्धि की सृष्टि होती है। सत्य का मूल स्वरूप इन अवधारणाओ की कारा मे वद नहीं रह सकता। अस्तित्व-अनस्तित्व, जन्म-मरण, एक-अनेक, दृश्य-अदृश्य, आना-जाना, सद्-असद्, ह्रास-वृद्धि आदि से सबधित सभी विचारो को निर्मूल करने के लिए ध्यान करो तो तुम्हे मुक्ति की प्राप्ति हो सकेगी। 'अनिमित्तता' मुक्ति का दूसरा द्वार है।

"भिक्खुओ, तीसरी मुद्रा है 'अप्पनिहिता' (आत्मनिहितत्व)। इसका अर्थ है किसी की भी प्राप्ति के लिए उसके पीछे मत भागो। सामान्यतः लोग एक धर्म की प्राप्ति के लिए दूसरे धर्म से वचते हैं। निर्धनता से बचने के लिए लोग धन-प्राप्ति मे जुटे रहते है। अध्यात्मसाधक आत्म-मुक्ति के लिए जन्म-मृत्यु को ही अस्वीकारते है। जव सभी धर्म दूसरे धर्म मे समाहित है तो एक धर्म को पाने के लिए दूसरे से कैसे पीछा छुडाया जा सकता है। जन्म और मृत्यु मे ही निर्वाण समाहित है और निर्वाण मे जन्म-मृत्यु। निर्वाण और जन्म-मृत्यु दो पृथक् वास्तविकताए नही है। निर्वाण-प्राप्ति के लिए यदि जन्म-मृत्यु को नकारोगे तो आपने सभी धर्मों की परस्परावलम्बिता की मूल प्रकृति को ही नहीं समझा। इसलिए 'आत्मनिहितत्व' पर ध्यान करने से आप एक के पाने तथा दूसरे के त्यागने के भाव से सदा के लिए मुक्ति प्राप्त कर लोगे।

"अर्हत होना तथा प्रज्ञावान होना अपनी स्व-सत्ता से पृथक् नहीं है। हमे अपनी आखे खोलकर यह देखना है कि हम ही आत्म-मुक्ति और प्रज्ञावान वनने के कारक है। सभी धर्म और सभी अस्तित्व स्वय ही पूर्ण प्रज्ञा की प्रकृति मे अन्तर्भूत है। अपने से वाहर कुछ मत देखो। यदि चेतना का प्रकाश अपनी सत्ता पर केन्द्रित करोगे तो तुरन्त 'सवोधि' प्राप्त हो सकती है। इनके लिए कहीं वाहर मत खोजो। स्मरण रखो कि प्रज्ञा का विषय प्रज्ञा से स्वतत्र होकर विद्यमान ही नहीं रह सकता। ब्रह्म, निर्वाण और मुक्ति आदि किसी एक धर्म की प्राप्ति के लिए प्रयास मत करो। जिसे तुम खोज रहे हो, वह तुम स्वय हो। इस प्रकार आत्मनिहितत्व ऐसा द्वार है जो मुक्ति के लक्ष्य तक पहुचाता है। इसे मुक्ति का तीसरा द्वार कहते है।

"भिक्खुओ, यही धर्म-मुद्राओ की शिक्षा है, आत्म-मुक्ति के तीन द्वारो की शिक्षा है। आत्म-मुक्ति के ये तीन द्वार अद्‌भुत और सूक्ष्म अर्हता युक्त हैं। इनका अध्ययन और साधना-अभ्यास करने मे जुटो। यदि उस देशना के अनुसार साधना करोगे तो तुम निश्चय ही आत्म-मुक्ति प्राप्त कर सकोगे।"

जव वुद्ध सूत्र की देशना समाप्त कर चुके तो मान्य सारिपुत्त बुद्ध के

समक्ष प्रणत हुए। सभी भिक्खु भी आभार प्रदर्शन हेतु प्रणत हुए। सारिपुत्त ने घोषणा की कि इस सूत्र का गहन अध्ययन करने के लिए कल से संघ का विशेष अधिवेशन होगा। उन्होने कहा कि यह सूत्र असीम गूढता युक्त है और भिक्खुओ को इसका अध्ययन, साधना-अभ्यास और निदिध्यासन के पूर्ण प्रयास करने चाहिए। मान्य स्वास्ति ने देखा कि यह सूत्र बुद्ध की गत वर्ष की 'शून्यता सूत्र' देशना से ही संबधित है। उसने देखा कि बुद्ध अपने शिष्यो को किस प्रकार सामान्य शिक्षा देकर उन्हे और सारगर्भित और गूढ़तत्त्वो की ओर ले जाते हैं। स्वास्ति ने महाकाश्यप, सारिपुत्त, पूर्णा और मौद्‌गल्यायन सरीखे शिष्यो के हर्षोत्फुल्ल और जगमगाते चेहरे देखे। सभी आभार प्रदर्शित करते हुए नमन करते है, इससे गुरु-शिष्य सम्बन्धो की गहराई प्रकट होती है।

अगले दिन अपराह्न मे मान्य यमेलु और तेकुल बुद्ध से मिलने उनकी कुटिया पर आए। ये दोनो भिक्खु ब्राह्मण थे और भाषा शास्त्र तथा प्राचीन साहित्य के विशेषज्ञ थे। उन्होने बुद्ध से कहा, "प्रभु, हम आपकी देशना की भाषा के संबध मे बात करना चाहते है। आप सामान्यतः मागधी मे देशना करते हैं और बहुत से भिक्खु मागधी नहीं समझते। इसलिए आपकी देशना का अन्य बोलियो मे अनुवाद कर दिया जाए तो उपयुक्त रहेगा। पहले हमे अनेक बोलियो का अध्ययन करने का अवसर मिला था। हमारा अनुभव है कि स्थानीय बोलियो मे अनुवाद करते समय आपकी शिक्षाओ की सूक्ष्मता बाधित होती है। हम चाहते है कि आपकी देशना का वैदिक भाषा मे अनुवाद कर दिया जाए जिससे सभी भिक्खु एक ही भाषा मे आपकी देशना का अध्ययन कर सके और किसी प्रकार की त्रुटि न हो सके।"

बुद्ध एक क्षण मौन रहकर बोले, "आपका प्रस्ताव मानना लाभप्रद नहीं होगा। धर्म एक जीवन्त सत्य है। इसकी अभिव्यक्ति के लिए उन्हीं शब्दो का प्रयोग किया जाए जो जनता नित्य-प्रति प्रयोग करती हो। मैं अपनी देशना ऐसी भाषा के माध्यम मे प्रसारित नहीं करना चाहता, जिसे कुछ ही लोग समझ सके। मै अपने सभी भिक्खुओ और सामान्य उपासको से उनकी मातृ भाषा मे ही धर्म शिक्षा का अध्ययन करने और उनके अनुसार साधना-अभ्यास करने की अपेक्षा करता हू। इस प्रकार सद्‌धर्म सशक्त और सर्वसुलभ रहेगा। सद्धर्म वर्तमान जीवन और स्थानीय संस्कृति से जुडा होना चाहिए।"

बुद्ध की इच्छा समझकर दोनो मान्य शिष्यो ने नमन किया और उनसे विदा लेकर चले गए।

अध्याय उनहत्तर

गौतम से तथागत

एक दिन आधी तूफान के समय उत्तीय नामक एक सन्यासी बुद्ध से मिलने आये। आनद उन्हे बुद्ध के पास ले गए और उनका परिचय कराया। बुद्ध ने उत्तीय को बैठने का आग्रह किया। आनद ने उन्हे वर्षा से भीगा शरीर पोछने के लिए वस्त्र दिया।

उत्तीय ने बुद्ध से पूछा, "भिक्खु गौतम, यह ससार शाश्वत है या एक दिन प्रलय मे नष्ट हो जाएगा ?"

बुद्ध हसे और बोले, "सन्यासी उत्तीय, आपकी अनुमति हो तो मैं इस प्रश्न का उत्तर देना नहीं चाहूगा।"

उत्तीय ने इस पर प्रश्न किया कि "ससार अनत है या सात है ?"

"मैं इस प्रश्न का भी उत्तर नहीं दूगा।"

"अच्छा, बताओ कि शरीर और आत्मा एक है या पृथक्-पृथक् ?"

"मैं इस प्रश्न का भी उत्तर नहीं दूगा।"

"जब आपकी मृत्यु हो जाएगी तो आप विद्यमान रहेगे या नहीं ?"

"मैं इस प्रश्न का भी उत्तर नहीं दूगा।"

"सभवतः, आपकी मान्यता है कि आप न तो विद्यमान रहेगे और न अस्तित्वहीन होगे।"

"सन्यासी उत्तीय, मैं इस प्रश्न का भी उत्तर नहीं दूगा।"

उत्तीय उलझन मे पड़कर बोले, "भिक्खु गौतम, आपने मेरे सभी प्रश्नो के उत्तर देने से इनकार कर दिया है। आप किस प्रश्न का उत्तर देना चाहेगे ?"

बुद्ध ने कहा, 'मै उन्हीं प्रश्नो के उत्तर देता हू जो व्यक्ति के चित्त

और शरीर पर नियत्रण करने की साधना से सवधित हो जिससे साधक सभी दु·खो और चिन्ताओ से मुक्त हो सके।"

"आपके विचार से आप अपनी शिक्षाओ के माध्यम से कितने लोगो को बचा सकेगे ?"

बुद्ध चुपचाप बैठे रहे। सन्यासी उत्तीय ने भी कुछ नहीं कहा।

सन्यासी उत्तीय यह न समझे कि बुद्ध ने उनके प्रश्नो के उत्तर नहीं दिए या उत्तर देने मे असमर्थ हैं, यह भापकर आनद ने कहा, "संन्यासी उत्तीय, सभव है इस उदाहरण से आप हमारे गुरुदेव की मशा समझ गए होगे। मान लीजिए, एक राजा सब तरह से सुरक्षित राजमहल मे रहता हो जिसका एक ही द्वार हो और वहा भी पहरेदार रहते हो। पहरेदार महल मे परिचित व्यक्ति को ही घुसने देगे। महल की दीवारो मे भी कहीं छेद या दरार न पडे, इसकी भी पक्की देख-भाल रहती हो। ऐसी अवस्था मे राजा सिंहासन पर निश्चित होकर बैठता है और उसे पता भी नहीं होता कि कितने लोग महल मे आते-जाते हैं। वह जानता है कि पहरेदार जानने-पहचानने वालो को ही घुसने देगे। यही स्थिति भिक्खु गौतम की है। उन्हे इस बात की चिन्ता नहीं कि कितने लोग उनके शिष्य है। उनकी चिन्ता तो सद्धर्म की शिक्षा देने भर की है, जिससे लोग लोभ, हिंसा या माया-जाल से मुक्त हो सके और इस प्रकार शाति, आनद और आत्म-मुक्ति की अनुभूति कर सके। मेरे गुरु से पूछिए कि चित्त और शरीर के स्वामी कैसे बन सकते हो, और वह निश्चित रूप से इन प्रश्नो के उत्तर देगे।"

सन्यासी उत्तीय आनद के उदाहरण को समझ गए किन्तु वह तो आध्यात्मिक सिद्धातो के विवेचन विषयक प्रश्नो मे ही उलझे थे, अत· उन्होने और प्रश्न नहीं किए। सन्यासी बुद्ध से हुई इस भेट से असतुष्ट हो, वहा से विदा हो गए।

कुछ दिन बाद वत्सगोत्र नामक एक अन्य सन्यासी आए और उन्होने भी इसी प्रकार के प्रश्न किए। बुद्ध बिना एक शब्द बोले, चुपचाप बैठे रहे। वत्सगोत्र भी उठकर चले गए। उनके जाने पर मान्य आनद ने बुद्ध से पूछा, "गुरुवर, अपनी धर्म-देशना मे आप प्रायः अनात्म की शिक्षा देते हैं। आपने व्यक्ति-सत्ता विषयक वत्सगोत्र के प्रश्न का उत्तर क्यो नहीं दिया ?"

बुद्ध ने कहा, "आत्म-शून्यता की शिक्षा मै अपनी ध्यान-साधना हेतु देता हू। इसे एक सिद्धात नहीं समझना चाहिए। यदि लोग इसे सिद्धात मान बैठेगे

तो उसी मे उलझकर रह जाएगे। मैने प्राय: कहा है कि इस देशना को नदी पार करने के लिए मात्र नाव के रूप मे प्रयोग करे। संन्यासी वत्सगोत्र चाहते थे कि मैं सिद्धात-कथन करू किन्तु मै उन्हे आत्म या अनात्म के किसी सिद्धांत मे उलझाना नहीं चाहता था। यदि मै कहता कि आत्म है, तो मै अपनी देशना-विरोधी बात कहता। यदि मै कहता कि आत्म नही होता और वह उस सिद्धात मे बधकर रह जाते तो इससे उनका कोई कल्याण नहीं होता। अत. ऐसे प्रश्नो के उत्तर देने की अपेक्षा मौन रहना ही उचित होता है। वे यह माने कि मुझे इन प्रश्नो के उत्तर नहीं आते, लोगो का ऐसा मानना, सकीर्ण विचारो मे उलझे रहने की अपेक्षा उत्तम है।"

एक दिन मान्य अनिरुद्ध को कुछ सन्यासियो ने रोक लिया और उनके प्रश्नो के उत्तर दिए बिना जाने नहीं दिया। उन्होने पूछा, "हमने सुना है कि भिक्खु गौतम सबोधि-प्राप्त गुरु हें ओर उनकी शिक्षाए गहन एवं सूक्ष्म हे। तुम उनके शिष्य हो, अत यह बताओ कि जब भिक्खु गौतम मृत्यु को प्राप्त हो जाएगे तो वे विद्यमान रहेगे अथवा नहीं ?"

सन्यासियो ने कहा कि उस अवस्था मे ये चार स्थितिया होगी और उत्तर मे किसी एक स्थिति को चुनकर बताओ · (1) जब वह मृत्यु को प्राप्त हो जाएगे, तो वह विद्यमान रहेगे। (2) जब भिक्खु गौतम मर जाएगे तो वह विद्यमान नहीं रहेगे। (3) मृत्यु के बाद गोतम विद्यमान रहेगे भी और नहीं भी रहेगे आर (4) मृत्युपरात भिक्खु गौतम न तो विद्यमान रहेगे और न अविद्यमान होगे।

भिक्खु अनिरुद्ध जानते थे कि देशना की तात्त्विक दृष्टि के अनुसार इनमे से कोई भी अवस्था नहीं होने वाली। वह मौन रहे। सन्यासी उनका मौन भी सहने को तैयार नही थे ओर वे इन चार मे से किसी एक स्थिति को स्वीकार करने के लिए उन पर दबाव डालते रहे। अतत: मान्य अनिरुद्ध ने कहा कि "भिक्खु गौतम के सबध मे इन चार मे से कोई भी स्थिति पूर्णत. सही नहीं है।"

सन्यासी ठहाका मारकर हस पडे और बोले, "यह भिक्खु कोई नव-प्रवृज्जित भिक्खु है। इसे इस प्रश्न का उत्तर आता ही नहीं और यह उत्तर देने से बचने की चेष्टा कर रहा है। इसे जाने दो।"

कुछ दिन बाद मान्य अनिरुद्ध ने यह बात बुद्ध के समक्ष रखी और कहा, "गुरुवर, हमारा मार्ग-दर्शन कीजिए जिससे हम ऐसे प्रश्नो का उत्तर दे सके।"

वुद्ध ने कहा, "अनिरुद्ध, अवधारणात्मक ज्ञान के द्वारा भिक्खु गौतम को खोज पाना असभव है। भिक्खु गौतम कहा हैं ? रूपाकार मे ? भावनाओ मे ? अवधारणा, भाववोध या प्रज्ञा मे ? यदि नहीं, तव क्या भिक्खु गौतम को रूपाकार, भावनाओ, अवधारणाओ, भाव-वोध या प्रज्ञा के वाहर कहीं पाया जा सकता है ?"

"नहीं, प्रभुवर।"

वुद्ध ने अनिरुद्ध से कहा, "तव तुम गौतम को कहा पाओगे ? अनिरुद्ध ठीक इस क्षण जव तुम गौतम के सामने खड़े हो, तव क्या तुम गौतम को पकड़ सकते हो ? और जव वह मर जाएगा तो उसे पकड़ना और भी कठिन होगा। धर्म के सार के समान वुद्ध के सार को अवधारणात्मक ज्ञान अथवा मानसिक भेद-वुद्धि जन्य वर्गीकरणो से समझा नहीं जा सकता। इसलिए वुद्ध की सही पहचान के लिए उसे सभी धर्मो मे, जिन्हे अ-गौतमीय माना जाता है, देखना चाहिए।

"अनिरुद्ध, कमल को समग्रतः समझने के लिए सूर्य, सरोवर, वादल, कीचड़ और ऊष्मा सभी तत्त्वो के साथ जोडकर देखो। इस दृष्टि के अपनाने पर ही सकीर्ण विचारो के जाल को नष्ट कर सकोगे और मानसिक भेद-वुद्धि के जाल से मुक्ति पा सकोगे जिससे जन्म-मृत्यु, यहा-वहा, मूर्तता-अमूर्तता, पाप-पुण्य, वृद्धि-ह्रास की काराए निर्मित होती है। सन्यासियो ने जिन चार अवस्थाओ की वात कही है, उनमे सत्य की विराटता को कभी समाहित कर पाना सभव नहीं है।

"अनिरुद्ध, स्वय वास्तविकता को विचारो या शब्दो के माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता। साधना द्वारा विकसित प्रज्ञा से ही परम सत्य का साक्षात्कार सभव है। आम का स्वाद चखकर जाना जा सकता है, उसका वर्णन असभव है। इसीलिए, मैं भिक्खुओ को वाद-विवाद मे समय नष्ट करने की अपेक्षा इस समय को साधना मे लगाने का परामर्श देता हू।

"अनिरुद्ध, सभी धर्मो की स्थिति अवस्था निरपेक्ष है जिसे 'तथता' कह सकते है। उसी मे कमल का उदय है और गौतम का भी। इस 'तथता' मे उदित किसी व्यक्ति को 'तथागत' कह सकते है। इस 'तथता' मे उदित सभी धर्म वापस चले जाते है। इस स्थिति को भी 'तथागत' शब्द से व्यजित कर सकते है। 'तथता' का सत्यतर अर्थ है 'वह जो कहीं से आता नहीं' और 'कहीं जाता नहीं।' अनिरुद्ध आज से मै स्वय को 'तथागत' कहूगा।

मैं इस सज्ञा को इसलिए पसद करता हू कि इसमे 'मै' और 'मेरा' शब्दो का प्रयोग नहीं किया जा सकता।"

अनिरुद्ध ने मुस्कराकर कहा, "हम जानते है कि हम सभी 'तथता' से उदित होते हैं किन्तु 'तथागत' सज्ञा से आप ही को अभिहित करेगे। इससे हमे यह स्मरण होता रहेगा कि हम सब 'तथता' से उदित है जिसका 'आदि-अत' नहीं है।"

बुद्ध ने कहा, "तथागत तुम्हारे सुझाव से प्रसन्न है, अनिरुद्ध।"

आनद ने बुद्ध और अनिरुद्ध की इस वार्ता को सभी भिक्खु समुदाय के समक्ष रखने का सुझाव दिया जिसे अनिरुद्ध ने स्वीकार कर लिया। अनिरुद्ध ने कहा कि पहले मैं इस वार्तालाप को श्रावस्ती के सन्यासियो को सुनाऊगा।

अध्याय सत्तर

जैसा शिष्य वैसी शिक्षा

यद्यपि बुद्ध ने उसे कभी डाटा नहीं था और न उसकी त्रुटियो की ओर ध्यान आकृष्ट किया था, तथापि भिक्खु स्वास्ति अपनी कमियो को समझता था। सभवत इसका कारण यह था स्वास्ति अपनी छहो इद्रियो को अपने अधीन रखने का हृदय से प्रयास करता था, भले ही इसमे उसे अपेक्षित सफलता न मिलती हो। जब भी स्वास्ति किसी भिक्खु के त्रुटि-मार्जन को देखता-सुनता तो उसे लगता जैसे उसी की त्रुटि की ओर सकेत किया जा रहा है। इससे उसे साधना-अभ्यास को गहन करने का अवसर मिलता। बुद्ध जब भी राहुल की त्रुटि की ओर सकेत करते और शिक्षा देते तो स्वास्ति उसे अच्छी तरह याद रखता। इस प्रकार राहुल तो साधना-पथ पर प्रगति करता ही, स्वास्ति को भी बहुत लाभ होता।

एक बार राहुल के साथ जगल मे बैठे-बैठे स्वास्ति ने राहुल से कहा कि हम कितने भाग्यशाली है कि हमे बुद्ध का शिष्यत्व प्राप्त हुआ है। अब सच्ची शांति, आनद और मुक्तता का आस्वादन कर लेने के बाद, सासारिक जीवन की इच्छा ही नहीं रह गई। राहुल ने उसे सचेत किया कि "तुम जो कहते हो, वह सच हो सकता है किन्तु अपने को इतनी जल्दी, इतना श्रेय मत दो। इद्रियो को वश मे रखना ही साधना की आधार-शिला है और उसके लिए सतत-साधना करते रहना आवश्यक है। वरिष्ठ शिष्य भी साधना मे ढील नहीं बरत पाते।"

राहुल ने भिक्खु वगिशा की कथा सुनाई जो बहुत ही योग्य था और भाषा पर उसका अधिकार था। उसने बुद्ध, धर्म और सघ की प्रशसा मे अनेक कविताए लिखी थीं, जिनकी बुद्ध ने भी प्रशसा की थी। किन्तु वह विषय-वासना पर विजय प्राप्त नहीं कर सका। जब भी वह विहार मे आई किसी सुदर

युवती को देखता तो उसकी वासना उभड पडती थी। उस समय आनद ने उमे शरीर-सौंदर्य से हटकर सद्धर्म के सौदर्य की ओर अपनी भावनाए मोड़ने की शिक्षा दी। इससे वह सभी धर्मो की शून्यता और अनित्यता को समझ सका। अपनी गहन प्रज्ञा के फलस्वरूप वह अनेक दुःखो तथा बाधाओ को पार करके आत्म-सुधार के मार्ग पर अग्रसर हो सका और ससार मे पुनर्जन्म की अवस्था मे आगे निकल गया।

युवा भिक्खुओ को शिक्षण करते हुए मान्य सारिपुत्त ने भिक्खु बगिशा की साधना-पथ पर प्रगति का उदाहरण भी रखा और कहा, "भिक्खुओ को सभी प्रकार की हीनता या उच्चता के अहभावो से मुक्त रहना चाहिए। सतत चेतना-जागृति की साधना करने मे आप दृष्टा-भाव से देख सकेगे कि आपके चित्त मे क्या-क्या भाव उठ रहे है। इसलिए इद्रियो को वश मे रखना सद्धर्म पथ पर प्रगति करने का अति अद्भुत साधन है। स्वास्ति ने सकल्प किया कि वह मान्य वंगिशा से मिलकर उनकी आध्यात्मिक अनुभूतियो का लाभ उठाएगा।"

स्वास्ति को स्मरण आया कि एक बार बुद्ध ने इद्रियो को वश मे रखने के लिए सागर के प्रतीक का प्रयोग किया था और कहा था, "आपकी आखे गहरे समुद्र के समान हैं जिसमे घातक जीव जन्तु, भवर और डुबाने वाली अन्तर्धाराए भी बहती हैं। अगर आप सचेतनता से आगे नहीं बढ़ोगे तो आपकी नाव को घातक जीव-जन्तु डुबा देगे, या भवर फॅसा लेगा अथवा कोई भयकर अन्तर्धारा उसे अपनी चपेट मे ले लेगी। आपके कान, नासिका, जिह्वा, शरीर और चित्त सभी इसी प्रकार समुद्र के समान है।" इन शब्दो का स्मरण करके स्वास्ति का ज्ञान अनेक गुना बढ गया। उसकी छहो इद्रिया वास्तव मे गहरे समुद्र के समान हैं जिसमे उक्त सभी खतरे विद्यमान रहते है। राहुल की चेतावनी ठीक ही थी कि बुद्ध की शिक्षाओ के अनुसार सतत साधना परम आवश्यक है।

बुद्ध ने युवा भिक्खुओ को शिक्षा देते हुए कहा था, "भिक्खुओ, आपको प्रत्येक क्षण सतत् सचेतनावस्था मे रहना चाहिए और छहो इद्रियो को वश मे रखना चाहिए। यदि आपकी सचेतनावस्था मे तनिक भी ढील हुई तो आपके लिए मार (काम) के वशीभूत हो जाने का भयकर खतरा रहेगा।"

स्वास्ति सघ के श्रद्धावान और प्रतिभा-सम्पन्न अनेक नवभिक्खुओ से बहुत प्रेरणा प्राप्त करता था। एक बार चित्त नामक एक उपासक ने उसे अन्य अनेक भिक्खुओ के साथ अपने निवास पर भोजन करने के लिए आमत्रित

किया। इस दिन ही स्वास्ति जान पाया कि ये नव-प्रवृज्जित भिक्खु कितने प्रतिभा-सपन्न है। उपासक चित्त भी वुद्ध की शिक्षाओ के प्रति गहन श्रद्धा रखता था। उस दिन उसने दस वरिष्ठ भिक्खुओ तथा स्वास्ति और ईशदत्त को आमन्त्रित किया था। भोजन-ग्रहण कर लेने के बाद उपासक चित्त ने आभार मे नमन किया।

उसके वाद उसने प्रश्न किया, "आदरणीय वधुओ, मैने 'ब्रह्मजाल सूत्र' सुना है जिसमे वुद्ध ने समकालीन बासठ सप्रदायो के भ्रामक विचारो का वर्णन किया था। मैने अन्य सम्प्रदायो के सदस्यो द्वारा जीवन, मृत्यु और आत्मा सवधी प्रश्नो को भी सुना है। मान्यवर, इस प्रकार के विचार और प्रश्न किस कारण उपस्थित होते है ?"

चित्त ने अपना प्रश्न तीन बार दोहराया। इस पर भी किसी भिक्खु ने कोई उत्तर नहीं दिया। स्वास्ति को यह स्थिति अपमानजनक लगी। अकस्मात् ईशदत्त ने उठकर वरिष्ठ शिष्यो से इस प्रश्न का उत्तर देने की आज्ञा मागी।

"यदि तुम चाहो तो इस प्रश्न का उत्तर दे सकते हो।"

चित्त की ओर मुड़कर ईशदत्त ने कहा, "मान्यवर ये प्रश्न इसलिए उपस्थित होते है कि प्रश्नकर्ता आत्म-सत्ता की भ्रामक मान्यता से चिपके रहते हैं। यदि आत्मा की पृथक्-सत्ता का विचार त्याग दे, और अनात्म की स्थिति स्वीकार ले तो इन विचारो तथा प्रश्नो की आवश्यकता ही नहीं उठे।"

"सद्धर्म मार्ग के ज्ञान और अध्ययन के अभाव मे लोग सामान्यतः समझते हैं कि शरीर ही आत्मा है अथवा आत्मा ही शरीर है। इसी प्रकार आत्मा ही भावनाओ मे निवास करती है और भावनाओ मे ही आत्मा होती है। यही स्थिति अवधारणा, भाव-वोध और चेतना के विषय मे है। आत्म-सत्ता विपयक भ्रात विचारो से वे ग्रसित है। इसीलिए 'ब्रह्मजाल सूत्र' मे बासठ भ्रात धारणाओ का वर्णन किया गया है। उपासक चित्त, लगन से सत्य-पथ के अध्ययन ओर साधना के माध्यम से जव व्यक्ति आत्म-सत्ता विषयक गलत धारणा को निर्मल कर लेता है तो ये प्रश्न और विचार निर्मूल हो जाते है।"

युवा भिक्खु के उत्तर से प्रभावित हो चित्त ने पूछा, "मान्यवर, आप कहा के है ?"

"मै अवन्ति से आया हू।"

"मान्यवर, मने सुना है कि अवन्ति का ईशदत्त नामक युवक भिक्खु हो गया था जो बहुत योग्य और प्रतिभावान था। मैने उसका नाम ही सुना है, उसे देखा नहीं। क्या आप कभी उससे मिले है ?"

"हा, चित्त, मै उससे मिला हू।"

"तव क्या आप वता सकते है कि वह युवा भिक्खु इस समय कहा है ?"

ईशदत्त ने कोई उत्तर नहीं दिया।

चित्त ने अनुमान से ही कहा, "क्या आप ही भिक्खु ईशदत्त हैं ?"

"जी, हा।" ईशदत्त ने स्वीकार किया। चित्त प्रसन्नता से उछल पडा और कहा, "मेरा एक आम्र उद्यान है जो आनददायक स्थान है और मै वहा भोजन, वस्त्र, चिकित्सा तथा निवास आदि की पूरी व्यवस्था कर दूगा"

ईशदत्त ने कोई उत्तर नहीं दिया। भिक्खु चित्त का आभार व्यक्त करके चले आए किन्तु फिर ईशदत्त चित्त के यहा कभी नहीं गया। ईशदत्त को अपनी प्रशसा या उपहार कुछ भी लेना पसद नहीं था। यद्यपि स्वास्ति बहुत दिनो तक ईशदत्त से मिला नही, किन्तु उस तेजस्वी और विनम्र भिक्खु का चित्र उसके चित्त पर अकित रहा। उसने प्रतिज्ञा की कि वह भी उसके उदाहरण को जीवन मे अपनाएगा।

स्वास्ति को पता था कि जो युवा भिक्खु अन्य लोगो की खुशी और कल्याण के लिए तत्पर रहते हैं, और इसके लिए कृतसकल्प होकर समझदारी से कार्य करते है, उनमे बुद्ध कितना स्नेह करते है। बुद्ध ने स्वय कहा भी था कि वह भावी पीढ़ियो को सद्धर्म की शिक्षा देने मे सक्षम होने की दृष्टि से इन युवा भिक्खुओ पर कितना निर्भर करते है। स्वास्ति ने यह भी अनुभव किया कि व्यक्तिगत योग्यता-अयोग्यता की चिन्ता किए बिना बुद्ध सभी भिक्खुओ को कितनी लगन से शिक्षा देते है। कुछ भिक्खु औरो की अपेक्षा अधिक परेशानिया पैदा करते थे। एक भिक्खु छ· बार सघ छोड़कर चला गया तो उसे एक और प्रयास करने का अवसर देने की दृष्टि से पुनः भिक्खु वना लिया था। प्राणायाम की सोलह प्रक्रियाओ जैसे साधारण साधना-अभ्यास को भी स्मरण न रख पाने वाले भिक्खुओ को प्रेरणा देने मे भी बुद्ध ने कभी कमी नहीं की।

जेतवन मे मछालि नामक भिक्खु की कमजोरियो को बुद्ध जानते थे किन्तु भिक्खु को सुधरने का एक और अवसर देने की दृष्टि से वे उन त्रुटियो को नजरदाज कर देते थे। मछालि विहार के अनेक अनुशासनो को तोड़ता था। उसके अभद्र व्यवहार से परेशान होकर अनेक भिक्खु अधीर हो गए। इस सवको जानकर बुद्ध ने एक दिन समस्त सघ को सबोधित किया। "सघ के किसी एक व्यक्ति मे अनेक कमिया हो सकती है किन्तु उसमे कम-से-कम

श्रद्धा और प्रेम के कुछ बीज तो बचे ही रहते हैं। हमे ऐसे व्यक्ति के साथ इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए कि विश्वास और प्रेम के वे बीज सुरक्षित रहे और उनका पोषण हो सके। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति की एक आख को क्षति पहुच जाए तो उसका परिवार तथा मित्रगण प्रयास करते हैं कि उसकी दूसरी आख बचा सके ताकि उसका भविष्य अधकारमय न हो जाए। इसलिए भिक्खुओ अपने भाई के साथ ऐसा व्यवहार करो, जिससे उसके विश्वास और प्रेम के बीजो की सुरक्षा हो सके।"

बुद्ध की इस देशना के समय स्वास्ति उपस्थित था। वह बुद्ध के प्रेमपूर्ण व्यवहार से बहुत प्रभावित हुआ। यही स्थिति आनद की थी। बुद्ध कृपा-भाव एव सज्जनतापूर्ण व्यवहार करने वाले होने पर भी, अवसर आने पर, कठोर भी हो सकते थे। जिसकी सहायता बुद्ध नहीं कर सकते, उसका भविष्य निश्चय ही अधकारमय होता है। एक दिन स्वास्ति ने बुद्ध और घोड़ों को प्रशिक्षित करने वाले केशी नामक व्यक्ति का सक्षिप्त वार्तालाप सुना। बुद्ध ने केशी से पूछा, "क्या आप बताएगे कि आप घोडो को कैसे प्रशिक्षण देते हे ?"

केशी ने कहा, "प्रभु, घोड़े की मानसिकता अलग-अलग होती है। कुछ तो प्यार से बोलने मे ही प्रशिक्षण ले लेते है। कुछ को प्यार और मार से प्रशिक्षण दिया जाता है और कुछ ऐसे होते है, जिनको कठोर अनुशासन में (यानी हटरो से) ही प्रशिक्षित किया जा पाता है।" इस पर बुद्ध ने पूछा कि-"कुछ घोडे इस पर भी रास्ते मे न आए, तो क्या करते है ?"

"प्रभु, ऐसी स्थिति मे उस घोडे को मार देना पड़ता है क्योकि यदि वह अन्य घोड़ो के साथ रहा तो सभी घोडो को बिगाड देगा। प्रभु, मैं जानना चाहूगा कि आप अपने शिष्यो को कैसे शिक्षित करते हैं ?"

बुद्ध ने मुस्कराकर कहा, "वही करता हू जो आप करते है ?"

"जो भिक्खु, किसी भी विधि से शिक्षा प्राप्त न करे, तो उनका आप क्या करते हैं ?"

बुद्ध ने कहा, "वही करता हू जो आप करते हैं। मैं उसे मार देता हू।"

अश्व-प्रशिक्षक की आखे फटी की फटी रह गईं, "क्या, आप उसे मार देते है ? मैंने तो समझा था कि आप हिंसा के विरुद्ध है।"

बुद्ध ने स्पष्ट किया, "जो व्यक्ति प्यार से, प्यार और दड से अथवा कठोर अनुशासन मे भी न सुधरे, उसे हम सघ का भिक्खु नहीं बनाते। सघ मे रहकर सद्धर्म-साधना करने का अवसर न देना, जो हजार जन्मों में एक

वार प्राप्त होता है, तो क्या यह उसकी आध्यात्मिक मृत्यु नहीं है ? मुझे उस व्यक्ति पर भी दया आती है और अपने पर भी क्योकि मै उसे स्नेह करता हू। मैं कभी यह आशा नहीं छोड़ता कि एक न एक दिन वह साधना के लिए अपने हृदय-कपाट खोलेगा और हमारे पास आएगा।"

स्वास्ति अव गहराई से समझा कि बुद्ध की झिडकी मे भी स्नेह भरा होता है। स्वास्ति जानता था कि बुद्ध उसे कितना स्नेह करते है किन्तु वैसा उन्होने खुलकर कहा कभी नहीं। इसे जानने के लिए उसे बुद्ध की दृष्टि देखनी पड़ती थी।

एक रात बुद्ध के पास एक अभ्यागत आए और आनद ने स्वास्ति से उनके लिए चाय वनाने को कहा। अभ्यागत गर्वोन्नत योद्धा था। वह चमचमाती तलवार वाधे आया था और जेतवन के वाहर ही घोड़े से उतरकर उसने अपनी तलवार घोडे की काठी मे टाग दी थी। सारिपुत्त उसे बुद्ध की कुटिया तक ले गए। उस लम्वे तगडे अभ्यागत की दृष्टि मर्मभेदिनी थी। आनद ने वताया कि स्वास्ति, इनका नाम रोहिताश्व है।

जव स्वास्ति चाय लेकर बुद्ध की कुटिया मे घुसा तो देखा कि रोहिताश्व और सारिपुत्त नीचे आसनो पर बुद्ध के सामने वैठे हैं और आनद बुद्ध के पीछे खड़े हैं। स्वास्ति भी आनद के ही पास जा खड़ा हुआ। चाय पीकर, वहुत देर तक चुप रहने के वाद रोहिताश्व ने कहा, "प्रभु, क्या कोई लोक ऐसा हैं, जहा जन्म, जरा, रोग या मृत्यु न हो, जहा लोग मरते न हो? और यह लोक छोडकर उस लोक तक किस प्रकार जाया जा सकता है जहा मृत्यु होती ही न हो ?"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "ऐसा कोई साधन नही जिससे इस मृत्युलोक को छोड़ा जा सके, भले ही तुम प्रकाश की गति से ही क्यो न यात्रा करो।"

रोहिताश्व ने हाथ जोडकर कहा, "आपने सत्य कहा। मै जानता हू कि किसी साधन से इस मृत्युलोक को छोड़ा नहीं जा सकता, भले ही कोई कितनी ही तीव्रतम गति से यात्रा कर सके। अपने एक पिछले जन्म मे मुझे अपार आध्यात्मिक सिद्धि प्राप्त थी कि मै वायु मे बाण से भी अधिक तीव्र गति से उड़ सकता था। मैं एक छलाग लगाकर पूर्वी समुद्र तट से पश्चिमी समुद्र तट तक जा सकता था। मै जन्म, जरा, रोग और मृत्यु के लोक से भागकर ऐसे लोक मे जाने के लिए कृत-सकल्प था, जहा लोगो का जन्म और मृत्यु न होती हो। विना खाने-पीने और मल-मूत्र विसर्जन की चिन्ता किए विना, मै दिनोदिन भागता रहा। सौ वर्षों तक तीव्र गति से दौड़ता रहा

किन्तु कहीं नहीं पहुचा और आखिर एक दिन मरकर सड़क पर जा पडा। प्रभु, आपके वचन सर्वथा सत्य है। व्यक्ति किसी भी साधन से जन्म-मृत्यु के इस लोक से भागकर नहीं जा सकता।"

बुद्ध ने कहा, "लेकिन मै यह नहीं कहता कि व्यक्ति जन्म और मृत्यु के लोक से पार नहीं जा सकता। सुनो रोहिताश्व, तुम ऐसा कर सकते हो। मै तुम्हे वह मार्ग दिखाऊगा, जिससे ऐसा करना सभव है। तुम्हारी इस लम्वी-चौडी काया मे ही जन्म और मृत्यु की विद्यमानता है और इसी काया मे जन्म और मृत्यु के लोक से पार जाने के साधन भी विद्यमान हैं। तब तक साधना करो जब तक तुम अनित्यता, शून्यता और सब धर्मो की जन्म-मरण धर्मिता के दृष्टा न वन जाओ। तुम्हारे सामने ही जन्म और मृत्यु का लोक विसर्जित हो जाएगा और जन्महीन तथा मृत्युहीन लोक का उदय हो जाएगा। तुम समस्त दुःखो और भयो से मुक्त हो जाओगे। तुम्हे कहीं जाने की आवश्यकता नहीं, तुम्हे तो केवल अपने शरीर की मूल प्रकृति को गहनता से देखने-समझने की आवश्यकता है।"

बुद्ध की वाते सुनकर सारिपुत्त की आखे तारे की भाति जगमगा उठीं। योद्धा रोहिताश्व का मुख मडल भी प्रसन्नता से दमकने लगा। स्वास्ति गहनता से प्रभावित हुआ। बुद्ध की देशना सारयुक्त और अद्भुत है, इसे कौन माप सकता है। यह तो शाश्वत सगीत के समान है। स्वास्ति ने पूर्व की अपेक्षा उस दिन कहीं अधिक स्पष्टता से समझ लिया कि आत्म-मुक्ति की कुजी उसके अपने हाथ ही मे है।

अध्याय इकहत्तर

वीणा के तार कसने की कला

वर्षा-प्रवास के बाद चलकर बुद्ध सारनाथ के मृगदाय मे ठहरे जहा 36 वर्ष पूर्व उन्होने चार आर्य सत्यो का प्रतिपादन करते हुए पहली देशना करके धर्म-चक्र का प्रवर्तन किया था। यद्यपि यह कल जैसी बात ही लग रही थी किन्तु सारनाथ मे बडा परिवर्तन आ गया था। गगा के मैदानी क्षेत्रो मे धर्म का प्रसार हो गया था और धर्म-चक्र प्रवर्तन के स्मारक के रूप मे वहा भव्य स्तूप बन गया था और एक विहार भी बन चुका था जहा रहकर भिक्खु साधना किया करते थे। वहा धर्म-देशना करके और सघ समुदाय को प्रेरित कर बुद्ध वहा से गया गए।

वह उरुवेला मे रुके और सबोधि-वृक्ष के दर्शन किए जो और अधिक हरित होकर और भी आनददायी बन गया था। सारे वन मे बहुत ही कुटिया बन गई थीं। राजा बिम्बिसार उस स्थान पर स्तूप बनवाने की योजना बना रहे थे जहा बैठकर बुद्ध ने सबोधि प्राप्त की थी। गाव के बच्चो को देखने के लिए भी बुद्ध गए। इतने वर्षो के बाद भी उनकी दशा मे कोई अतर नहीं आया था। चरवाहा स्वास्ति अब सैतालीस साल का हो गया था और सघ का वरिष्ठ भिक्खु बन गया था। गाव के बच्चे बुद्ध के लिए पके पपीते लाए थे और हर बच्चा त्रिरत्नो–'बुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' का उच्चारण करता था।

गया से बुद्ध राजगृह पहुचे और वहा से गृद्धकूट शिखर पर चले गए। जहा उन्हे मान्य पूर्णा ने आदिवासी क्षेत्र मे धर्म-प्रचार का विवरण दिया। स्वर्णप्रान्त मे सद्धर्म की शरण मे आने वालो की सख्या बढ़कर पाच सौ हो गई थी।

वाद मे बुद्ध उस क्षेत्र के विभिन्न धर्म-केन्द्रो मे गए। एक रात जब वह ध्यान कर रहे थे तो उन्हे लगा कि कोई भिक्खु सूत्रो का उच्चारण कर रहा है किन्तु उसका स्वर थका-थका-सा निराशापूर्ण लगा। अगले दिन प्रात· आनद ने पता लगाकर वताया कि रात मे सोन नामक भिक्खु- सूत्र पाठ कर रहा था। इस भिक्खु को वर्षों पूर्व श्रावस्ती मे बुद्ध ने देखा था।

भिक्खु सोन कुलिकर्ण को अनेक वर्षों पूर्व मान्य महाकात्यायन ने प्रवृज्या दी थी और तभी से वह साधनारत था। सोन धनी परिवार का सस्कारवान एव प्रतिभासपन्न युवक था किन्तु था दुवला-पतला। उसे भिक्खु का कष्टसाध्य जीवनयापन करने मे परेशानिया हो रही थीं क्योकि उसे दिन मे एक बार भोजन प्राप्त होता और रात को वृक्षो के नीचे सोना पड़ता किन्तु सभी कष्ट सहकर भी वह साधनारत रहता। एक वर्ष पश्चात् उसके प्रशिक्षक श्रावस्ती मे उसे बुद्ध के पास ले गए थे।

बुद्ध ने उससे पूछा था, "सोन, आपका स्वास्थ्य ठीक है ? धर्म-साधना और भिक्षाटन मे कोई कठिनाई तो नहीं होती ?" उत्तर मे सोन ने कहा, "प्रभु, मै प्रसन्न हू और मुझे कोई कठिनाई नहीं हो रही।"

बुद्ध के निर्देशानुसार आनद ने सोन को उस रात बुद्ध की कुटिया मे लेटने की व्यवस्था कर दी। उस रात बुद्ध कुटिया के सामने ही सवेरे तीन वजे तक साधना करते रहे। सोन उस समय तक सोया नहीं। बुद्ध ने पूछा, "यदि नींद नहीं आती तो तुम किसी कविता (गाथा) को सस्वर क्यो नहीं पढते ?" सोन ने प्राणायाम विषयक सूत्र की गाथाए वोलनी आरभ कीं। उसकी वाणी कडक थी और सूत्र का एक शब्द नहीं भूला। बुद्ध ने उसकी वडी प्रशसा की।

सोन के सूत्र-पाठ से बुद्ध समझ गए कि उसने अत्यधिक परिश्रम किया है। बुद्ध ने उससे पूछा, "भिक्खु वनने से पूर्व तुम सगीतज्ञ थे और सोलह तारों वाली वीणा वजाने मे सिद्ध-हस्त थे। थे न ?"

सोन के 'हां' कहने पर बुद्ध ने पूछा, "वीणा का तार यदि ढीला हो अथवा अधिक कसा हो तो क्या वीणा से मधुर सुर निकल सकता है ?"

सोन ने कहा, "प्रभु, तार ढीला होगा तो वीणा वेसुरी होगी और अधिक कसा होगा तो तार टूट जाएगा। जव तार ठीक (सतुलित) कसे होगे तभी वह मधुर सुर दे सकती है।"

"ठीक कहा, सोन ! यदि कोई आलसी होगा तो वह साधना में प्रगति नहीं कर सकेगा। लेकिन यदि कोई साधनाभ्यास शरीर-पीडन की सीमा तक

करेगा तो वह थककर निराश होगा। तुम अपनी शरीर-शक्ति को समझते हो। अपने शरीर और चित्त को सीमाओ से अधिक प्रयोग मत करो, तभी तुम्हे साधना का पूर्ण लाभ मिल सकता है।" सोन ने बुद्ध की अन्तर्दृष्टि के प्रति आभार प्रकट करते हुए नमन किया।

एक दिन अपराह्न मे जीवक बुद्ध से मिलने आए। बुद्ध वेणुवन से वापस आ रहे थे तो जीवक ने पूछा कि क्या मै गृद्धकूट शिखर पर आपकी कुटिया तक चलू। जीवक बुद्ध को सीढ़िया चढ़ते हुए देखता रहा। बहत्तर वर्षीय बुद्ध अब भी पहले की भाति स्वस्थ एव ऊर्जावान थे। वह एक हाथ मे भिक्षा-पात्र लिए और दूसरे हाथ से अपना चीवर उठाए आराम से सीढ़िया चढ़ रहे थे। मान्य आनद भी उसी प्रकार चल रहे थे। जीवक ने बुद्ध से उनका भिक्षा-पात्र ले लिया। उसे देते हुए बोले, "जानते हो, तथागत इस शिखर तक हजारो बार चढ चुके है।"

शिखर पर बुद्ध जीवक के साथ एक चट्टान पर बैठ गए। जीवक ने बुद्ध के स्वास्थ्य का समाचार पूछकर बताया, "प्रभु मुझे यह बताना ही चाहिए कि आपके सघ मे जो कुछ घटित हो रहा है, वह राज्य की वर्तमान राजनीतिक स्थिति से सीधे सबधित है।" वैद्यराज ने बुद्ध को बताया कि देवदत्त आपके स्थान पर सघ का नेता बनना चाहता है। उसने अपने समर्थन मे अनेक भिक्खुओ को अपनी ओर मिला लिया है। मान्य कोकलिक उनके मुख्य सलाहकार हैं। मान्य देवदत्त बहुत प्रतिभावान और अच्छे वक्ता है। भिक्खु और उपासक दोनो ही उनका सम्मान करते है। उन्होने साफ-साफ कभी बुद्ध का विरोध नहीं किया किन्तु वे बुद्ध की वयोवृद्धता का उल्लेख अनेक बार कर चुके थे और शका व्यक्त की थी कि वह सघ का नेतृत्व कर भी पाएगे या नहीं। वे कह चुके थे कि बुद्ध की शिक्षाए आज के युवको के अनुरूप नहीं रह गई हैं। बहुत से धनी शिष्य देवदत्त के समर्थक हैं और राजकुमार अजातशत्रु भी देवदत्त का श्रद्धालु समर्थक है। उसने गयाशीर्ष पर्वत पर बहुत से धर्म-केन्द्र बनवा दिए हैं। राजकुमार देवदत्त के केन्द्रो मे भोजन की व्यवस्था प्रायः कर दिया करते हैं। जो श्रेष्ठि और राजनीतिज्ञ राजकुमार को प्रसन्न करना चाहते हैं, वे भी देवदत्त के धर्म-केन्द्रो को भोजन पहुचा दिया करते है और देवदत्त की धर्म-शिक्षाए सुनते है। तीन-चार सौ भिक्खु उनके साथ हो चुके है।"

जीवक ने बुद्ध से कहा, "मुझे इन सब बातो की चिन्ता नही है। चिन्ता का विषय तो यह है कि अजातशत्रु सिंहासन पर बैठने के लिए अधीर है। वास्तव मे मुझे आशका यह है कि देवदत्त ने राजकुमार अजातशत्रु के मस्तिष्क

मे कुछ खतरनाक विचार भर दिए हैं। यदि राजा विम्बिसार के साथ कुछ अनपेक्षित घटित हो जाता है तो उसमे सघ को भी उलझा लिया जाएगा। कृपया इधर ध्यान दीजिए।"

बुद्ध ने जीवक को इन सूचनाओ के लिए धन्यवाद दिया और उन्हे आश्वस्त किया कि वह सघ को दुर्भाग्यपूर्ण स्थितियो से बचाने के लिए कुछ न कुछ करेगे।

दस दिन वाद बुद्ध ने वेणुवन मे तीन हजार, शिष्यो के समक्ष देशना की। राजा विम्बिसार भी वहा उपस्थित थे। बुद्ध ने 'अर्हत' स्थिति की प्राप्ति के सुपरिणामो के पोपण के लिए पाच शक्तियो–विश्वास, ऊर्जा, सचेतनता, ध्यान और सत्य प्रज्ञा के विपय मे देशना की।

बुद्ध ने जैसे ही प्रवचन समाप्त किया, तुरत देवदत्त ने उठकर बुद्ध को नमन करने के वाद कहा, "प्रभुवर, आप वयोवृद्ध हो गए और आपका स्वास्थ्य भी पहले जैसा नहीं है। आपको पूर्ण विश्राम और जीवन के अतिम वर्षों मे उलझन भरी स्थितियो से अलग रहना चाहिए। सघ का मार्ग-दर्शन करना गुरुतर कार्य है। आप विश्राम लीजिए। मै भिक्खुओ का मार्ग-दर्शन करने को तैयार हू।"

बुद्ध ने देवदत्त की ओर देखकर कहा, "देवदत्त, आपकी चिन्ता के लिए धन्यवाद। तथागत मे सघ का नेतृत्व करने की शक्ति अभी हे और स्वास्थ्य पर्याप्त ठीक है।"

देवदत्त ने भिक्खुओ की ओर देखा तो तीन सौ भिक्खु हाथ जोड़कर खडे हो गए। देवदत्त ने बुद्ध से कहा, "वहुत से भिक्खु मेरे विचार से सहमत हैं। आप चिन्ता न करे, मुझमे सघ का नेतृत्व करने की क्षमता है। कृपया आपको भार मुक्त करने का अवसर मुझे प्रदान करे।"

बुद्ध ने कहा, "देवदत्त, अव अधिक कुछ न कहो। आपसे अधिक योग्य अन्य अनेक वरिष्ठ भिक्खु है। मैने उनसे भी सघ का नेतृत्व सभालने के लिए नहीं कहा है। आपमे अभी सघ का मार्ग-निर्देश करने की योग्यता नहीं है।" देवदत्त ने इमसे स्वय को घोर अपमानित अनुभव किया और वह क्रोध मे भरा बैठ गया।

अगले दिन बुद्ध ने आनद से कहा, "प्रभु, वधु देवदत्त के व्यवहार से मुझे बडा दुख हुआ। मुझे भय है कि वह भिक्खु सघ के समक्ष आपकी आलोचना करके प्रतिशोध लेगे। इमसे सघ मे फूट पड सकती है। आप देवदत्त से अलग मे मिल ले।"

बुद्ध ने कहा, "मैने राजा और सघ के समक्ष देवदत्त की कठोर आलोचना इसलिए की जिससे स्पष्ट कर दू कि मैने देवदत्त को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं किया है। अब वह जो भी कार्य करेगे, उसके उत्तरदायी वह स्वय होगे। आनद, यदि तुम समझते हो कि देवदत्त से बात करके कुछ हो सकता है, तो उनसे वात कर देखो।"

कुछ दिनो वाद जीवक बुद्ध से मिले। उन्होने बुद्ध को बताया कि मैने सुना है कि देवदत्त सघ मे भीपण फूट डालने का षड्यत्र कर रहा है किन्तु वह कैसे क्या करेगा, इसका मुझे कुछ पता नहीं।

अध्याय बहत्तर

मौन अवज्ञा

वेणुवन मे एक दिन बुद्ध की साप्ताहिक देशना हो रही थी जिसमे बडी सख्या मे श्रोता उपस्थित थे। श्रोताओ मे राजा विम्बिसार और राजकुमार अजातशत्रु भी थे। मान्य आनद ने देखा कि श्रोताओ मे विगत दो देशनाओ की अपेक्षा इस वार अन्य केन्द्रो के भिक्खु अधिक है। मान्य सारिपुत्त और मान्य महाकाश्यप के वीच मे मान्य देवदत्त भी वैठे हैं।

बुद्ध की देशना समाप्त होते ही मान्य देवदत्त उठ खड़े हुए और बुद्ध को नमन करते हुए वोले, "आप भिक्खुओ को इच्छा रहित सादगीपूर्ण जीवन विताने और नितात आवश्यक वस्तुओ के ही प्रयोग की शिक्षा देते हैं। मै पाच नए नियमो का सुझाव देता हू जिससे सादगीपूर्ण जीवन की हमारी प्रतिवद्धता और वढ़ सके।

"एक, भिक्खु सदैव वन मे रहे और गाव या नगर मे उन्हे सोने की अनुमति न हो।

"दो, भिक्खु भिक्षाटन करें और उपासको के वहा भोजन करने का निमत्रण कभी स्वीकार न करे।

"तीन, भिक्खु फटे-पुराने कपड़ो से अपने चीवर सिले और उपासको से चीवर वस्त्र उपहार स्वरूप स्वीकार न किया करे।

"चार, भिक्खु वृक्षो के नीचे सोये, कुटिया या भवनो मे न सोये।

"पाच, भिक्खुओ को केवल शाकाहारी भोजन ही करना चाहिए।

"प्रभु यदि भिक्खु इन पाच नियमो का पालन करेगे तो न्यूनतम इच्छाओ के साथ सादगी भरा जीवन व्यतीत करने मे सफल होगे।"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "देवदत्त, तथागत आपके इन नियमो के पालन की अनिवार्यता स्वीकार नहीं कर सकते। जो भिक्खु केवल वन मे ही रहना

चाहे, उन्हे इसकी अनुमति है। किन्तु अन्य भिक्खु कुटियाओ, विहार मे, गाव या नगर मे भी रह सकते है। जो भिक्खु केवल भिक्षाटन द्वारा ही भोजन करना चाहे, वे उपासको का निमत्रण अस्वीकार कर सकते हैं किन्तु अन्य लोगो को स्वतत्रता है कि वे उपासको के निमत्रण स्वीकार कर ले क्योकि इससे धर्म-शिक्षाओ पर परस्पर विचार-विमर्श का अवसर मिलता है। जो भिक्खु पुराने कपड़ो से चीवर सिलना चाहे, उसे ऐसा करने की स्वतत्रता है लेकिन अन्य लोग उपासको से उपहार मे चीवर ले सकते है, बशर्ते कि उनके पास तीन जोड़े वस्त्रो से अधिक न हो। जो भिक्खु वृक्षो के नीचे सोना चाहे, उनका ऐसा करने के लिए स्वागत है किन्तु यदि अन्य भिक्खु कुटिया या कक्षो मे सोना चाहे, तो उन्हे ऐसा करने का अधिकार है। जो भिक्खु केवल शाकाहारी भोजन करना चाहे, उनके ऐसा करने पर कोई आपत्ति नहीं। किन्तु अन्य भिक्खु सामिष भोजन भिक्षा मे स्वीकार कर सकते है, बशर्ते खास उन्हीं की खातिर जीव-हत्या न की गई हो। देवदत्त, वर्तमान व्यवस्था के अनुसार भिक्खुओ को जन-साधारण से सपर्क करने का अवसर प्राप्त होता है जिससे उन लोगो को सद्धर्म-मार्ग की शिक्षाए प्रसारित करने का अवसर मिल पाता है।"

मान्य देवदत्त ने पूछा, "तव आप ये नियम स्वीकार नहीं करते ?"

बुद्ध ने कहा, "देवदत्त, तथागत इन नियमो को स्वीकार नहीं करते।"

देवदत्त नमन करके वैठ गए। उनके चेहरे पर सतोषपूर्ण मुस्कान थी।

उस रात वेणुवन मे अपनी कुटिया मे विश्राम करते बुद्ध ने आनद से कहा, "तथागत देवदत्त के इरादो को समझते है। मै समझता हू कि शीघ्र ही सघ मे वड़ा विभाजन हो जाएगा।"

उसके वाद शीघ्र ही मान्य आनद देवदत्त से राजगृह मे मिले। देवदत्त ने वताया कि मैं अपना पृथक् सघ वना रहा हू। बुद्ध के सघ से अलग अनेक समारोहो का आयोजन किया जाएगा। गहरे खेदपूर्ण मन से आनद ने वुद्ध को देवदत्त के निर्णयो की सूचना दी। वेणुवन मे जो 'अपराध स्वीकार' समारोह हुआ, उसमे वहुत से भिक्खुओ को आनद ने अनुपस्थित पाया। उन्हे पता था कि ये भिक्खु देवदत्त के समारोह मे भाग ले रहे हैं।

यह समारोह समाप्त होने पर अनेक भिक्खु बुद्ध की कुटिया मे गए और कहा कि देवदत्त के पक्षधर अनेक भिक्खु हमसे मिलकर देवदत्त के पक्ष मे हमे ले जाने का प्रयास करते है। उनका कहना है कि देवदत्त के नियम अधिक कठोर हैं और इसका प्रमाण यही है कि आपने मान्य देवदत्त

के पाच नियमो को अस्वीकार कर दिया है। उनका कहना हे कि वणुवन विहार का जीवन सामान्य उपासको जैसा ही है। उनका कहना है कि आप सादगी की वाते तो करते हैं किन्तु भिक्खुओ के लिए कठोर नियम लागू करना नही चाहते। हम उनके तर्कों से प्रभावित नही हुए है। हमे आपकी वुद्धिमत्ता पर ही श्रद्धा है। किन्तु वहुत से युवा भिक्खु विशेषत. जिन्हे देवदत्त ने प्रवृज्जित किया है, पाच कटोर नियमो के प्रति आकृष्ट है। वे लोग सघ छोड़कर देवदत्त के साथ जा रहे हैं। हम आपको इस स्थिति मे परिचित कराने आये थे।

वुद्ध ने उत्तर दिया, "इस विषय मे अधिक मत सोचो। सवसे महत्त्वपूर्ण वात सद्धर्म की साधना करना और भिक्खु का पवित्रतापूर्ण जीवनयापन करना हे।"

कई दिनो वाद जीवक गृद्धकूट शिखर पर वुद्ध से मिलकर यह सूचना देने आए कि देवदत्त के अनुयायी भिक्खुओ की सख्या पाच सौ हो गई है जो गयाशीर्प मे निवास करते है। जीवक ने वुद्ध को राजधानी मे होने वाली गतिविधियो से भी परिचित कराया जिनमे देवदत्त की प्रमुख भूमिका हे। जीवक ने सुझाव दिया कि वुद्ध स्पप्ट घोपणा कर दे कि देवदत्त अव वुद्ध के सघ का सदस्य नहीं रहा।

मान्य देवदत्त द्वारा स्वतत्र सघ की स्थापना का समाचार वहुत शीघ्र फैल गया। भिक्खु जहा भी जाते थे, उनसे यही प्रश्न किया जाता था। मान्य सारिपुत्त ने उन्हे कह दिया कि वे यही उत्तर दिया करे, "जो वुरे वीज वोएगा, वह वुरे ही फल पाएगा। सघ का विभाजन सद्धर्म-शिक्षा का गभीरतम उल्लघन हे।"

अनेक भिक्खुओ से वातचीत करते हुए वुद्ध ने कहा कि जीवक ने सुझाव दिया हे कि वह इस वात की औपचारिक घोपणा कर दे कि देवदत्त वुद्ध के सघ के सदस्य नहीं रहे। सारिपुत्त ने जीवक के सुझाव पर विचार करके कहा, "प्रभु, हमने पहले प्रायः देवदत्त की योग्यता एव गुणो की सवके सामने प्रशसा की है। अव यदि हम उनकी निन्दा करे तो कैसा लगेगा ?"

वुद्ध ने कहा, "सारिपुत्त, यदि हम पहले प्रशसा करते थे तो वह सत्य वात थी ? और यदि अव निन्दा करेगे तो क्या वह वात भी सत्य न होगी?"

सारिपुत्त के 'हां' कहने पर वुद्ध ने कहा, "तव कोई चिन्ता नहीं। महत्त्वपूर्ण वात सत्य वोलना हे।"

कुछ दिनो वाद, भिक्खुओ ने लोगो के समक्ष घोपणा कर दी कि देवदत्त

को बुद्ध सघ मे निष्कासित कर दिया गया है और अब से मान्य देवदत्त के कार्यों के लिए सघ किसी प्रकार से उत्तरदायी नही होगा।

इस समस्त घटना-क्रम के बीच मान्य सारिपुत्त और मान्य मौद्गल्यायन अनपेक्षित रूप से चुप रहे। मान्य आनद ने उनके रुख को भापते हुए पूछा, "बधुओ, आपने मान्य देवदत्त के प्रसग पर अपने विचार व्यक्त नहीं किए। सभवत· आपकी कुछ अपनी योजनाए हैं ?" इस पर वे मुस्काए और मान्य मौद्गल्यायन ने कहा, "बुद्ध आनद, आप ठीक कहते है। हम बुद्ध और सघ की सेवा अपने ढग से करेगे।"

बहुत से लोग इसे ईर्ष्या या ओछी भावनाओ का प्रदर्शन मानने लगे। अन्य लोग मानते थे कि देवदत्त की निन्दा करने मे बुद्ध का कुछ गूढ कारण रहा होगा। उनकी बुद्ध और सघ के प्रति श्रद्धा मे कोई कमी नहीं आई।

एक दिन राजधानी के लोग यह सुनकर भौंचक्के रह गए कि राजा बिम्बिसार सिहासन त्याग रहे है और दस दिन बाद, पूर्णिमा के दिन राजकुमार अजातशत्रु का राज्याभिषेक होगा। बुद्ध को इस बात की चिन्ता हुई कि युवराज के राज्याभिषेक की सूचना राजा बिम्बिसार ने स्वय उन्हे क्यो नहीं दी क्योंकि राजा सभी प्रमुख निर्णय करने से पूर्व बुद्ध से परामर्श किया करते थे। बुद्ध की चिन्ता की पुष्टि उस दिन हो गई जब कुछ दिनो बाद जीवक उनसे मिलने आये।

दोनो टहलते-टहलते एक चट्टान पर जा बैठे तो जीवक ने बुद्ध को बताया कि राजकुमार अजातशत्रु ने राजा बिम्बिसार को घर मे बदी बना दिया है। रानी विदेही के अतिरिक्त कोई भी राजा के कक्ष मे नहीं जा सकता। राजा के दो विश्वस्त मत्रियो को भी बदी बना रखा गया है जिससे वे राज्याभिषेक रोकने का प्रयास न कर सके। मत्रियो के घर वालो को झूठे ही कह दिया गया है कि महत्त्वपूर्ण राजनीतिक समस्याओ को सुलझाने के लिए मत्री राजमहल मे ही रहेगे।

जीवक ने बताया कि उसे ये सूचनाए तब मिल सकीं जब रानी की चिकित्सा करने के लिए उन्हे बुलाया गया। रानी ने बताया कि एक मास पूर्व महल मे राजकुमार अजातशत्रु को देर रात गए राजा के कक्ष मे घुसने की चेष्टा करते समय रक्षको ने पकड लिया था। सदेहास्पद स्थिति के कारण राजकुमार की तलाशी ली गई तो उनके पास से छिपाकर लाया गया खड्ग निकला। रक्षक जब राजकुमार को राजा के कक्ष मे ले गए तो राजा ने पूछा, "अजातशत्रु, तुम राज-कक्ष मे खड्ग क्यो लाए थे।"

"पिताजी, मैं आपकी हत्या के इरादे से आया था।"

"किन्तु, तुम मुझे मारना क्यो चाहते थे।"

"मैं राजा वनना चाहता हू।"

"सिंहासन के लिए अपने पिता को क्यो मारना चाहते थे। यदि तुमने कहा भर होता तो मैं तुम्हारे पक्ष मे सिंहासन तुरन्त छोड़ देता।"

"मै नहीं समझता था कि आप ऐसा करेगे। स्पष्टतः मैंने भयकर भूल की है। इसके लिए मैं क्षमा-प्रार्थी हू।"

राजा ने प्रश्न किया कि "यह भावना तुम्हारे मन मे कैसे आई।" पहले तो अजातशत्रु चुप रहे किन्तु वार-वार पूछने के वाद स्वीकार किया कि यह विचार मान्य देवदत्त के दिमाग की उपज थी। आधी रात का समय होने पर भी राजा ने अपने दो मत्रियो को परामर्श के लिए बुला लिया। एक मत्री ने कहा कि राजा की हत्या का प्रयास करना तो गभीर अपराध है जिसके लिए मृत्युदड दिया जाना चाहिए, इसलिए अजातशत्रु और मान्य देवदत्त के सिर काट दिए जाने चाहिए। उन्होने तो सभी भिक्खुओ को भी मृत्युदड देने की माग की।

राजा ने इस पर असहमति व्यक्त करते हुए कहा, "अजातशत्रु तो मेरा पुत्र है। मै उसे मृत्युदड नहीं दे सकता। भिक्खुओ ने पहले ही स्पष्ट कर दिया है कि वे देवदत्त के कार्यों के प्रति उत्तरदायी नहीं है। बुद्ध की दूरदेशी प्रशसनीय है। मान्य देवदत्त को भी मैं मृत्युदण्ड देना नहीं चाहता क्योकि वह बुद्ध के चचेरे भाई है और अनेक वर्षों से आदरणीय भिक्खु रहे है।"

दूसरे मत्री ने कहा, "आपका करुणाभाव अप्रतिम है। आप गुरुदेव बुद्ध के सच्चे शिष्य है। किन्तु आप इस प्रश्न का हल कैसे करेगे।"

राजा ने कहा, "कल मैं घोषण कर दूगा कि मैं अपने पुत्र के पक्ष मे सिंहासन त्याग रहा हू। उसका राज्याभिषेक दस दिन वाद होगा। मैं अजातशत्रु और मान्य देवदत्त को क्षमा करता हू। सभव है, इस क्षमादान से उन्हे समझ आ जाए।"

दोनो मत्रियो ने और अजातशत्रु को प्रणाम किया। राजा ने रक्षको से यह घटना गोपनीय ही रखने का आदेश दिया। अगले दिन राज-घोषणा सुनकर मान्य देवदत्त शीघ्रता मे राजधानी पहुचे। वह राजकुमार से मिले। राजकुमार ने रानी से कहा कि मान्य देवदत्त राज्याभिषेक के आयोजन मे सहायता करने आए है। लेकिन मान्य देवदत्त से भेट के दो दिन वाद ही राजा और दोनो मत्रियो को वदी वना लिया गया। जीवक ने कहा, "प्रभु यही प्रार्थना करता

हू कि राज्याभिपेक के वाद, राजा और दोनो मत्रियो को मुक्त कर दिया जाएगा।"

अगले दिन राजकीय सदेशवाहक राज्याभिषेक मे भाग लेने हेतु बुद्ध और भिक्खुओ को आमंत्रित करने आया। सैनिक नगर की सज्जा कर रहे थे और मान्य देवदत्त अपने छः सौ भिक्खुओ सहित राज्याभिषेक मे भाग लेने की योजना बना रहे थे। बुद्ध ने सारिपुत्त को बुलाकर कहा, "मै राज्याभिषेक मे भाग नहीं लूगा और मै चाहूगा कि हमारा कोई भिक्खु भी वहा न जाए। हम इस क्रूर और अन्यायपूर्ण कृत्य को अपने सहयोग से गरिमा प्रदान करना नहीं चाहते।"

राज्याभिपेक मे बुद्ध और उनके भिक्खुओ की अनुपस्थिति से लोगो के मन मे प्रश्न उठे। शीघ्र ही सबको पता चल गया कि राजा बिम्बिसार और उनके मंत्रियो को बदी बना लिया गया था। लोगो मे नए राजा के प्रति मौन किन्तु दृढ अवज्ञा की भावना भर गई। यद्यपि मान्य देवदत्त स्वय को भिक्खुओ का नेता कहते थे किन्तु लोग देवदत्त समर्थक और बुद्ध समर्थक भिक्खुओ के व्यवहार का अन्तर समझने लगे थे। देवदत्त समर्थक भिक्खुओ को लोगो ने भिक्षा देना बद कर दिया था। देवदत्त का इस प्रकार विरोध करने का अर्थ एक प्रकार से नए शासक की निन्दा करना भी था।

राजा अजातशत्रु को जब लोगो की इस मौन अवज्ञा का पता चला तो वह क्रोध मे बौखला उठा किन्तु उसने बुद्ध या उनके सघ के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की। वह इतना तो समझदार था ही कि यदि उसने ऐसा कुछ किया तो जनता मे भयकर विरोध की लहर उठेगी और जिन पड़ोसी देशो मे बुद्ध को सम्मान प्राप्त है, वहा की जनता भी साथ हो जाएगी। उसे पता था कि कौशल के राजा प्रसेनजित को यह पता चला कि बुद्ध को बदी बना लिया गया है या उन्हे क्षति पहुचाई गई है तो वह आक्रमण कर सकते है। राजा अजातशत्रु ने आगे की स्थिति पर परामर्श करने के लिए देवदत्त को बुलवाया।

अध्याय तिहत्तर

भूखा मारने का षड्यंत्र

एक रात देर तक गृद्धकूट शिखर पर साधना करने के वाद वुद्ध ने आखे खोलीं तो पास के पेड के पीछे एक व्यक्ति अध-झाकता दिखा। वुद्ध ने उसे पास वुलाया। चादनी मे चलते हुए वह व्यक्ति सामने आया और वुद्ध के चरणो पर तलवार रखकर नमन किया।

वुद्ध ने पूछा कि "तुम कौन हो और यहा क्यो आये ?"

उस व्यक्ति ने कहा, "गुरुवर गौतम! मुझे आपकी हत्या करने का आदेश दिया गया था किन्तु मै वैसा कर नही पाया। मैने कम-से-कम दस बार दोनो हाथो से तलवार उठाई किन्तु मै एक कदम तक आगे न बढ़ पाया। मै आपकी हत्या न कर सका किन्तु मुझे डर है कि अव मेरे मालिक मुझे जीवित नहीं छोडेगे। जव आपने मुझे वुलाया, उस समय मैं यही निर्णय कर रहा था। कृपया मुझे नमन करने की अनुमति दीजिए।"

वुद्ध ने पूछा, "किसने तथागत की हत्या करने का आदेश दिया था ?"

"मै मालिक का नाम वताने की हिम्मत नही कर सकता।"

"अच्छा, वह नाम वताने की आवश्यकता नहीं। उन्होने तुमसे क्या करने को कहा था।"

"प्रभु, उन्होने पहाड पर चढने का रास्ता दिखाया और कहा कि काम पूरा करने के वाद दूसरे रास्ते मे आना।"

"तुम्हारी पत्नी और वच्चे हैं ?"

"नहीं गुरुदेव, मै अविवाहित हू। मेरी सिर्फ वृद्धी मा घर पर है।"

"तव तुम तुरन्त घर जाओ और आज रात ही अपनी मा को लेकर कौशल चले जाओ और वहा नई जिंदगी विताओ। जो रास्ता तुम्हारे मालिक ने वापस
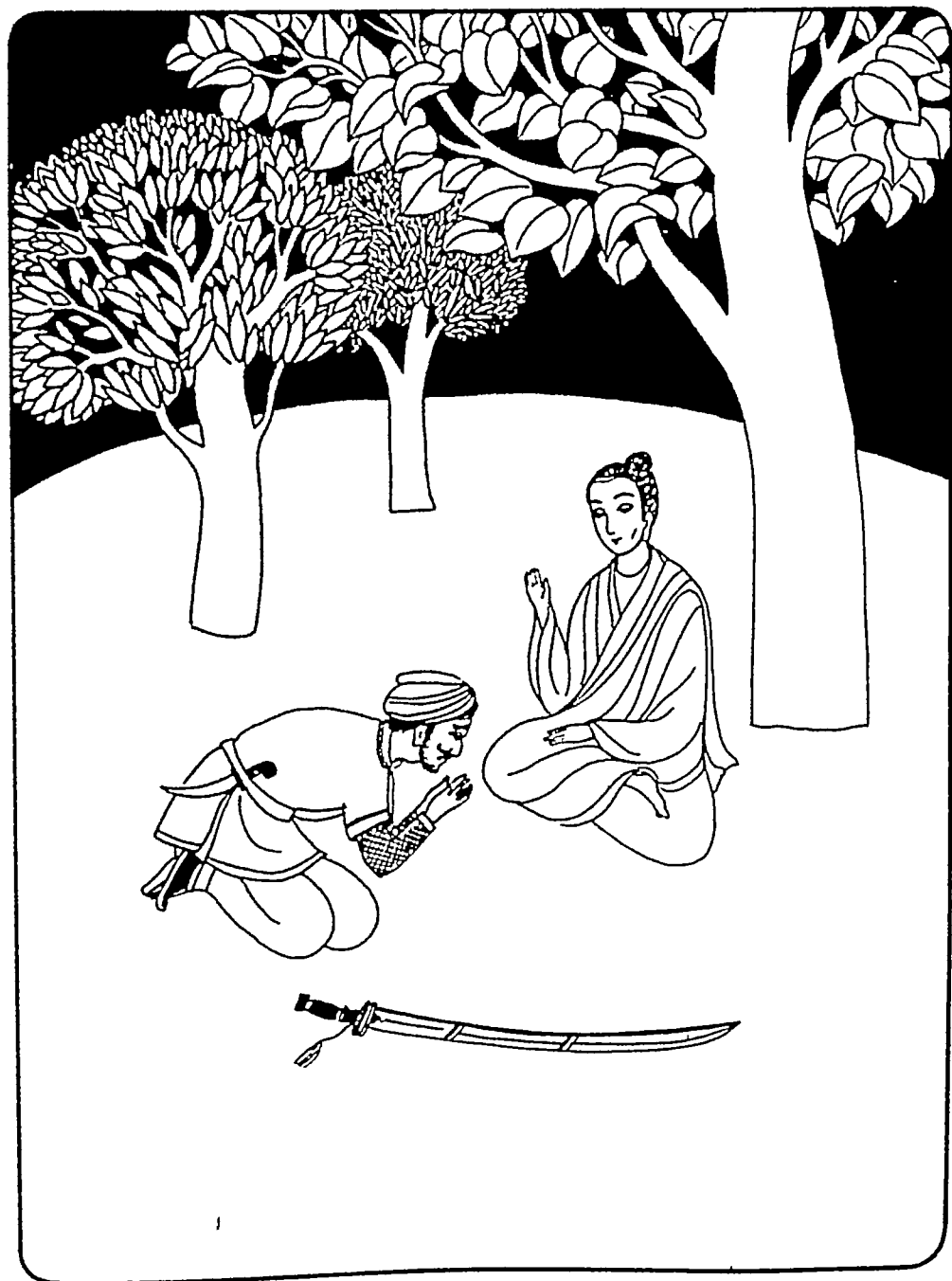
गौतम बुद्ध की हत्या हेतु भेजे गए हत्यारे का आत्मसमर्पण

आने के लिए तुम्हे वताया है, उस रास्ते से हरगिज मत जाना। उधर से गए तो मारे जाओगे। अव यहा से निकल जाओ।"

उस व्यक्ति ने नमन किया और तलवार वहीं छोड़कर जल्दी से निकल गया।

अगले दिन मान्य सारिपुत्त और मौद्गल्यायन कुछ वात करने आए और वोले, "हम समझते हैं कि अब समय आ गया है कि हम दूसरे पक्ष की ओर होकर आये। हमे अपने उन भाइयो की मदद करनी चाहिए जो अज्ञानवश दूसरे रास्ते मुड़ गए हैं। हम आपसे कुछ समय के लिए आज्ञा चाहते है।"

वुद्ध ने दोनो शिष्यो को देखकर कहा, "यदि जाना आवश्यक समझते हो तो जाओ किन्तु वहा रहकर अपने जीवन की रक्षा का ध्यान रखना।"

यह सुनकर सारिपुत्त का ध्यान उस तलवार की ओर गया जो वहा पडी हुई थी। सकेत से पूछने पर सारिपुत्त को वुद्ध ने वताया, "कल रात एक सैनिक तथागत की हत्या करने के लिए आया था किन्तु तथागत ने उसे दूसरा मार्ग-निर्देश दिया। यह तलवार यही रहने दो। जब जीवक आएगा तो इसको कहीं भेजने की व्यवस्था करूगा।"

मौद्गल्यायन ने सारिपुत्त की ओर देखकर कहा, "सभवत· यह ठीक होगा कि हम इन स्थितियो से वुद्ध को छोड़कर न जाए। आप क्या सोचते है, वधुवर।"

सारिपुत्त कुछ कहे, इससे पहले ही वुद्ध ने कहा, "तथागत किसी भी खतरे का सामना करने को तैयार हैं। आप लोग चिन्ता न करे।"

उस दिन अपराह्न मे कई भिक्खु वुद्ध से मिलने वेणुवन आए। घवराहट के मारे वे वोल भी न पा रहे थे। उनकी आखो से अश्रुधारा वह रही थी। वुद्ध ने पूछा, "क्या वात है ? आप लोग रो क्यो रहे हैं ?"

एक भिक्खु ने कहा, "रास्ते मे हमने मान्य सारिपुत्त और मौद्गल्यायन को जाते देखा। हमने पूछा तो उन्होने कहा कि हम गयाशीर्ष के दूसरे सघ मे जा रहे है। हम इससे इतने दुखी हुए कि हमे रुलाई आ गई। पाच सा से अधिक भिक्खु सघ छोडकर जा चुके है लेकिन इतने वरिष्ठ भिक्खु भी चले जाएगे, इसकी आशा नहीं थी।"

वुद्ध मुस्कराए और भिक्खुओ से कहा, "भिक्खुओ, दुखी मत होओ, तथागत को सारिपुत्त और मौद्गल्यायन पर भरोसा है। वे सघ से विश्वासघात नहीं करेंगे।" राहत पाकर भिक्खु वुद्ध के चरणो मे वैठ गए।

अगले दिन जीवक ने वुद्ध को आम्रवन मे भोजन के लिए आमंत्रित

किया। आनंद भी साथ थे। भोजन के उपरान्त जीवक ने उन्हे बताया कि रानी विदेही आपसे मिलना चाहती है, आप अनुमति देगे। बुद्ध समझ गए कि जीवक ने इस गुप्त भेट की व्यवस्था की है।

बुद्ध की अनुमति पाकर रानी ने आकर बुद्ध को नमन किया और सुबक उठीं। बुद्ध ने उन्हे सात्वना देकर कहा, "अव मुझे पूरी वात बताओ।"

रानी ने कहा, "प्रभु, राजा विम्विसार के प्राण सकट मे है। अजातशत्रु उनको भूखो मार डालने की योजना वना चुका है। वह मुझे भी राजा के लिए भोजन नहीं ले जाने देता। पहले जव राजा को अपने कक्ष मे बदी वनाया गया था तो मुझे प्रतिदिन उन्हे भोजन दे आने की अनुमति थी। एक दिन रक्षकों ने मुझे भीतर जाने से पूर्व भोजन की थाली मुझसे ले ली। यद्यपि मैं इस पर रोई भी किन्तु राजा ने कहा कि मुझे अपने पुत्र के कार्यों के प्रति किसी प्रकार की घृणा नही है। मै मर जाना पसद करूगा, किन्तु, देश मे गृह-युद्ध नहीं देखना चाहता। अगले दिन रानी कुछ पके चावलो का गोला अपने केशो मे छिपाकर ले गई और खाली थाली हाथ मे थी। रक्षको ने हाथ की खाली थाली छीन ली और रानी को जाने दिया। केशो मे छिपे चावल खिलाकर मैंने कुछ दिन काम चलाया। लेकिन जब अजातशत्रु ने देखा उसके पिता अव भी नहीं मरे है तो रानी की तलाशी कड़ाई से ली गई और केशो मे छिपे चावल पकडे गए। उस दिन से मै उनके लिए वह खाना भी न ले जा सकी।

"तीन दिन वाद रानी ने और तरीका अपनाया। वह दूध, शहद और आटे को मिलाकर लेप बना लेती और नहाने के वाद अपने शरीर पर लपेट लेती और वस्त्र पहनकर चली जाती। भीतर जाकर उस लेप को शरीर से खुरचती और राजा को भोजन कराती। इस प्रकार मैं दो दिनो से तो भोजन करा चुकी हू। किन्तु मुझे भय है कि उसकी यह तरकीव भी किसी दिन पकड़ी जाएगी और उसे राजा से मिलने से भी रोक दिया जाएगा।"

भूतपूर्व रानी पुनः सुवकने लगी। बुद्ध ने काफी देर तक विचार मग्न रहने के वाद राजा के स्वास्थ्य समाचार-शारीरिक और मानसिक-पूछे। रानी ने वताया कि "वह शरीर से कुछ दुर्वल तो हो गए है, किन्तु उनका आत्म-बल वढा है। वह घृणा या खेद के किसी भाव को मन मे नहीं लाते। बदी के रूप मे वह चलित ध्यान करते रहते हैं। उनके कक्ष मे जो खिड़की है, वह गृद्धकूट शिखर की ओर खुलती है, उसी के सामने बैठकर वह ध्यान-साधना करते हैं। वह वडी देर तक उस शिखर की ओर देखते रहते हैं।"

बुद्ध ने पूछा कि क्या रानी अपने भाई कौशल नरेश प्रसेनजित तक सदेश भिजवाने की अवस्था मे है। रानी के नकारात्मक उत्तर पर बुद्ध ने कहा कि मै एक भिक्खु को श्रावस्ती भेजूगा और राजा प्रसेनजित से कहूगा कि वह जो भी सहायता कर सकते है, करे।

रानी ने बुद्ध को धन्यवाद दिया किन्तु यह भी वताया कि जव अजातशत्रु गर्भ मे था तो राज-ज्योतिपी ने वताया कि वालक अपने पिता को हानि पहुचाएगा। गर्भावस्था मे ही रानी के मन मे प्रवल इच्छा हुई कि वह राजा की उगली को काट खाए और उनके रक्त का स्वाद चखे। वह अपनी इस इच्छा से भयभीत हो गई। वचपन से ही वह रक्त देखकर भयाक्रान्त हो जाती और मछली अथवा मुर्गा तक कटते नही देख सकती थी। उस दिन वह राजा के रक्त का स्वाद लेने की प्रवल इच्छा से आशकित हो गई। अपनी इच्छा दवाते-दवाते वह रो पडी। उसने शर्म के मारे अपने हाथो से मुह ढक लिया किन्तु राजा को वताया कुछ नहीं। उसके कुछ दिनो वाद एक दिन राजा विम्विसार जव मेव काट रहे थे तो अचानक उनकी उगली कट गई। वह अपने को रोक नहीं सकी और राजा की उगली पकडकर कुछ वूदे खून पी लिया। राजा रानी के इस व्यवहार से स्तभित तो रह गए, किन्तु उन्हे रोका नहीं। रक्त पीकर रानी फर्श पर गिरकर वेहोश हो गई। राजा ने उन्हे उठाकर पूछा कि आखिर मामला क्या है। तव रानी ने अपनी भयकर इच्छा वताई। उसने यह भी वताया कि मैंने अपनी इस इच्छा से कितना सघर्ष किया किन्तु अतत मैं हार गई। वह समझती है कि उसकी इस इच्छा के पीछे गर्भस्थ शिशु की मानसिकता जोर मार रही थी।

राज ज्योतिपियो ने सलाह दी कि या तो गर्भ गिरा दिया जाए या जन्मते ही वालक को मार दिया जाए। राजा विम्विसार और रानी कोई भी इस पर सहमत नहीं हुए। जव राजकुमार का जन्म हुआ तो इसका नाम 'अजातशत्रु' रखा गया अर्थात् जिसका कोई शत्रु न हो।

बुद्ध ने रानी को परामर्श दिया कि रानी राजा को दो या तीन दिन वाद मिला करे जिससे अजातशत्रु को सदेह न हो। जिस दिन जाए, उस दिन राजा के साथ अधिक समय विताए। रानी जो पोष्टिक लेप शरीर पर लगाकर ले जाए, उसे राजा थोडा-थोडा खाए जिससे उसमे से कुछ अगले दिनो के लिए वचाकर रख सके जव रानी-राजा के पास न जाए। रानी को ये सुझाव देकर बुद्ध ने जीवक से विदा ली और गृद्धकूट शिखर पर लौट आए।

अध्याय चौहत्तर

हस्तिनी की चिंघाड़

सारिपुत्त और मौद्गल्यायन एक महीने से अधिक समय के वाद गयासीस से वेणुवन लौट आए थे। भिक्खुओ ने उत्साहपूर्वक उनका स्वागत किया। कुछ दिनो मे चार तीन सौ से अधिक भिक्खु देवदत्त के संघ से वेणुवन वापस आ गए थे। वेणुवन के भिक्खुओ ने परमहर्ष के साथ गयासीस से आए भिक्खुओ का स्वागत किया। चार दिन वाद जव सारिपुत्त ने गिनती की तो उनकी संख्या तीन सौ अस्सी थी जिन्हे वह मौद्गल्यायन के साथ गृद्धकूट शिखर पर वुद्ध से मिलाने ले गए।

अपनी कुटिया के सामने खडे वुद्ध अपने दो वरिष्ट शिष्यो के साथ भिक्खुओ को आते देख रहे थे। गृद्धकूट शिखर निवासी अन्य भिक्खु भी अपनी कुटियाओ से निकलकर, वापस आए भिक्खुओ का स्वागत करने खडे थे। सारिपुत्त और मौद्गल्यायन अन्य भिक्खुओ को पीछे छोड, वुद्ध से एकान्त मे वात करने आ गए। उन्होने वुद्ध को प्रणाम किया। वुद्ध ने उन्हे वैठने को कहा तो सारिपुत्त ने वताया, "प्रभु, हम लगभग चार सौ भिक्खुओ को लौटा लाए है।"

वुद्ध ने कहा, "यह तुम लोगो ने अच्छा किया। किन्तु यह तो वताओ कि आप लोग उनकी आखे कैसे खोल पाने मे समर्थ हुए ?"

मान्य मोद्गल्यायन ने वताया, "प्रभु, जव हम वहा पहुचे तो वधु देवदत्त भोजन करके निवृत्त हुए थे और धर्म-शिक्षा देने की तैयारी कर रहे थे। वह वहुत कुछ वुद्ध की नकल कर रहे थे। जव उन्होने हमे आते देखा तो वह वहुत प्रसन्न हुए और उन्होने सारिपुत्त को व्यास पीठ पर अपने पास ही वैठने के लिए आमत्रित किया किन्तु सारिपुत्त भिक्खुओ के पास ही वैठ गये। मै दूसरी तरफ वैठ गया। देवदत्त ने कहा, 'आज मान्य सारिपुत्त और

मान्य मौद्गल्यायन हमारे साथ आ गए है। ये दोनो ही हमारे घनिष्ठ मित्र थे। मैं मान्य सारिपुत्त को आमत्रित करता हू कि आज की धर्मदेशना वही करे।'

"देवदत्त ने सारिपुत्त की ओर मुड़कर हाथ जोडे। मेरे बधु ने यह आमत्रण स्वीकार कर लिया। सारिपुत्त ने चार आर्य सत्यो का विश्लेषण करते हुए बहुत सुदर भाषण किया। समस्त भिक्खु मत्र-मुग्ध हुए उनका भाषण सुनते रहे। किन्तु मैंने देखा कि देवदत्त की आखे नींद से भरी हुई थीं। अपनी हाल की गतिविधियो से वे बहुत थक गए थे और धर्म-शिक्षा के चलते-चलते वह गहरी नींद सो गए।

"हम लोग गयाशीर्ष पर एक मास से अधिक समय तक रहे और वहा की प्रत्येक गतिविधि मे भाग लिया। हर तीसरे दिन मान्य सारिपुत्त धर्म-देशना करते। उन्होने पूरे मनोयोग के साथ भिक्खुओ को धर्म-शिक्षा दी। एक दिन मैने देखा कि देवदत्त का मुख्य परामर्शदाता भिक्खु कोकलित देवदत्त के कान मे कुछ फुसफुसा रहा है किन्तु देवदत्त ने उसकी बातो की परवाह नहीं की। मै समझता हू कि कोकलित उसे चेतावनी दे रहा था कि हम लोगो पर भरोसा न किया जाए। किन्तु देवदत्त इस बात से प्रसन्न था कि सारिपुत्त सरीखा सुयोग्य व्यक्ति धर्म-देशना के लिए सुलभ हो गया था।

"एक दिन सचेतनता के चार चरणो पर देशना करते हुए बधु सारिपुत्त ने कहा, 'आज अपराह्न मे मेरा बधु और मै वापस बुद्ध के पास उनके सघ मे चले जाएगे। प्रिय बधुओ, पूर्णत. सम्बुद्ध एक ही गुरु हैं और वह हैं बुद्ध। उन्हीं ने सघ की स्थापना की थी और वही हमारी प्रेरणा के स्रोत है। यदि आप उनके पास जाना चाहेगे तो वहा आपका उत्साहपूर्वक स्वागत होगा। बधुओ, सघ के विभाजन से अधिक कष्टप्रद बात कोई नहीं है। मैंने अपने जीवन मे एक ही सच्चा गुरु पाया है और वह गुरु बुद्ध देव हैं। हम तो आज चले जाएगे किन्तु आपमे से जो बधु बुद्ध के पास आने का निर्णय करे तो कृपया वेणुवन चले आइए। हम आपको वहीं मिलेगे और बुद्ध के दर्शन कराने ले चलेगे।'

"उस दिन देवदत्त किसी कार्य से राजधानी गया हुआ था किन्तु आरभ से ही हम पर शका करने वाला कोकलित उठकर विरोध करने लगा। उसने अनर्गल बाते भी कहीं, किन्तु हमने उन्हे अन-सुना करके अपना भिक्षा-पात्र और अतिरिक्त चीवर उठाया और गयाशीर्ष से वेणुवन चले आए। कुछ दिन बाद गयाशीर्ष से तीन सौ अस्सी भिक्खु भी वेणुवन आ गए।"

मान्य सारिपुत्त ने पूछा कि "क्या इन भिक्खुओ को पुन. प्रवृज्या दिलाई जाए। यदि आवश्यक समझे तो इन्हे पुनः पवृज्जित करके ही आपके समक्ष लाया जाए ?"

बुद्ध ने कहा "सारिपुत्त इनकी आवश्यकता नहीं है। यदि सघ के समक्ष ये अपना दोष स्वीकार कर लेते है, तो वही पर्याप्त है।"

दोनो वरिष्ठ शिष्यो ने बुद्ध को नमन किया और प्रतीक्षारत भिक्खुओ के पास चले गए।

अगले कुछ दिनो मे पैंतीस भिक्खु गयाशीर्ष से और आ गए। मान्य सारिपुत्त ने 'दोष-स्वीकार' समारोह का आयोजन करके बुद्ध से उन्हे मिलाने ले गए। गयाशीर्ष मे आए पैंतीस भिक्खुओ से मान्य आनद ने बातचीत की और वहा के हाल-चाल पूछे। उन भिक्खुओ ने बताया कि मान्य देवदत्त जब राजगृह से लौटे और उन्हे पता चला कि चार सौ शिष्य उन्हे छोडकर बुद्ध के पास लौट गए है तो क्रोध के मारे उनका चेहरा तमतमा गया और कई दिनो तक किसी से बात नहीं की।

आनद ने पूछा, "बंधु सारिपुत्त और मौद्‌गल्यायन ने तुमसे क्या कहा जिससे तुम लोग वापस बुद्ध के पास चले आये ?"

एक भिक्खु ने बताया, "इन्होंने मान्य देवदत्त या गयाशीर्ष सघ की आलोचना मे एक शब्द भी नहीं कहा। इन्होने तो पूर्ण मनोयोग से धर्म-शिक्षा ही दी। हम लोगो मे से अधिकाश लोगो ने दो-तीन वर्ष पूर्व ही प्रवृज्या ली थी और साधना-मार्ग की स्थिरता और गहनता भी हममे नहीं थी। जब हमने मान्य सारिपुत्त की देशना सुनी और मान्य मौद्‌गल्यायन को साधना की व्यावहारिक शिक्षा देते देखा तो हमने समझा कि बुद्ध देव की शिक्षाए कितनी उत्तम और सूक्ष्म है। मान्य सारिपुत्त और मौद्‌गल्यायन सरीखे तेजस्वी और ज्ञान सम्पन्न बधुओ की उपस्थिति से हमे ऐसा लगा जैसे बुद्ध स्वय हमारे साथ हो। हमने अनुभव किया कि मान्य देवदत्त बड़ी कुशलता से देशना करते हैं किन्तु वह इन देनो मान्य बधुओ की तुलना मे कहीं नहीं ठहरते। जब मान्य सारिपुत्त और मौद्‌गल्यायन चले आए तो हम लोगो ने परस्पर विचार किया और बुद्ध की शरण मे लौट आने का निश्चय किया।"

आनद ने पूछा, "जब आप लोग चले आए तो भिक्खु कोकलित ने क्या किया ?"

"वह बेहद क्रुद्ध हुए और हमे अपशब्द कहे जिससे हमारा वहा से चले आने का निर्णय और भी पक्का हो गया।"

एक दिन अपराह्न मे बुद्ध पहाड़ की ढलान पर खड़े सायकालीन आकाश का सौन्दर्य निरख रहे थे तो नीचे से आवाज आई, "देखना, प्रभु, एक बडा पत्थर लुढककर आपके ऊपर गिरने वाला है।"

मुडकर बुद्ध ने देखा कि एक खासा बड़ा पत्थर उनकी ओर लुढ़कता आ रहा है। वहा से हट पाना भी कठिन था क्योकि रास्ते मे नुकीली चट्टानो का मार्ग था। सौभाग्य से वह ढोका बुद्ध तक पहुचे, इससे पहले ही पहाड की दो चट्टानो के बीच अटक गया लेकिन उसका एक भाग टूटकर बुद्ध के पर पर गिरा जिससे पैर खून-खच्चर हो गया और उनका चीवर रक्त मे सन गया। ऊपर देखा तो बुद्ध ने पाया कि पहाड़ी की चोटी पर कोई व्यक्ति तेजी से भाग रहा है। नीचे से भिक्खु भी दौड़े आए और सारा दृश्य देखकर एक भिक्खु ने कहा, "निश्चय ही यह देवदत्त का षड्यत्र होगा।" भिक्खुओ ने टोलिया बनाकर बुद्ध की रक्षा के लिए पहरेदारी की योजना बनाई। किन्तु बुद्ध ने कहा, "तथागत को पहरेदारी या सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है। आप अपनी कुटियाओ मे जाइए। आनद, उपासक चुड को भेजकर जीवक को बुलावा दो।"

समाचार मिलते ही जीवक तुरन्त आ गए और बुद्ध को पालकी मे बैठाकर आम्रवन ले आए। राजधानी के लोगो को पता चला कि चद दिनो के भीतर ही बुद्ध के प्राण लेने की दो चेष्टाए की गईं। इससे लोगो को आघात लगा और मन मे अमर्ष जागा। इतना ही नहीं, उन्होने इसी बीच राजा बिम्बिसार की मृत्यु की भी घोषणा सुनी। अज्ञात सूत्रो से जनता को ज्ञात हो गया था कि राजा किस प्रकार बदी अवस्था मे स्वर्गवासी हुए। जनता के हृदय मे आक्रोश भर उठा। अब वह नैतिक प्रतिरोध के प्रतीक रूप मे गृद्धकूट शिखर पर विराजे बुद्ध की ओर ही देख रही थी। जनता राजा के निधन से जितनी दुखी थी, उतनी ही बुद्ध के प्रति उनकी श्रद्धा बढती जा रही थी। यद्यपि बुद्ध इस समस्त घटनाक्रम पर मौन ही रहे किन्तु उनके मौन को जनता भली-भांति समझ रही थी।

मृत्यु के समय राजा बिम्बिसार की आयु सडसठ वर्ष की थी। वह बुद्ध से आयु मे पाच वर्ष छोटे थे। उन्होने इकत्तीस वर्ष की आयु मे 'बुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' के त्रिरत्नो का उच्चारण किया था। पन्द्रह वर्ष की आयु मे वे सिंहासना- रूढ हुए थे और बावन वर्षो तक शासन किया था। अग्नि-काड मे नष्ट हुई राजधानी राजगृह का उन्हीं ने पुनर्निर्माण कराया था। उनके शासन काल मे अग से हुए युद्ध

के अतिरिक्त, शाति ही बनी रही। राजा बिम्बिसार पडोसी राज्यो के साथ मधुर सबध बनाए रखने का महत्त्व समझते थे इसीलिए कौशल की राजकुमारी कौशला देवी को रानी बना लिया था और मद्र और लिच्छिवि वशो की राजकुमारियो से विवाह कर लिया था ओर अपनी बहन का विवाह कौशल के राजा से कर दिया था। उन्होने अपने राजकीय उद्यान मे स्तूप बनवाया था जिसमे बुद्ध के बाल और हाथ की उगलियो के नाखून रखे थे। इसकी पूजा-अर्चना के लिए उन्होने श्रीमती नामक एक महिला को नियुक्त कर दिया था जो वहा पेड़-पौधे लगाकर सफाई रखती थी।

बुद्ध पर पत्थर का बड़ा ढोका गिराने के प्रयास के दस दिन बाद ही जब बुद्ध और भिक्खु राजधानी मे भिक्षाटन कर रहे थे तो मान्य आनद ने देखा कि एक हाथी क्रोधित होकर उनकी ओर बढ रहा है। नलगिरि नामक यह हाथी बहुत बिगडैल था। आनद की समझ मे नहीं आया कि हस्तिसाल के प्रबधक ने इसे वहा से निकलने कैसे दिया। भयभीत लोग इधर-उधर भागने लगे। हाथी सूड उठाए सीधा बुद्ध की ओर आ रहा था। आनद ने बुद्ध को बाह पकड़ कर सुरक्षित स्थान की ओर ले जाना चाहा किन्तु बुद्ध वहा से हटे नहीं और शात भाव से निश्चिन्त खड़े रहे। जनता के लोग बुद्ध मे चिल्लाकर बचने के लिए कहने लगे। आनद सास रोके झपटकर बुद्ध और हाथी के बीच आ गया। उसी समय बुद्ध ने हस्तिनी की चिघाड़ मुह से निकाली। यह रानी हथिनी की आवाज थी जिसके साथ बुद्ध ने रक्षितवन मे मित्रता कर ली थी।

नलगिरि उस समय बुद्ध से कुछ गज ही दूर था जब उसने रानी हथिनी की चिंघाड़ सुनी। उसे सुनते ही वह रुक गया। बुद्ध के सामने चारो पैरो से बैठकर उसने सिर नीचे लगा लिया मानो वह उन्हे नमन कर रहा हो। बुद्ध ने एक हाथ से उसकी सूड़ पकड़ी और दूसरे से सिर थपथपाया और आज्ञाकारी हाथी की भाति उसे राजकीय हस्तिशाला ले गए।

लोगो ने प्रसन्नता से तालिया बजाईं। आनद मुस्कराने लगा। उसे उन युवा वर्षों का स्मरण हो आया जब सिद्धार्थ धनुर्विद्या, भारोत्तोलन, खड्ग-सचालन और घुड़दौड़, सभी मे कुशल एव अग्रणी थे। आज बुद्ध ने बिगड़ैल हाथी को ऐसे सभाल लिया, मानो वे पुराने मित्र हो। हस्तिशाला जाकर बुद्ध ने प्रबधक की ओर कठोर दृष्टि से देखा किन्तु करुणापूर्ण स्वर मे कहा, "तथागत को यह जानने की आवश्यकता नही कि इस हाथी को किसके कहने पर छोड़ा गया किन्तु तुम्हे अपने इस गलत काम के भयकर परिणाम से अवगत
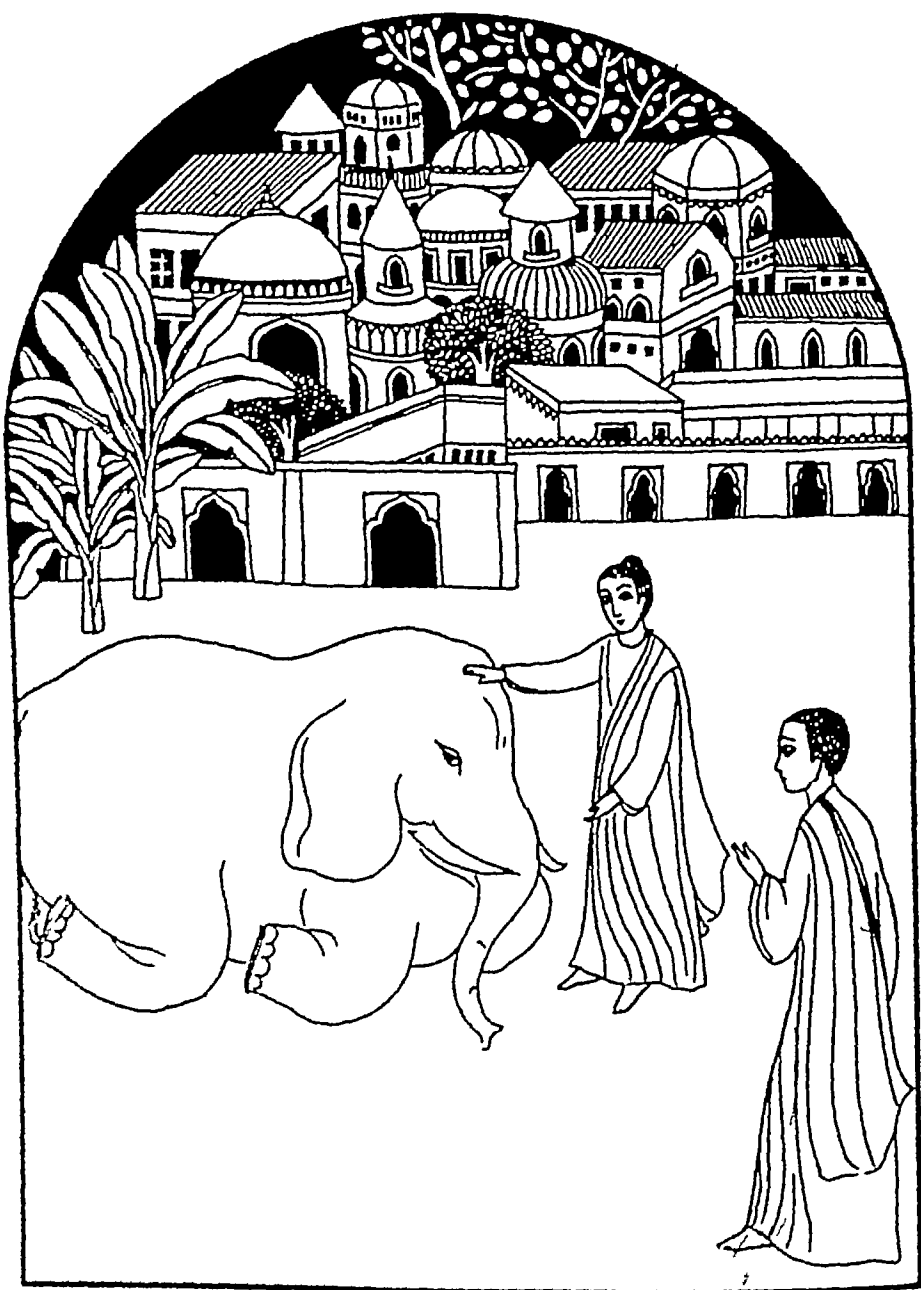
विगड़ैल हाथी नलगिरी के मस्तक पर हाथ फेरते हुए बुद्ध

होना चाहिए। इससे दर्जनों या सैकड़ों लोग मारे जा सकते थे। भविष्य मे कभी ऐसा मत होने देना।" पद्माकर ने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। बुद्ध ने उन्हें उठाया और बाद में भिक्षुओं के पास आ गए।

बुद्ध और उनके सभी भिक्षु-बंधु चार [illegible]-राजा के शव-सस्कार मे सम्मिलित हुए। अपार जन-समूह अपने दिवंगत राजा को श्रद्धांजलि अर्पित करने उमड़ पड़ा था। उन्हें अपने राजा के देहांत से बहुत दुख था। शव-सस्कार के बाद बुद्ध ने आम्रवन मे जीवक के साथ रात्रि-विश्राम किया। वैद्यराज ने बताया कि भगवन्, सभी किसी को अंतिम महीने राजा से एक बार भी नहीं मिलने दिया गया। राजा मृत्यु के समय सर्वथा अकेले थे। वह उसी खिड़की के सामने पड़े थे और अंतिम सांस होते समय तक गृद्धकूट शिखर की ओर ही राजा की दृष्टि लगी हुई थी।

राजा बिम्बिसार के शव-सस्कार के बाद जीवक बिम्बिसार के पुत्र राजकुमार अभयराज और उसकी पत्नी पद्मावती को बुद्ध के दर्शनार्थ लाए। राजकुमार ने प्रार्थना की कि उसको भिक्षु बनने के लिए त्रिरत्नो के उच्चारण की अनुमति दी जाए। उसने बुद्ध से कहा कि अपने पिता की मृत्यु के बाद धन या यश के जीवन के प्रति उसके मन मे तनिक भी उत्साह नही रह गया है। उसने बुद्ध की अनेक बार देशना सुनी थी और अब चित्त सद्धर्म-मार्ग की ओर आकृष्ट हो गया है। उसे अब भिक्खु की शातिपूर्ण और द्वन्द्व रहित जीवन-यापन से अधिक की इच्छा नही है। बुद्ध ने राजकुमार अभयराज को संघ का भिक्खु बना लिया।

अध्याय पचहत्तर

प्रसन्नता के अश्रु

दस दिनो बाद बुद्ध ने चीवर धारण किया और भिक्षा-पात्र लेकर राजगृह से चल पडे। वह गगा के पार जाकर उत्तर की ओर चल दिए। मार्ग मे कूटागार विहार देखते हुए वह श्रावस्ती की ओर बढ़े। वर्षा ऋतु आने वाली थी इसलिए वर्षा-प्रवास हेतु उन्हे जेतवन पहुचना था। मान्य आनद, सारिपुत्त, मोद्‌गल्यायन और तीन सौ भिक्खु उनके साथ थे।

श्रावस्ती पहुचकर बुद्ध सीधे जेतवन पहुचे। बहुत से भिक्खु और भिक्खुनिया उनके आगमन की प्रतीक्षा मे थे। उन्होने मगध की घटनाओ के समाचार सुने थे और बुद्ध को स्वस्थ सुरक्षित देखकर चैन की सास ली। भिक्खुनियो की नेता भिक्खुनी क्षेमा भी उपस्थित थी।

बुद्ध के आगमन की सूचना पाते ही राजा प्रसेनजित बुद्ध से मिलने आए। उन्होने बुद्ध से राजगृह के समाचार पूछे। बुद्ध ने सभी बाते उन्हे बताई। राजा प्रसेनजित की बहन रानी विदेही से हुई भेट की बात भी बताते हुए बुद्ध ने कहा कि वह प्रत्यक्षत तो शात दिखती है किन्तु उसका हृदय दु.खो से भरा है। राजा प्रसेनजित ने बुद्ध से कहा कि मैने एक प्रतिनिधिदल राजगृह भेजकर अजातशत्रु से राजा बिम्बिसार को बन्दी बनाये जाने की स्थिति स्पष्ट करने को कहा है। एक महीने के बाद भी उनकी ओर से कोई उत्तर नही आया है। राजा प्रसेनजित ने एक और सदेश भेजकर कहा है कि यदि नए राजा उचित समझे तो श्रावस्ती पधारे और स्थितियो की सही जानकारी प्रदान करे। मगध के प्रति अपनी अप्रसन्नता प्रकट करने के लिए मैने वह क्षेत्र वापस अपने राज्य मे मिला लिया है जो बहन के विवाह के उपहारस्वरूप राजा बिम्बिसार को भेट किया था यह भूमि काशी राज्य मे वाराणसी के समीप थी।

वर्षा-प्रवास का पहला दिन आरभ हो गया था। सभी विहारो तथा धर्म-केन्द्रो मे भिक्खु एवं भिक्खुनियां एकत्र थीं। जेतवन मे हर दस दिन बाद बुद्ध धर्म-देशना करते थे। बुद्ध की पहली देशना हर्षोत्फुल्लता विषय पर थी। उन्होने सघ के समक्ष कहा कि प्रसन्नता वास्तविक होती है और दैनदिनी जीवन विताते हुए भी इसे प्राप्त किया जा सकता है। पहली बात तो यह है कि यह प्रसन्नता ऐन्द्रिक इच्छाओ की पूर्ति से प्राप्त नहीं हो सकती क्योकि ऐन्द्रिक सुख आभास मात्र है। सत्य तो यह है कि ये सुख भविष्य के दु:खो का कारण वनते है। यह सुख वैसा ही है जैसे कोई कोढ़ी अपने कुष्ट-गलित अग को तीव्र अग्निशिखाओ से तपाये। ऐन्द्रिक सुख अग्नि-कुड के समान है जिससे रोगियो को तो क्षणिक राहत मिलती है किन्तु स्वस्थ व्यक्ति उसके पास तक नहीं जाता।

वुद्ध ने वताया कि सहज एव मुक्त भाव से जीवन व्यतीत करने और जीवन की अद्‌भुतताओ की पूर्ण अनुभूति ही सच्ची प्रफुल्लता का स्रोत है। राग-द्वेष से मुक्त होकर, वर्तमान क्षण मे जो घटित हो रहा है, उसके प्रति सचेत रहना ही प्रफुल्लता है। प्रफुल्ल व्यक्ति ही वर्तमान क्षण की अद्‌भुतताओ—शीतल मद पवन, प्रभाती आकाश, सुनहरे फूल, वेणु वृक्षो के लहराने या वच्चे की मुस्कान—का आनद उठा सकता है। प्रफुल्ल व्यक्ति इनके रागो मे पड़े विना, इनका आनद उठा पाता है। सभी धर्मों की अनित्यता और पृथक् अस्तित्वहीनता का ज्ञान रखने वाला व्यक्ति ऐसे सुखो मे उलझता नहीं है। प्रफुल्ल व्यक्ति सभी चिन्ताओ और भयो से मुक्त होकर सहज जीवन जी सकता है। वह जानता है कि जो फूल आज खिला है, वह तो एक-न-एक दिन मुरझाने वाला ही है, इसलिए फूल के मुरझाने पर दुखी नहीं होता। प्रफुल्ल व्यक्ति सभी धर्मों के जन्मने और मरने की प्रकृति को जानता है। उसकी प्रफुल्लता वास्तविक होती है और वह अपनी मृत्यु के विपय मे भी चिन्ता या भय नहीं करता।

वुद्ध ने सघ से कहा कि कुछ लोगो की धारणा है कि अगले जन्म मे सुखी रहने के लिए वर्तमान जीवन मे कष्ट भोगना आवश्यक है। वे वहुत से त्याग करते हैं और शरीर एव चित्त के अनेक दुख यह सोचकर उठाते है कि भविष्य मे अर्थात् अगले जन्म मे सुख प्राप्त कर सकेगे। किन्तु, जीवन तो वर्तमान क्षणो मे जिया जाता है। उस प्रकार के त्याग आदि वर्तमान जीवन को व्यर्थ बनाते है। कुछ लोगो का विश्वास है कि यदि आप अगले जन्म मे शाति, आनद और मुक्ति चाहते है तो वर्तमान जीवन मे आत्म-त्याग

करना चाहिए। इसके लिए वे शरीर-पीडन तप करते हैं, व्रत उपवास करते है, और अपने शरीर एव चित्त को दडित करते हैं। इस प्रकार तो वह अपने वर्तमान और भविष्य दोनो को दु.ख पहुचाते है। इसके विपरीत कुछ लोगो की मान्यता होती है कि जीवन का वर्तमान ही सब कुछ है और वे भविष्य की कोई चिन्ता नहीं करते। वे अपनी समस्त ऐन्द्रिक इच्छाओ की पूर्ति वर्तमान के क्षणो मे ही कर लेना चाहते है। इस प्रकार विषय-भोग एव रागो मे फसने मे वर्तमान और भावी—दोनो जीवनो मे दुःख ही प्राप्त कर पाते हैं।

"इसलिए, इन दोनो अतियो—चरम सीमाओ—से बचना चाहिए। सबसे समझदारी का मार्ग तो वह है, जिससे वर्तमान और भविष्य दोनो मे प्रफुल्लता प्राप्त हो सके। भावी प्रफुल्लाता की आशा मे वर्तमान मे शरीर को पीडित नही करना चाहिए। भिक्खु अपना दैनिक भोजन कैसे करता है, साधना-अभ्यास, सचेतनता के चारो चरणो और निर्विकल्प समाधि की सभी अवस्थाओ की साधना एव प्राणायाम के द्वारा न केवल स्वय को प्रफुल्लित रखता है, अपितु अपने आस-पास के लोगो के वर्तमान क्षणो को भी सुखमय बनाता है। दिन मे एक बार भोजन करके वह अपने शरीर को स्वस्थ एव हलका रखता है और इसमे उसे साधना-अभ्यास के लिए भी अधिक समय प्राप्त होता है। भिक्खु अविवाहित और सतानहीन, त्याग-साधना की दृष्टि से नहीं, अपितु अन्य लोगो की सहायता हेतु अधिक मुक्त रहने की दृष्टि से रहता है। दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षण मे वह प्रसन्न रह पाता है। यदि वह समझता है कि वह अपने शुद्ध चरित्र मे स्वय को प्रफुल्लता से वचित करता है, तो वह धर्म-देशना की मूल भावना के अनुसार जीवन-यापन नही करता। सच्ची भावना मे देशना पर चलने से उसमे पूर्ण सहजता, शान्ति और आनद प्रतिफलित होता है। ऐसा जीवन न केवल वर्तमान को वरन् भविष्य को भी प्रफुल्लतापूर्ण बनाता है।"

इस धर्म-देशना की समाप्ति पर उपासिका पूर्णलक्षणा ने बुद्ध से कुछ विनती करने की अनुमति मांगी। उसने बुद्ध को बताया कि उसका पति सुदत्त 'अनाथपिंडिक' गभीर रूप मे रोग-ग्रस्त है। वह इतने कष्ट मे है कि आपकी धर्म-देशना सुनने नहीं आ सके। उनकी हालत लगातार बिगडती जा रही है। उन्हें भय है कि बुद्ध के अंतिम दर्शन किए बिना ही कहीं उनकी मृत्यु न हो जाए।

अगले ही दिन बुद्ध भन्ते सारिपुत्त और आनद के साथ सुदत्त को देखने गए। बुद्ध को देखकर सुदत्त आत्म-विभोर हो गया। उसका चेहरा रोग के

कारण पीला और दुर्वल हो गया था और वह शय्या से भी मुश्किल से उठ पाता था। वुद्ध ने उससे कहा, "तुम्हारा जीवन तो सार्थकता और प्रसन्नता से युक्त है। तुमने अगणित लोगो के दुख दूर किए है, इसी से लोग तुम्हे 'अनाथपिंडिक' कहते है। जेतवन विहार तुम्हारे सुकृत्यो की एक कहानी है। तुमने सदैव सद्धर्म के प्रचार के लिए सतत् प्रयास किए हैं। तुमने सद्धर्म की शिक्षाओ के अनुरूप जीवन विताया है और इस प्रकार स्वय अपने लिए, अपने परिवार के लिए और वहुत से अन्य लोगो को प्रसन्नता प्रदान की है–सच्चा सुख दिया है। अव आराम करो। मै मान्य सारिपुत्त से कहूगा कि प्रायः आपको आकर देख जाया करे और विशेष मार्ग–निर्देश दे। विहार आने का प्रयास मत करना। तुम्हे अपनी शरीर–शक्ति सचित रखनी है।" सुदत्त ने आभार व्यक्त करते हुए हाथ जोड़े।

पन्द्रह दिन वाद वुद्ध ने उपासको के लिए सामान्य जीवन–यापन पर देशना की। उन्होने वताया कि उपासक किस प्रकार अपने दैनिक जीवन मे सच्चा सुख प्राप्त कर सकता है। उन्होने 'वर्तमान मे शाति, भविष्य मे शाति' विषयक देशना पर और प्रकाश डाला। उन्होने कहा, "भिक्खु अविवाहित रहकर वर्तमान के क्षणो मे शाति और आनद का जीवन व्यतीत करते हैं जिससे भविष्य मे भी सच्चा सुख मिलता है। उपासक भी गृहस्थ जीवन विताते हुए सद्धर्म का पालन करके सच्चा सुख पा सकते है। सबसे पहले, धन कमाने की इच्छा के वशीभूत होकर इतने काम मे मत फसो कि अपनी और अपने परिवार की वर्तमान की खुशियो से विमुख हो जाओ। प्रसन्नता सवसे महत्त्वपूर्ण है। समझदारी की एक दृष्टि डाल देना, किसी मुस्कराहट को स्वीकारना, प्रेमपूर्ण वात कर लेना, किसी के साथ सप्रेम भोजन कर लेना और सचेतनावस्था मे रहना, ये सव बाते ऐसी हैं, जिनसे वर्तमान के क्षणो को सुखद वनाया जा सकता है। वर्तमान के प्रति सचेतनता से आप स्वय अपने को और अपने आस–पास के लोगो को दुख से बचा सकते है। दूसरो की ओर देखने, मुस्कराने और प्रेमपूर्ण व्यवहार करने के छोटे–छोटे कार्यो से आप प्रफुल्लता पैदा कर सकते है। सच्ची प्रफुल्लता पाने के लिए धन अथवा यश की आवश्यकता नहीं।"

वुद्ध ने राजगृह मे कई वर्षो पूर्व एक श्रेष्ठि–पुत्र सिगाल से हुई वार्ता का उल्लेख करते हुए कहा कि एक दिन मै भिक्षा–पात्र लेकर वेणुवन से भिक्षाटन के लिए सबेरे ही निकल पड़ा तो नगर के वाहर वह श्रेष्ठि–पुत्र छहो दिशाओ–पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊपर और नीचे झुककर नमन कर

रहा था। बुद्ध ने इस नमन का कारण पूछा तो उसने कहा कि मेरे पिता ने बचपन मे छहो दिशाओ मे नमन करना सिखाया था। मै पिता की इच्छा का पालन करते हुए दिशाओ को नमन करता हू। इसका उद्देश्य क्या है, यह मुझे ज्ञात नहीं।

बुद्ध ने कहा कि नमन करने से वर्तमान और भविष्य मे प्रसन्नता प्राप्त होती है। पूर्व की ओर नमन करते समय अपने माता-पिता को ध्यान मे लाओ। जब दक्षिण की ओर नमन करो तो अपने गुरुओ के आभार का स्मरण करो। पश्चिम की ओर नमन करते समय अपनी पत्नी और बच्चो का ध्यान करो। उत्तर दिशा मे नमन करते समय मित्रो के प्रेम का स्मरण करो। पृथ्वी की ओर नमन करते समय अपने सहकर्मियो को ध्यान मे लाओ और आकाश की ओर नमन करते समय ज्ञानियो और गुणियो पर ध्यान लगाओ।

बुद्ध ने सिगाल को पचशीलो की शिक्षा दी और कहा कि लोभ, क्रोध, वासना और भय के वशीभूत होकर कोई काम करने से पूर्व सभी बातो पर किस प्रकार गहनता से विचार करना चाहिए। बुद्ध ने बताया कि छः कार्यों से बचो–अत्यधिक मद्यपान मत करो, नगर की सड़को पर देर रात तक घूमते मत फिरो, द्यूत-गृहो मे मत जाओ, अति नीचता वाले स्थानो पर मत जाओ, घटिया चरित्र के लोगो की सगत मत करो और आलसी मत बनो। ये सब बाते विनाश की ओर ले जाने वाली है। उन्होने यह भी बताया कि कौन व्यक्ति मित्र बनाने योग्य है। "अच्छा मित्र वही है जिसकी मित्रता मे स्थिरता हो–आपकी अमीरी-गरीबी, हर्ष-विषाद, सफलता-विफलता—सभी स्थितियो मे वह एक-सा व्यवहार करे, उसकी भावनाए आपके प्रति डगमगाती न रहे। वह आपकी बात सुने, कष्ट के दिनो मे साथ दे, अपने हर्ष-विषादो मे आपको वस्तु-स्थिति बताए और आपके सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझे।"

बुद्ध ने अपनी देशना मे यह भी कहा, "सच्चा सुख इसी जीवन मे प्राप्त किया जा सकता है, विशेषत उस अवस्था मे, जब निम्नलिखित बातो का पालन करो–

1 गुणी लोगो मे सबध बढाओ और घटिया मार्ग त्याग दो।
2 आत्म-साधना और सच्चरित्रता बढाने वाले वातावरण मे रहो।
3 सद्धर्म एव शील अपनाने और अपना कार्य गहनता से कर सकने के अवसरो को बढाते रहो।
4 अपने माता-पिता, पति या पत्नी और बच्चो की अच्छी तरह देख-भाल करने के लिए समय निकालो।

5 अन्य लोगो को अपने समय, साधनो और प्रसन्नता मे भागीदारी वनाओ।

6 सद्‌गुण अपनाने के लिए अवसर जुटाओ और मद्यपान एव जुए से वचो।

7 विनम्रता, कृतज्ञता और सादा जीवन-यापन की कला सीखो।

8 भिक्खुओ के निकट आने के अवसर मे रहो जिससे सद्‌धर्म का अध्ययन कर सको।

9 चार आर्य सत्यो के आधार पर जीवन-यापन करो।

10 ध्यान-साधना सीखो जिससे दु खो और चिन्ताओ का नाश हो सके।

वुद्ध ने उन उपासको की प्रशसा की जो समाज और परिवार मे अपना जीवन विताते हुए सद्‌धर्म की शिक्षाओ का पालन करते है। इस सदर्भ मे उन्होने सुदत्त 'अनाथपिंडिक' का विशेष उल्लेख किया। जीवन को सार्थक, सेवापरायण और प्रसन्नतादायक वनाने की दिशा मे अपने समस्त प्रयास करने की दृष्टि से सुदत्त एक ज्वलत उदाहरण है। सुदत्त का हृदय वहुत उदार था। उन्होने अपना समस्त जीवन धर्म-शिक्षाओ के अनुरूप चलकर विताया। वुद्ध ने कहा कि उनमे अधिक धन-सपदा वाले वहुतेरे लोग औरो को प्रसन्नता प्रदान करने की तुला पर हलके ही उतरेगे। वुद्ध द्वारा सुदत्त की इस प्रशसा से सुदत्त की पत्नी पद्मलक्षणा गद्‌गद होकर रोने लगी।

उसने खडे होकर वुद्ध से सादर कहा, "प्रभु, धनी व्यक्ति का जीवन प्राय वहुत व्यस्त होता है। विशेषत. तव, जव उसके कई काम हो। मेरे विचार से छोटा सामान्य-सा धधा करना आध्यात्मिक साधना की दृष्टि से अधिक उपयोगी रहेगा। जव हम भिक्खु को घर-परिवार की चिन्ताओ से मुक्त और एक भिक्षा-पात्र एव कुछ वस्त्रो का ही स्वामी देखते है तो हमारी आकाक्षा होती है कि हम अधिक सादा और चिन्ता-मुक्त जीवन स्वय विताये। हम आरामदायक जीवन भी विताना चाहेगे किन्तु हम बहुत से दायित्वो से वधे हुए है। वताइए हम करे तो क्या करे ?"

वुद्ध ने उत्तर दिया, "पद्मलक्षणा, भिक्खुओ के भी उत्तरदायित्व होते हैं। आजीवन अविवाहित रहने के कारण भिक्खु को दिन-रात सजगता से शीलो का पालन करना होता है। भिक्खु अन्य लोगो के कल्याणार्थ अपना जीवन अर्पित कर देता है। उपासको! तथागत एक उपाय सुझाना चाहते है, जिससे आप भी मास मे दो वार भिक्खु-जीवन का आनद प्राप्त कर सको। महीने मे दो वार आप लोग मदिर मे आ सकते है और अष्टागिक साधनाओ को

एक दिन तथा एक रात करके देख सकते हैं। उस दिन आप भिक्खु के समान दिन मे एक बार ही भोजन करेंगे। आप चलते-फिरते अथवा बैठकर ध्यान कर सकते हैं। चौबीस घंटो तक सदाचार पूर्वक, सचेतन, ध्यानस्थ किन्तु तनाव रहित, शात और आनदपूर्ण जीवन बिता सकते है जैसे भिक्खुनिया नित्य अपना जीवन बिताती है। पूर्ण दिन-रात बीत जाने पर आप अपने घर जाकर अपना सामाजिक जीवन बिता सकते है जिसमे आप पचशीलो और त्रिरत्नो का पालन करते रहे।

"इन विशेष दिनो के विषय मे तथागत भिक्खुओ को सूचित कर दिया करेंगे। इन विशेष दिनो को मदिरो मे और अपने घरो मे ही आप साधना की व्यवस्था कर सकते हैं। इस अवसर पर आप भिक्खुओ को आमंत्रित कर सकते हैं, जो आपको अष्टांगिक साधना-अभ्यास कराए और आपको सद्धर्म की शिक्षा भी दे।"

बुद्ध का सुझाव सुनकर पद्मलक्षणा प्रसन्न हुई और पूछा, "प्रभु यह अष्टागिक मार्ग क्या है ?"

बुद्ध ने बताया, "जीव-हिंसा न करो, चोरी न करो, सभोग से विरत रहो, असत्य-भाषण न करो, मद्यपान न करो, आभूषण-रत्नादि धारण न करो, बढिया आरामदायक बिस्तर पर न लेटो या सोओ और पराये धन का प्रयोग न करो। इस अष्टांगिक मार्ग के अपनाने से आप अविस्मरण और भ्रातियो से बच सकेंगे। दिन मे एक बार भोजन करने से आपको साधना करने के लिए अधिक समय मिल सकेगा।"

उपासको के लिए विशेष दिनो का आयोजन किए जाने के बुद्ध के सुझाव से लोग बडे प्रसन्न हुए।

दस दिन बाद सुदत्त का एक सेवक सारिपुत्त के पास यह सूचना देने आया कि सुदत्त की हालत बिगड गई है। सारिपुत्त आनद को लेकर सुदत्त के घर गए। उन्होंने देखा कि सुदत्त बिस्तर पर लेटा है। उसने दो कुर्सिया बिस्तर के पास डालकर दोनो मान्य भिक्खुओ को बैठाया।

सुदत्त के शरीर को बहुत कष्ट हो रहा है, यह देखकर सारिपुत्त ने कहा कि चित्त को बुद्ध धर्म और सघ मे लगाओ जिससे शरीर कष्ट कम होगा। "उपासक सुदत्त हम सब मिलकर सबोधि प्राप्त बुद्ध, जागृति और प्रेम के मार्ग-धर्म और संभाई एव सचेतन अवस्था मे रहने वाले लोगो के सघ का ध्यान करें।"

सारिपुत्त ने देखा कि सुदत्त अब अधिक समय तक जीवित न रहेंगे।

अत. उन्होने कहा, "हम इस प्रकार ध्यान करे कि मेरी आखे मेरी नहीं है, मेरे कान मेरे नहीं हैं, मेरी नासिका, जिह्वा, मेरा शरीर और मेरा चित्त भी मेरा नहीं है।"

सुदत्त ने सारिपुत्त के निर्देशानुसार ध्यान किया। तब सारिपुत्त ने कहा, अब हम ध्यान करे कि जो मैं देख रहा हू, जो सुन रहा हू, वह मैं नही हू, जो गध, स्वाद, स्पर्श और विचार हैं, वह मै नही हू।"

सारिपुत्त ने सुदत्त को व्यावहारिक रूप से ऐन्द्रिक चेतना की धारणा करके बताया कि "देखना मे नहीं हू, श्रवण करना मै नहीं हू, गध लेना, स्वाद लेना, स्पर्श और विचार करना भी मै नहीं हू।"

सारिपुत्त ने कथन जारी रखा, "पृथ्वी तत्त्व मै नहीं हू। जल, अग्नि, वायु, आकाश और चेतन तत्त्व भी मै नहीं हू। जन्म और मृत्यु मुझे छू भी नही सकते। मै मुस्कराता हू क्योकि न तो मै जन्मा हू और न मै मरूगा। जन्म के कारण मेरा अस्तित्व नहीं है और मृत्यु से मै अस्तित्वहीन नहीं होऊगा।"

अकस्मात् सुदत्त रोने लगा। उसके आसुओ से विचलित हुए आनद ने पूछा, "सुदत्त, क्या आप घबरा रहे है, क्योकि आप ध्यान नहीं लगा पा रहे ?"

सुदत्त ने कहा, "मान्य आनद मै तनिक भी घबरा नही रहा हू। मै बिना किसी कठिनाई के ध्यान लगा रहा हू। मेरे अश्रु तो इसलिए छलक आये कि मेरा हृदय आज गद्‌गद हो रहा है। तीस वर्षों से अधिक समय तक बुद्ध और भिक्खुओ की सेवा का मुझे सौभाग्य प्राप्त रहा किन्तु मैने इतनी गूढ़ और सूक्ष्म शिक्षा आज तक नहीं सुनी जो मुझे आज प्राप्त हुई है।

आनद ने कहा, "सुदत्त, गुरुवर बुद्ध इस प्रकार की शिक्षा भिक्खुओ और भिक्खुनियो को प्रायः दिया करते है।"

सुदत्त ने कहा, "मान्य आनद, उपासक भी ऐसी शिक्षा को समझ सकते है और इसकी साधना कर सकते हैं। कृपया बोधिसत्व से अनुरोध कीजिए कि वे ऐसी शिक्षा उपासको को भी दिया करे।"

बाद मे उसी दिन सुदत्त ने शरीर त्याग दिया। मान्य सारिपुत्त और आनद उसके पास ही रहे और उसके शव के पास बैठकर सूत्रो का पाठ करते रहे। उसके परिवार के सभी सदस्यो ने बुद्ध का शिष्यत्व स्वीकार कर लिया और अपने जीवन को धर्म-शिक्षाए धारण करने हेतु अध्ययन एव अभ्यास मे समर्पित कर दिया।

मृत्यु के कुछ दिन पूर्व सुदत्त को ज्ञात हुआ कि उसकी सबसे छोटी

वेटी अग के सन्यासियो की शिक्षाओ पर चल रही है। उसने अग राज्य के एक राज्यपाल से विवाह कर लिया था जो नागा सन्यासियो का अनुयायी था। जव उसके पति ने उससे सन्यासियो के पास उसके साथ चलने का आग्रह किया तो वह चतुराई से वात टाल गई। समय वीतने पर, वुद्ध के सद्धर्म-मार्ग का ठोस ज्ञान होने के फलस्वरूप उसके पति का भी इस ओर झुकाव हुआ और इससे उस क्षेत्र के अनेक लोगो का भी सघ के प्रति आकर्षण हो गया।

अध्याय छिहत्तर

साधना के सुफल

वर्षा-प्रवास समाप्त होने ही वाला था कि सघ मे सूचना मिली कि कौशल और मगध के वीच युद्ध छिड़ गया है। राजा अजातशत्रु विदेही पुत्र के नेतृत्व मे मगध की सेना ने गगा पार करके काशी के उस प्रदेश पर अधिकार कर लिया है जो कभी कौशल के अधीन था। राजा और उसके सेनानायको ने हाथियो, घोड़ो, रथो, तोपखानो और सैनिको से आक्रमण किया था। आक्रमण इतना आकस्मिक था कि राजा प्रसेनजित वुद्ध को भी अपनी काशी-यात्रा के विपय मे सूचना न दे पाये। हा, वह कुमार जेत से सब कुछ वाते वुद्ध को वताने के लिए अवश्य कह गये थे।

वुद्ध को विदित था कि अजातशत्रु ने अपने पिता को मारकर सिंहासन हथियाया है, इससे अप्रसन्न होकर राजा प्रसेनजित ने वाराणसी के पास का जिला वापस ले लिया था। इस जिले से मगध को एक लाख स्वर्ण मुद्रा का राजस्व प्राप्त होता था और राजा अजातशत्रु इसे छोड नहीं सकता था। इसीलिए उसने वहा अपनी सेनाए भेज दी थीं।

मान्य सारिपुत्त ने सभी भिक्खुओ को श्रावस्ती मे ही रहने का निर्देश दिया और वुद्ध से भी आग्रह किया कि जब तक शांति न हो जाए, वह श्रावस्ती मे ही रहे।

दो महीनो वाद श्रावस्ती की जनता को सूचना मिली की उनकी सेना काशी मे युद्ध हार गई है और राजा प्रसेनजित तथा सेनापति पीछे हटकर श्रावस्ती आ गए है। स्थिति वड़ी तनावपूर्ण थी किन्तु दृढ़ सुरक्षा व्यवस्था के कारण श्रावस्ती हाथ से नहीं निकली, हालाकि अजातशत्रु की सेना दिन-रात आक्रमण कर रही थी। एक सेनापति की कुशल योजना के अनुसार राजा प्रसेनजित ने जो प्रत्याक्रमण किया तो कौशल राज्य को निर्णायक विजय प्राप्त

हुई। राजा अजातशत्रु और उसके सेनापति वदी बना लिए गए। एक हजार सैनिको को भी वदी वना लिया गया। लगभग एक हजार अन्य सैनिक या तो मारे गए या भाग गए। इसके अलावा, वड़ी सख्या मे हाथी, घोडे, रथ और तोपखाना भी अधिकार मे ले लिया गया।

युद्ध छः महीने तक चला। श्रावस्ती के निवासियो ने विजयोत्सव मनाया। सैनिक-व्यवस्था के वाद, राजा प्रसेनजित वुद्ध से मिलने जेतवन गए। राजा ने वुद्ध को वताया कि युद्ध पर खर्च वहुत अधिक आया लेकिन हमे तो अजातशत्रु द्वारा आक्रमण किए जाने पर आत्म-रक्षा मे युद्ध करना पडा। मेरे विचार से अजातशत्रु के मत्रियो ने उन्हे गलत परामर्श दिया। "प्रभु वुद्ध देव, मगध का राजा मेरा अपना ही भानजा है। मै उसे न तो मृत्यु-दड देना चाहता हू और न वदी वनाकर रखना चाहता हू। कृपया, वताइए कि इस अवस्था मे मैं क्या करू ?"

वुद्ध ने कहा, "महामहिम, आपके पास निष्ठावान मित्र और सहायक हैं। राजा अजातशत्रु वुरे तत्त्वो से घिरे हैं इसीलिए वह भटक गए। तथागत का सुझाव है कि आज उनका मगध की प्रतिष्ठा के अनुरूप आदर करो और समय निकालकर उन्हे अपने भानजे के समान समझाओ कि वह अपने आस-पास अच्छे और निष्ठावान मित्र और सहायक रखे। इसके वाद उन्हे समारोह पूर्वक वापस मगध भेज दिया जाए। स्थायी शाति की सभावना इस वात पर निर्भर है कि आप इन प्रश्नो को किस प्रकार कुशलता से सुलझाते है।"

वुद्ध ने एक युवा भिक्खु को वुलाकर प्रसेनजित से मिलाया। वह राजा विम्बिसार का पुत्र था और अजातशत्रु का सौतेला भाई था। वह ज्ञानवान तथा समझदार व्यक्ति तो था ही, सोलह वर्ष की आयु से मान्य मौद्गल्यायन के निर्देशन मे धर्म-शिक्षा प्राप्त कर रहा था। मगध के घटनाक्रम के वाद उसने प्रव्रज्या ग्रहण कर ली थी। मौद्गल्यायन ने उसे आगे शिक्षा प्राप्त करने श्रावस्ती भेज दिया था क्योकि वह अजातशत्रु की ईर्ष्यालु प्रकृति से परिचित थे, हालांकि उसके सौतेले भाई की किसी प्रकार की आकाक्षा भी नहीं थी।

राजा प्रसेनजित के पूछने पर भिक्खु ने मगध छोडने से पहले का सारा घटनाक्रम वताया। उसने यह भी सूचना दी कि उसे मारने के लिए किसी को मगध मे भेजा गया था किन्तु हत्यारे का हृदय-परिवर्तन हो जाने से वह स्वय भी भिक्खु वन गया। राजा प्रसेनजित वुद्ध को नमन करके राजमहल चले गए।

बाद मे अजातशत्रु को मुक्त कर दिया गया और मगध लौटने की अनुमति

दे दी गई। घृणा के घाव भर सके, इसलिए राजा प्रसेनजित ने अपनी पुत्री वज्री का विवाह अजातशत्रु से कर दिया और काशी का वह क्षेत्र भी वापस उपहार स्वरूप दे दिया। इस प्रकार राजा प्रसेनजित ने बुद्ध का परामर्श भावनापूर्वक पूरा किया।

युद्ध समाप्त हो जाने के बाद भिक्खु और भिक्खुनिया एक बार फिर सद्धर्म के प्रचार मे जुट गए। राजा प्रसेनजित ने राजधानी के बाहर राजकर्म नामक नए विहार का निर्माण करा दिया।

बुद्ध दो सालो तक कौशल मे ही रहे। वर्षा-प्रवास काल मे वे जेतवन मे रहते और शेष समय मे सद्धर्म का प्रचार करते। समय-समय पर उन्हे मगध के समाचार उन भिक्खुओ से मिल जाते जो वहा से आते थे। उन्होने बताया कि बुद्ध के मगध से चले आने के बाद मान्य देवदत्त राजा अजातशत्रु की कृपा से वंचित हो गए। उस समय मान्य देवदत्त के साथ सौ भिक्खु थे जिनमे से अस्सी पुनः वेणुवन स्थित बुद्ध के सघ मे लौट आए। देवदत्त अकेले पड़ते चले गए। हाल ही मे वह बीमार पड़ गए और गयाशीर्ष से आने-जाने योग्य नहीं रहे। युद्ध के बाद से राजा अजातशत्रु एक बार भी उनसे मिलने नहीं गए। वह वेणुवन विहार भी नहीं गए। वह अन्य धार्मिक सप्रदायो के नेताओ से ही सपर्क रखते। किन्तु सघ का सद्धर्म-प्रचार कार्य-निर्बाध चलता रहा। मगध के उपासको और भिक्खुओ को आशा थी कि बुद्ध अवश्य आएगे। उनके बिना गृद्धकूट शिखर और वेणुवन विहार सूना-सूना सा पड़ा था। जीवक भी उनकी वापसी की प्रतीक्षा मे थे।

सर्दियो मे कौशल की रानी मल्लिका की मृत्यु हो जाने पर परम दुखी अवस्था मे राजा प्रसेनजित बुद्ध से सात्वना प्राप्त करने आए। रानी राजा की सर्वोत्तम परामर्शदात्री थीं और राजा भी उन्हे बेहद प्रेम करते थे। रानी बुद्ध की निष्ठावान शिष्या थीं और सद्धर्म की गहन समझ उन्हे थी। मरने से पहले उन्होने सद्धर्म विषयक ज्ञान की चर्चा बुद्ध से की थी। राजा ने बताया कि एक बार उन्होने स्वप्न देखा जिससे उन्हे भय हुआ कि कोई सकट आने वाला है। ब्राह्मणो से परामर्श करने पर उन्होने देवताओ से रक्षार्थ यज्ञ करके पशुबलि करने को कहा। रानी ने उन्हे पशुबलि न देने को कहा। राजा राज्य की समस्याओ के समाधान मे रानी से राजनीतिक प्रश्नो पर भी मत्रणा लेते थे। रानी सद्धर्म की उपासिका और अध्ययनकर्ता थीं, इसलिए अपने राजकीय उद्यान मे धर्म-कक्ष बनवा लिया था जहा वह बुद्ध तथा उनके वरिष्ठ शिष्यो को बुलाकर देशना सुनतीं। वह धर्म-कक्ष अन्य धर्मों को मानने वालो के लिए भी समान रूप से सुलभ था।

चालीस वर्षो से अधिक समय के जीवन साथी को खोने के दुख से पीडित राजा आकर चुपचाप बैठ गए तो उनके उद्विग्न हृदय को कुछ शान्ति मिली। बुद्ध के परामर्श पर राजा ने ध्यान-साधना मे अधिक समय बिताना आरभ किया। बुद्ध ने स्मरण कराया कि मैने आपसे कहा था कि अपने आस-पास के लोगो को प्रसन्नता देने वाले कार्य करो। बुद्ध ने राजा को राज्य की न्याय-प्रणाली और अर्थ-व्यवस्था को सुधारने के लिए भी कहा। शारीरिक दड, कैद मे रखने या मृत्युदड देने से अपराधो की प्रभावी रोक-थाम सभव नहीं। अपराध और हिंसा तो भूख और निर्धनता की स्वाभाविक परिणति होती है। अत जनता की सहायता करने तथा उनकी सुरक्षा का सर्वोत्तम उपाय करने के लिए स्वस्थ अर्थ-व्यवस्था के निर्माण करने पर ध्यान केन्द्रित करना उचित होगा। गरीब किसानो को भोजन, बीज और उर्वरको पर तब तक आर्थिक सहायता दी जाए जब तक वे आत्मनिर्भर न हो जाए। छोटे व्यापारियो को ऋण दिए जाए। जो लोग कार्य-क्षम नहीं रह गए है, उन्हे अवकाश दिया जाए और गरीब लोगो को करो से मुक्त रखा जाए। जबर्दस्ती बेगार कराना बद किया जाए। लोगो को अपना व्यवसाय स्वय चुनने का अवसर दिया जाए। लोग जो काम करना चाहे, उनकी तकनीकी शिक्षा का प्रबंध किया जाए। लोगो की स्वेच्छापूर्ण भागीदारी पर ही सही अर्थ-नीति आधारित हो।

राजा और बुद्ध के इस वार्तालाप को सुन रहे आनद ने बुद्ध के इन परामर्शो को 'कूट दन्त सूत्र' की सज्ञा दी जिसमे बुद्ध के राजनीतिक और आर्थिक विचारो का सार सग्रहीत हो।

एक दिन अपराह्न मे आनद ने बुद्ध को विशाखा धर्म-कक्ष के बाहर सूर्य की ओर पीठ किए बैठे देखा। सामान्यत· बुद्ध सूर्यास्त का दृश्य देखा करते थे। उसने बुद्ध से पूछा तो उन्होने बताया कि मै सूर्य की गर्मी मे पीठ सेक रहा हू। आनद बुद्ध की पीठ मलने लगा और झुककर उनकी टागे भी दबानी आरभ कर दी। आनद ने कहा, "प्रभु, मैं आपका पन्द्रह वर्षो से अनुचर हू। पहले आपकी त्वचा कितनी दृढ और चमकती थी। अब आपकी त्वचा पर झुर्रिया पड गई है और टागो की मासपेशिया भी ढीली हो गई है। मै आपकी पसलिया गिन सकता हू।"

बुद्ध ने हसकर कहा, "दीर्घायु होने पर आप वृद्ध भी होते है। किन्तु आनद अब भी मेरी आखें और कान पहले के समान कर्मशील है। आनद

क्या तुम्हे गृद्धकूट पर्वत और वेणुवन की याद नहीं आती ? क्या तुम उस शिखर पर फिर चढ़कर सूर्यास्त देखना नहीं चाहोगे ?"

"प्रभु, यदि आप गृद्धकूट शिखर जाए तो मुझे भी साथ ले चलना।"

उसी वर्ष ग्रीष्म ऋतु मे बुद्ध मगध लौट आए। रास्ते मे वह सभी धर्म-केन्द्रो पर रुकते आए और उपासको तथा भिक्खुओ को देशना करते रहे। वह शाक्य, मल्ल, विदेह और वज्जि राज्यो से गुजरे और गगा पार करके मगध पहुचे। वहा भी राजगृह जाने से पूर्व नालदा गए।

गृद्धकूट पर्वत और वेणुवन पहले की भाति सुन्दर थे। बुद्ध का आगमन सुनकर राजधानी और निकटस्थ गावो से ढेर के ढेर लोग उनके दर्शन करने आए। इसी मे एक महीना गुजर जाने पर बुद्ध जीवक के निमत्रण पर आम्रवन गए जहा जीवक ने एक हजार लोगो के बैठने योग्य धर्म-कक्ष का निर्माण करा लिया था।

आम्रवन मे कुटिया के बाहर बैठकर जीवक ने बुद्ध की अनुपस्थिति मे मगध मे घटे घटनाक्रम का वर्णन किया। रानी विदेही को आतरिक शाति की उपलब्धि हो गई थी। वह शाकाहार अपनाकर ध्यान-साधना मे प्रवृत्त हो गई थीं। किन्तु अजातशत्रु भीषण मानसिक यातना के दौर से गुजर रहे थे। पिता की मृत्यु उनके चित्त पर छाई रहती। वह सो नहीं पाते, सोते तो स्वप्न देखकर भयभीत हो जाते और स्नायुओ का तनाव चरम सीमाओ तक जा पहुचा था। उन्होने अनेक चिकित्सको और धर्माचार्यों की शरण ली किन्तु कोई भी उनका उपचार न कर सका।

एक दिन राजा अपनी पत्नी, अपने पुत्र उदयीभद्र तथा माता विदेही के साथ भोजन करने बैठे। तीन वर्षीय राजकुमार को राजा अत्यधिक प्रेम करते थे इसलिए वह बिगड़ गया था और जिद्दी हो गया था। उसी दिन भोजन के समय उसने कहा कि मेरे कुत्ते को भोजन की मेज पर बैठाओ। राजा ने राजकुमार की यह अनुचित माग मान ली।

इस पर रानी विदेही ने कहा, "तुम अपने पुत्र को अत्यधिक प्रेम करते हो इसलिए कुत्ते को मेज पर बैठा लिया। तुम्हे याद है कि पुत्र-प्रेम के कारण एक बार राजा तुम्हारा पीप भी पी गए थे। तुम्हारी एक उगली के नाखून के नीचे फुसी निकली और वह सूजकर लाल हो गई जिसके दर्द से तुम दिन-रात रोते। राजा तुम्हारी चिन्ता मे रात-भर सो नहीं सके। वह तुम्हे उठाकर अपने बिस्तर पर लाए और तुम्हारी उगली मुह मे डालकर चूसने लगे जिससे तुम्हारा दर्द कम हो। वह चार दिन और चार रात तक

उगली चूसते रहे जब तक कि फुसी पक नहीं गई। फुसी फूटने पर उन्होने उसका पीप भी चूस लिया। पीप थूकने के लिए भी उन्होने तुम्हारी उगली इसलिए मुह से नहीं निकाली कि तुम्हे दर्द न हो और वह उस पीप को निगल गए। इससे तुम समझ सकते हो कि तुम्हारे पिता तुम्हे कितना प्रेम करते थे। इसी पुत्र-प्रेम की खातिर तुमने अपने पुत्र को मेज पर कुत्ता वैठाने दिया।"

राजा अजातशत्रु ने दोनो हाथो से अपना सिर पकड़ लिया और विना खाए उठ गए। उस रात राजा की मानसिक स्थिति और खराव हो गई। आखिर वैद्य जीवक को बुलाया गया। राजा ने जीवक को अपनी अवस्था वताई और सभी चिकित्सको तथा पडित पुजारियो के प्रयास विफल रहने की वात भी वताई। सव सुनकर जीवक चुप रहा तो राजा ने पूछा, "जीवक, तुम कुछ कहते क्यो नहीं ?"

जीवक ने कहा, "गुर गौतम ही आपके हृदय का भार हल्का कर सकते हे। आप उनके पास ही मार्ग-दर्शन के लिए जाइए।"

बहुत देर तक चुप रहकर राजा ने कहा, "किन्तु गुरु गौतम तो मुझसे घृणा करते होंगे ?"

जीवक ने कहा, "ऐसी वाते मत करो। गुरु गौतम किसी से घृणा नहीं करते। वह आपके पिता के गुर और मित्र दोनो थे। उनके पास जाना अपने पिता के पास जाने के समान होगा। उनसे मिलोगे तो आपको आतरिक शांति मिलेगी। मेरी चिकित्सा क्षमता गुरु-गौतम की क्षमता की तुलना मे कुछ भी नहीं है। वह चिकित्सक नहीं, अपितु चिकित्सको के भी गुरु है।" राजा इस पर विचार करने को सहमत हो गए।

गृध्रकूट शिखर पर कई मास रहने के वाद बुद्ध एक मास के लिए आम्रवन आए। वहां पर जीवक ने बुद्ध की राजा अजातशत्रु से भेट की व्यवस्था की। चादनी रात मे राजा अपनी रानी, रखैलो, रक्षको आदि के साथ हाथी पर बैठ कर आए। आम्रवन आने पर राजा ने सव ओर सन्नाटा देखा तो आशंकित हो गया। जीवक ने तो वताया था कि बुद्ध यहा एक हजार भिक्षु के साथ रहते हैं। यदि यह सच हे तो सव तरफ शाति क्यो हे ? कहीं धोखा तो नहीं ? कहीं जीवक मुझ पर घात लगाकर हमला करवाने वाला है ? क्या जीवक ने वदला लेने के लिए षड्यन्त्र रचा है ? जीवक स्थिति समझकर हंसा और धर्म-कक्ष की ओर सकेत कर कहा, "बुद्ध और सभी भिक्षु वहा हैं। देख रहे है कि धर्म-कक्ष मे प्रकाश वाहर आ रहा है।"

राजा हाथी से उतरे और अपने परिवार तथा अनुचरो के साथ धर्म-कक्ष मे घुसे। जीवक ने वताया कि ऊचे मंच पर जो व्यक्ति बैठा है, वही गुरु वुद्ध देव हैं।

धर्म-कक्ष के शान्त वातावरण का राजा पर बडा प्रभाव हुआ। एक हजार भिक्खु इतने शात वैठे हैं कि कोई अपने वस्त्र तक नहीं सभाल रहा। राजा अजातशत्रु ने जीवन मे कुछ अवसरो पर देखा ही था किन्तु वह उनकी धर्म-देशना सुनने कभी नहीं आए थे।

वुद्ध ने राजा अजातशत्रु और राज परिवार को आसन ग्रहण करने को कहा। राजा ने नमन करके कहा, "प्रभु, मैने एक बार आपको राजमहल मे वचपन मे ही भापण करते देखा था। आज मैं आपसे एक प्रश्न करना चाहता हू। जो सैकड़ो-हजारो लोग गृह-त्याग कर आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करते है, उसका क्या फल उन्हे मिलता है ?"

वुद्ध ने कहा, "आज तथागत आपको वताएगे कि सद्धर्म शिक्षा के क्या सुफल इसी क्षण प्राप्त हो सकते है और क्या फल भविष्य मे प्राप्त हो सकते है। इसके लिए लम्वे उत्तरो की आवश्यकता नहीं। आप इन्हे हाथ के आम के समान स्वय ही देख सकते है।

"महामहिम, इस उदाहरण पर विचार करे। एक सेवक अपने स्वामी की सभी झक भरे आदेशो का पालन करता ऊपर-नीचे, इधर-उधर, सबेरे से शाम तक भागता था। आखिर उसने एक दिन सोचा, 'मै और मेरा स्वामी दोनो ही मानव हैं, तव मैं अपने मालिक के इशारो पर क्यो नाचता फिरू ?' सेवक नौकरी छोड़कर भिक्खु बन जाता है और सेवक से गृहहीन भिक्खु का जीवन जीने लगता है। वह पवित्रता, परिश्रमपूर्ण और सचेतन जीवन जीता है। वह दिन मे एक बार भोजन करता है और चलित ध्यान तथा बैठकर साधना करता है और उसकी समस्त गतिविधिया शान्त एव गौरवपूर्ण होती हैं। वह सेवक से सम्मानित गुणी भिक्खु बन जाता है। यदि आप उसी भिक्खु को आज देखेगे तो उसे वुलाकर आज्ञा देने के स्थान पर उसका आदर करेगे। महामहिम, भिक्खु को साधना का पहला सुफल तो यही है कि व्यक्ति जातीय, सामाजिक या नस्ल सवधी भेदभावो से मुक्त हो जाता है। उसे मानवीय गरिमा प्राप्त हो जाती है।"

राजा ने कहा, "अद्भुत । प्रभु मुझे कुछ और बताइए।"

बुद्ध ने कहा, "मानवीय गरिमा की प्राप्ति तो पहला फल है। एक भिक्खु को ढाई सौ शीलो का पालन करना होता है जिससे वह मानसिक शाति

प्राप्त करता है। शीलो का पालन न करने वाला जल्दी भ्रमित हो जाता है। बहुत से लोग असत्य भाषण, मद्यपान, ऐन्द्रिक विषय- वासना, चोरी और हत्या सरीखे अपराध करते है। इस प्रकार के आचरण से वे अपने चित्त ओर शरीर को क्रूरतापूर्वक दडित करते हैं। वे पकड़े जा सकते है और उन्हे दड मिल सकता है। भिक्खु, अहिंसा, अचौर्य, ऐन्द्रिक वासना-त्याग, असत्य त्याग और मद्यपान त्याग के शीलो का पालन करता है। इनके अतिरिक्त वह दो सौ अन्य शीलो का पालन भी करता है, इससे वह ऐसा निर्भय जीवन व्यतीत करता है जिसकी कल्पना भी शीलो का पालन न करने वाले नहीं कर सकते। शीलो का पालन करने वाला त्रुटिहीन जीवन जीता है। इस प्रकार वह निर्भय होता है। यह सद्धर्म साधना का एक अन्य फल है जिसे इसी जीवन मे प्राप्त किया जा सकता है।

"महामहिम, भिक्खु के पास तीन जोडे वस्त्र और एक भिक्षा-पात्र होता है, अत उसे चोरी या लुटने का भय ही नहीं होता। वह निश्चिन्त होकर पेड के नीचे सो सकता है। भय से मुक्ति बडा सुख है। यह अध्यात्म-साधना का ऐसा फल है, जिसे इसी क्षण प्राप्त किया जा सकता है।

बुद्ध ने आगे कहा, "भिक्खु सादगी-भरा जीवन जीता है। वह दिन मे एक बार भोजन करता है जिसमे हजारो घरो से प्रदत्त भिक्षा होती है। इस प्रकार उसे धन या यश की कोई ऐषणा नहीं होती। जितनी आवश्यकता होती हैं, उतना ही वह प्रयोग करता है और इच्छा-आकाक्षाओ के बधनो से मुक्त होता है। ऐसे मुक्त जीवन से महान हर्षोत्फुल्लता आती है जिसका आस्वाद इसी क्षण किया जा सकता हे। यह आध्यात्मिक साधना का ही फल होता है।

"महामहिम, यदि आप प्राणायाम जन्य आत्म-चेतना और ध्यान की साधना करना जानते है तो इस आनद का अनुभव कर सकते है, जो सद्धर्म को साधक करता है। यह आनद ध्यान-साधना मे प्राप्त होता है। भिक्खु छहो इंद्रियो की गतिविधियो का दृष्टा होता हे और चित्त की पाच बाधाओ—लोभ, तृष्णा, अज्ञान प्रमाद ओर शका—पर विजय प्राप्त कर लेता है। प्राणायाम की प्रक्रियाओ के द्वारा वह जो आनद एव प्रसन्नता प्राप्त करता है, जिससे उसे सद्धर्म-मार्ग पर प्रगति करने मे सहायता मिलती है और शरीर एव चित्त सबल बनता है। ऐन्द्रिक वासनाओ की पूर्ति से जो प्रसन्नता मिलती है, उसकी तुलना मे ध्यान-साधना मे प्राप्त आनद एव हर्षोत्फुल्लता अनत गुनी होती है। ध्यान-साधना जन्य आनद एव हर्षोत्फुल्लता शरीर एवं चित्त मे प्रसारित

हो जाती है जिससे व्यक्ति सभी चिन्ताओ, दुःखो एव निराशाओ से मुक्त हो जाता है और साधक जीवन की अद्भुतताओ की अनुभूति कर सकता है। अध्यात्म-साधना का यह एक महत्वपूर्ण सुफल होता है जिसे कोई भी वर्तमान जीवन मे अनुभव कर सकता है।

"महामहिम, परिश्रमपूर्वक सचेतनावस्था मे रहने और शीलो का पालन करने से भिक्खु का ध्यान सुगमता से लगता है जिससे सभी धर्म प्रकाशित हो उठते है। इस प्रकाश मे वह सभी धर्मों के अनस्तित्व और अनित्यता की मूल प्रकृति पहचान पाता है। इस ज्ञान के पश्चात् वह किसी धर्म द्वारा आवद्ध नहीं होता। इस प्रकार लोभ, घृणा, आकाक्षाओ, प्रमाद, शकाओ, आत्मा की भ्रात धारणा, अतिवादी धारणा, असत्य धारणा या भ्रष्ट धारणाओ के बधनो के रज्जुओ को काटकर फेक सकता है। इन रज्जुओ के कटने से भिक्खु को आत्म-मुक्ति और सच्ची स्वतत्रता प्राप्त हो जाती है। आत्म-मुक्ति महान आनद है और अध्यात्म-साधना का महानतम सुफल है। यहा ऐसे भिक्खु वैठे हुए है, जिन्होने इस फल का आस्वादन कर लिया है। यह फल इसी जीवन मे प्राप्तव्य है।"

राजा ने सहर्ष कहा, "अद्भुत बात बताई गुरुदेव। कुछ और बताइए।"

वुद्ध ने आगे कहा, "महामहिम, इस प्रकाश के अनुभव और सभी धर्मों की मूल प्रकृति जान लेने के बाद भिक्खु को ज्ञान हो जाता है कि न सभी धर्मों को उत्पन्न किया जा सकता है और न नष्ट किया जा सकता है, न इन्हे पावन-अपावन करना सभव है, न इनमे वृद्धि या ह्रास हो सकता है, न वे एक है और न अनेक है तथा न आना और न जाना है। यह ज्ञान होने से भिक्खु किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं करता। वह सभी धर्मों को भय एव चिन्ता से मुक्त होकर समदृष्टि से देखता है। सभी प्राणियो के रक्षार्थ, वह जन्म और मृत्यु की लहरियो पर तैरता है। वह प्राणिमात्र को सद्धर्म का मार्ग दिखाता है, जिससे वे मुक्ति, आनद और हर्पोत्फुल्लता का आस्वादन कर सके। कामनाओ, घृणा और अज्ञान से मुक्त होने मे औरो का सहायक वनना परम आनद है। अध्यात्म-साधना का यह सूक्ष्म फल है जिसका इस जीवन मे आस्वादन करके भावी जीवन मे भी अनुभव किया जा सकता है। महामहिम, अपने सभी संपर्कों के समय भिक्खु सद्गुणो और मुक्ति के मार्ग पर सभी को अग्रसर करने का दायित्व समझता है। भिक्खु पक्षधरता की राजनीति मे नहीं फसता, वरन् समाज मे शाति, आनद और सद्गुणो के

अर्जन मे योगदान करता है। अध्यात्म-साधना के ये सुफल भिक्खु स्वय अकेले ही नहीं भोगता। ये तो सभी लोग और देश की धरोहर है।"

राजा उठ खड़े हुए और सादर करबद्ध होकर कहा, "प्रभु, आप सबसे उच्च स्तरो तक पहुचे हुए गुरु है। साधारण शब्दो से ही आपने मेरा अतस् प्रकाशित कर दिया। आपने सद्धर्म का सच्चा मूल्य मुझे समझा दिया, आपने ध्वस का पुनर्निर्माण, अज्ञात को ज्ञात कर दिया है, भटके हुए को मार्ग दिखा दिया है और अधकार को प्रकाश से भर दिया है। प्रभु, कृपा करके मुझे अपना शिष्य बना लीजिए जैसे कि आपने मेरे माता-पिता को बनाया था।"

राजा बुद्ध के समक्ष प्रणत हुए। बुद्ध ने स्वीकृति मे सिर हिला दिया। उन्होने मान्य सारिपुत्त को कहा कि राजा एव रानी को त्रिरत्नो का उच्चारण कराइए। 'बुद्ध शरण गच्छामि', 'धम्म शरण गच्छामि' और 'सघ शरण गच्छामि' का उच्चारण करने के बाद राजा ने कहा, "प्रभु, बहुत देर हो गई है। मुझे जाने की आज्ञा दीजिए। प्रात एक मुलाकात का आयोजन है।" बुद्ध ने अनुमति दे दी।

राजा की मानसिक स्थिति मे शीघ्रता से सुधार हो गया। उसी रात, उसने स्वप्न मे अपने पिता को देखा जो उसको देखकर मुस्करा रहे थे। राजा को प्रतीत हुआ कि उसका विदीर्ण हृदय जुड़ गया है। उसका हृदय-परिवर्तन हो चुका था और वह लोक-कल्याण मे लग गया था।

उसके बाद राजा स्वेच्छा से बुद्ध के दर्शन करने अनेक बार गया। वह अब हाथी पर नहीं, वरन् सीढिया चढकर शिखर पर पहुचता था जैसे कि उसके पिता बिम्बिसार आते थे। बुद्ध से हुई एकान्त वार्ता मे अजातशत्रु ने अपना हृदय खोला और अपने विगत अपराधो को स्वीकारा। बुद्ध ने उसके साथ अपने पुत्र के समान व्यवहार किया। उन्होने राजा को परामर्श दिया कि सद्गुण-सम्पन्न लोगो की सगति करो।

वर्षा-प्रवास के बाद, जीवक ने भिक्खु बनने की बुद्ध से अनुमति मागी। बुद्ध ने उसका अनुरोध स्वीकार करके उसका धर्मनाम 'विमल कौडन्न' रखा और उसको आम्रवन मे ही निवास करने की अनुमति दे दी। वहा पहले ही दो सौ के करीब भिक्खु रहते थे। यहीं पर उसने बुद्ध की चिकित्सा उस समय की थी जब वह गृद्धकूट शिखर पर दुर्घटनाग्रस्त हो गए। बहुत से बड़े-बड़े आम वृक्षो के कारण आम्रवन बहुत ही आनददायक स्थान था। भिक्खु विमल कौडन्न ने जड़ी-बूटियो से औषधिया बनाने का कार्य जारी रखा।

अध्याय सतहत्तर

जन्म-मृत्यु भी माया

वर्षा-प्रवास समाप्त होने के पश्चात् बुद्ध और आनद ने मगध राज्य भर मे यात्राए की। वे सभी धर्म-केन्द्रो मे ठहरते जिससे बुद्ध भिक्खुओ और उपासको को धर्म-शिक्षा दे सके। बुद्ध प्रायः आनद को सुदर प्राकृतिक दृश्य देखने को प्रेरित करते थे क्योकि बुद्ध की सेवा करते हुए आनद प्रायः इन दृश्यो को देखने का अवसर ही नहीं पाते थे। बुद्ध की सेवा मे आनद बीस वर्ष से थे। अतीत पर दृक्पात करते हुए आनद को स्मरण हुआ कि बुद्ध किस प्रकार गृद्धकूट शिखर, सप्तपाणि के मैदानो के सुन्दर दृश्य दिखाया करते। आनद जानते थे कि सुन्दर या कुरूप के भेद-भाव से परे रहकर भी बुद्ध वास्तव मे सुदर वस्तुओ का आनद लेते थे।

आगामी वर्षा ऋतु मे बुद्ध जेतवन लौट आए थे। राजा प्रसेनजित प्रवास पर थे, अत. बुद्ध के दर्शनार्थ तब आ सके जब आधा वर्षा-प्रवास बीत चुका था। बुद्ध से मिलने पर राजा ने कहा कि मै राजमहल तक ही स्वय को सीमित नहीं रखना चाहता। अब मैं वयोवृद्ध हो चुका हू, अतः बहुत से राजकार्य निपटाने के अधिकार विश्वस्त मन्त्रियो को सौप दिए हैं जिससे स्वय यात्रा करके अपने देश और पड़ोसी राज्यो के दर्शनीय स्थान देख सके। जब भी वह किसी अन्य देश मे जाते तो कभी औपचारिक स्वागत-समारोह किए जाने की अपेक्षा नहीं करते। वह सामान्य तीर्थ-यात्री की भाति जाते और यात्राओ मे चलित ध्यान का अभ्यास करते। उन्होने बुद्ध को बताया कि इन यात्राओ से वह कितनी ताजगी अनुभव करते है।

"प्रभु बुद्ध, मेरी आयु आपके समान अठहत्तर वर्ष की हो गई है। मै जानता हू कि आप भी सौन्दर्य युक्त स्थानो पर जाते है। वहा जाकर आप लोगो को शिक्षा देते और उनका मार्ग-दर्शन करते हैं। इस प्रकार आपकी

यात्राए प्रकाश फैलाने वाली होती है किन्तु मेरी यात्रा से किसी और को लाभ नहीं पहुचता।"

राजा ने बुद्ध को अपने अतर के कष्ट का भी परिचय दिया और बताया कि सात वर्ष पूर्व राजधानी मे सत्ता-उलटने का जो प्रयास हुआ था, उसमे मैंने गलती से प्रधान सेनापति को दोषी मानकर उनको मृत्यु-दड दे दिया था। कुछ वर्षो बाद उन्हे पता चला कि सत्ता पलटने के प्रयास मे उनका हाथ नहीं था। यह जानकर मुझे दुख हुआ और प्रधान सेनापति के नेक नाम को बहाल करने के सभी प्रयास किए, उनकी पत्नी की हर सभव सहायता की और उस सेनापति के भतीजे जनरल कारायण को नया प्रधान सेनापति बना दिया।

वर्षा-पवास की शेष अवधि मे राजा हर दूसरे दिन जेतवन आते। कभी वह धर्म-शिक्षा सुनते और कभी बुद्ध के पास चुपचाप बैठते। वर्षा-प्रवास समाप्त होने पर उन्होने अपनी धर्म-यात्राए आरभ कर दी और राजा घूमने निकल गए। एक दिन बुद्ध जब शाक्य राज्य के छोटे जिले मेदालुम्पा मे ठहरे थे तो राजा प्रसेनजित उनसे मिलने अकस्मात् आ पहुचे। हुआ यह कि राजा राजकुमार विद्युताभ और प्रधान सेनापति कारायण के साथ उसी क्षेत्र मे थे। राजा को पता चला कि बुद्ध पास ही मे आए हुए हैं जहा आधे दिन मे पहुचा जा सकता है। उन्होने अपने रथ उसी ओर ले चलने को कहा। उन्होंने बुद्ध के निवास वाले उद्यान के बाहर ही रथ रुकवाए और बुद्ध की कुटिया पर जा पहुचे।

कुटिया का द्वार बद था। वह बाहर टहलने लगे और अपना राजकीय खड्ग और मुकुट सेनापति को देकर कहा कि इन्हे रथ पर रख जाओ। बुद्ध की कुटिया का द्वार खुला और बुद्ध राजा प्रसेनजित को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। वहा मान्य सारिपुत्त और आनद भी थे और उन्होने राजा का स्वागत किया। राजा ने बुद्ध के चरण पकड लिए और कई बार कहा, "मै कोसल नरेश राजा प्रसेनजित आपको सादर आदराजलि अर्पित करता हू।" बुद्ध ने उन्हे उठाकर कहा, "महामहिम, हम लोग बहुत दिनो से घनिष्ठ मित्र है, तब आज आप क्यो इस प्रकार औपचारिक रूप से आदर प्रकट कर रहे है ?"

राजा ने कहा "प्रभु मै वयोवृद्ध हो गया हू। मुझे आपसे बहुत-सी बाते करनी है ताकि मैं अपने हृदय के उद्गार समय रहते व्यक्त कर सकू। प्रभु मुझे क्योकि आज बुद्ध, सद्धर्म और सघ के प्रति पूर्ण निष्ठा है। मैंने

बुद्ध ने कहा, "ठीक है, आप अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखिए।"

वह राजा को द्वार तक छोड़ने आए। उन्होने मुड़कर देखा तो सारिपुत्त और आनद हाथ जोडे खडे थे। उन्होने कहा कि राजा प्रसेनजित अभी त्रिरत्नो के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करके गए हैं। कृपया भिक्खुओ को इस विषय मे वताइए, जिसमे उनकी निष्ठा और दृढ़ हो।

दो महीने वाद बुद्ध गृद्धकूट शिखर पर लौट आए। यहा आने पर उन्होने सुना कि राजा प्रसेनजित विपम स्थितियो मे मरे और मान्य मौद्गल्यायन की विरोधी सन्यासियो ने वेणुवन के वाहर हत्या कर दी।

राजा प्रसेनजित श्रावस्ती के राजमहल मे शातिपूर्वक नहीं मरे वल्कि राजगृह मे एक धर्मशाला मे मरे। उस दिन बुद्ध से मिलकर जव वह कुटिया से वाहर, वहा आए जहा रथ छोडे थे तो उन्हे वहा चार के स्थान पर एक ही रथ मिला। उनके सारथी ने वताया कि सेनापति कारायण सभी को वलात् श्रावस्ती ले गए। सेनापति के पास राजकीय खड्ग और मुकुट था ही। उसने राजकुमार से कहा कि राजा प्रसेनजित वूढे हो गए हैं, तुम सिहासन पर वैठो। राजकुमार के मना करने पर उसने कहा कि यदि आप नहीं वैठे तो मैं सिंहासन पर वैठता हू। राजकुमार के सामने राजा वन जाने के अलावा कोई रास्ता नहीं था।

राजा प्रसेनजित सीधे राजगृह गए जिससे अपने दामाद राजा अजातशत्रु से सहायता ले सके। राजा इतनी उलझन मे थे कि रास्ते भर भोजन नहीं किया। केवल पानी पीते रहे। राजगृह काफी रात गए पहुचे तो उन्होने महल के द्वार खुलवाना उचित नहीं समझा और एक धर्मशाला मे रुके। उस रात राजा की तवियत अचानक खराव हो गई और अपने सारथी की गोद मे उन्होने प्राण त्यागे। सवेरे राजा अजातशत्रु को इसका समाचार मिला तो उन्होने राजा प्रसेनजित का राजकीय सम्मान के साथ शव-सस्कार किया। इसके वाद वह राजा विद्युताभ को सिंहासन-च्युत करने के लिए सेना भेजना चाहता था किन्तु भिक्खु विमल कौडन्न (जीवक) ने कहा कि राजा प्रसेनजित तो रहे नहीं और उनका पुत्र राज्य सिंहासन का स्वाभाविक उत्तराधिकारी है। अत उससे युद्ध छेड़ने की कोई सार्थकता नहीं है। राजा ने यह परामर्श मानकर नए राजा को मान्यता प्रदान कर दी।

मान्य मौद्गल्यायन बुद्ध के सारिपुत्त और कौडन्न के समान ही वरिष्ठ शिष्य थे। वहुत से अन्य वरिष्ठ शिष्यो की भी मृत्यु हो गई थी जिनमे बुद्ध के प्रथम पाच शिष्यो में से एक कौडन्न भी थे। काश्यप वधु और

अध्याय अठहत्तर

दो हजार गैरिक चीवर

एक दिन अपराह्न मे बुद्ध चलित ध्यान कर रहे थे तो देखा दो भिक्खु खटिया पर डालकर देवदत्त को ला रहे है। मान्य देवदत्त का स्वास्थ्य कई वर्षो मे ठीक नही चल रहा था। मृत्यु के कगार पर स्वय को देख देवदत्त ने बुद्ध के अतिम दर्शन करने की इच्छा प्रकट की थी। देवदत्त के साथ केवल छः भिक्खु रह गए थे। उनके निकटतम सहयोगी मान्य कोकलिक वर्षो पूर्व असाधारण रोग से मर गए थे। अतिम वर्षों मे देवदत्त अकेले गयाशीर्ष पर अपने गत जीवन के कार्यों की समीक्षा करते रह गए थे। मान्य देवदत्त के आगमन की सूचना पाते ही बुद्ध तुरन्त अपनी कुटिया पर उनका स्वागत करने आए। देवदत्त मे उठकर बैठने की भी शक्ति नही रह गई थी। बस वह बोल ही पाते थे। कष्टपूर्वक उन्होने हाथ जोड़े और कहा, "बुद्ध शरण गच्छामि।" बुद्ध ने स्नेहपूर्वक अपना हाथ उनके मस्तक पर रखा। उसी रात मान्य देवदत्त का निधन हो गया।

ग्रीष्म ऋतु थी और आकाश स्वच्छ एव नीला था। बुद्ध यात्रा पर निकलने ही वाले थे कि राजा अजातशत्रु के विदेश मत्री आए और कहा कि राजा अजातशत्रु गगा के उत्तर मे अवस्थित वज्जि राज्य पर आक्रमण करने की सोच रहे है। आक्रमण करने से पूर्व वह बुद्ध का परामर्श लेना चाहते थे। उस समय आनद भी बुद्ध के पीछे खडे पखा झल रहे थे। बुद्ध ने आनद की ओर देखकर पूछा, "आनन्द, तुमने सुना है कि वज्जि सघ के लोग बड़ी सख्या मे मिल बैठकर राजनीति पर चर्चा करते है या नही ?"

आनद ने कहा "प्रभु मैंने सुना है कि वज्जि सघ के लोग बड़ी सख्या में एकत्र होकर राजनीतिक विषयो पर चर्चा किया करते है।"

"इसका अर्थ है कि वज्जि सघ फल-फूल रहा है। मुझे यह बताओ कि क्या उनकी बैठको मे सहयोग और एकता की भावना रहती है ? क्या वज्जि के लोग सघ द्वारा पारित कानूनो का पालन करते है ? क्या वज्जि सघ के लोग सुयोग्य नेताओ का आदर करते है और उनकी शिक्षाए मानते हैं ? क्या वज्जि मे बलात्कार या अन्य हिंसक अपराध होते है ?"

आनद ने बताया कि "वज्जियो मे सहयोग व एकता है, वे कानूनो का पालन करते है और सुयोग्य नेताओ का आदर करते है तथा वहा अपराध न के बराबर है।"

"तब वज्जि समृद्ध होते रहेगे। क्या वज्जि लोग अपने पूर्वजो की समाधियो की सुरक्षा तथा रख-रखाव करते है ? क्या वज्जि सघ के लोग सबोधि प्राप्त आध्यात्मिक गुरुओ का सम्मान करते हैं, उनकी शिक्षाओ का पालन एव अध्ययन करते है ?" आनद ने इन प्रश्नो का भी उत्तर 'हा' मे दिया।

"आनद, तब तो वज्जि सघ अब भी समृद्धि के पथ पर चल रहा है। कुछ समय पूर्व तथागत को वज्जि नेताओ से वार्ता का अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय तथागत ने देश को समृद्ध बनाने के सात मार्ग बताए थे। इनके अनुसार आपस मे मिलकर विचार-विमर्श करना, सहयोग एव एकता बनाए रखना, राज्य द्वारा निर्धारित विधियो (कानूनों) का पालन करना, सुयोग्य नेताओ का सम्मान करना तथा उनकी शिक्षाओ पर चलना, बलात्कार और हिंसक अपराधो से बचे रहना, पूर्वजो की समाधियो की रक्षा तथा सबोधि प्राप्त गुरुओ का सम्मान करना और उनकी शिक्षाओ के अनुरूप चलना सम्मिलित था। वज्जि सघ की जनता इन सातो नियमो का पालन करती है इसलिए तथागत का विश्वास है कि मगध के लिए वज्जि सघ को पराजित करना असभव होगा।"

मत्री ने कहा, "प्रभु, यदि वज्जि के लोग इन सात मे से एक नियम का भी पालन करते हैं, तो भी राज्य समृद्ध होगा। मै नहीं समझता कि राजा अजातशत्रु केवल सैन्य और शस्त्र बल से ही जीत सकेगे। वह तभी सफल हो सकते है जब वह वज्जि के नेताओ मे मतभेद के बीज बो सके। प्रभु, आपके परामर्श के लिए धन्यवाद। अब मै विदा की आज्ञा चाहता हूं।"

मत्री के जाने के बाद वुद्ध ने कहा, "यह मत्री षड्यत्र करना जानता है। तथागत को आशका है कि भविष्य मे अजातशत्रु अवश्य ही वज्जि संघ से युद्ध करने के लिए अपनी सेनाए भेजेगे।"

उसी अपराह्न को वुद्ध ने आनद से कहा कि राजगृह मे रह रहे सभी

भिक्खु-भिक्खुनियो को गृद्धकूट शिखर पर बुलाओ। सात दिन मे जब सब एकत्र हो गए तो उनकी सख्या दो हजार थी। गृद्धकूट शिखर पर दो हजार गेरुिक चीवरो की छटा देखते ही बनती थी।

बुद्ध धीरे-धीरे चलकर शिष्यो के समक्ष धर्म-पीठ पर जा बैठे। उन्होने सब को देखा, मुस्कराए और बोले, "भिक्खुओ एव भिक्खुनियो, तथागत तुम्हे सात विधिया बताते हैं जिनसे सघ को पतन और विघटन बचाया जा सके।

"सर्वप्रथम, प्राय. दल बनाकर आपस मे मिलते रहो और सद्धर्म-चर्चा करते रहो। दूसरे, मिलने और विदा होने के समय सहयोग और एकता की भावना रखो। तीसरे, निर्धारित शीलो का पालन करो। चौथे, सघ के गुणी और अनुभवी वरिष्ठ भिक्खुओ का आदर करो और उनके मार्ग-निर्देशो का पालन करो। पाचवे, आकाक्षाओ एव लोभ से मुक्त, शुद्ध एव सादगी भरा जीवन बिताओ। छठे, उद्वेग रहित शांतिपूर्ण जीवन का आनद उठाओ। सातवे, शाति, आनद और मुक्ति की प्राप्ति हेतु आत्म-चेतना को जागृत रखो जिससे मित्रो को सद्धर्म मार्ग पर शरण दे सको और उनकी सहायता कर सको।

"यदि इन सात नियमो का पालन करोगे तो धर्म की समृद्धि होगी और सघ कभी पतनोन्मुख नहीं होगा। बाहर की कोई शक्ति सघ को तोड़ नहीं सकती। आंतरिक विभेद और मतभेद से ही सघ खडित हो सकता है। शेर के मर जाने पर जैसे कोई अन्य पशु उसको नहीं खा सकता, उसके अपने शरीर के कीड़े ही उसका मास खा जाते है, उसी प्रकार अपने भीतर के कीडे ही अपने शरीर को नष्ट करते है। इन सात नियमो का पालन कर सद्धर्म की रक्षा करो। कभी अपने भीतर विनाशक कीड़े मत पनपने दो।"

बुद्ध ने सभी को परामर्श दिया कि व्यर्थ की गप्पे मारने, अत्यधिक सोने, प्रसिद्धि या मान्यता- प्राप्ति की चेष्टा मत करो, कामनाओ के पीछे मत भागो और ऐसे लोगो के साथ समय नष्ट मत करो जो घटिया चरित्र वाले हो या जो ऊपरी ज्ञान से ही सतुष्ट रहते हो। सचेतनावस्था मे यात्रा करो, धर्म का विवेचन करो, ऊर्जा, आनद, सहजता और ध्यान पर चित्त लगाओ। उन्होने अनित्यता, शून्यता, अनाशक्ति, मुक्ति-प्राप्ति और कामनाओ तथा तृष्णा को जीतने की अपनी शिक्षाओ का भी स्मरण कराया।

दो हजार भिक्खु और भिक्खुनिया दस दिनो तक गृद्धकूट शिखर पर रहे। प्रतिदिन बुद्ध ने उन्हे देशना की। दसवे दिन बुद्ध ने कहा कि अब आप लोग अपने केन्द्रो पर जा सकते है। इन शिष्यो के चले जाने पर बुद्ध ने कहा कि अब हम वेणुवन चलेंगे।

वेणुवन जाकर बुद्ध और आनद राजगृह से आम्रलतिका गए जिसे राजा विम्बिसार ने अपने उद्यान मे वनवाया था। नालदा जाने वाले भिक्खु प्राय· यहा ठहरते थे। एक वार यहा मान्य सारिपुत्त और राहुल भी ठहरे थे। बुद्ध ने आम्रलतिका मे रहने वाले भिक्खुओ को शीलो, ध्यान और प्रज्ञा के विषय मे देशना की।

सौ भिक्खुओ, मान्य आनद, सारिपुत्त और अनिरुद्ध सहित बुद्ध नालदा गए और नालदा मे प्रवरिका आम्रवन मे ठहरे। एक दिन सारिपुत्त बुद्ध के पास वहुत देर तक मौन वैठे रहने के पश्चात् वोले, "प्रभु मुझे विश्वास है कि अतीत, वर्तमान या भविष्य मे ऐसा आध्यात्मिक गुरु नहीं हुआ होगा जो ज्ञान और साधना-सिद्धि मे आपके समान हो।"

बुद्ध ने कहा, "क्या आप अतीत, वर्तमान और भविष्य के सभी अध्यात्म गुरुओ से मिले हो, जो इस प्रकार की वात कहने का साहस कर रहे हो ?"

"प्रभु, मै तीनो कालो के सभी गुरुओ से तो नही मिला हू किन्तु इतना भलीभाति जानता हू कि चालीस वर्ष आपके साथ रहने, आपकी देशना सुनने और आपकी जीवन-चर्या को देखने के वाद कह सकता हू कि आपने छहो इद्रियो पर विजय प्राप्त कर ली है, आप सतत् जागृत अवस्था मे रहते हैं, तृष्णा और कामनाओ, क्रोध एव घृणा, विस्मृति, उद्वेग, शका आदि बाधाओ के कोई चिह्न आप मे नहीं है। ऐसे गुरु अतीत, वर्तमान या भविष्य मे हुए या होगे जिन्हे आपके समान ज्ञान और सवोधि-सिद्धि प्राप्त हुई हो किन्तु कोई भी आप सरीखा प्रज्ञा सम्पन्न नही होगा।"

नालदा मे बुद्ध ने शीलो के पालन, ध्यान साधना और प्रज्ञा के विषय मे और प्रगति करने सवधी देशना की। वहा से वह पाटलिग्राम आए और भोजनोपरान्त धर्म-देशना की। अगले दिन मान्य सारिपुत्त को सदेश मिला कि उनकी माताजी जो सौ वर्प से अधिक आयु की थीं, गभीर रूप से रुग्ण हैं। मान्य सारिपुत्त बुद्ध से आज्ञा लेकर और तीन बार बुद्ध को नमन करके चुड नामक अनुचर के साथ रवाना हो गए।

जब बुद्ध और भिक्खु पाटलिग्राम के नगर द्वार से निकल रहे थे तो राजा अजातशत्रु के दो मत्रियो ने बताया कि राजा अजातशत्रु ने उन्हे पाटलिग्राम को महानगर वनाने का कार्य सौंपा है। आप अभी जिस द्वार से गुजरे हैं, उसका नाम हम 'गौतम द्वार' रखना चाहते है और जहा से आप नौका लेगे, उसका नाम 'गौतम घाट' रखेगे।

वर्षा के कारण गगा मे जल-स्तर बहुत ऊचा हो गया था। पाच नौकाओ मे बैठकर बुद्ध और उनके भिक्खुओ ने गगा नदी को पार किया। आनद बुद्ध के साथ ही खडे थे। उन्हे पच्चीस वर्ष पूर्व की वह घटना याद आई जब बुद्ध वैशाली आए थे तो वहा प्लेग फैली हुई थी जिसमे अनगिनत लोग मरे थे और उस महामारी को रोकने की चिकित्सको की चेष्टाए और देवी-देवताओ की प्रार्थनाए सभी व्यर्थ ही रहीं। उस समय बुद्ध को आमत्रित किया गया था। बुद्ध वहा नाव से आए तो क्रमश महामारी का प्रकोप कम हुआ और अत मे सब ठीक हो गया। उस समय बुद्ध ने वैशाली मे छः महीने तक निवास किया।

जब वे घाट पर पहुचे तो आनद वर्तमान क्षणो मे लौट आए। बुद्ध वहा से चलकर कोटिग्राम पहुचे जहा बहुसख्यक भिक्खुओ के समक्ष देशना की। उन्होने प्राणायाम के चार चरणो, शीलो, ध्यान तथा प्रज्ञा विषयो पर प्रकाश डाला। कई दिनो तक वहा रहकर बुद्ध नदिका गए जहा ईटो से बने 'गिंजिकावस्था' भवन मे सोये। यहा रहने के दौरान बुद्ध ने उन अनेक शिष्यो का स्मरण किया जो इसी क्षेत्र मे रहते थे और अब जिनका निधन हो चुका था। वहा के लगभग पचास भिक्खु आवागमन से मुक्ति की धारा की किसी न किसी स्थिति तक पहुचने के सुफल प्राप्त कर सके। भिक्खु सल्ह और नदिका 'अर्हत' पद प्राप्त कर चुके थे।

बुद्ध ने अपने शिष्यो को शिक्षा दी कि जिसे बुद्ध, धर्म और सघ मे पूर्ण निष्ठा हो, उसे स्वय अपने अन्तश्चेतन द्वारा अपने आप यह जान लेना चाहिए कि वह मुक्ति की धारा के किस चरण तक पहुचे है। इस विषय मे किसी से पूछने की आवश्यकता नहीं। नदिका मे बुद्ध ने शीलो, ध्यान और प्रज्ञा के विषय मे शिक्षा दी। वहा से चलकर बुद्ध वैशाली आए और आम्रपाली के आम्रवन मे ठहरे। वहा उन्होने शरीर, भावनाओ, चित्त और चित्त के विषयो के सबध मे देशना की।

बुद्ध के आगमन की सूचना पाकर आम्रपाली तुरन्त उनसे मिलने आई। उसने बुद्ध और सभी भिक्खुओ को अपने यहा भोजन पर निमत्रित किया। भोजनोपरान्त आम्रपाली ने भिक्खुनी बनने की प्रार्थना की और उसे प्रव्रज्या दे दी गई।

वैशाली मे रहते समय बुद्ध ने शीलो, ध्यान और प्रज्ञा के विषय मे और देशना की। वहा से वह विल्वगामका गाव गए। बुद्ध ने वर्षा-प्रवास वही व्यतीत करने का निश्चय किया। सर्वोच्च प्राप्त करने के बाद बुद्ध का यह

नाव द्वारा वैशाली पहुंचने पर बुद्ध का भव्य स्वागत

पैंतालीसवा वर्षा-प्रवास था। उन्होने इस क्षेत्र के भिक्खु-भिक्खुनियो से कहा कि वे वैशाली के धर्म-केन्द्रो या अपने मित्रो या सबधियो के घर ठहरकर वर्षा-प्रवास करे।

वर्षा-प्रवास के दौरान बुद्ध बहुत ही गभीर रूप से रुग्ण हुए। यद्यपि उन्हे बहुत कष्ट था, किन्तु उन्होने मुह से एक शब्द भी नहीं कहा। लेटे हुए वह अपनी श्वसन-क्रिया पर ध्यान करते रहे। पहले तो उनके शिष्यो ने समझा कि बुद्ध बचेगे नहीं किन्तु धीरे-धीरे वह स्वस्थ होते गए। कई दिनो के पश्चात् वह इतने ठीक हो गए कि अपनी कुटिया के बाहर कुर्सी पर बैठ सके।

अध्याय उन्यासी

चंदन के काष्ठफूल

मान्य आनद बुद्ध के समीप वैठकर नम्रतापूर्वक वोले, "इतने दिनो से मै आपके साथ रहा हू, मैने कभी आपको इतना रुग्ण नही देखा। इससे मैं इतना चेतना-शून्य हो गया कि न तो स्पष्ट रूप से सोच पा रहा हू और न अपना कर्त्तव्य पालन कर पा रहा हू। अन्य लोग नहीं समझते थे कि आप वचेगे किन्तु मैंने मन मे कहा कि वोधिसत्व ने अभी मुझे अपनी अतिम देशना नही दी है और निश्चय ही वह 'निर्वाण शातम्' की अवस्था मे प्रवेश नहीं कर सकते। इस विचार ने मुझे निराशा के कगार से लौटा लिया।"

वुद्ध ने कहा, "आनद, तुम या सघ मुझसे और क्या अपेक्षा करते हो ? मैंने सद्धर्म मार्ग की पूर्ण एव गहन शिक्षा प्रदान कर दी है। तुम समझते हो कि मैंने भिक्खुओ से कुछ छिपाकर शेष रख लिया है ? आनद सद्धर्म शिक्षा ही सच्ची शरण है। प्रत्येक व्यक्ति को इन देशनाओ को ही अपना मार्ग-दर्शक समझना चाहिए। इन शिक्षाओ को जीवन मे अपनाओ। 'अप्प दीपोभव' प्रत्येक अपना दीपक स्वय बने। आनद बुद्ध धर्म और सघ सबके हृदयो मे वसा है। सबोधि- प्राप्ति की सक्षमता ही वुद्ध है, सद्धर्म-शिक्षाए ही धर्म है और लोक समुदाय का समर्थन ही सघ है। इस प्रकार कोई भी आपके हृदय मे समाए वुद्ध, धर्म और सघ को तुमसे विलग नहीं कर सकता। धरती-आकाश भले ही लोट-पोट हो जाए, त्रिरत्न प्रत्येक के अतस मे यथावत् रहेगे। ये ही सच्ची शरण हैं, मार्ग-दर्शक है। जब भिक्खु जागृतावस्था मे रहता है और अपने शरीर, भावनाओ, चित्त तथा चित्त के विषयो की धारणा करके ध्यान करता है तो वह स्वय मे एक द्वीप बन जाता है। वह सबसे मच्ची शरण मे होता है। कोई भी व्यक्ति (महान गुरु तक) तुम्हारे उस

चेतना-द्वीप से, तुम्हारे हृदय मे वसे त्रिरत्नो से अधिक स्थायी शरण दाता नहीं हो सकता।"

वर्षा-प्रवास की समाप्ति के वाद वुद्ध के स्वास्थ्य मे पर्याप्त सुधार हो गया था।

एक दिन श्रामणेर चड, जो मान्य सारिपुत्त की सेवा मे था, आनद को खोजते आया। उसने वताया कि सारिपुत्त का निधन हो गया। उसने सारिपुत्त का चीवर, भिक्षा-पात्र और अस्थि-कलश आनद को दे दिया और मुह ढाप कर रोने लगा। मान्य आनद भी रोये। चड ने वताया कि सारिपुत्त ने अतिम क्षणो तक अपनी माता की सेवा की। उनके शव-सस्कार के वाद सारिपुत्त ने अपने सवधियो और गाव वालो को वुलाकर धर्म-शिक्षा दी। उन्होने त्रिरत्नो का उच्चारण कराया और साधना करने की पद्धति वताई। इसके वाद वह पद्मासन पर वैठ गए और निर्वाण को प्राप्त हो गए। शरीर त्यागने से पूर्व उन्होने चड से कहा कि मैं चाहता हू कि मेरा चीवर, भिक्षा-पात्र और अस्थि-कलश वुद्ध को सोप देना। वह यह भी चाहते थे कि वुद्ध चड को अपनी सेवा मे रखे। मान्य सारिपुत्त वुद्ध से पूर्व ही शरीर त्यागना चाहते थे।

आनद ने अपने आसू पोंछे और चड के साथ वुद्ध के पास पहुचे। वुद्ध शात भाव से अपने श्रेष्ठतम शिष्य का चीवर, भिक्षा-पात्र और अस्थि-कलश देखते रहे। विना एक शब्द भी वोले उन्होने चड के सिर पर सस्नेह हाथ फेरा।

मान्य आनद ने कहा, "प्रभु, वधु सारिपुत्त के निधन का समाचार सुनकर मै स्तब्ध रह गया हू। मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है। मै अत्यन्त दुखी हू।"

आनद की ओर देखकर वुद्ध ने कहा "क्या तुम्हारे वधु तुम्हारे शील, ध्यान-साधना, प्रज्ञा और मुक्ति भी निधन के समय साथ ले गए है ?"

आनद ने कहा, "मेरे विषाद का कारण यह नहीं है। जव वधु सारिपुत्त जीवित थे तो देशना को हृदयगम करके तदनुरूप जीवन व्यतीत करते थे, वे हम सवको शिक्षा देते मार्ग-दर्शन करते और प्रेरणा देते थे। अव वधु सारिपुत्त और मोद्गल्यायन नहीं रहे। इनके विना सव खाली-खाली लगता है। क्या यह दुख का विषय नहीं है ?"

वुद्ध ने कहा, "कितनी वार मैंने स्मरण कराया है कि जो जन्म लेता है, वह मरता है। जो मिलता है, वह विछुडता है। सभी धर्म अनित्य है। हमे उनके साथ वधना नहीं चाहिए। आपको जन्म-मरण, वर्द्धन और विसर्जन

के पार जाना है। सारिपुत्त एक वड़ी शाखा थे जो पूरे वृक्ष को पोषण दे रहे थे। वह शाखा अव भी सबोधि प्राप्त करने के लिए भिक्खुओ का मार्ग-दर्शन कर रही है। यदि तुम आखे खोलकर देखोगे तो सारिपुत्त को अपने मे, तथागत और भिक्खु समुदाय तथा उन लोगो मे विद्यमान पाओगे, जिन्हे उन्होने सद्धर्म की शिक्षा दी थी। सारिपुत्त के दर्शन श्रामणेर चड और उनके साथ यात्रा करने वाले हर व्यक्ति मे कर सकते हो। आखे खोलोगे तो सारिपुत्त सर्वत्र दिखेगे। यह मत समझो कि सारिपुत्त हम लोगो के साथ नही है। वह यहा है और सदैव रहेगे।

"आनद, मारिपुत्त वोधिसत्व थे जिन्होने अपने ज्ञान और प्रेम से अन्य लोगो को मवोधि का तट दिखाया। आने वाली पीढ़िया उनको महान प्रज्ञा-सपन्न वोधिसत्व के रूप मे स्मरण करेगी। आनद भिक्खुओ मे सारिपुत्त के समान अनेक भिक्खु महान वोधिसत्व की अवस्था प्राप्त कर चुके हैं। भिक्खु पूर्णा, भिक्खुनी यशोधरा और उपासक महान करुणा-सम्पन्न अनाथपिंडिक बोधिसत्व थे। तथागत मौद्गल्यायन साहस और ऊर्जा के बोधिसत्व थे। मान्य महाकाश्यप सादा जीवन के वोधिसत्व थे। मान्य अनिरुद्ध प्रयास और परिश्रम करने वाले वोधिसत्व थे। यदि भावी पीढिया आत्म-मुक्ति मार्ग पर साधनारत रहती है तो इस ससार मे वोधिसत्व अवतरित होते रहेगे।"

"आनद बुद्ध, धर्म और सघ मे निष्ठा रखना लोक मे निष्ठा रखना होगा। भविष्य मे सारिपुत्त, मौद्गल्यायन, पूर्णा, अनिरुद्ध, यशोधरा और अनाथपिंडिक के समान अन्य महान बोधिसत्वो का उदय हो सकता है। अत· बधु सारिपुत्त के निधन पर शोक मत करो।"

उसी दिन दोपहर को उन्होने गगा के तट पर सार्वजनिक रूप से सारिपुत्त के निधन की घोपणा की और भिक्खुओ को भरपूर प्रयास करके सारिपुत्त के समान बनने की प्रेरणा दी जिन्होने अन्य प्राणियो का कल्याण करने का महान व्रत लिया था। बुद्ध ने कहा, "भिक्खुओ, तुम स्वय अपनी शरण मे जाओ और स्वय ही प्रज्ञा-द्वीप बनो। किसी और पर निर्भर मत रहो। इससे तुम शोक और निराशा के भवर मे नही डूबोगे। आप सद्धर्म की शरण ग्रहण करो और धर्म को एक द्वीप मानो।"

एक दिन बुद्ध और आनद ने वैशाली मे भिक्षाटन किया और समीपस्थ जगल मे भोजन करके विश्राम के लिए चपला मदिर लौट चलने को कहा। रास्ते मे बुद्ध ने अनेक स्थानो पर रुककर प्राकृतिक दृश्य निहारते हुए कहा-"आनद, वैशाली बहुत सुदर है। यहा के सभी मदिर बहुत सुदर है। जिस चपला मदिर मे हम चल रहे है, वह भी बहुत सुदर है।"

बुद्ध के विश्राम की व्यवस्था करके आनद चलित ध्यान करने बाहर चले गए। उसी समय भूचाल का जोरदार झटका आया जिससे उनका चित्त और शरीर काप गए। वह झपटकर मदिर में आए तो बुद्ध को शात रूप से बैठा देखा। आनद ने बुद्ध को बताया कि अभी भूचाल आया। बुद्ध ने कहा, "आनद, तथागत ने निश्चय कर लिया है। तीन महीनो मे मैं शरीर-त्याग कर दूगा।"

मान्य आनद को लगा जैसे उनके हाथ-पाव लुज हो गए हो। उन्होने बुद्ध के समक्ष प्रणत होकर प्रार्थना की कि "प्रभु, इतनी जल्दी मत जाइए। कृपया अपने शिष्यो पर दया कीजिए।" बुद्ध ने कोई उत्तर नहीं दिया। आनद ने अपनी प्रार्थना तीन बार दोहराई।

इसके बाद बुद्ध ने कहा, "आनद, यदि तुम्हे तथागत मे निष्ठा है तो तुम समझ सकोगे कि मेरे निर्णय उपयुक्त समय पर होते हैं। मैंने कहा कि मैं तीन महीनो मे शरीर त्याग दूगा। आनद, इस क्षेत्र के सभी भिक्खुओ को महावन के कूटागार धर्म-कक्ष मे एकत्र करो।"

सात दिन बाद, डेढ हजार भिक्खु और भिक्खुनिया कूटागार धर्म-कक्ष मे जमा हुए। मच पर बैठकर बुद्ध ने सब को देखा और देशना आरभ की। "भिक्खुओ और भिक्खुनियो, अभी तक तथागत ने आपको जो देशना की है, उसके अनुसार आप लोग समझ-बूझकर अध्ययन करिए, उसे निरखिए-परखिए, साधना-अभ्यास कीजिए और अपने आप उनका परीक्षण कीजिए जिससे आप उन देशनाओ को भावी पीढियो को सौंप सको। सद्धर्म-मार्ग के अनुरूप जीवन-यापन और साधना-अभ्यास मे समस्त प्राणियो को शाति, आनद और हर्षोत्फुल्लता प्रदान कीजिए।

"तथागत की शिक्षाओ का सार सचेतनता के चार चरणो, चार सद्प्रयासो, आत्म-शक्ति के चार आधारो, पच स्कधो, पाच शक्तियो, सबोधि के सात सोपानो, अष्टांगिक मार्ग, साधना और अनुभूति के बाद इन्हे औरो तक पहुचाना है।"

"भिक्खुओ, भिक्खुनियो, सभी धर्म अनित्य है। वे जन्मते और मरते है, उनका विकास एव विलय होता है। आत्म-मुक्ति प्राप्त करने के लिए घोर साधना करो। तथागत तीन महीनो मे शरीर त्याग देगे।"

सभी डेढ हजार शिष्य-शिष्याओ ने बुद्ध की देशना शातिपूर्वक सुनी। वे समझ गए कि बुद्ध के दर्शन और उनके श्रीमुख से देशना सुनने के

यह अतिम अवसर है। बुद्ध शरीर त्याग देगे, यह सुनकर सभी क मन भारी हो गए।

अगले दिन बुद्ध वैशाली मे भिक्षाटन के लिए गए और वन मे आकर भोजन किया। तदनतर वह और अनेक भिक्खु वैशाली से चल दिए। बुद्ध ने पलटकर वैशाली को देखकर आनद से कहा, "आनद, वैशाली वहुत सुदर है। तथागत इस नगर को अतिम वार देख रहे है।"

उस दिन अपराह्न मे बुद्ध ने भडग्राम मे शीलो, ध्यान-साधना, प्रज्ञा और मुक्ति के विषय मे देशना की। कई दिनो तक वहा विश्राम करके बुद्ध मट्टीग्राम, अम्वग्राम और जम्वूग्राम गए। वहा भी उन्होने सभी भिक्खुओ को देशना दी। वहा से वह भोगनगर आए और आनद मदिर मे रुके। उस क्षेत्र के अनेक भिक्खु उनका स्वागत करने आए। बुद्ध ने भिक्खुओ से कहा कि वह सभी देशनाओ की स्वय अनुभूति करके देखे।

"कोई भी धर्म शिक्षा दे और यह कहे कि वह शिक्षा प्रत्यक्ष अधिकारी विद्वान से प्राप्त की है, तव भी उसे तथागत की देशना के समान प्रामाणिक मानने मे जल्दवाजी मत करो। वह जो भी कहे, उसकी सूत्रो और शीलो से तुलना करो। यदि उसका कथन सूत्रो और शीलो से मेल न खाए तो उसे त्याग दो। यदि उसका कथन सूत्रो ओर शीलो के अनुरूप हो तो उसे स्वीकार करो और उस दिशा मे साधना करो।"

वहा से वुद्ध पावा गए और एक लोहार के पुत्र उपासक चड के आम्रवन मे ठहरे। चड ने वुद्ध और उनके साथ चल रहे तीन सौ शिष्यो को अपने निवास पर भोजन करने के लिए आमत्रित किया। चड की पत्नी तथा मित्रो ने भिक्खुओ को भोजन कराया और चड ने स्वय बुद्ध के लिए विशेषरूप से तैयार भोजन परोसा जिसमे चदन वृक्ष के काष्ठ फूलो से बना 'सुकर माद्दव' भी था।

भोजन करने के उपरान्त बुद्ध ने कहा कि "चड उस काष्ठ फूल से तैयार किए हुए भोजन को पृथ्वी मे गाढ़ दो और किसी और को मत खिलाना।"

जव सवने भोजन कर लिया तो बुद्ध ने देशना की और भिक्खुओ के साथ आम्रवन मे विश्राम किया। बुद्ध के पेट मे इतनी मरोड़े होती रहीं कि वह रात भर सो नहीं सके। सबेरे वह भिक्खुओ के साथ कुशीनारा के लिए चल पड़े। रास्ते भर पेट मे मरोड़े होती रही और कष्ट बहुत वढ़ जाने पर

नदी का गदा जल शुद्ध होने पर आनद को आश्चर्य

वह एक वृक्ष के नीचे विश्राम करने लेट गए। बुद्ध ने आनद से कहा कि पीने के लिए थोड़ा जल लाओ।

आनद ने कहा, "प्रभु पास की जल धारा का पानी गदा है क्योकि कई बैलगाड़िया उसे पार करके गई है। कृपया ककुथ पहुचने तक प्रतीक्षा कीजिए। वहा पानी साफ और मीठा होगा। वहा मै आपके लिए हाथ-पाव धोने ओर पीने के लिए पानी ले आऊगा।"

बुद्ध ने कहा, "आनद मुझे बहुत प्यास लगी है। यहीं से पानी लाओ।"

आदेशानुसार आनद गए तो उन्हे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि गदले पानी मे पात्र डालते ही जल स्वच्छ हो गया। पानी पीकर बुद्ध फिर लेट गए। मान्य अनिरुद्ध और आनद पास बैठ गए। सभी भिक्खु उनका घेरा बना कर बैठ गए।

उसी समय कुशीनारा का एक व्यक्ति वहां से गुजरा तो बुद्ध और भिक्खुओ को देखकर रुका, उनको नमन किया और बताया कि उसका नाम पुक्कुस है और मल्लवश का है। वह कभी आलार कालाम का शिष्य था जिनके शिष्यत्व मे गौतम ने भी तपश्चर्या की थी। उसने बुद्ध की बड़ी ख्याति सुनी है। उसने पुनः नमन करके बुद्ध को दो नये चीवर भेट किए। बुद्ध ने एक चीवर स्वीकार करके दूसरा चीवर आनद को भेट करने के लिए कहा। पुक्कुस ने आग्रह किया कि उसे भी शिष्य बना लिया जाए। बुद्ध ने उसे देशना की और त्रिरत्नो का उच्चारण कराया। पुक्कुस ने बुद्ध को धन्यवाद करके विदा ली।

यात्रा मे बुद्ध के वस्त्र गदे हो गए थे और फट भी गए थे। आनद ने सहायता देकर नया चीवर धारण करवाया। इसके बाद बुद्ध उठ खड़े हुए और कुशीनारा की ओर चलने का भिक्खुओ को सकेत किया। जब वे ककुथ नदी के तट पर पहुचे तो उन्होने नदी मे स्नान किया और अधिक जल पिया। वहा से वे आम के बाग मे पहुचे। वहा उन्होने भिक्खु चडक को कहा कि वह उनके अतिरिक्त चीवर को जमीन पर बिछा दे जिससे वह आराम कर सके।

बुद्ध ने आनद को बुलाया और कहा, "आनद, तथागत ने उपासक चड के यहा जो भोजन किया था, वह अतिम भोजन था। लोग चड पर यह आरोप न लगाए कि उसने खराब भोजन कराया, इसलिए मै बताना चाहता

हू कि जीवन मे मुझे दो ही वार का भोजन सर्वोत्तम लगा--एक सवोधि प्राप्त के पूर्व का भोजन और दूसरा निर्वाण-प्राप्ति से पूर्व का यह भोजन। उसे इस वात के लिए प्रसन्न होना चाहिए कि वुद्ध के दो अविस्मरणीय भोजनो मे से एक भोजन उसने कराया था।"

थोड़ी देर तक विश्राम करने के वाद वुद्ध उठ खड़े हुए और कहा, "आनद हमे हिरण्यवती नदी पार कर लेनी चाहिए। उसके दूसरे तट पर साल वृक्षो का जो वन है, वह वहुत सुदर है और मल्ल राज्य मे है। वह सुदर साल वन ही कुशीनारा का प्रवेश द्वार है।"

अध्याय अस्सी

महा-परिनिर्वाण

जव वुद्ध और भिक्खु साल वृक्षो के वन मे पहुचे, तव तक गोधूलि वेला हो गई थी। वुद्ध ने आनद से कहा कि दो साल वृक्षो के वीच मे लेटने के लिए स्थान वना दो। वुद्ध उत्तर दिशा मे सिर करके लेट गए। सभी भिक्खु उनके चारो ओर वैठ गए। वे जानते थे कि बुद्ध इसी रात निर्वाण प्राप्त कर लेगे।

वुद्ध ने वृक्षो की ओर देखकर कहा, "आनद देखो, अभी वसन्त ऋतु नहीं आई है किन्तु साल वृक्षो मे लाल-लाल कोपले निकल रही हैं। क्या तुम देख रहे हो कि फूलो की पत्तियां तथागत तथा भिक्खुओ के चीवरो पर गिर रही है ? यह वन वास्तव मे वहुत सुदर है। पश्चिम के आकाश मे ढलते सूर्य की लालिमा कितनी सुदर है ? साल वृक्षो की शाखाओ को लहराती हुई शीतल मद पवन कितनी सुखद है। तथागत को यह सब बहुत प्रिय और आत्म-विभोर करने वाला लग रहा है। भिक्खुओ, यदि आप लोग तथागत के प्रति अपना आदर और कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हो तो इसका यही एक मात्र मार्ग है कि उनकी शिक्षाओ के अनुसार अपने जीवन को ढालो।"

सायकालीन गर्मी हो रही थी और मान्य उपवन बुद्ध के ऊपर पखा झलने लगे किन्तु बुद्ध ने इससे उन्हे रोक दिया। सभवतः बुद्ध नहीं चाहते कि सूर्यास्त का सुदर दृश्य देखने मे बाधा पडे। बुद्ध ने मान्य अनिरुद्ध से पूछा–"आनद दिखाई नहीं दे रहा, वह कहा है ?"

एक अन्य भिक्खु ने कहा, "मैने आनद को कुछ वृक्षो के पीछे खड़े होकर रोते देखा था। वह बुदबुदा रहे थे, मैने अभी अपना आध्यात्मिक लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाया है और गुरुदेव विदा ले रहे हैं। गुरुदेव से अधिक मेरा ख्याल किसने रखा है।"

बुद्ध ने आनद को बुलवाया और उन्हे आश्वस्त कराते हुए कहा, "आनद, दुखी मत होओ। तथागत ने बार-बार कहा है, कि सभी धर्म अनित्य है। जन्म के साथ मरण, विकास के साथ ह्रास और मिलन के साथ विछोह जुडा हुआ है। मृत्यु न हो तो जन्म कैसे सभव है ? ह्रास के बिना विकास कहा होता है ? विछोह के बिना मिलन कैसा ? आनद, तुमने तन-मन लगाकर हृदय से मेरी अनेक वर्षों से सेवा की है। मुझे सहायता प्रदान करने मे तुमने अपनी समस्त शक्तिया लगा दीं, इसके लिए मै तुम्हारा अत्यन्त आभारी हू। आनद तुममे अनेक गुण है किन्तु तुम इससे भी आगे जा सकते हो। थोडा-सा और प्रयास करो तो तुम जन्म-मृत्यु के बधन काट सकोगे। तुम आत्म-मुक्ति प्राप्त कर सकते हो और प्रत्येक दु:ख से उबर सकते हो। मै समझता हू कि तुम यह करने मे सक्षम हो। इससे मुझे सर्वाधिक प्रसन्नता होगी।"

अन्य भिक्खुओ की ओर देखकर वह बोले, "आनद से अच्छा सेवक मुझे नहीं मिल सकता। पूर्व सेवक मेरा चीवर या भिक्षा-पात्र गिरा देते थे किन्तु आनद ने इन्हे कभी पृथ्वी पर गिरने नहीं दिया। आनद ने मेरी छोटी से छोटी आवश्यकता और बड़े से बड़े कार्यों का निर्वाह पूरे ध्यान से किया है। आनद को ज्ञात होता था कि कब कहा किस भिक्खु, भिक्खुनी, उपासक, राजा, अधिकारी अथवा अन्य सप्रदाय के मानने वाले को मुझसे मिलाना है। इन सभी मुलाकातो की उन्होने चतुराई के साथ प्रभावपूर्ण व्यवस्था की। तथागत को विश्वास है कि अतीत या भविष्य के सबोधि प्राप्त गुरु को आनद से अधिक प्रतिभासम्पन्न और निष्ठावान सहायक प्राप्त नहीं हो सकेगा।"

आनद ने आसू पोछकर कहा, "प्रभु, कृपा करके यहा शरीर मत त्यागिये। कुशीनगर मिट्टी की झोपडियो का छोटा सा कस्बा है। आपके लिए शरीर त्यागने के लिए राजगृह, श्रावस्ती, साकेत, कौशाम्बी अथवा वाराणसी ही उपयुक्त स्थान होगे। कृपया कोई अन्य स्थान शरीर त्यागने के लिए चुन लीजिए जिससे अधिक से अधिक लोग आपके अतिम दर्शन कर सके।"

बुद्ध ने उत्तर दिया, "आनद, कुशीनगर भी महत्त्वपूर्ण स्थान है, भले ही यह मिट्टी के मकानो का छोटा सा कस्बा ही क्यो न हो। तथागत को शरीर-त्याग के लिए यह स्थान उपयुक्त लग रहा है। आनद, क्या तुम देख रहे हो कि साल के वृक्ष मे कुसुम खिल रहे है ?"

बुद्ध ने आनद से कहा कि कुशीनगर जाकर मल्ल लोगो को सूचित कर दे कि बुद्ध आज रात अंतिम प्रहर मे साल वृक्षो के बाग मे निर्वाण

प्राप्त होंगे। मल्ल लोगो ने जब यह सुना तो सब शीघ्र बुद्ध के पास पहुचे। उनमे एक सन्यासी सुभद्र भी थे। सभी लोग तो बारी-बारी से बुद्ध को नमन कर रहे थे पर सन्यासी सुभद्र ने आनद से पूछा कि क्या मै बुद्ध से मिल सकता हू ? आनद ने यह कहकर मना कर दिया कि बुद्ध थके हुए है। बुद्ध ने उनकी बातचीत सुन ली और कहा, "आनद, सन्यासी सुभद्र को आने दो। तथागत उनसे मिलने को तैयार है।"

सन्यासी सुभद्र ने बुद्ध को नमन किया। वह बहुत समय से बुद्ध की देशना से आकृष्ट हो रहे थे किन्तु कभी उनसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। सुभद्र ने कहा "प्रभु मैने पुराण कास्सप, मास्करि गोशालि पुत्र अजित केसकम्बल, पकुध कात्यायन सजय वेरातिपुत्र और निर्ग्रंथ नाथपुत्र सरीखे आध्यात्मिक गुरुओ के विषय मे सुना है। आपके विचार से इनमे से किसी ने सबोधि प्राप्त कर ली है ?"

बुद्ध ने कहा "सुभद्र, उन्होने सबोधि प्राप्त की या नही, यह जानना अब आवश्यक नहीं है। तथागत आपको सद्धर्म का वह मार्ग बता सकते है, जिससे आप सबोधि प्राप्त कर सके।"

बुद्ध ने सुभद्र को अष्टागिक मार्ग की देशना की और अत मे कहा, "सुभद्र, जहा भी इस अष्टागिक मार्ग की सत्यनिष्ठा से साधना की जाएगी, लोगो को सबोधि प्राप्त हो सकेगी। सुभद्र, यदि तुम इस मार्ग के अनुसार साधना करोगे तो तुम्हे भी सबोधि प्राप्त हो सकेगी।"

सन्यासी सुभद्र को प्रतीत हुआ जेसे उसके हृदय-कपाट खुल गए हो। उन्होने बुद्ध से अनुरोध किया कि मुझे भी भिक्खु की प्रवृज्या दे दीजिए। बुद्ध ने आनद से कहा कि इन्हे अभी यहीं प्रवृज्या दे दी जाए। सुभद्र को बुद्ध ने अपना अंतिम शिष्य स्वीकार किया।

सुभद्र के केश-मुडन के उपरान्त उन्हे शीलो की शिक्षा दी गई और चीवर एव भिक्षा- पात्र दे दिया गया। इसके बाद बुद्ध ने अपने आस-पास बेठे हुए भिक्खुओ की ओर देखा। आस-पास के भिक्खु भी आ गए थे और उनकी सख्या पाच सौ हो गई थी। बुद्ध ने उनको देशना की।

"भिक्खुओ, सद्धर्म-शिक्षाओ के विषय मे आपके मन मे कोई सदेह हो तो अब भी तथागत से पूछने का समय है। इस अवसर को हाथ से मत जाने दो अन्यथा बाद मे कहोगे, 'उस दिन मै बुद्ध के सम्मुख था, किन्तु मैने पूछा नहीं।' " बुद्ध ने ये शब्द तीन बार दोहराए किन्तु कोई भिक्खु नहीं बोला।

मान्य आनद ने कहा, "प्रभु, कितनी अद्‌भुत स्थिति है। मुझे भिक्खुओ के सघ पर पूर्ण निष्ठा है। प्रत्येक ने आपकी देशना को भलीभाति हृदयगम कर लिया है। किसी को आपकी देशना के विषय मे अथवा सद्धर्म-मार्ग के विषय मे कोई शका नहीं है।"

वुद्ध ने कहा, "आनद, तुम विश्वास के आधार पर कह रहे हो किन्तु तथागत को प्रत्यक्ष ज्ञान है। तथागत जानते हैं कि सभी भिक्खुओ को त्रिरत्नो पर गहन निष्ठा है। इनमे से सबसे कम साधना-सम्पन्न भिक्खु भी जन्म-मृत्यु की धारा मे प्रवेश करने की अवस्था मे है।"

वुद्ध ने शात भाव से भिक्खु समुदाय को देखा और कहा, "भिक्खुओ, तथागत अव क्या कहते है, उसे सुनो। यदि जन्म है तो मृत्यु सुनिश्चित है। मुक्ति प्राप्त करने के पथ पर परिश्रमी वनकर आगे वढो।"

वुद्ध ने आखे वद कर लीं। वह अंतिम वचन वोल चुके थे। पृथ्वी हिली और शाल के फूल वर्षा की भाति झड़ पडे। प्रत्येक को प्रतीत हुआ कि उनके चित्त और शरीर दोनो ही कपायमान हो गए कि वुद्ध ने महा-परिनिर्वाण प्राप्त कर लिया है।

पाठको ! यह पुस्तक रख दीजिए और कुछ मिनटो तक मद-मद श्वासे लीजिए। इसके वाद ही पुस्तक आगे पढ़िए।

वुद्ध ने शरीर त्याग दिया था। कुछ भिक्खु वाहे फैलाए पृथ्वी पर गिर पडे और करुण स्वर मे कह उठे, "वुद्ध नहीं रहे ! प्रभु का निधन हो गया ! विश्व के नेत्र मुद गए ! अव कौन अपनी शरण मे लेगा ?"

कुछ भिक्खु इस प्रकार रो-पीट रहे थे तो कुछ भिक्खु शात वैठे थे और अपनी श्वसन-क्रिया पर ध्यान केन्द्रित कर उन शिक्षाओ का ध्यान कर रहे थे जो वुद्ध ने उन्हे दी थी। मान्य अनिरुद्ध ने उनसे कहा, "वधुओ, इस प्रकार करुणार्द्र होकर मत रोओ। वुद्ध देव ने शिक्षा दी थी कि जन्म के साथ मृत्यु, विकास के साथ ह्रास और सयोग से वियोग जुड़ा हुआ है। यदि आप वुद्ध की इन शिक्षाओ को समझेगे और उनका पालन करेगे तो इस प्रकार अधीर नहीं होगे। कृपया वैठ जाइए। प्राणायाम कीजिए। हम मौन धारण करेगे।"

सभी अनिरुद्ध के मतानुसार वैठकर उन सूत्रो का पाठ करने लगे जो उन्हें कठस्थ थे। देर तक हुए सूत्र-पाठ के वाद मान्य अनिरुद्ध ने धर्म-शिक्षा दी और वुद्ध के महान कार्यों—उनके ज्ञान, करुणा, सद्गुणो, ध्यान-साधना, आनद और समत्व भाव—की प्रशसा की। इसके वाद मान्य आनद ने वुद्ध

के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं की चर्चा की। रात भर दोनों मान्य शिष्य बारी-बारी से विवरण देते रहे जिन्हें उपासक शांत भाव से सुनते रहे। मशालें बुझ जाने पर नई मशालें जला दी गईं। इस प्रकार उस रात का प्रभात हुआ।

अध्याय इक्यासी

पुरातन पथ, धवल मेघ

जब पौ फटी तो मान्य अनिरुद्ध ने मान्य आनद से कहा, "वधुवर, कुशीनारा जाकर अधिकारियो को सूचित कर दीजिए कि हमारे गुरुदेव ने शरीर त्याग दिया है जिससे वे आगे की व्यवस्था आरभ कर सके।"

मान्य आनद चीवर धारण करके नगर गए। उस समय मल्ल राज्य के अधिकारी स्थानीय समस्याओ पर विचार-विमर्श कर रहे थे। वुद्ध के निधन का समाचार सुनकर उन्होने गहरा दुःख व्यक्त किया। उन्होने वुद्ध के अतिम सस्कार की व्यवस्था करने की खातिर अन्य सभी प्रश्नो पर विचार स्थगित कर दिया। दोपहर होते-होते कुशीनारा मे हर किसी को ज्ञात हो गया था कि वुद्ध साल वन मे निर्वाण को प्राप्त हो गए है। वहुत से रोने और छाती पीटने लगे। उन्हे इसी वात का खेद था कि जव वुद्ध जीवित थे तो उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त कर पाते। लोग पुष्पाजलि, सुगधित द्रव, सगीत वाद्य और कपडे के थान लेकर साल वन आए। उन्होने वुद्ध को नमन कर पुष्प-गुच्छ उनकी पार्थिव काया पर अर्पित किए और उनके शरीर पर सुगधित द्रव लगाए। उन्होने विशेष नृत्य-गान का आयोजन किया और कपडे के रग-विरगे थानो को वृक्षो के चारो ओर लपेटा। लोग पाच सौ भिक्खुओ के लिए भोजन भी लेकर आए। शीघ्र ही वह साल वन एक महोत्सव मे परिणत हो गया। मान्य अनिरुद्ध को वार-वार विशाल घटा वजवाना पडता जिससे एकत्र जन समुदाय शात हो जाए और सूत्रो का पाठ किया जा सके।

छः दिनो और छः रातो तक कुशीनारा और समीपस्थ पावा के लोग पुष्पाजलिया, सुगध-द्रव अर्पित करते रहे और नृत्य-गान होता रहा। दो साल वृक्षो के वीच पुष्पो के ढेर लग गए। सातवे दिन मल्ल अधिकारियो ने सुगध द्रव्ययुक्त जल मे स्नान किया और समारोह वाले वस्त्र धारण किए और

बुद्ध के पार्थिव शरीर के समीप छः दिनों तक कुशीनारा की जनता द्वारा पुष्प-गुच्छ, सुगंध-द्रव का अर्पण और सगीत नृत्य का आयोजन

बुद्ध के पार्थिव शरीर को नगर मे ले गए। वे उनके पार्थिव शरीर को नगर के केन्द्र मे से घुमाते हुए अपने मुख्य मदिर 'माकुत वधन' मदिर ले गए।

नगर के अधिकारियो ने राजोचित सस्कार की व्यवस्था की थी। बुद्ध के पार्थिव शरीर को कपडे की कई तहो मे लपेट गया और एक लौह वक्से मे रखा। उस वक्से को एक और वडे वक्से मे रखा गया। तव उसे चिता पर रखा गया। चदन की वडी चिता पर रखकर जव मुखाग्नि दी ही जा रही थी कि एक अश्वारोही तेजी मे आया और थोडी देर मे मुखाग्नि देने का अनुरोध किया। उसने वताया कि मान्य महाकाश्यप पाच सौ भिक्खुओ के साथ अंतिम सस्कार मे शामिल होने पावा से आ रहे हैं। मान्य महाकाश्यप चम्पा मे धर्मोपदेश कर रहे थे, जव वैशाली मे बुद्ध के शरीर त्यागने के निर्णय और उत्तर की ओर चले जाने का समाचार मिला। वह तुरत ही बुद्ध की खोज मे निकल पडे। जहा भी वह गए, वहीं के भिक्खु भी उनके साथ चल पडे। जव वह पावा पहुचे तो विपरीत दिशा से एक यात्री को मारा का फूल लगाए आते देखा। उसने वताया कि छ दिन पूर्व ही बुद्ध ने कुशीनारा के समीप सालवन मे शरीर त्याग दिया है। यह समाचार पाकर मान्य महाकाश्यप की खोज समाप्त हो गई थी और साथ के पाच सौ भिक्खुओ को लेकर कुशीनारा की ओर चल पडे। मार्ग मे एक अश्वारोही इस वात पर सहमत हो गया कि वह शीघ्र गति से जाकर उनके आगमन की सूचना वता दे दे कि मान्य महाकाश्यप बुद्ध के शव-सस्कार मे सम्मिलित होने आ रहे हैं।

दोपहर को मान्य महाकाश्यप और पाच सौ भिक्खु 'माकुत वधन' मदिर पहुच गए। उन्होने चीवर से अपने दाहिने कधे को ढका। हाथ जोडे और चिता की तीन वार परिक्रमा की। उन्होने पाच सौ भिक्खुओ सहित बुद्ध के पार्थिव शरीर को साष्टाग प्रणाम किया। तीसरे नमन के वाद चिता को अग्नि दी गई। सभी भिक्खुओ और उपासको ने उन्हे करवद्ध नमन किया। मान्य अनिरुद्ध ने घट वजाकर सभी को सूत्र-पाठ करवाया। इन सूत्रो मे अनित्यता, अनात्मता अनासक्तता और मुक्ति का कथन किया गया था।

जब चिता की अग्नि ठडी हुई तो सुगंधित जल से उसका छिडकाव किया गया। उसके वाद उनकी काया की अस्थिया और भस्म स्वर्ण-कलशो मे रखी गई और उन्हे मंदिर की प्रमुख वेदिका पर रख लिया गया। बुद्ध के शरीर शात होने के समाचार अनेक नगरो को पहले ही भेज दिया था और पडोसी राज्यो से धर्मनिष्ठजन बुद्ध को श्रद्धाजलि अर्पित करने आने

लगे। उन्हे बुद्ध के अवशेषो का कुछ भाग दिया गया जिन पर वे अपने यहा स्तूप निर्माण करा सके। मगध, वैशाली, शाक्य, कोलिय, बुलय, पावा और पैठ राज्यो के प्रतिनिधि आए हुए थे। बुद्ध के अवशेषो को आठ भागो मे विभक्त किया गया। मगध वाले राजगृह मे, लिच्छिवि वैशाली मे, शाक्य राज्य कपिलवस्तु मे, बुलि लोग वेठदीप और मल्ल राज्य के लोग कुशीनारा और पावा मे स्तूप बनवाएगे।

राजकीय प्रतिनिधियो के अपने राज्यो को लौट जाने के पश्चात् भिक्खु अपने-अपने स्थानो को साधना-अभ्यास करने और सद्धर्म शिक्षा देने के लिए चले गए। मान्य महाकाश्यप, अनिरुद्ध और आनद बुद्ध का भिक्षा-पात्र वापस वेणुवन ले आए।

एक मास पश्चात् मान्य महाकाश्यप ने राजगृह मे भिक्खुओ की सगीति (परिषद्) बुलाई जिसका उद्देश्य बुद्ध द्वारा निर्दिष्ट सूत्रो और शीलो का प्रामाणिक सकलन तैयार करवाना था। साधना के स्तर और सघ के अनुभवो के आधार पर इसमे बुलाए जाने के लिए पाच सौ भिक्खुओ का चयन किया गया। यह परिषद् वर्षा-प्रवास काल मे आरभ होकर छ मास तक चलनी थी।

मान्य कौंडन्न, सारिपुत्त और मौद्गल्यायन के बाद मान्य महाकाश्यप बुद्ध के चौथे सर्वाधिक वरिष्ठ मान्य शिष्य माने जाते थे। सादगी से रहने और विनम्रता के कारण उनको विशेष सम्मान दिया जाता था। बुद्ध इन पर गहरा विश्वास और स्नेह करते थे। हर कोई जानता था कि जेतवन मे जब बुद्ध ने कमल कलिका पर त्राटक ध्यान लगाया था, उस समय सबसे पहले मुस्कराने वाले मान्य महाकाश्यप थे क्योकि बुद्ध ने उन पर शक्तिपात किया था और वे सबोधि प्राप्त सबुद्ध हो गए थे।

इस परिषद् का आयोजन राजा अजातशत्रु ने किया था। मान्य उपालि की शीलो के गहन ज्ञाता के रूप मे प्रतिष्ठा थी, इसलिए उन्हे परिषद् मे आमन्त्रित किया गया था और उनसे शीलो का पाठ करने और उन स्थितियो का वर्णन करने का आग्रह किया गया था जिनके फलस्वरूप उन शीलो का निर्धारण किया गया गया था। मान्य आनद को बुद्ध की समस्त देशनाओ को दोहराने के लिए तथा यह बताने के लिए बुलाया गया था कि वह देशना कब, कहा तथा किन स्थितियो मे दी गई थी।

स्वभावत· यह अपेक्षा नही की जा सकती थी कि मान्य उपालि और आनद को प्रत्येक विवरण पूरा-पूरा स्मरण ही होगा, इसलिए पाच सौ सम्माननीय भिक्खुओ की उपस्थिति बहुत सहायक थी। इस परिषद् मे समस्त शीलो का

सकलन किया गया और उनका नाम 'विनय पिटक' रखा गया। बुद्ध की समस्त देशनाओ के सकलन को 'सूत्र पिटक' की सज्ञा से अभिहित किया गया। इन सूत्रो को, दीर्घता तथा विषय-वस्तु के आधार पर, चार भागो मे विभक्त किया गया। मान्य आनद ने परिषद् को बताया कि बुद्ध ने मुझसे कहा था कि मेरे शरीर-त्याग के बाद छोटे-मोटे शीलो की गणना न की जाए। अन्य भिक्खुओ ने आनद से पूछा कि क्या आपने उनसे पूछा था कि छोटे-मोटे सूत्रो मे उनका क्या आशय था तो आनद ने स्वीकार किया कि यह प्रश्न करने की बात तो मेरे ध्यान मे ही नही आई। लम्बे विचार-विमर्श के बाद यह निश्चय किया गया कि भिक्खुओ तथा भिक्खुनियो द्वारा अपनाए जाने हेतु सभी सूत्रो का सकलन किया जाए तथा किसी भी सूत्र को न छोड़ा जाए।

बुद्ध के निर्देश का स्मरण रखते हुए यह निश्चय किया गया कि सूत्रो का सकलन वैदिक भाषा (सस्कृत) के मत्रो के रूप मे न किया जाए। सूत्रो और शीलो को प्रमुखत अर्द्धमागधी मे ही सकलित किया जाए। परिषद् मे यह निश्चय किया गया कि सूत्रो का अनुवाद अन्य भाषाओ मे भी किया जाए, जिससे लोग अपनी मातृ-भाषा मे उनका अध्ययन कर सके। परिषद् मे यह भी निश्चय किया गया कि वर्तमान तथा भावी पीढ़ियो मे प्रसारार्थ सूत्रो का पाठ करने वाले भिक्खुओ (भाणको) की सख्या मे भी वृद्धि की जाए।

परिषद् के समापन के पश्चात् सभी भिक्खु अपने-अपने साधना तथा शिक्षण केन्द्रो को लौट गए।

नेरंजना नदी के तट पर खड़े मान्य स्वास्ति बहती हुई नदी को देख रहे थे। दूसरे तट पर चरवाहे युवक अपने भैसो को उथले स्थान मे नदी पार कराने की तैयारी कर रहे थे। हर युवक के पास हसिया और टोकरा था, और यह भी ठीक ऐसा पैंतालीस वर्ष पहले उसके पास हुआ करता था। स्वास्ति जानते थे कि ये युवक इन टोकरियो मे भैसो के चरने के लिए ताजी घास काट कर रखेंगे।

बुद्ध ने इसी नदी मे स्नान किया था। यहा 'बोधि वृक्ष' है जो पहले से भी अधिक बड़ा और छतनार हो गया है। मान्य स्वास्ति रात को इसी वृक्ष के नीचे सोये। यहा का वन पहले की भाँति निर्जन नहीं रह गया

था। वोधि वृक्ष अव तीर्थ-स्थल वन गया है और वहा की झाड़िया एव काटेदार वृक्ष काटकर साफ कर दिए गए है।

मान्य स्वास्ति ने इस वात के लिए आभार व्यक्त किया कि वौद्ध परिषद् मे आमन्त्रित पाच सौ भिक्खुओ मे वह भी था। इस समय उसकी आयु छप्पन वर्ष की थी। सद्धर्म-पथ के उसके सर्वाधिक घनिष्ठ मित्र राहुल का पाच वर्ष पूर्व निधन हो गया था। राहुल पूर्ण निष्ठा और परिश्रम से साधना करने की प्रतिमूर्ति था। यद्यपि वह राजघराने मे जन्मा था किन्तु अत्यधिक सादगी के साथ जीवन-यापन करता था। यद्यपि सद्धर्म-प्रचार मे उसका योगदान वहुत अधिक था, किन्तु अपने मुह से उसने कभी उसका वखान नही किया।

राजगृह से कुशीनारा तक की वुद्ध की आखिरी पद-यात्रा मे स्वास्ति उनके साथ था। वुद्ध ने जव शरीर त्यागा तो उन क्षणो मे भी वह उनके पास था। पावा से कुशीनारा तक जाते समय मार्ग मे किस प्रकार मान्य आनद वुद्ध से पूछते थे कि हम कहा जा रहे है। वुद्ध केवल यही कहते, "हम उत्तर की ओर जा रहे है।" स्वास्ति उनके कथन का अर्थ समझ रहा था। जीवन भर यात्राए करते समय उन्होने लक्ष्य का कभी ध्यान नहीं रखा। वह पूर्णतः सचेतन अवस्था मे एक-एक पग उठाते और वर्तमान के प्रत्येक क्षण का आनद लेते। जैसे गजराज अपने अतिम दिनो मे अपने स्वदेश लौटता है, उसी प्रकार वुद्ध अपने जीवन के अतिम चरण मे उत्तर की ओर चल दिए। उन्हे शरीर त्यागने के लिए लुम्विनी अथवा कुशीनारा पहुचने की कोई आवश्यकता नहीं थी। उनका उत्तर की ओर जाना ही पर्याप्त था। कुशीनारा भी तो लुम्विनी वन का अग था।

इसी प्रकार अपने घर की ओर आकर्षित हो मान्य स्वास्ति एक रात पहले ही नैरजना नदी के तट पर पहुचे थे। यही तो उनका घर था। वह स्वय को ग्यारह वर्ष का वह किशोर ही समझता था जो और किसी के भैसो की देख-भाल करके अपने भाई-वहिनो के लिए दो जून का भोजन जुटाता था। उरुवेला ग्राम अव भी पहले जैसा ही था। हर घर के आगे पपीते के पेड लगे थे। धान के खेत वैसे ही थे और नैरजना नदी पहले की ही भाति वह रही थी। चरवाहे अव भी भैंसे चराते थे और भैसो को नहलाते थे। यद्यपि सुजाता उस गाव मे नहीं थी किन्तु उसके बच्चो के भी वच्चे हो गए थे और वहा से चले गए थे। किन्तु उरुवेला सदैव स्वास्ति का घर रहेगा। स्वास्ति को उस समय का ध्यान आया जब उन्होने भिक्खु सिद्धार्थ को पहली वार वन मे चलित ध्यान करते देखा था। उसे उन भोजनो

का भी स्मरण हो आया जो उसने और गाव के बच्चो ने बुद्ध के साथ बैठकर किए थे। अतीत के ये चलचित्र एक बार फिर साकार हो उठे। जब चरवाहे बालक नदी पार करके इस पार आएगे तो वह अपना परिचय देगा। इनमे से हर बालक स्वास्ति है। जैसे बहुत पहले उसे शाति, आनद एव मुक्ति के मार्ग पर प्रवेश का अवसर प्रदान किया गया था, वह भी इन बालको को सद्धर्म मार्ग दिखलाएगा।

मान्य स्वास्ति मुस्कराए। एक महीने पहले कुशीनारा मे युवा भिक्खु सुभद्र की मान्य महाकाश्यप से हुई तीखी बातचीत का उसे स्मरण हो आया। यह भिक्खु पावा से उनके साथ यात्रा कर रहा था। उसे जब पता चला कि बुद्ध ने शरीर त्याग दिया है तो सुभद्र ने कहा था, "चलो, बुड्ढा तो गया। इसके बाद हम सब स्वच्छन्द होगे। अब कोई हमे डाटने वाला, झिडकने वाला नहीं होगा।" मान्य महाकाश्यप उस युवा भिक्खु की बात सुनकर स्तभित रह गए किन्तु बोले कुछ नहीं थे।

भले ही मान्य महाकाश्यप ने उस युवा भिक्खु को डाटा नही, किन्तु आनद से खरी-खरी बाते कह दिया करते हालाकि आनद बुद्ध के बहुत सम्मानित वरिष्ठ शिष्य थे। सभी सूत्रो के शुद्ध सकलन के लिए आनद की उपस्थिति आवश्यक समझी जाती थी किन्तु परिषद् के समवेत किए जाने के तीन दिन पहले महाकाश्यप ने आनद से कहा कि मै गभीरता से विचार कर रहा हू कि तुम्हे परिषद् से बाहर ही रखू क्योकि सद्धर्म शिक्षा का ठोस ज्ञान होने पर भी अभी तुम्हे सच्ची अनुभूति नहीं हुई है। अन्य भिक्खुओ को भय हुआ कि महाकाश्यप के इस कथन से अपमानित अनुभव कर कहीं आनद चले ही न जाए। किन्तु आनद चुपचाप अपनी कुटिया मे घुस गए और भीतर से द्वार बद कर लिए। वह तीन दिन और तीन रात तक गहन ध्यान-समाधि मे रहे। जिस दिन परिषद् की प्रथम बैठक होनी थी, उसी दिन सवेरे आनद को सर्वोधि प्राप्त हो गई थी। तीन दिन तक सतत् ध्यान मे बैठे रहने और थक जाने के कारण आनंद ने जैसे ही चटाई पर पीठ लगाई कि उन्हे सर्वोधि प्राप्त हो गई। प्रातःकाल जब महाकाश्यप आनद से मिले और उनसे दृष्टि मिलाई तो समझ गए कि क्या घटित हो गया। उन्होने कहा कि आज आपसे परिषद् मे भेंट होगी।

स्वास्ति ने ऊपर की ओर दृष्टि की तो देखा कि नील गगन मे धवल बादल तैर रहे हैं। सूरज ऊपर चढ़ आया था और नदी तट की घास प्रभाती पवन मे लहरा रही थी। श्रावस्ती, [illegible], राजगृह तथा अन्य अनेक

स्थानो की यात्रा करते समय बुद्ध अनेक बार इस पथ पर चलते हुए निकले थे। सर्वत्र बुद्ध के पदचिह्न है और प्रत्येक सजग पग रखते हुए स्वास्ति को प्रतीत हो रहा था कि वह बुद्ध के पद-चिह्नो पर चल रहा है। बुद्ध के पथ पर उसके पग चल रहे है। जिन मेघखडो को बुद्ध ने देखा था, वे ही आकाश मे विचर रहे है। उसका प्रत्येक निर्मल पग पुरातन पथ पर बुद्ध के धवल मेघो को जीवन्त कर रहा था। वह बुद्ध के मार्ग पर चल रहा था।

बुद्ध ने शरीर त्याग दिया है, किन्तु मान्य स्वास्ति को सर्वत्र बुद्ध की विद्यमानता की अनुभूति हो रही थी। समस्त गगा-क्षेत्र मे बोधि वृक्ष रोप दिए गए हैं। वे बिरवे सतत् बढ़ते-बढ़ते अब वृक्ष हो गए है। पैंतालीस वर्ष पहले किसी ने बुद्ध और सबोधि-पथ का नाम भी नहीं सुना था। अब गैरिक वस्त्र धारण किए भिक्खु और भिक्खुनिया सामान्य रूप से दिख जाते है। बहुत से धर्म-केन्द्र स्थापित हो चुके है। बहुत से राजाओ तथा उनके परिवारो और बड़े-बड़े विद्वान और अधिकारी बुद्ध, धर्म और संघ की शरण मे आ चुके है। समाज के निर्धनतम और सर्वाधिक दलित वर्गों के सदस्यो को सद्धर्म की शरण प्राप्त हो सकी है। सद्धर्म के पथ पर चलकर उन्होने अपने जीवन और आत्मा को मुक्त कर लिया है। पैतालीस वर्ष पूर्व स्वास्ति एक निर्धन चरवाहा था और आज वह भिक्खु है और जाति-पाति के भेद-भाव एव बाधाए समाप्त हो गई हैं। आज मान्य स्वास्ति का राजा तक आदरपूर्वक अभिनदन करते है।

बुद्ध कौन थे जो इतना जबर्दस्त परिवर्तन लाने मे समर्थ हुए। नदी तट पर चरवाहो को कुश घास काटने मे जुटा देखकर मान्य स्वास्ति के मन मे यह प्रश्न उठा। यद्यपि बुद्ध के अनेक वरिष्ठ शिष्यो का निधन हो गया है किन्तु अभी महान साधना और सिद्धि प्राप्त बहुत से भिक्खु विद्यमान है। इनमे से बहुत भिक्खु युवा ही है। बुद्ध विशाल वोधि वृक्ष के बीज के समान है। वीज अकुआ कर जड़े पकड चुका है और जड़े मिट्टी मे फैल गई हैं। सभवतः लोग जब वृक्ष को देखते है तो उन्हे वीज दिखाई नही देता किन्तु वीज उसमे विद्यमान होता है। इस प्रकार वह वीज कभी नष्ट नहीं होता, वह स्वय ही पेड़ हो जाता है। वुद्ध ने शिक्षा दी है कि कुछ भी विद्यमानता से अविद्यमान नहीं होता। वुद्ध की शरीर काय वदल गई है किन्तु वह अव भी विद्यमान है। जो ध्यान से देखेगा, वह वुद्ध को सव के रूप मे साकार देखेगा। वह परिश्रमी साधक, दयालु और वुद्धिमान युवा

नरंजरा नदी पार करते भैंसों के चरवाहों को निहारते हुए मान्य व्यक्ति

[illegible]
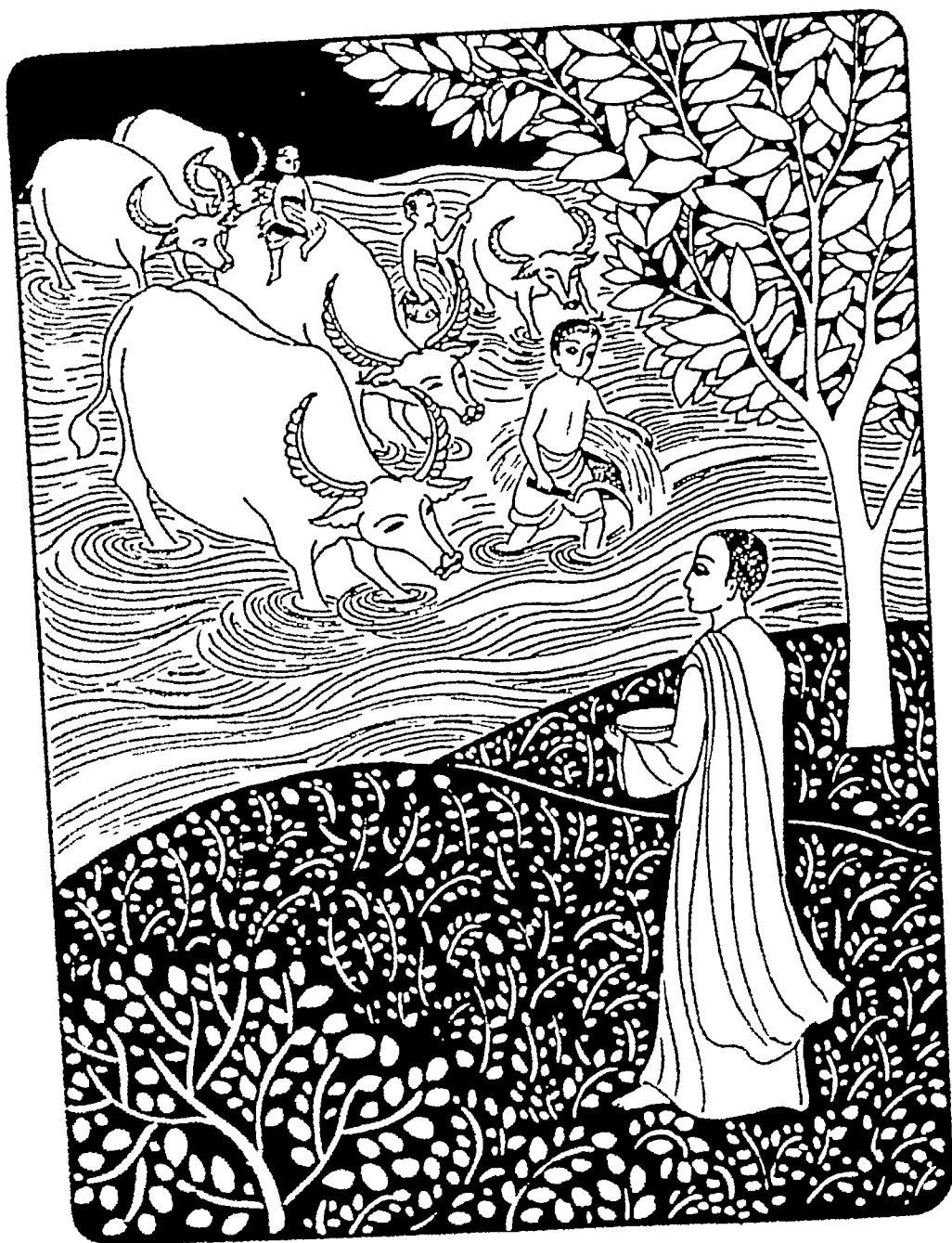
भिक्खुओ मे विद्यमान देख सकेगे। मान्य स्वास्ति ने समझ लिया कि बुद्ध के धर्म-काय को सबल बनाना उसका उत्तरदायित्व है। उनकी देशना और सघ ही बुद्ध की धर्म-काय है। जब तक धर्म और सघ सुदृढ़ रहते है, तब तक बुद्ध विद्यमान हैं।

स्वास्ति ने जब चरवाहे बालको को नदी के इस पार आते देखा तो वह मुस्करा उठा। यदि मैं इन बच्चो मे, बुद्ध के सद्धर्म मार्ग को सतत् जारी रखकर ममत्व-भाव, शाति और आनद नहीं जगाता तो इस कार्य को कौन करेगा ? बुद्ध ने इस कार्य का श्रीगणेश किया था। उनके शिष्यो को वह कार्य सतत् चालू रखना है। बुद्ध ने बोधि वृक्ष के जो बीज बोये है, वे विश्वभर मे जड़े पकड़ेगे और वृक्ष बनेगे। मान्य स्वास्ति को लगा कि बुद्ध ने अपने हृदय के दस हजार मूल्यवान बीज बोये है। स्वास्ति इन बीजो को अकुरित होने, जड़े पकड़ने और मजबूत बोधि वृक्ष बनाने मे सहायक होगा। लोग कहते हैं कि बुद्ध का निधन हो गया है किन्तु स्वास्ति देख रहा था कि बुद्ध पहले की अपेक्षा कहीं अधिक विद्यमान है। वह स्वास्ति के चित्त और शरीर मे है। वह जिधर भी देखता, उधर सर्वत्र ही बुद्ध उपस्थित हैं–वे बोधिवृक्ष मे हैं, नैरजना नदी मे है, हरी घास मे है, धवल मेघो मे है और पत्तो मे विद्यमान है। युवा चरवाहे स्वय बुद्ध है। एक क्षण मे वह उनसे बातचीत करेगा ही। वे भी बुद्ध का आरभ किया हुआ कार्य आगे बढ़ाएगे। स्वास्ति ने जान लिया कि बुद्ध का कार्य सतत् चालू रखने के लिए सभी वस्तुओ पर सजगता से देखना, शातिपूर्वक पग उठाना और करुणामय भाव से मुस्कराना आवश्यक है, जैसे कि स्वय बुद्ध किया करते थे।

बुद्ध उद्गम स्थान थे। स्वास्ति और चरवाहे युवक उस स्थल से निकलने वाली सरिताए है। जहा भी ये सरिताए प्रवाहित होगी, वहा-वहा बुद्ध विद्यमान होगे।

• • •